Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वैशाली विलय

(बहती रेता)

ऐतिहासिक उपन्यास

गुरुदत्त

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
167991

श्री गुरुदत्त की चुनी हुई रचनाएं

हमारी सांस्कृतिक धरोहर
वेद मन्त्रों के देवता
वेद और वैदिक काल
विश्वेदेवाः
विज्ञान और विज्ञान
वेदों में सोम
वेदों में इन्द्र
वेद प्रवेशिका
अद्वैत मीमांसा
न्याय दर्शन
सांख्य दर्शन
ब्रह्मसूत्र (वेदान्त दर्शन)
ईश केन् कठ उपनिषद
प्रश्न ऐत्तरेय उपनिषद
मुण्डक माण्डूक्य उपनिषद
तैत्तिरीय उपनिषद
सृष्टि रचना
सायंस और वेद
यजुर्वेद और गृहस्थ धर्म
श्रीमद्भगवद्गीता (भाष्य)
श्रीमद्भगवद्गीता (अध्ययन)
भारतवर्ष का संक्षिप्त इतिहास
इतिहास में भारतीय परम्पराएं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वैशाली विलय

(बहती रेता—ऐतिहासिक उपन्यास)

आर्ष साहित्य
Complete Vedic Books Store
Yog, Vedic, Ayurvedic, Relegious
All Yog & Organic Products
(M) 9541317278, 8869821468
Web.: aarshsahitya.com

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वैशाली विलय

(बहती रेता—ऐतिहासिक उपन्यास)

Central Library
167991
Gurukula Kangri (Deemed to be University) Haridwar

गुरुदत्त

081
167991

आर्ष साहित्य
Complete Vedic Books Store
Yog, Vedic, Ayurvedic, Relegious
All Yog & Organic Products
(M) 9541317278, 8869821468
Web: aarshsahitya.com

हिन्दी साहित्य सदन
नई दिल्ली-110005

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

R
089.9143
GUR-V
167991

पुस्तक : वैशाली विलय (बहती रेता)
उपन्यासकार : गुरुदत्त
सर्वाधिकार : ईशानदत्त
ISBN No. : 81-88388-70-X
संस्करण : 2010 वसंत पंचमी
मूल्य : 250 रुपये
प्रकाशक : हिन्दी साहित्य सदन, 2 बी. डी. चैंबर्स, 10/54
देशबंधु गुप्ता रोड, करोल बाग, नयी दिल्ली-110005
ई-मेल : indiabooks@rediffmail.com
दूरभाष : 23553624, 23551344
टैलीफैक्स : 23553624
शब्द संयोजन : एडिट मीडिया, हैदराबाद
मुद्रक : गोयल एन्टरप्राइजेज़, शाहदरा दिल्ली-32

Vaishali Vilay (Bahati Reta) : Historical Novel

by: Gurudutt

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक

तक्षशिला विश्वविद्यालय

: 1 :

तक्षशिला विश्वविद्यालय में वसंत महोत्सव मनाया जा रहा था। फाल्गुन सुदी पञ्चमी से यह उत्सव आरम्भ होकर दस दिन तक चला करता था। विश्वविद्यालय के विद्यार्थी-गण, अध्यापक-वर्ग और देश-विदेशों से आये हुए प्रतिष्ठित दर्शक इस महोत्सव में सरुचि भाग ले रहे थे।

धनुष-बाण के करतब, युद्ध व्यूह रचना, दौड़ इत्यादि के खेल, मल्ल-युद्ध, रथों की दौड़, खड्ग तथा भालों के युद्ध इत्यादि शारीरिक व्यायामों में प्रतियोगिता के प्रदर्शन में आठ दिन लग गये। इन सब दिनों में कार्यक्रम इतना रोचक और उत्तेजक रहा कि दर्शक उत्सुकता और उद्वेग से उत्तेजित हो उठते थे। इन खेलों में विद्यार्थी भाग ले रहे थे और अध्यापक, दर्शक तथा अन्य विद्यार्थी देखने वाले थे।

फिर पढ़ने-लिखने के विषयों में भी प्रतियोगिता हुई। इसमें कवि समारोह, संगीत-सभा, राजनीतिक गोष्ठियाँ इत्यादि कार्यक्रम थे।

तक्षशिला विश्वविद्यालय के अधीन एक महिला महाविद्यालय भी था। महिला-आश्रम पुरुष-गृह से आधे कोस के अन्तर पर था और वहाँ शिक्षिकाएं भी महिलाएं ही थीं। कभी-कभी विशेष उत्सवों पर अथवा अन्य समारोह पर बालक-बालिकाएं, पुरुष-स्त्रियां, अध्यापक-अध्यापिकाएं एकत्रित होते थे। परीक्षा के समय भी लड़कियां विश्वविद्यालय के मुख्य भवन में आती थीं।

वसन्तोत्सव के समारोह में भी लड़कियां उचित भाग ले रही थीं। कुछ लड़कियों ने धनुष-बाण आदि खेलों में भी भाग लिया था। कवि-समारोह और संगीत-सभा में तो लड़कियों ने विशेष भाग लिया था।

फाल्गुन-पूर्णिमा को एक वृहत् यज्ञ का आयोजन था। प्रातःकाल से ही यज्ञ-मण्डप विद्यार्थियों-विद्यार्थिनियों, स्त्री-पुरुष दर्शकों और अध्यापक-अध्यापिकाओं से भरा हुआ था। यज्ञ-मण्डप में एक विशाल और छता हुआ चबूतरा था। छत सौ मीटर के बने खम्भों पर खड़ी थी। चबूतरा सौ हाथ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लम्बा और अस्सी हाथ चौड़ा था। खम्भे बीस हाथ ऊंचे थे। मण्डप में उत्तर की ओर एक ऊंचा मंच बना हुआ था। यह मंच मण्डप की पूरी चौड़ाई में था और बीस हाथ लंबाई की ओर था। इस ऊँचे मंच पर यज्ञशाला बनी हुई थी।

मंडप के दक्षिण की ओर दस हाथ आगे बढ़ी हुई परछत्त बनी थी। यह चबूतरे की भूमि से दस हाथ ऊंचाई पर थी। परछत्त दस हाथ मंडप के भीतर तक आई हुई थी। इसके आगे झरनेदार एक हाथ ऊंचे मुंडेर लगी थी।

मंडप तथा परछत्त की भूमि लाल रंग के पत्थर से बनी थी। परछत्त पर दरी कालीन और श्वेत चांदनियां बिछी थीं और उन पर प्रतिष्ठित दर्शकगण बैठे थे। मण्डप की भूमि पर भी सूती दरिया बिछी थीं। यहां मंच के आगे एक ओर विद्यार्थिनियां और महिला-दर्शक बैठी थीं, दूसरी ओर विद्यार्थी और साधारण दर्शक थे। दोनों के बीच में तीन हाथ चौड़ा मार्ग छोड़ा गया था। इस मार्ग पर दरी के अतिरिक्त लाल रंग का कपड़ा बिछा था। मार्ग, मंच से चलकर मंडप के दक्षिण द्वार तक बना था और स्त्रियां तथा पुरुष पृथक्-पृथक मार्ग के दाहिने-बायें बैठे थे।

मंच पर एक कुंड बना था और उस कुंड के चारों ओर विश्वविद्यालय के आचार्य, अध्यापक तथा अध्यापिकाएं बैठी थीं। इनमें सबसे ऊंचा सिर किए एक भव्य मूर्ति बैठी थी, जिसकी दूध समान श्वेत दाढ़ी-मूंछे तथा जटाएं उसकी दीर्घ आयु का परिचय दे रही थीं। उसकी आंखों की बरौनियां तथा भौहें श्वेत हो रही थीं। इस भव्य मूर्ति के समीप एक वृद्धा, परन्तु अति ओजस्वी मुख वाली बैठी थी।

मंडप में डेढ़ सहस्र विश्वविद्यालय के विद्यार्थी-विद्यार्थिनियां और पांच सौ से ऊपर दर्शक-गण विद्यमान थे। मंडप, यज्ञ में सम्मिलित होने वालों से खचाखच भरा हुआ था और सब लोग श्रद्धा तथा रुचि से हवन होते देख रहे थे। हवन सूर्योदय से पूर्व 'ओं भूर्भुवः स्वर्द्यौरिव भूम्नापृथिवीव व्यरिम्णा. ...' इत्यादि मंत्रों से आरम्भ हुआ और दो मुहूर्तभर हवन होने के उपरांत ही 'ओं द्यौः शांतिरन्तरिक्षंश्थ...' इत्यादि से समाप्त हुआ।

इस दिन हवन के पश्चात् पठन में उत्तीर्ण हो विश्वविद्यालय से जाने वाले विद्यार्थियों को उपाधि-वितरण का आयोजन भी था। इस समय तक मंडप, हवन में सुगंधित तथा पौष्टिक पदार्थों के होम से, सुगंध से भरपूर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हो रहा था।

उपाधि वितरण का कार्यक्रम आरम्भ होने से पूर्व यजुर्वेद से मंत्र पाठ हुआ। उपरांत वह भव्य मूर्ति मंडप की भूमि पर तथा मंडप की परछत्त पर बैठे लोगों की ओर मुख करके बैठ गयी। इससे पूर्ण श्रोतागण दत्त-चित्त होकर सुनने लगे। सबके मन में विश्वविद्यालय के कुलपति वैवस्वत के लिए भारी श्रद्धा थी। किंवदंती थी कि मुनि वैवस्वत वेद-वेदांग तथा दर्शन-पुराण का ज्ञाता और आयु में दो सौ वर्ष से ऊपर था। ऐसे लोग दर्शकों में थे, जिनके पितामह आचार्य से पढ़े थे। इस कारण जब आचार्य ने श्रोताओं की ओर मुख किया तो सब दत्त-चित्त शांत हो गये। मंडप में पूर्ण निस्तब्धता विराजमान हो गयी।

आचार्य ने दाहिना हाथ उठा उपस्थित समाज को कहना आरम्भ किया, "सभ्यगण! हमारे विश्वविद्यालय को कार्य करते हुए एक सहस्र वर्ष के लगभग हो रहा है। ऋषि भलन्दन ने उस समय इसे एक साधारण विद्यालय के रूप में स्थापित किया था। जब मैं इस विद्यालय में विद्यार्थी बनकर आया था, तो यह पूर्ण रूप से विकसित होकर एक विश्वविद्यालय बन चुका था। पश्चात् मैं इसमें आचार्य बना और अब एक सौ तीस वर्षों से यहां कुल. पति के रूप में माता सरस्वती की आराधना कर रहा हूं।

"लगभग एक सहस्र वर्षों से देश-देशांतर के बालक-बालिकाएं यहां शिक्षा ग्रहण कर रहे हैं। उनको विद्या-दान निःशुल्क दिया जाता है। विद्या दान के लिए शुल्क लेना भारत के नाम को कलंकित करना है। देश के धनी-मानी तथा राजा-महाराजाओं की उदारता से हम यह महायज्ञ सम्पन्न करते चले आ रहे हैं।

"प्रतिवर्ष वसन्तोत्सव के अवसर पर उपाधि-वितरण का कार्य हुआ करता है। उन विद्यार्थियों को, जो शिक्षा समाप्त कर विश्वविद्यालय को छोड़ते हैं, इस बात का प्रमाण पत्र दिया जाता है। इस वर्ष ऐसे जाने वाले विद्यार्थियों की संख्या दो सौ पच्चीस है। ये राजनीति, न्याय, संगीत-कला, युद्ध-कला, गृह-निर्माण कला, आयुर्वेद, धर्मशास्त्र, पुराण और वेद-वेदांग इत्यादि विषयों में निपुणता प्राप्त करके जा रहे हैं। इन सवा दो सौ स्नातकों में पांच ऐसे स्नातक भी हैं, जो अपने-अपने विषय में सर्वोत्तम प्रतिभा प्रकट करते रहे हैं। उनको प्रमाण पत्रों के अतिरिक्त विशेष प्रतिष्ठा प्रमाण तथा शास्त्रविज्ञ संज्ञक उत्तरीय कौशेय प्रदान किये जाएंगे।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसके पश्चात् उपाधि वितरण कार्यक्रम प्रारम्भ हुआ। दो सौ पच्चीस विद्यार्थी तथा विद्यार्थिनियां बारी-बारी से मुनि वैवस्वत के सम्मुख आईं और उनके कर-कमलों से प्रमाण पत्र प्राप्त कर, चरण स्पर्श कर आशीर्वाद ले, अपने-अपने स्थान पर जाकर बैठ गयीं। प्रमाण पत्र भोज पत्र पर काली मसि से लिखे थे और लकड़ी की पाटी पर चिपकाए हुए थे। पाटी पर एक प्रकार का पारदर्शक लेप किया हुआ था, जिससे पाटी और भोज पत्र तथा उस पर लिखावट के अक्षर चमक रहे थे। ये प्रमाण-पत्र रेशमी वस्त्र में लपेटे हुए थे।

अब उन पांच विद्यार्थियों की बारी आयी, जो अपने-अपने विषय में विशेष प्रतिभा प्रकट कर चुके थे। आचार्य ने ऊंचे स्वर में पुकारा, ''वत्स भानुमित्र, काश्मीर-निवासी, राजनीति में विशेष विज्ञ सम्मुख आवें।''

एक युवक दुबला-पतला, सिर मुंडाए हुए, सिर पर एक लंबी चोटी को गांठ दिए, लंबा मुख, छोटी-छोटी परन्तु तीव्र आंखें, ऊंचा मस्तक, तीखी नाक, कद का लंबा और लंबे-पतले हाथों वाला, विद्यार्थियों की पंक्तियों में से उठकर आचार्य के सम्मुख आ खड़ा हुआ। आचार्य ने उसका परिचय कराया, ''यह बालक अति मेधावी राजनीतिज्ञ है। हमारे विश्वविद्यालय के एक स्नातक, काश्मीर निवासी पंडित महिदेव न्याय शास्त्री का सुपुत्र है। हमें पूर्ण आशा है कि भानुमित्र इस विश्वविद्यालय की कीर्ति को फैलाएगा। हमारे परीक्षक-मंडल ने इसे विशेष योग्यता के लिए यह पुरस्कार दिया है।''

इतना कह चंदन की लकड़ी की बनी संदूकची और उस पर रखा रेशमी पूर्ण पहरावा उसे भेंट किया गया। भानुमित्र ने चरण-स्पर्श कर नमस्कार की। आचार्य ने उसे सिर पर हाथ रख आशीर्वाद दिया और वह वापस लौट अपने स्थान पर आकर बैठ गया। पश्चात् 'दीर्घनाद' का नाम लिया गया। एक और विद्यार्थी आचार्य के सम्मुख उपस्थित हुआ। उसे गृह-निर्माण विशेषज्ञ की उपाधि दी गयी। इसी प्रकार धर्म शास्त्र के विशेष ज्ञाता की उपाधि एक और बालक 'निकुम्भ' को मिली। दो बालिकाएं भी थीं, जिनको विशेष योग्यता का पुरस्कार दिया गया। इनमें एक का नाम मल्लिका था। उसे संगीत कला में विशेष ज्ञान के लिए उपाधि दी गयी। उसका परिचय देते हुए आचार्य ने बताया, ''कुमारी मल्लिका गान्धार देश के एक व्यापारी की बहन है। भारतीय संगीत तथा नृत्य-कला में इसकी विशेष प्रतिभा के लिए इसे पारितोषिक दिया जाता है।''

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

: 2 :

यज्ञ तथा उपाधि वितरण का कार्यक्रम एक प्रहर दिन गये तक चलता रहा। इसके समाप्त होने पर सबसे प्रथम आचार्य मुनि वैवस्वत अपने स्थान से उठे। इस पर सब उपस्थितगण अपने-अपने स्थान पर उठे खड़े हुए। यह यहां की प्रथा थी कि सभा विसर्जन होने पर प्रधान आचार्य तथा अध्यापकों को मंडप से बाहर जाने का अवसर सर्वप्रथम दिया जाता था। अतः मुनि वैवस्वत, पीछे उनके समीप बैठी हुई वृद्धा विदुषी महामाई, मंडप के बीचोंबीच, रिक्त छोड़े हुए मार्ग से बाहर निकले। उनके पीछे मंच पर बैठी अध्यापिकाएं तथा अध्यापक निकले। इसके उपरांत विश्वविद्यालय की छात्राएं गईं और पीछे दर्शकगण तथा छात्र थे।

परछत्त से उतरने के लिए मंडप के दक्षिण बाजू की ओर बाहर, सीढ़ियां बनी थीं। परछत्त पर प्रतिष्ठित दर्शक बैठे थे। जब तक आचार्य इत्यादि लोग मंडप से बाहर निकलते रहे, ये लोग भी अपने-अपने स्थान पर खड़े रहे। उनके निकल जाने पर परछत्त से बाहर आ, जूते पहन सीढ़ियों के नीचे उतरने लगे।

इन प्रतिष्ठित लोगों में देश-विदेश के कई नरेश भी थे। पाञ्चाल नरेश, गान्धार का गणपति, वैशाली का महासेठ, अवध के महाराज, विदेह के गणपति इत्यादि अनेक विशिष्ठ जन उपस्थित थे।

सीढ़ियों से उतरते हुए अवध नरेश मुरहारी विक्रम ने अपने एक साथी को सम्बोधन कर कहा, "चमुचूड़!"

"हां महाराज!"

"कुमारी मल्लिका को देखा है?"

"अद्वितीय सुंदरी है!"

"हम उसे पटरानी बनावेंगे।"

"परन्तु महाराज, यह तो उसकी इच्छा से ही हो सकेगा।"

"हां, देखो, उससे मिलकर बात करने का यत्न करो। नहीं तो गुरुवर कुलपतिजी से सहायता मांगनी पड़ेगी।"

चमुचूड़ ने सिर हिलाकर आज्ञा पालन करने का संकेत दिया। सीढ़ियां उतर चमुचूड महाराज को अपने निवास-गृह की ओर जाते देख, पृथक् हो वहां जा पहुंचा, जहां छात्राएं अपने-अपने प्रमाण पत्र लिए निकल रही थीं।

विदुषी महामाई मंडप के बाहर सब छात्राओं को एकत्रित कर रही थी,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जिससे वे इकट्ठी महिला आश्रम को जा सकें।

चमुचूड़ ने दूर खड़े होकर देखा कि मल्लिका एक बड़ी आयु की स्त्री के साथ मंडप से निकली और महिला विद्यालय की प्रधान आचार्या महामाई के समीप आ कुछ कहने लगी। आचार्या ने कुछ उत्तर में कहा तो मल्लिका वृद्धा के साथ महिला आश्रम को जाने के स्थान, दर्शकों के निवास-गृह की ओर चल पड़ी।

चमुचूड़ कुछ अंतर पर उनके पीछे-पीछे चलता गया। दर्शकों के लिए निवास गृह पक्के थे, जो विश्वविद्यालय के कुछ अंतर पर बने थे। विश्वविद्यालय को पीछे छोड़ मल्लिका और वृद्धा मार्ग के एक ओर खड़ी हो गयीं। वे किसी की प्रतीक्षा कर रही प्रतीत होती थीं। चमुचूड़ ने यह बहुत अच्छा अवसर पा, उनके समीप जा, हाथ जोड़कर नमस्कार कर पूछा, ''देवी मल्लिका से साक्षात्कार का सौभाग्य प्राप्त हो रहा है न?''

''हां, परन्तु मुझसे बात करने वाले सज्जन कौन हैं?''

''सेवक का नाम चमुचूड़ है। अवध नरेश श्री मुरहारी विक्रम का सेवक और सखा होने का मान प्राप्त है।'' पश्चात् साथ की वृद्धा को संबोधन कर कहने लगा, ''आपकी मुख की आकृति से मेरा अनुमान ठीक प्रतीत होता है कि आप मल्लिकादेवी की माता हैं। अतः इस देवी जैसी अनुपम सुंदर कन्या की जननी होने पर बधाई देने के लिए उपस्थित हुआ हूं।''

मल्लिका के मस्तक पर त्योरी चढ़ गयी। एक अपरिचित पुरुष से अपने सौंदर्य की प्रशंसा उसे रुचिकर प्रतीत नहीं हुई। परन्तु माता आज मल्लिका की संगीत कला में निपुणता की प्रशंसा आचार्य के मुख से सुन, वह आशा करने लगी थी कि कोई बहुत ऊंचे परिवार का युवक उससे विवाह की अभिलाषा प्रकट करेगा या वह किसी राजा की रानी बनेगी। अब प्रशंसा करने वाले को अवध नरेश का सखा जान, उसके मन की आशा प्रस्फुटित हो उठी थी। इससे उसे, अपनी लड़की के सुंदर कहे जाते सुनकर क्रोध नहीं हुआ। उसने मुस्कुराकर पूछा, ''आप अपने महाराज के साथ यहां पधारे हैं क्या?''

''सौभाग्य-रोही देवी! हां, महाराज उत्सव में उपस्थित थे और मल्लिका को देख और उसकी निपुणता की बात सुन, आपको ऐसी पुत्री की माँ होने पर भाग्यवान समझते हैं। उनके आदेश से ही सेवक बधाई देने उपस्थित हुआ है। महाराज मल्लिका देवी के लिए भगवान से अति शुभ कामना करते

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं।''

इस समय भानुमित्र लंबे-लंबे पग उठाता हुआ, उनके समीप आकर खड़ा हो गया। मल्लिका उसे देख चमुचूड़ पर अपना क्रोध भूल गयी और प्रसन्न हो बोली, ''मित्र, कहां रहे गये थे? बहुत प्रतीक्षा करनी पड़ी है।''

''सहपाठी तथा सखा लोग देख रहे थे कि संदूकची में क्या है? फिर उसे निवास-गृह पर छोड़कर आया हूं। अब माताजी किस समय युद्धव्यूह रचना देखने चलेंगी?''

मल्लिका को भानुमित्र से बातें करते देख चमुचूड़ ने एक ओर हट उसकी माता के सम्मुख महाराज का आशय प्रकट कर दिया, ''महाराज मल्लिकादेवी को अवध देश की पटरानी बनाना चाहते हैं और इसमें उसकी माता की स्वीकृति के प्रार्थी हैं।''

''मल्लिका की मां महाराज के इस प्रस्ताव से अति अनुगृहित है, परन्तु इस प्रस्ताव में सम्मति देने वाले अन्य लोग भी हैं। लड़की की मां इस प्रस्ताव के स्वीकार किये जाने में सहायता देने का वचन देती है।''

''तो महाराज कब भेंट की आशा कर सकते हैं?''

''निर्णयात्मक बात तो इतनी शीघ्र नहीं हो सकती। फिर भी आज सायंकाल यहीं पर भेंट हो सकेगी।''

चमुचूड़ हाथ जोड़ नमस्कार कर विदा हो गया। मल्लिका भानुमित्र से बात करने में इतनी लीन थी कि वह चमुचूड़ का अपनी मां से अंतिम वार्तालाप न सुन सकी। मल्लिका की माँ चमुचूड़ से अवकाश पा भानुमित्र के विषय में सोच, चिन्ता अनुभव करने लगी। भानुमित्र ने उसका मुख म्लान देख पूछा, ''माताजी! क्या हुआ? यह कौन था?''

उत्तर मल्लिका ने दिया, ''मेरे सौंदर्य के प्रशंसकों में से था।''

''तो इसमें चिंता की कौन बात है माताजी! यहां महाविद्यालय में मल्लिका सब कन्याओं से सुंदर मानी जाती हैं।''

मल्लिका की मां ने कहा, ''ठीक है बेटा! परन्तु सौंदर्य एक बहुत ही मूल्यवान वस्तु है। इसकी रक्षा के लिए किसी शक्तिशाली संरक्षक की आवश्यकता है। बहुत से मधुप रसास्वादन के लोभ में भर्र-भर्र करते आते हैं, परन्तु क्या किसी मस्त हाथी के इधर आ जाने पर वे अपनी जान बचा भाग न खड़े होंगे और सुंदर सुरभित कमल को उसके पांव तले कुचले जाने के लिए छोड़ न जाएंगे? बेटा! जितना मूल्यवान रत्न होता है, उतनी ही

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुदृढ़ तिजोरी उसकी रक्षा के लिए चाहिए।"

मल्लिका की माता के इस कथन को सुन भानुमित्र चिंता अनुभव करने लगा और उसका मुख उतर गया। वह यह सब बात अपने पर लागू कर विचार कर रहा था। वह सोचता था कि इस सुंदर निधि को, सत्य ही, यदि कोई बलपूर्वक हरण करने आ गया तो वह इसकी रक्षा कर सकेगा क्या? जो आशा वह कई वर्षों से लगाए हुए था, वह उसे बालू की दीवार के समान गिरती प्रतीत हुई। उसके मन में युद्ध व्यूह रचना देखने के लिए जाने का उत्साह ही नहीं रहा।

मल्लिका अपनी माता और भानुमित्र को इस प्रकार गंभीर और चिंतित हो पूछने लगी, "पर मां! आज यह कोई नई बात हुई है? यदि मेरा सौंदर्य मूल्यवान था, तो अब तक भी तो उसकी रक्षा कोई करता रहा है। यह कौन पुरुष था, जो आज हर्षोत्सव में दुःख सम्भावनारूपी विष छिड़क गया है?"

मां ने इस प्रश्न का उत्तर नहीं दिया। भानुमित्र ने सबका ध्यान बदलने के लिए कहा, "मांजी! व्यूह रचना देखने चलेंगी आप?"

"बेटा! युद्धकला हम स्त्रियों के देखने की वस्तु नहीं है। तुम जाओ, देखो। हम अभी आराम करेंगी। तुम सायंकाल आना, कवि समारोह देखने चलेंगे।"

मल्ल्कि के मुख पर असंतोष का भाव स्पष्ट दिखायी देता था। इस पर भी मां के कथन का विरोध नहीं कर सकी। भानुमित्र उनके साथ उनके निवास स्थान गृह तक जाना चाहता था और अपने तथा मल्लिका के विषय में निर्णयात्मक बात करना चाहता था। इस कारण अपने मन के भावों के समर्थन की आशा में मल्लिका के मुख की ओर देखने लगा, परंतु उसे चुप देख, हाथ जोड़, नमस्कार कर जाने के लिए लौट पड़ा। मल्लिका ने उसके मुख पर निराशा का अतीव भाव देखा। इससे जब वह जाने लगा, तो बोली, "मित्र! सायं हम इसी स्थान पर प्रतीक्षा करेंगे।"

भानुमित्र बिना इसका उत्तर दिये अपने निवास गृह की ओर चल पड़ा।

: 3 :

भानुमित्र का पिता न्यायशास्त्री महिदेव तक्षशिला से शिक्षा समाप्त कर, श्रीनगर में एक विद्यालय खोल जीविकोपार्जन करने लगा था। अनन्तनाग के धनाढ्य पुरोहित की लड़की रोहिणी से उसका विवाह हो जाने जाने पर सुखपूर्वक निर्वाह होने लगा था। घर में लड़का उत्पन्न हो जाने से तो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दम्पति-जीवन अति मधुर हो उठा था और पंडित महिदेव अपने को संसार के महासौभाग्य का भागी मानता था।

भानुमित्र विशेष प्रतिभाशाली निकला। जब उसने व्याकरण इत्यादि समाप्त कर लिया तो पिता का विचार हुआ कि यह राजनीति का अध्ययन करे और इसके लिए उसे तक्षशिला विश्वविद्यालय भेजा गया। उस समय वह चौदह वर्ष का था। इस छोटी-सी अवस्था में भी वह छः शास्त्र, उपनिषद् और कई पुराण पढ़ चुका था। यजुर्वेद उसे कण्ठस्थ था। इस प्रतिभाशाली बालक को आये देख विश्वविद्यालय के आचार्य और कुलपति बहुत प्रसन्न हुए और बालक के लिए विशेष शिक्षा का प्रबंध कर दिया गया।

भानुमित्र विश्वविद्यालय के वसन्तोत्सव के अवसर पर पहुंचा था और पहले ही दिन उसने मल्लिका को अपने देश का गीत सुनाते देखा था। तभी उसके मन में इस मधुरभाषिणी कोकिल-कण्ठी बालिका ने स्थान बना लिया था। इस पर भी प्रथम भेंट तब हुई, जब भानुमित्र को विश्वविद्यालय में आये दो वर्ष व्यतीत हो चुके थे और उसने वसन्तोत्सव पर भारत की राजनीति में परिवर्तन पर अपना लेख पढ़ा था। उस लेख में उसने चीन, मंगोल तथा यवन देशों में चल रही राजनीति प्रगति का वर्णन कर, भारतवर्ष में अराष्ट्रीयता के बढ़ने के कारणों का विश्लेषण किया। यह सब वर्णन इतनी स्पष्ट तथा सरल भाषा में किया गया था कि इस विषय में रुचि न रखने वाले लोग भी भली-भांति समझ रहे थे और भानुमित्र के कथन की सत्यता को अनुभव कर रहे थे।

इस लेख के पढ़ने के समय बाहर के कुछ दर्शक भी उपस्थित थे। वैशाली का गणपति देवधर्मा भी तीर्थाटन करता हुआ तक्षशिला पहुंचा हुआ था। वह इस बालक को गणराज्यों की त्रुटियां इतनी स्पष्टता से बताते सुन, बालक के ज्ञान पर भी चकित रह गया था। उसने लेख समाप्त होने पर आगे आ, भानुमित्र को गले लगाया और अपने गले की मुक्तामाला उतारकर उसे पहना दी। पश्चात् आचार्य की आज्ञा से भानुमित्र की योग्यता की प्रशंसा करते हुए उसे शिक्षा समाप्त कर वैशाली आने का निमंत्रण दे दिया।

समारोह के पश्चात् मल्लिका ने भानुमित्र से भेंट की। वह इस भेंट को अपनी विजय मानता था और इसके पश्चात् दोनों में कई बार भेंट हुई। फिर दोनों में प्रेम हो गया और वे प्रायः मिलने लगे। जब भी भानुमित्र तथा मल्लिका के माता-पिता आते तो दोनों की उनसे भेंट होने लगी। यद्यपि कोई

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बात कही नहीं गयी थी, तो भी दोनों परिवार यह समझने लगे थे कि गान्धार की सुन्दरी काश्मीर में ब्याही जाएगी।

मल्लिका के पिता का, जो गान्धार का एक बड़ा सौदागर था, देहांत हो चुका था। परन्तु उसका एक भाई था, जो अपने देश के मेवे और ऊनी कालीन तथा गुदमों का भारत में व्यापार करता था।

जब भानुमित्र उदास-मन अपने निवास-गृह की ओर चला तो मल्लिका और उसकी माता अतिथि गृह की ओर चल पड़ीं। मार्ग में मां ने लड़की से कहा, "वह पुरुष अवध नरेश का सेवक था।"

"हूं।" मल्लिका ने, जो भानुमित्र के उदास मुख को देख सोच में पड़ गयी थी, कहा।

"वह अपने स्वामी की आज्ञा सुना रहा था।"

"हूं।" मल्लिका का ध्यान अब भी भानुमित्र की ओर था।

"अवध नरेश ने तुम्हें उपाधि वितरण समारोह के समय देखा है।"

"तो?" अभी भी मल्लिका अर्धचेतनावस्था में थी।

"उन्होंने तुम्हें पसंद किया है।"

"तो मैं क्या करूं?" मल्लिका ने उद्विग्न हो कहा।

"वे तुमसे मिलना चाहते हैं।"

इस समय तक मल्लिका सतर्क हो चुकी थी। इससे उसने माता की ओर माथे पर त्योरी चढ़ाकर देखते हुए पूछा, "क्या प्रयोजन है उनका इसमें?"

"तुमसे विवाह करना चाहते हैं।"

"मैंने अपने विवाह का निश्चय कर लिया है।"

"परन्तु हमने तो नहीं किया है। तुमने उसे वचन दे दिया है क्या?"

"वचन देना ही समझ लेना चाहिए।"

"इस समझने के कुछ अर्थ नहीं होते बेटी! बात पक्की न होने के अर्थ यही हैं कि यह विचाराधीन है। अब तुमसे विवाह करने का इच्छुक एक और भी है। इससे तुम्हें अंतिम निर्णय करने से पूर्व उसका भी ध्यान करना चाहिए। मैं जानती हूं कि भानुमित्र विद्वान और चरित्रवान् है, परन्तु वह निर्धन और दुर्बल है।"

"तो मां, तुम्हारी इच्छा है कि मेरा विवाह अवध नरेश से हो?"

"तुम मिल लो, देख लो। मैं समझती हूं, वह तुम्हारे योग्य होगा।"

"नहीं मां, इसमें लाभ नहीं। मैं भानुमित्र से ही विवाह करूंगी।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"अच्छी बात है, इस पर भी मेरा कहना है कि देख तो लो, शायद तुम्हारा विचार बदल जाए।"

इस समय वे अतिथि गृह में पहुंच गये थे। वसन्तोत्सव पर आये बहुत से लोग वहां ठहरे हुए थे। वह बहुत बड़ा गृह था। लगभग सौ आगार इसमें थे। मल्लिका की मां को एक पृथक् आगार मिला था। जब से वह आयी थी, मल्लिका उसके पास आचार्या की स्वीकृति से रहती थी।

मल्लिका और उसकी मां कमरे में जा बैठ गयीं। अतिथि गृह का प्रबंधक भोजन के लिए कहने आया तो दोनों भोजनशाला में जा पहुंची। मुख-हाथ-पांव धो आसन पर जा बैठीं। इस भोजनशाला में केवल स्त्रियां ही खा रही थीं। भिन्न देशों और प्रदेशों से आये हुए अतिथि थे। सब एक शाला में बैठे एक समान भोजन कर रहे थे।

मल्लिका चुपचाप भोजन करते समय मां के प्रस्ताव पर विचार कर रही थी। अभी एक घड़ी पहले तक उसका मन भानुमित्र से विवाह करने में स्थिर था, परन्तु अब इस नये व्यक्ति का विचार मन में उत्पन्न हो जाने से उसके मन में चंचलता उत्पन्न हो गयी थी। वह सोच रही थी कि पण्डिताइन बनना ठीक है अथवा रानी।

अपने ऊपर अपने विचारों को केंद्रित करने से वह उन सब्र बातों को भूल गयी थी, जो उसके और भानुमित्र के बीच वर्षों से चल रही थी। इस काल में बीसियों बार वे अपना घर, काश्मीर की वादी में, फल-फूलों से भरपूर उद्यान में, बनाने के चित्र खींच चुके थे। मल्लिका ने अभी तक यही सोचा था कि वह जीवन-भर उद्यान में क्यारियों को पानी देगी, फल तोड़ेगी और भानुमित्र की सेवा में जीवन व्यतीत कर देगी। एक धुंधला-सा चित्र, चार-पांच बच्चों का, ऊनी कान ढांपी टोपियां और मोटें ऊनी कपड़े पहने उस उद्यान में घूमते हुए, उसके मस्तिष्क में आया करता था। परन्तु अब अवध-नरेश की रानी बनने के चित्र भी खिंचने लगे थे। अवध-नरेश, जो भगवान राम की संतति में हैं, जिनका राज्य अढ़ाई सौ कोस लंबा-चौड़ा है, जिनके राज्य में पांच सहस्र गांव और पंद्रह बड़े-बड़े नगर हैं, जिनके कोष में अतुल धन हो सकता है, जो विपुल शक्तिशाली सेना के अधिपति हैं और जिनकी प्रजा की संख्या दो सौ लाख से भी अधिक है, क्या वह भानुमित्र से बेहतर पति नहीं?

केवल एक बात थी। वह थी भानुमित्र से विवाह की मूक अनुमति।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इससे वह किसी अंतिम निर्णय पर नहीं पहुंच सकी। भोजन समाप्त हुआ। वे हाथ मुख धोकर अपने कमरे में जा पहुंची। वहां पहुंच मां ने कहा, ''अवध नरेश सायंकाल वहीं नीम के पेड़ के नीचे मिलने आएंगे।''

''पर सायंकाल तो हमें कवि समारोह में जाना है।''

''उस समय से पहले ही भेंट होगी।''

पर मां! मैं भानुमित्र को वचन दे चुकी हूं।''

''तुम्हारी आयु छोटी थी। तुम सज्ञान नहीं थीं। इस कारण आज से कई वर्ष पूर्व दिया वचन मान्य नहीं हो सकता। तुम्हें स्वतंत्रता से अब निर्णय करना चाहिए। अपने देश में तो तुमसे कोई पूछता भी नहीं। बिना तुम्हारे अपने पति को देखे ही तुम्हारा विवाह कर दिया जाता है।''

इस प्रकार की युक्ति से मल्लिका को संतोष नहीं हुआ। वह भारत में थी। यहां की सभ्यता में पली थी और भारतीय पद्धति से शिक्षा प्राप्त की थी। भारत में लड़कियों को अपना वर ढूंढ़ने में पूर्ण स्वतंत्रता थी और वह इसे ठीक भी समझती थी।

उसे अपने ही विश्वविद्यालय की एक लड़की कथा स्मरण थी। उस लड़की ने पाञ्चाल देश के राजा को देखा और उससे प्रेम करने लगी थी। इस कारण अपनी शिक्षा पूर्ण कर महाराज के सम्मुख उपस्थित हो बोली कि वह उनसे विवाह करना चाहती है। नरेश ने देखा कि प्रार्थिनी सुंदर है, स्वस्थ है, विदुषी है और उसका प्रस्ताव स्वीकार करने से सुख भी मिलेगा। इससे उसके घर और सम्बन्धियों का पता कर विवाह कर लिया। महाराज की माता ने कहा भी था कि लड़की लोभी और पदलोलुप प्रतीत होती है। महाराज का कहना था कि एक राजा की स्त्री में ये गुण तो होने ही चाहिएं।

मल्लिका को यह बात पसंद थी। भारत की लड़कियां अपने वर का चुनाव स्वयं करती थीं, इससे उसने माता से कहा, ''मां, मैं स्वयंवर करूंगी।''

मां का उत्तर था, ''यह हमारे देश की प्रथा नहीं है।''

''मुझे यह पसंद है।''

''तुम्हारा भाई नहीं मानेगा।''

''मैं भैया को मना लूंगी।''

''तो यह कैसे होगा?''

''मैं आज अवध नरेश से मिलूंगी। उसके विषय में प्रश्न करूंगी और यदि कुछ जानने योग्य हुआ तो जान लूंगी। भानुमित्र तो मेरा देखाभाला है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पश्चात् निर्णय लूंगी। यदि मेरा निर्णय आपको पसंद नहीं हुआ, तो मैं तब तक विवाह नहीं करूंगी, जब तक आप मान नहीं जातीं।''

मां ने इसको स्वीकार कर लिया। मल्लिका और उसकी मां थोड़ा आराम करने के लिए लेट गयीं। वास्तव में दोनों सोच रही थीं कि कैसे यह समस्या सुलझेगी? मल्लिका की मां मन-ही-मन भगवान से प्रार्थना करने लगी कि वे मल्लिका को सुबुद्धि दें।

अभी कवि सम्मेलन में कुछ समय शेष था कि चमुचूड़ आया और उनके अतिथि गृह में से मल्लिका की मां को बुला भेजा। मां-बेटी दोनों गृह से बाहर आ गयीं। मल्लिका का विचार था कि नरेश स्वयं पधारे होंगे, परन्तु उन्होंने बाहर आ केवल चमुचूड़ को खड़े देखा। चमुचूड़ ने हाथ जोड़ शीश नवा, प्रणाम कर कहा, ''महाराज, जानना चाहते हैं कि देवी से कब और कहां भेंट हो सकती है?''

मल्लिका की मां मल्लिका का मुंह देखने लगी। मल्लिका ने कुछ सोचकर कहा, ''कवि समारोह के पश्चात् कुलपति श्री प्रधान आचार्य मुनि वैवस्वत जी की कुटिया में।''

चमुचूड़ सिर नवा जाने लगा तो मल्लिका ने बात स्पष्ट कर दी, ''देखो भद्र! मुझसे विवाह करने के लिए एक और इच्छुक है। मैं स्वयं वरना चाहती हूं। यह वरण भेंट के पश्चात् होगा। महाराज को पता होना चाहिए कि उनको अस्वीकार भी किया जा सकता है। जो कुछ मेरा निर्णय होगा वह परम पूजनीय आचार्य जी के चरणों में बैठकर होगा।''

''एवमस्तु।'' कह चमुचूड़ झुक प्रणाम कर लौट गया। उसके चले जाने के पश्चात् मां मल्लिका की ओर प्रश्न भरी दृष्टि से देखने लगी। मल्लिका जाते हुए चमुचूड़ की ओर देख रही थी। इस पर मां ने पूछ ही लिया, ''यह क्या कर रही हो बेटी? बड़े आदमी को बुलाकर उसका अपमान न कर देना।''

''स्वयंवर में न चुने जाने वालों को अपमानित किया गया नहीं मानना चाहिए।''

''तुम बहुत गहरे पानी में तैरना चाहती हो बेटी! स्वयंवर राजाओं की बेटियों को ही शोभा देता है। वे अपनी लड़की की मान-मर्यादा करने की शक्ति रखते हैं। यहां स्वयं विदेश में निस्सहाय ऐसी धृष्टता नहीं कर सकते कि एक राजा का अपमान कर जीवित रह सकें।''

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"मां! तुम यहां के विषय में कुछ नहीं जानती! एक ब्राह्मण की शरण में आये निर्बल को भी कोई पीड़ा नहीं दे सकता।"

मां अपने मन में यह आशा लगा रही थी कि शायद कुलपति एक नृपति की सहायता करेंगे।

: 4 :

अभी कवि समारोह के लिए जाने में देर थी। इससे मां-बेटी दोनों विश्वविद्यालय के समीप एक बहती नदी के तट पर भ्रमणार्थ चली गयीं। दोनों अपने-अपने विचारों में लीन थीं। मल्लिका चमुचूड़ की चौड़ी छाती, उच्च मस्तक और अकड़ी हुई मूछों पर विचार कर रही थी। भानुमित्र तो उसके सम्मुख दुर्बल, रूपहीन, एक बालक प्रतीत होता था। वह सोच रही थी कि क्या इस पुरुष का स्वामी इससे भी अधिक रूपवान होगा? इस विचार के उठते ही वह अवध नरेश को देखने की इच्छा करने लगी।

एक मुहूर्त-भर नदी तट पर बैठ वे पुनः उस स्थान पर आ गयीं, जहां भानुमित्र को मिलने का वचन दिया था, परन्तु भानुमित्र वहां नहीं था। कितनी देर तक प्रतीक्षा कर वे सभा-मंडप की ओर चल पड़ीं। कवि समारोह का समय हो गया था और मल्लिका का संगीत भी होना था।

मंडप के बाहर पहुंचकर भी उन्होंने उसकी प्रतीक्षा की, परन्तु वह दिखायी नहीं दिया। मंडप लोगों से, प्रातः से अधिक भरा हुआ था। इस समय कुलपति वहां उपस्थित नहीं थे और सभा का प्रधानत्व करने के लिए विश्व. विद्यालय के साहित्याचार्य मंच पर चंदन की एक चौकी पर रेशमी गद्दे के सहारे बैठे हुए थे। मल्लिका मंच पर जा बैठी और उसकी मां स्त्री-दर्शकों में।

मंडप की परछत्त पर अवध नरेश अपने साथी चमुचूड़ के साथ सर्वप्रथम आ बैठे थे। मल्लिका को भीतर आ मंच की ओर जाते देख नरेश ने अपने सखा से पूछा, "क्या तुम मेरे सफल होने की आशा करते हो?"

"हां महाराज, मैं समझता हूं कि आपकी आधी से अधिक जीत हो चुकी है।"

अवध नरेश मल्लिका को मंच पर बैठे एकटक देख रहा था। उसके सौंदर्य को देख-देखकर वह मन-ही-मन उसको रानी बनाने कीं युक्ति सोच रहा था। फिर उससे विवाह कर सकने पर दान-दक्षिणा की योजना बना रहा था। मल्लिका अपने समीप बैठी एक लड़की से बातें करते-करते हँस पड़ी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसके अनार के दाने के समान दांतों को रक्ताभ अधरों में देख अवध नरेश को रोमांच हो आया और उसने गंभीर सांस ली।

दूर घड़ियाल ने दिन का तीसरा प्रहर होने की घोषणा की। सभा संचालक घड़ियाल का शब्द सुन, चौकी पर खड़ा हो, हाथ का संकेत कर उपस्थित लोगों को चुप कराने लगा। जब शांति विराजित हुई तो वह कहने लगा :

''आज संगीत तथा कवि समारोह आरम्भ होना है। मैं पञ्चवक्र को महाकवि वाल्मीकि की कविता का गान करने का आदेश देता हूं।''

एक पीतवस्त्रधारी बालक उठा और स्वरसहित रामायण-गान करने लगा। गान करने से पूर्व उसने कहा, ''क़वि के शब्दों में आदर्श भगवान् राम के गुणानुवाद करता हूं :

''विपुलांसो महाबाहुः कम्बुग्रीवो महाहनुः।
महोरस्को महेष्वासो गूढ़जत्रुररिंदमः।।
आजानुबाहुः सुशिराः सुललाट सुविक्रमः।
समा समविभक्ताङ्गः स्निग्धवर्णः प्रतापवान्।।
पीनवक्षा विशालाक्षो लक्ष्मीवाञ्शुभलक्षणः।
धर्मज्ञः सत्यसन्धश्च प्रजानां च हिते रतः।।
यशस्वी ज्ञानसंपन्नः शुचिवैश्यः समाधिमान्।
प्रजापतिसमः श्रीमान् धाता रिपुनिषूदनः।।
रक्षिता जीवलोकस्य धर्मस्य परिरक्षिता।
रक्षिता स्वस्य धर्मस्य स्वजनस्य च रक्षिता।।
वेदवेदाङ्गतत्वज्ञो धनुर्वेदे च निष्ठितः।
सर्वशास्त्रार्थतत्वज्ञः स्मृतिमान्प्रतिभानमान्।।
सर्वलोकप्रियः साधुरदीनात्मा विचक्षणः।
सर्वदाभिगतः सद्भिः समुद्र इव सिन्धुभिः।।
आर्यः सर्वसमश्चैव सदैव प्रियदर्शनः।
स च सर्वगुणोपेतःगुणोपेतःकौशल्यानंदवर्धनः।।
समुद्र इव गाम्भीर्ये धैर्येण हिमवानिव।''

बालक का स्वर मधुर, प्रिय और उच्चारण स्पष्ट था। पूर्ण जनता मूर्तिवत् महाकवि के शब्दों को रसपूर्वक सुनती रही।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसके पश्चात् सभा संचालक ने अपनी कविता का पाठ किया। इसमें साहित्यचार्य ने शिव के ताण्डव का भीषण रूप बांधा और उसमें राक्षसों और दैत्यों को भयभीत, त्रसित और निःसहाय भागते, मरते, पिसते, विनाश होते सुनाया कि सुनने वालों को रोमांच हुए बिना नहीं रहा। कुछ निर्बल मन के लोगों को अश्रुपात होने लगे।

इसके पश्चात् विद्यार्थी। बालक और बालिकाएं अपनी-अपनी कविताएं सुनाने लगे और संगीत तथा नृत्य-कला का प्रदर्शन करने लगे। धीरे-धीरे रंग जमता गया। श्रोतागण कभी हँसते, कभी रोते, कभी गंभीर हो विचार करने लगते। एक-आध बार वीर रस की कविता भी आयी, जिसे सुन स्त्रियों के मुख आवेश में तमतमाने लगे और पुरुषों के भुजदण्ड फड़कने लगे। श्रोतागण आवेश में किसी के कला-प्रदर्शन पर पुरस्कार भी देते थे—कभी स्वर्ण मुद्रा, कभी तलवार, कभी कोई भूषण इत्यादि।

यथा समय मल्लिका की बारी आयी। उसने पहले कविता पढ़ी :

"किस विध पार करूं मैं भव-सागर को।"

'इस संसार रूपी अंधकार में मैं नहीं जानती कहां से आयी हूं। न ही लक्ष्य का ज्ञान है। मार्ग भी राज मार्ग नहीं, बीहड़ जंगल है। बाघ, सिंह, हिंसक जन्तु चीर-फाड़कर खा जाने को भागे आ रहे हैं। दूर प्रकाश है। वह उदय-काल का भानु है। उषाकाल की लालिमा से मैं रंगी जा रही हूं। वन तथा रात्रि की भयंकरता को मैं भूल गयी हूं और प्रकाश से आशान्वित हो कली की भांति प्रस्फुटित होने की प्रतीक्षा में हूं। मैं भूल गयी हूं कि दिन के पश्चात् रात होगी और पुनः अज्ञात स्थान में भटकने पर विवश हो जाऊंगी। इस समय तो प्रकाश है, ऊष्मा है, सुंदर, सब अति सुंदर है।'

कविता सुन सब वाह-वाह करने लगे। फिर उसने यही कविता गायी और नृत्य भी किया। दो घड़ी भर सब लोग स्तब्ध सुनते तथा देखते हुए अपने को भूल गये। नृत्य में जो मुद्रा मल्लिका ने बनायीं वह अच्छे-अच्छे कलाकारों को को भी चकित कर देने में सबल थी।

अवध नरेश इस बालिका को मंच पर वीणा की झंकार के साथ चक्कर काटते तथा कूदते-फांदते और फिर ताल सम पर पांव से घुंघरू की झंकार उत्पन्न करते देख, ऐसा अनुभव कर रहे थे मानो वह वायु से भी हल्की वस्तु है और हवा में उड़ रही है। बीच-बीच में उसकी मधुर संगीत-ध्वनि कानों को शांतिप्रिय महसूस हो रही थी। चमुचूड़ ने महाराज को कलाकार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

R 089.9143
GUR-V
Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की शोक, भय तथा प्रसन्नता की मुद्रा के साथ-साथ चिन्तित, भयभीत और प्रफुल्लित मुख देख कहा, ''महाराज का चुनाव अति सुंदर है।''

नरेश ने, जो मल्लिका को देखने में लीन था, चमुचूड़ के कहने का अर्थ नहीं समझा। उसने अचम्भे में उसकी ओर देख पूछा,

Central Library
167991
Gurukula Kangri (Deemed to be University) Haridwar

''क्या कहा?''

''महाराज की दृष्टि की परख बहुत श्रेष्ठ है।''

''हां, यदि पा सकूं तो।''

''आज्ञा दें तो उसे हरकर ले जाएं।''

महाराज ने बिना विचार किये सिर हिला इसका विरोध कर दिया और कहा, ''महाराज राम के वंशज को यह शोभा नहीं देता।''

''समय पड़ने पर भीष्म ने भी यह किया था।''

''वे चंद्रवंशी थे। आज उनका नाम लेने वाला भी कोई नहीं रहा। उनके पापकर्मों का फल ही तो है, आज भारत की यह दुर्दशा।''

चमुचूड़ को उस कथन पर स्वयं ही लज्जा लगने लगी। वह चुप हो गया और अवध नरेश पुनः मल्लिका को नृत्य करते हुए देखने लगा।

मल्लिका का नृत्य समाप्त हुआ तो कई ओर से उसे उपहार मिलने लगे। महाराज मुरहारी विक्रम ने अपने गले का मुक्त हार उतारकर मंच पर मल्लिका के सम्मुख फेंकते हुए कहा, ''धन्य हो देवी, धन्य हो!''

मल्लिका ने हार उठा लिया। चने बराबर मोतियों के सात लड़ों का हार था। हार को देख मल्लिका ने उपहार देने वाले की ओर देखा। वह समीप बैठे चमुचूड़ को पहचान गयी। उसने समझ लिया कि यह अवध नरेश का दिया है। यह समझ उसने हार पहना नहीं। उसे सभा संचालक के सम्मुख रख दिया। उसने पूछा, ''यह क्यों?''

''बहुत मूल्यवान प्रतीत होता है। कहीं भूल से न दे दिया हो।''

इस पर संचालक ने उठकर, हार को दिखाकर लोगों से पूछा, ''यह हार किसने, किसको दिया है?''

उसका उत्तर चमुचूड़ ने अपने स्थान पर खड़े होकर दिया :

''अवध नरेश श्री महाराज दशरथ पुत्र भगवान रामचंद्र वंशजोत्पन्न प्रजापालक श्री 108 मुरहारी विक्रम, अवध नरेश ने कवयित्री कलाकार मल्लिकादेवी को यह उसकी नृत्य कला में निपुणता के अर्थ पारितोषित किया है।''

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आचार्य ने मुक्ताहार को देखते हुए कहा, "यह बहुमूल्य प्रतीत होता है।"

"महाराज के भूषणागार में ऐसे सैकड़ों विद्यमान हैं।"

सभा-संचालक ने वह माला मल्लिका के गले में पहनाने के लिए हाथ बढ़ाया, परन्तु मल्लिका ने उसे दोनों हाथों में ले लिया और धीरे से कहा, "गुरुदेव ! क्षमा करें।"

मल्लिका ने वह हार अपने बाएं हाथ में लपेट लिया और हाथ जोड़कर श्रोतागणों को धन्यवाद कह अपना स्थान ले लिया।

: 5 :

भानुमित्र ने मल्लिका की मां की दृष्टि बदली देखी थी। उसने उसकी युक्ति, 'जितना मूल्यवान रत्न होता है, उतनी सुदृढ़ तिजोरी उसकी रक्षा के लिए चाहिए' सुनी थी। एकाएक मल्लिका की मां की चिंता और मल्लिका की प्रशंसा के लिए एक विश्वविद्यालय के महोत्सव पर आये दर्शक का मल्लिका से मिलने आना, संबंध रखने वाली बातें प्रतीत होने लगी थीं। इससे वह अपने विषय में सोचने पर विवश हो अपने निवास स्थान पर जा पहुंचा। एक बड़े से आगार में दस विद्यार्थियों के लिए शयन-पट्ट और संदूक रखे थे। इस प्रकार के सौ के ऊपर आगारों की एक पंक्ति थी।

अपने भवन में पहुंच अपने शयन पट्ट पर बैठ वह अपने भूत, वर्तमान और भविष्य पर विचार करने लगा। विद्यार्थी लोग भोजन करने गये हुए थे। भोजनोपरान्त वे युद्ध रचना देखने चले गये। अतः भवन में पूर्ण एकांत था। वह विचार करने लगा—कैसे मल्लिका से उसकी प्रथम भेंट हुई, फिर कैसे वह आकर मेल-मिलाप उत्पन्न करने लगी। किस-किस प्रकार उसके माता तथा संबन्धियों के सम्मुख उनका परस्पर मिलना होता था। विश्वविद्यालय के प्राय अध्यापक और विद्यार्थीगण उनके परस्पर मेल-जोल को जान उनके विवाह की घोषणा की प्रतीक्षा कर रहे थे और एकाएक किसी का बीच में आ पड़ना और मल्लिका की मां के विचारों में अंतर आ जाना, ये सब बातें भानुमित्र के सम्मुख चित्रवत् घूमने लगी।

वह सोचता था कि मल्लिका का उससे इतना लंबा सम्बंध रह चुका है कि उसका विवाह तो उसी से होगा। उसे विश्वास था कि मल्लिका किसी अन्य से विवाह के लिए उद्यत नहीं होगी। उसे यह भी समझ नहीं आता था कि मल्लिका की मां, इतनी बातें हो जाने पर, जो उसके और भानुमित्र के माता-पिता के भीतर हो चुकी थीं, कैसे किसी और से विवाह की बात

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कर सकती है।

भानुमित्र एक बात भूल रहा था कि मल्लिका की मां एक व्यापारी की पत्नी है और मल्लिका एक व्यापारी की लड़की। वह इस प्रकार के विचारों में लीन बैठा-बैठा थक गया तो अपने शयन पट्ट पर लेट गया। उसे झपकी आ गयी। जब उठा तो समय बहुत हो गया था। कवि-समारोह आरम्भ हो चुका था।

उसे मल्लिका से नीम के पेड़ के नीचे मिलने की बात स्मरण हुई तो वह भवन से बाहर निकल कर उस पेड़ की ओर चल पड़ा। पेड़ के नीचे कोई नहीं था। तुरंत वह अतिथि गृह की ओर गया। वहां पहुंच उसे विदित हुआ कि मां-बेटी चिरकाल से जा चुकी हैं। वहां से वह सभा-मंडप में पहुंचा। मंडप श्रोतागणों की भीड़ से पूर्णतः भर चुका था और कार्यक्रम आरंभ हो चुका था।

भानुमित्र कुछ काल तक बाहर खड़ा रहा। वहां वह भली-भांति न तो सुन सकता था, न ही देख सकता था। इससे पुनः निराशामय विचार उसके मन में आने लगे और वह वहां से पुनः नदी तट की ओर चला गया।

सभा समाप्त होने से पूर्व मल्लिका से मिलने की आशा में लौट आया और उस ओर जा खड़ा हुआ, जहां से महिलाएं मंडप से निकल रही थीं, परंतु मल्लिका उस मार्ग से नहीं निकली। उसको और उसकी मां को कुलपति के गृह को जाना था। वहां जाने के लिए दूसरी ओर के द्वार से निकलना ठीक जान मल्लिका और उसकी मां उधर को नहीं आयीं, जिधर भानुमित्र खड़ा उनकी प्रतीक्षा कर रहा था।

मल्लिका ने भवन की परछत्त पर चमुचूड़ के समीप बैठे ओजस्वी मुख अवध नरेश को देखा और फिर मुक्ताहार, जो उसने अपनी कलाई पर लपेटा हुआ था, को देखने लगी। इतने कुछ का प्रभाव उसके मन पर अवध नरेश के लिए को देखने लगी।

कुलपति के गृह पर पहुंच द्वार खटखटाया तो सेवक बाहर आ, उनका नाम और प्रयोजन पूछ गुरुदेव की स्वीकृति लेने भीतर चला गया।

भीतर से आज्ञा पा मां-बेटी, दोनों को गुरुदेव के सम्मुख ले गया। इस समय अंधेरा हो चला था। गुरुदेव हवनकुंड के सम्मुख सायं की नित्य क्रिया कर पालथी मारे बैठे थे। सेवक मल्लिका की मां तथा मल्लिका को हवन कुंड के, जिसमें अभी भी सगुंधित द्रव्य जल रहे थे, दूसरी ओर आसन पर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बिठा, दीपक जलाने लगा। यज्ञशाला इतनी बड़ी थी कि तीस-चालीस लोग सुगमता से बैठ सकते थे। इसे प्रकाशित करने के लिए ख्यूट लगी थीं, जिन पर पीतल के दीपक रखे थे। उनमें तेल और बत्ती तो सेवक दिन के समय ही डाल चुके थे। इस कारण जलाने में समय नहीं लगा। दीपकों के जलाने से यज्ञशाला प्रकाशमय हो उठी।

प्रकाश होने पर कुलपति ने आंखें खोली और चांदी के बारीक तारों के समान श्वेत लंबी भौंहों के बीच से मल्लिका को देख और पहचान पूछने लगे, ''सुनाओ बेटी! किस प्रयोजन से आयी हो?''

''भगवन! में एक दूसरे देश की रहने वाली हूं। आज आपके विश्वविद्यालय में आये अतिथियों में से एक ने मेरे से विवाह करने का प्रस्ताव किया है। वह एक शक्तिशाली राज्य का नरेश है। मैंने उसके प्रस्ताव पर निर्णय देने से पूर्व उससे मिलने और उसके भावों को जानने की आवश्यकता अनुभव की है। मुझे भय है कि यदि मैंने उसे अस्वीकार किया तो वह मेरा बलपूर्वक अपहरण कर लेगा। मेरा इस देश में आपके अतिरिक्त और कोई रक्षक नहीं और आप रक्षा करने में सबल हैं। इस कारण मैंने उनसे भेंट करने और अपना निर्णय देने का समय और स्थान आपके गृह में निश्चित किया है।''

इस पर मुनि वैवस्वत मुस्कराये और बोले, ''मल्लिका बेटी! मैं तुम्हें अभयदान देता हूं। कौन है वह पुरुष, जिससे तुम भयभीत हो रही हो?''

''अवध नरेश श्री मुरहारी विक्रम।''

''ओह बेटी! वह तो मेरा शिष्य है। उससे तुम्हें भय नहीं करना चाहिए। फिर यह विश्वविद्यालय एक अंतर्राष्ट्रीय संस्था है। यहां कोई किसी प्रकार का ऊधम नहीं मचा सकता। वासनाधीन बहुत से लोग अधर्म करते हैं, परंतु यदि यहां किसी ने किंचित् भी अधर्म की चेष्टा की तो निश्चय जानो, उसको तपोबल से भस्म कर दूंगा।''

मल्लिका की मां मुस्कराई। गुरुदेव ने देख लिया और हंसते हुए कहा, ''यह तेरी मां है बेटी? इसे मेरे कथन पर विश्वास नहीं हुआ। इतना तो तुम समझ ही सकती हो कि अवध नरेश के अतिरिक्त और भी राजा - महाराजा यहां उपस्थित हैं। पांचाल के नरेश भी यहां विद्यमान हैं, जिनका राज्य लांघकर ही तो अवध जाया जा सकता है। यदि अवध नरेश ने कुछ भी गड़बड़ की तो वह पांच कोस से अधिक दूर नहीं जा सकेगा। उसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पकड़कर पुनः यहां वापस लाया जा सकता है।''

अभी बातचीत हो ही रही थी कि सेवक आया और अवध नरेश के आने की सूचना दे उत्तर की प्रतीक्षा करने लगा।

कुलपति ने कहा, ''केवल महाराज को आने की स्वीकृति है। अन्य किसी भी कर्मचारी को साथ नहीं आना चाहिए।''

अवध नरेश भीतर आ प्रणाम कर सम्मुख खड़ा हो गया। कुलपति ने उसे अपनी दाहिनी ओर बैठ जाने का संकेत कर पूछा :

''मुरहारी विक्रम! कैसे आना हुआ?''

''गुरुदेव! इस वर्ष ब्रह्मावर्त के तीर्थ स्थानों पर भ्रमण करता हुआ यहां भी आया हूं। वसन्तोत्सव को देखते हुए अति अनमोल वस्तु दिखायी दी, तो उसे पा लेने की अभिलाषा जाग उठी। उसे पाने के लिए आपके चरणों में उपस्थित होना आवश्यक हो गया, तो आपको कष्ट देने चला आया हूं। वह अनमोल रत्न यह मल्लिका देवी हैं।''

मल्लिका नरेश के मुख के ओज, उसके व्यवहार की सभ्यता तथा भाषा की मधुरता देख सुन रही थी। उसे भानुमित्र इस महान पुरुष के सम्मुख एक सर्वथा साधारण पुरुष प्रतीत हुआ। इस पर भी उसने अभी तक निर्णय नहीं किया। उसने पूछा, ''यदि मैं आपसे कुछ पूछूं तो उत्तर देंगे?''

''इसी अर्थ तो उपस्थित हुआ हूं।''

''आप तो भगवान राम के वंशज हैं न? यदि आप कहेंगे सत्य ही तो कहेंगे। मैं यह जानना चाहती हूं कि यदि मैं आपको स्वीकार न करूं तो आप क्या करेंगे?''

नरेश का मुख मलिन हो गया। उसे इस प्रश्न की आशा नहीं थी। इस पर भी मन कड़ा करके उसने कहा, ''अपने दुर्भाग्य को स्वीकार कर यहां से चला जाऊंगा।''

''देखिये श्रीमान! मैं यहां निस्सहाय, निराश्रय और अबला हूं। मैं आप जैसे महिपति के विरोध को सहन नहीं कर सकती।''

''देवी! मैं राजा हूं और मेरा धर्म है कि मैं यथाशक्ति संसार की सर्वश्रेष्ठ विभूतियों को अपने राज्य में एकत्रित करता रहूं। संसार की विभूतियों में सर्वोपरि आप हैं। इस पर भी गुरुदेव के चरणों में बैठ मैं यह वचन देता हूं कि मैं आपको न जीत सकना अपना तथा अपने राज्य का दुर्भाग्य मान, बिना किसी प्रकार की आपत्ति उठाये यहां से चला जाऊंगा। देवी! मैं आर्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संतान हूं। आर्य लोग स्त्रियों का मान करते हैं, उनकी पूजा करते हैं, परन्तु यह अपहरण तो उनका अपमान होने से पाप हो जाएगा।''

''तो कृष्ण ने रुक्मिणी का अपहरण कर पाप किया था?''

''देवी! यह बात आपको किसने बताई? कृष्ण ने रुक्मिणी का अपहरण किये जाते बचाया था। अपनी इच्छा से कोई स्त्री जाती हुई भी क्या अपहरण की गयी समझती हैं आप?''

मल्लिका निरुत्तर हो गयी। इस पर उसने बात बदल दी और पूछा :

''मैं एक व्यापारी की कन्या हूं। आप क्षत्रिय वंश शिरोमणि एक राज्य के महाराजा हैं। भला आपने मुझमें क्या देखा है, जो इस प्रकार मुझे ऊंचे वर्ण में ले जाना चाहते हैं? शारीरिक रूप तो एक बहुत ही तुच्छ वस्तु है। किसी भी साधारण सी घटना से बिगड़ सकती है।''

''मैंने तो रूप देखकर ही समझा था कि इतना सुंदर कलेवर रखने वाली मन और बुद्धि से निकृष्ट नहीं हो सकती, परंतु अब दो घड़ी भर जो आपका कला प्रदर्शन देख आया हूं, इससे मुझे विश्वास हो गया है कि मेरा अनुमान सत्य है।''

''परंतु श्रीमान! यह भी मात्र केवल बाहरी बात ही है। स्वभाव क्या शरीर को मोड़ने घुमाने के अभ्यास से पृथक और अधिक आवश्यक नहीं?''

''देवी! तुम्हारे स्वभाव तथा शील में संदेह कर मुझे तक्षशिला की शिक्षा-दीक्षा में संदेह करना पड़ेगा। ऐसी धृष्टता मैं नहीं कर सकता। मैं भी तो इसी विश्वविद्यालय का तथा इन्हीं गुरुजनों के चरणों में शिक्षा प्राप्त स्नातक हूं। इससे मुझे अपने स्वभाव और चरित्र पर भी संदेह हो उठेगा।''

एकाएक मल्लिका ने बात बदल दी। उसने पूछा, ''आपकी कितनी पत्नियां हैं पहले?''

''मेरी हँसी कर रही हो देवी!''

''ऐसे राजा-महाराजा बहुत हैं, जो कई-कई पत्नियां रखते हैं।''

''मैं देवी को पटरानी बनाना चाहता हूं।''

''जैसे महाराजा दशरथ ने कैकेयी को बनाया था।''

अपने पूर्वज पर कटाक्ष सुन अवध नरेश का मुख लाल हो गया, परंतु तुरंत ही अपने को वश में कर कहने लगा, ''देवी! क्या मैं आपसे न्याय की भी आशा नहीं कर सकता? आप इतनी पढ़ लिखकर भी क्यों इतनी अयुक्तिसंगत बातें कर रही हैं आज? महाराज दशरथ ने संतान के लिए

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विवाह किये थे अथवा वासना तृप्ति के लिए? आप शायद इतिहास नहीं पढ़ीं?

"देखो देवी! दुर्भाग्य की बात महाराजा दशरथ के साथ यह हुई थी कि पहले तो तीनों में से किसी भी रानी को संतान नहीं हो रही थी और जब हुई तो तीनों के हो गयी। ऐसी बात सर्वत्र और सदैव नहीं हो सकती।"

इस थोड़ी सी डांट पर मल्लिका चुप हो गयी और अपने परास्त होने से मन ही मन प्रसन्न हो, परंतु प्रकट में अन्यमनस्क सी बैठी रही। कुछ काल पर्यन्त अवध नरेश पूछने लगा, "क्या मैं देवी के मनोभावों को जान सकता हूं कि वह क्या चाहती हैं?"

"मैं अभी समझ नहीं सकी कि क्या करूं?"

"देवी! वही करो जो मन कहता है। हां, इतना अवश्य समझ लेना चाहिए कि पीतल तथा कांसे के मुकुट में हीरे नहीं लगाये जाते। रत्न स्वर्ण के भूषण में शोभा पाते हैं। अवध की महारानी बनो। भारत-भर में कीर्ति और यश पाओगी। अवध इस समय वैभवमय और शक्तिशाली राज्य है। और एक ओर मगध से, वैशाली से दूसरी ओर तथा अंग, बंग, हस्तिनापुर, कलिंग, कलिन्दी और मल्ल राज्यों से मित्रता रखता है। हमारी प्रजा हमसे प्रसन्न है। हमारे यहां ब्राह्मण और शूद्रों का मान होता है। वैश्य सेठ हमारे यहां सुख और चैन से व्यापार करते हैं और धर्म-कर्म करते हैं। हमारे राज्य में चोर नहीं हैं, असत्यवादी नहीं हैं, परस्त्रीगामी नहीं हैं। सब युवा-युवतियां विवाहित सुखमय जीवन व्यतीत करती हैं।

"ऐसे देश में आप सबकी पूज्य महारानी बनकर रहेंगी। जहां अवध के लोग हमसे प्रसन्न होंगे, वहां आप भी यश और कीर्ति की भागी बनेंगी।"

मल्लिका इस चित्र को सुनकर चकाचौंध रह गयी। जो दृश्य उसके सम्मुख खींचा गया, उसमें भानुमित्र एक क्षुद्र प्रजा दिखायी दिया। उसने भूमि की ओर देखते हुए कहा, "मैं आपको वरती हूं।"

"धन्यवाद देवी! मुझे गदगद कर दिया आपने। मैं जन्मभर आज के दिन को नहीं भूलूंगा।" अवध नरेश का कहना था।

"चिरंजीवी रहो, बेटी!" गुरुदेव का आशीर्वाद था।

मां के प्रसन्नता के आंसू बहने लगे। उसने अपनी बेटी के सिर पर हाथ फेरते हुए माथा चूम लिया।

कुलपति ने सेवक को एक पुष्पमाला लाने को कहा। वह पूजा गृह में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गया और एक बड़ी सी पुष्पमाला उठा लाया। मल्लिका ने उठ वह माला अपने हाथ में ले ली और अवध नरेश के गले में डालकर, उन्हें हाथ जोड़कर नमस्कार कर दिया।

इस समय चमुचूड़ और महाराज के अन्य सेवक भीतर आ गये। कानों-कान मल्लिका के महाराज अवध से विवाह होने का समाचार बाहर जा पहुंचा था। चमुचूड़ को देख महाराज ने आज्ञा दी, "तक्षशिला विश्वविद्यालय को एक लाख स्वर्ण मुद्राएं दी जाएं और देखो, आज ही अवध की महारानी के उपयुक्त भूषण तथा वस्त्र मल्लिका देवी के निवास स्थान पर पहुंचा दो।"

पश्चात् गुरुदेव ने दोनों को संबोधन कर पूछा, "विवाह कब होगा?"

"कल प्रातः काल।" अवध नरेश ने कहा, "हम कल मध्याह्न समय चले जाना चाहते हैं।"

गुरुदेव ने मल्लिका की मां की ओर प्रश्न-भरी दृष्टि से देखा। उसने केवल इतना कहा, "जैसी महाराज की इच्छा हो।"

बात निश्चित हो गयी। गुरुदेव ने कह दिया, "कल प्रातः काल यज्ञ के समय तुम दोनों का विवाह संस्कार पढ़ा जायेगा। देवी, सौभाग्यवती और जिचरंजीव रहो।" पश्चात् उन्होंने अपने सेवक को संबोधन कर कहा, "इस विवाहोत्सव के उपलक्ष्य में विश्वविद्यालय भर में ढोल, तुरई, नगाड़े तथा शंख बजाए जाएं और विवाह का समारोह मनाया जाए।"

: 6 :

कवि सम्मेलन के विसर्जन पर जब सभा मंडप से सब स्त्रियां जा चुकीं, तो भानुमित्र को कुछ चिंता हुई। वह सभा मंडप के भीतर चला गया। भवन खाली हो गया था और मल्लिका वहां से जा चुकी थी। इससे वह पुनः द्वार पर आया और अतिथि गृह के मार्ग में नीम के पेड़ तक गया। उन्हें वहां भी न देख निराश हो अपने निवास गृह लौट आया। वहां अन्य सहपाठियों के साथ भोजनालय में चला गया और हाथ-मुख तथा पांव धो कुल्ला कर आसन पर जा बैठा। भोजन परोसा गया और वह अपने विचारों में लीन, साथियों का वार्तालाप, जो कवि समारोह के विषय में हो रहा था, न सुनता हुआ भोजन करने लगा। इस पर भी उनके वार्तालाप में जब मल्लिका का नाम आया, तो वह एकाग्रचित् नहीं रह सका और ज्यूं-त्यूं मल्लिका के विषय की बात सुनने लगा। एक ने कहा, "मल्लिका ने सबसे उपयुक्त उपहार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पाया है।''

भानुमित्र ने चौकन्ना हो पूछा, ''क्या पाया है?''

''तो ! तुम नहीं गये थे वहां?''

''नहीं। मैं भवन के बाहर ही रह गया था।''

''अवध नरेश मुरहारी विक्रम ने, जो हमारे विश्वविद्यालय के ही स्नातक हैं, एक बहुमूल्य मुक्ताहार भेंट में दिया है।''

''किस कविता पर?''

''किस विधि पार करूं....का गायन करने पर तथा इसके साथ नृत्य करने पर। सभा संचालक साहित्याचार्य कहते थे कि दस सहस्र स्वर्ण से भी कम दाम की वस्तु नहीं है।''

भानुमित्र चुप रहा। वह विचार कर रहा था कि मल्लिका मिलती तो उस हार को देखता। उसका मन कहता था कि उसे उसकी प्रतीक्षा करनी चाहिए थी। शायद उपहार की खुशी में उसे भूल गयी हो। इस विचार के आते ही उसका हृदय बैठने लगा। उसे चुप देख उसके साथी ने हार मिलने का दृश्य सविस्तार वर्णन कर दिया।

इस कथा को सुन भानुमित्र की चिंता और बढ़ गयी। वह देख रहा था मल्लिका द्रुत गति से ख्याति में उससे आगे निकल रही है। इससे उसे मल्लिका की मां का यह कथन पुनः स्मरण हो आया कि मूल्यवान रत्न के लिए सुदृढ़ तिजोरी चाहिए।

इन्हीं विचारों में वह भोजन करता रहा। भोज़न समाप्त हुआ और वह हाथ धो, कुल्ला कर अपने निवास गृह में आ गया और अपने शयन पट पर लेट विश्राम करने लगा। वह सोच रहा था कि अगले दिन प्रातः काल ही वह मल्लिका से मिलकर विवाह के विषय में बात करेगा।

वह अभी इन विचारों में लीन ही था कि बाहर शंख, भेरी, दुन्दुभि इत्यादि का स्वर सुनाई दिया। सब विद्यार्थी इससे सावधान होकर सुनने लगे। एक विद्यार्थी बाहर से आया। वह अपने संबंधियों को, जो महोत्सव देखने आये हुए थे, अतिथि गृह में छोड़ने गया हुआ था। वह आया और इन शंख आदि बजने का कारण बताने लगा, ''मल्लिका ने अवध नरेश को वरने का वचन दे दिया है और कल विवाह होगा।''

भानुमित्र जो अपने शयन पट पर लेटा हुआ था, इस समाचार को सुन उठ खड़ा हुआ, मानो उसे बिच्छू ने काट खाया हो। उसने नवागन्तुक से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पूछा, "क्या हुआ है?"

"गांधार निवासिनी मल्लिका ने परम पूजनीय कुलपतिजी के सम्मुख अवध नरेश से विवाह करना स्वीकार कर लिया है। बात पूर्ण विश्वविद्यालय में फैल गयी है और शंख, भेरी, झांझर इत्यादि बजाकर प्रसन्नता प्रकट कर रहे हैं। कल प्रातः काल मंदिर में हवनोपरांत उनका विवाह होगा और कुलपति स्वयं विवाह करायेंगे। अवध नरेश ने इस उपलक्ष्य में एक लक्ष्य स्वर्ण मुद्राएं विश्वविद्यालय को दान में दी हैं।"

"तो इस धन के लोभ से गुरुदेव ने यह विवाह निश्चित कराया है?" भानुमित्र ने माथे पर त्योरी चढ़ाकर पूछा।

"मल्लिका ने तो स्वयंवर किया है। उसने कितनी ही देर तक नरेश से बातें की और फिर उसे अपना पति बनाना स्वीकार किया है।"

"सब कुछ धन के लोभ में हुआ है।"

"तो धन का लोभ करना कोई बुरी बात है?" एक ने पूछ लिया।

विद्यार्थी निवास में भी शंख बजने लगे। इससे उल्लास और आह्लाद उत्पन्न हो गया। भानुमित्र के मन में क्रोध, निराशा और घृणा की बाढ़ उठ आई। उसको यह सब तुमुल नाद पागल बनाने लगा और वह चुपचाप निवास गृह से निकल, पागलों की भांति दूर जंगल की ओर भाग निकला। वह इस प्रसन्नता और आनन्द ध्वनि की पहुंच से बाहर हो जाना चाहता था।

घड़ी-डेढ़ घड़ी के हर्ष प्रदर्शन के पश्चात् शंख इत्यादि बंद हो गये और सब लोग विश्राम करने के लिए अपने-अपने निवास स्थान पर चले गये।

भानुमित्र दूर कल-कल करती नदी के तट पर जा बैठा। सुनसान और प्रशान्त रात्रि के अंधियारे में, केवल तारों के प्रकाश में काली सी हिलती हुई चादर की भांति बहती हुई नदी को देख वह असार संसार के निष्प्रयोजन बहने पर विचार करने लगा।

इन्हीं विचारों में वह कितने ही काल तक वहां बैठा रहा। इस ऋतु में राते वहां ठंडी होती हैं और फिर उत्तर-पश्चिम की वायु चलने लगी थी। इस ठंडक ने उसके मस्तिष्क का उन्माद ठंडा कर दिया था। वह सोचने लगा था कि अवध नरेश से वह छोटा है। यदि मल्लिका ने नरेश को उस पर उपमा दी है तो अचंभा करने की बात नहीं। इस प्रकार क्रोधावस्था से निराशा में हो, उसे वस्तुस्थिति का भान हुआ। इससे उसे अपने पर शोक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तथा वैराग्य उत्पन्न हो गया।

इस समय उसे सर्दी लगने लगी और वह अपने स्थान से उठ, निवास गृह को वापस लौट आया।

: 7 :

भानुमित्र को रात को नींद नहीं आयी। वह प्रातःकाल होते ही मल्लिका को बधाई देने के लिए उतावला हो उठा। शौचादि से निवृत्त हो, वस्त्र पहन मल्लिका से मिलने चल पड़ा। वह विवाह से पूर्व ही उसे मिलकर बधाई देना चाहता था। वह मंदिर में जा पहुंचा, जहां विवाह-संस्कार होना था। वहां अवध नरेश तथा अन्य राजागण और प्रतिष्ठित दर्शक पहले ही उपस्थित हो गये थे। भानुमित्र ने एक साधारण से व्यक्ति से, जो किसी का सेवक प्रतीत होता था, पूछा, ''वर कौन है?''

उसने सिर से पांव तक स्वर्णजड़ित रेशमी वस्त्र पहने एक अति सुंदर युवक को दिखा दिया। उसके सिर पर पहनने का पहरावा न तो मुकुट था और न ही टोपी। एक विचित्र प्रकार का पहरावा था, जिस पर रत्न जड़े हुए थे। भानुमित्र को समझ आ गयी कि मल्लिका का उसे छोड़, इस विशिष्ट व्यक्ति को वरना स्वाभाविक ही है।

उसे अपने माता-पिता पर क्रोध आ रहा था। वह सोचता था कि उस जैसे कुरूप तथा निर्धन को इतनी उच्च शिक्षा क्यों दी गयी। माता-पिता से अधिक वह भगवान् को कोस रहा था। उसे इतनी तीव्र बुद्धि दी तो उसके अनुकूल रूप और धन क्यों नहीं दिया। इस समय उसे स्मरण हो आया कि वह मल्लिका से मिलने आया है। उसने फिर उसी सेवक से पूछा, ''वधू आयी है क्या?''

सेवक ने इस विद्यार्थी की ओर देख कुछ अचम्भे में उत्तर दिया, ''गुरु-गृह में है। वहां से अभी लायी जाएगी।''

यह सुन भानुमित्र गुरु-गृह की और चल पड़ा। मंदिर से गुरु-गृह तक मार्ग के दोनों ओर विद्यार्थी तथा विद्यार्थिनियां खड़ी थीं। प्रत्येक व्यक्ति वधू की सज-धज और उसकी शोभायात्रा देखने के लिए उत्सुक प्रतीत होता था। भानुमित्र समझ गया कि मार्ग में मल्लिका को एकांत में देखना असंभव है। इसी आशा से वह गुरु-गृह में पहुंच गया था। वहां पर भी दर्शकों की भीड़ लग रही थी। जब वह वहां पहुंचा, मल्लिका अति सुंदर भूषण और वसन पहने अपनी मां के साथ गुरु गृह से निकल रही थी। उसके साथ वयोवृद्ध

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुलपति मुनि वैवस्वत, रेशमी वस्त्र पहने, अपने श्वेत दाढ़ी को प्रसन्नता से खुजलाते हुए बाहर आये और मल्लिका के साथ चल पड़े। उनके साथ ही महिला विद्यालय की अध्यापिकाएं, छात्राएं और पीछे मल्लिका की सखियां थीं। इस प्रकार वधू मंदिर की ओर चल पड़ी। मार्ग के दोनों ओर दर्शकों की भीड़ थी। भानुमित्र के लिए मल्लिका से बातचीत करने का अवसर नहीं था। मल्लिका चलती हुई भूमि की ओर देख रही थी। वह नहीं जानती थी कि कौन-कौन उसे देखने वहां पहुंचे थे।

जब मल्लिका मंदिर की ओर जा रही थी तो मार्ग के दोनों ओर खड़े लोग भी उसके पीछे-पीछे मंदिर की ओर चल पड़े। एक भारी जनसमूह मल्लिका के पीछे-पीछे चला जा रहा था। भानुमित्र भी चुबंक की ओर लौहकण की भांति खिंचा हुआ, उस भीड़ में उसके पीछे जाने लगा। कुछ दूर तक तो वह उसी ओर खिंचता चला गया, परंतु तुरंत ही उसके मन में आत्मग्लानि उत्पन्न हो गयी और वह अपने को इस भीड़ से पृथक् करने का यत्न करने लगा। वह हिम्मत कर एक ओर होकर भीड़ से बाहर खड़ा हो गया। मल्लिका तथा भीड़ आगे निकल गयी और वह अकेला खड़ा रह गया। उसने मन में विचार किया कि वह क्यों उसके पीछे जा रहा था? ये लोग क्यों उसके पीछे भागे जा रहे हैं? यह बचपना है, ऐसा समझ उसने मंदिर की ओर जाने के स्थान, अपने निवास गृह का मार्ग ले लिया।

उसने निश्चय कर लिया कि अब उसके लिए विश्वविद्यालय में रहने का कोई अर्थ नहीं है। इससे निवास गृह में पहुंच उसने अपना सामान बांध लिया। सामान बहुत ही संक्षिप्त था। पहनने के कपड़ों की एक गठरी बन गयी। फिर उपाधि पत्रक तथा विशेष योग्यता के उपलक्ष्य में मिली संदूकची इत्यादि की दूसरी गठरी बंध गयी। दोनों को एक चादर में बांध, कंधे पर लटका लिया—एक को आगे और एक को पीछे। अपना नया जूता निकाल, पहनकर घर को प्रस्थान करने के लिए तैयार हो गया।

इस समय निवास गृह के सब विद्यार्थी मल्लिका का विवाह देखने गये हुए थे। भानुमित्र तैयार हो अपने सामान को कंधे पर डाल, एक क्षण के लिए अपने गृह को देखता रहा और आठ वर्ष के अपने उस गृह के संबंध को स्मरण कर, अब उसे छोड़ने पर दुःख अनुभव कर रहा था।

गृह के बाहर निकल उसके मन में अपने राजनीति के गुरु जयदेव से आशीर्वाद लेने का विचार आया। वह उनके निवास पर पहुंच गया। आचार्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जयदेव मल्लिका का विवाह देखने गये थे। गुरु पत्नी गृह पर थी। भानुमित्र के द्वार खटखटाने पर वह बाहर आयी और भानुमित्र को यात्रा के लिए तैयार देख सब समझ गयी। वह और प्रायः विश्वविद्यालय के अन्य लोग जानते थे कि भानुमित्र से मल्लिका का विवाह होना तय था। इससे उसने भानुमित्र से पूछा, ''जा रहे हो वत्स?''

''हां माताजी! गुरुजी कहां हैं?''

''वह तो बेटे! विवाह देखने गये हैं। मुनि वैवस्वतजी विवाह पढ़ा रहे हैं न! ये उनकी सहायता करने गये हैं।''

''जाने से पूर्व गुरुदेव से आशीर्वाद लेने आया हूं। सबसे अधिक आपसे ही संबंध रहा है। इससे आपका ही आशीर्वाद फलेगा।''

''तो बेटा बैठ जाओ। अभी आते ही होंगे।'' इतना कह गुरुपत्नी ने उसे गृह के भीतर बुलाकर आगार में भूमि पर बिछे आसन पर बिठा दिया। स्वयं एक ऊंची चौकी पर बैठ गयी। भानुमित्र चुपचाप बैठा रहा। गुरुपत्नी ने कुछ बात करने के लिए मल्लिका की ही बात चला दी। कहने लगी, ''बेटा भानुमित्र! मल्लिका का तो तुम्हारे संग विवाह होना था?''

''हां माताजी।''

''फिर यह कैसे हुआ?''

''जब मेरी निर्धनता की तुलना में अवध नरेश से की गयी तो मैं हार गया।''

''इस हार का तुम्हें दुःख है बेटा?''

''मुझे कुछ ऐसा अनुभव हो रहा है कि मेरे पांव तले से भूमि ही खिसक गयी है। मुझे संसार धोखा, माया प्रतीत होने लगा है। इसमें जीने का कुछ अर्थ भी है या नहीं, कह नहीं सकता।''

''ठीक है बेटा! इस सारहीन संसार में अपना कुछ है या नहीं, समझ नहीं आता। आप सब विद्यार्थी कितना स्नेह करते हैं आचार्य जी से, पर वे तो बिना पुत्र के अपनी गति ही नहीं मानते। पुत्र न दे सकने से मैं भी अप्रिय हो गयी हूं। सर्वत्र बात एक ही है। किसी को पुत्र प्रिय है और किसी को धन। वास्तव में मोह ही संसार में दुःख का कारण है।''

''यही तो मेरा कहना है। मुझे तो सब कुछ नीरस प्रतीत होने लगा है।''

''अब यहां से किधर जाना चाहते हो?''

''अभी श्रीनगर में पिताजी के पास जाऊंगा। उनसे राय कर भविष्य के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय में विचार करूंगा।''

''सुना है श्रीनगर बहुत सुंदर स्थान है?''

''श्रीनगर तो सुंदर है ही, परन्तु काश्मीर के अन्य स्थान तो इससे भी अधिक सुंदर हैं। पहाड़, झरने, नदियां और जलाशय एक-से-एक अधिक दर्शनीय स्थान हैं। इस पर भी वहां अधिक लोग नहीं रहते और जो कोई वहां रहते हैं, निर्धन हैं। वहां के व्यापारी भी कुछ अधिक धनी नहीं।''

''हम कई वर्ष से वहां भ्रमणार्थ जाने का विचार कर रहे हैं। इस वर्ष आशा करते हैं कि यहां से निकलेंगे और कैलाश और गंगोत्री तक जायेंगे।''

इस प्रकार निष्प्रयोजन बातें चल रही थीं, जब आचार्य जयदेव आये। भानुमित्र को वहां बैठा देख समझ गये कि विदा मांगने आया है। जयदेव का भानुमित्र पर विशेष स्नेह था। वह उनके पाठ्य विषय का योग्य विद्यार्थी था। इससे बहुत स्नेह से उसे संबोधन कर बोले, ''वत्स! जा रहे हो?''

''गुरुदेव, हां। मेरा पठन कार्य आपकी कृपा से समाप्त हो गया है।''

''देखा वत्स। मेरा तुमसे एक कहना है। विवाह उस स्त्री से करना, जिसका पेट भरने के लिए तुम्हारे पास धन हो। वैश्य अर्थात् व्यापारी श्रेणी की लड़कियों की तृष्णाएं बहुत लंबी-चौड़ी होती हैं। एक सत्यवादी धर्मनिष्ठ ब्राह्मण उनकी तृष्णाओं की पूर्ति कदाचित नहीं कर सकता। इससे मेरी सम्मति है कि किसी ब्राह्मण कन्या से विवाह करना। उसके लिए न तो तुम्हें अपनी न्याय-दृष्टि और न ही धर्म निष्ठा छोड़नी पड़ेगी। समय पड़ने पर सूखे सत्तू और नमक खाकर जीवन निर्वाह करने की क्षमता उसमें होगी। फिर धन-वैभव, अतुल सुख संपदा भी उसे सतीत्व से गिराने में सबल नहीं होंगी। अब तुम जा सकते हो। कभी-कभी अन्य विद्यार्थियों की भांति विश्वविद्यालय को स्मरण रखना। कभी पत्र भेजने का समय मिले तो अवश्य लिखना।''

इतना कह आचार्य ने भानुमित्र के सिर पर हाथ रखा और आशीर्वाद दे विदा कर दिया। भानुमित्र ने गुरु तथा गुरुपत्नी दोनों के चरण स्पर्श किये और वहां से कुलपति से भेंट करने के लिए चल पड़ा।

: 8 :

कुलपति मुनि वैवस्वत के गृह के सम्मुख अब भी भीड़ लगी हुई थी। अवध नरेश और मल्लिका, जो अवध की महारानी बन चुकी थी, गुरुदेव से विदा लेने आये हुए थे। अवध नरेश के सब कर्मचारी और उनकी सवारी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के लिए रथ, घोड़े, ऊंट इत्यादि खड़े थे। रक्षकों का दल भी था। सब तक्षशिला से विदा होने को तैयार थे। मार्ग में ठहरने के अगले स्थान पर प्रबंध करने के लिए बहुत लोग प्रातःकाल ही भेजे जा चुके थे। इस भीड़ को देख भानुमित्र एक ओर हटकर खड़ा हो गया। उसने यही उचित समझा कि इनको जा लेने दे और पीछे कुलपति से विदा मांगने जायेगा।

कुछ समय पश्चात मल्लिका और अवध नरेश गुरु गृह से निकले और सवार होने के लिए रथ के पास पहुंचे। इस समय मल्लिका की दृष्टि दूर खड़े भानुमित्र पर पड़ गयी। वह रथ पर चढ़ते चढ़ते रुक गयी। मल्लिका ने इधर-उधर किसी सेवक को बुलाने के लिए देखा। केवल चमुचूड़ ही समीप खड़ा था। उसने हाथ के संकेत से उसे बुलाया और फिर भानुमित्र को दिखाकर कहा, "उस विद्यार्थी को इधर बुला लाओ।"

चमुचूड़ ने नाक चढ़ाकर भानुमित्र की ओर देखा, परंतु महारानी की आज्ञापालन के लिए चल पड़ा। भानुमित्र मल्लिका को गुरुगृह से निकलते देख उनकी ओर पीठ कर खड़ा हो गया था और वह देख नहीं रहा था कि महारानी के आदेश से चमुचूड़ उसकी ओर आ रहा है। इसका उसे तब ज्ञान हुआ, जब चमुचूड़ ने कंधे पर हाथ रखकर कहा, "चलो, महारानीजी बुलाती हैं।"

भानुमित्र ने चमुचूड़ के मुख पर देखा और फिर गर्दन सीधी कर बोला, "मैं महारानी जी का सेवक नहीं हूं।"

चमुचूड़ ने उसका मुख देखा तो पहचान गया कि यह वही बालक है, जिसके साथ उसने मल्लिका को हंसते और बातें करते देखा था। इससे उसे अपनी भूल अनुभव हुई। अतएव कुछ नम्रता से बोला, "मित्र! मेरा आशय ऐसा नहीं था। महारानी जी विदा होने से पूर्व आपसे मिलना चाहती हैं।"

"परंतु मैं मिलना नहीं चाहता।"

समीप खड़े लोग भानुमित्र की धृष्टता देख चकित हो गये। चमुचूड़ ने कहा, "बहुत ही असभ्य हो तुम! अयोध्या में होते तो जिह्वा निकलवा देता। विश्वविद्यालय की पवित्रता की संरक्षकता में होने से बच गये।"

इतना कह चमुचूड़ लौटने ही वाला था कि महारानी स्वयं वहां आ पहुंची। उसे आये देख भानुमित्र ने कुछ नम्र हो पूछा, "देवी! मुझसे क्या चाहती हैं?"

मल्लिका ने भानुमित्र के विषाद से काले मुख को देखा और उसके भावों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का अनुमान लगाकर कहा, "मित्र! अब मैं जा रही हूं। क्या तुम मेरे लिए शुभकामना नहीं करोगे?"

"देवी! मेरे जैसे निर्धन की शुभकामना का मूल्य ही क्या है? उसके मिलने अथवा न मिलने से कुछ अंतर नहीं पड़ेगा।"

"फिर भी बचपन के साथी मित्र! तुम्हारी शुभकामना को मैं मूल्यवान समझती हूं।"

"सत्य? मुझे संदेह है देवी! इस पर भी एक निर्धन प्रजा के लिए अपने राजा तथा रानी के लिए शुभकामना करने के अतिरिक्त अन्य उपाय भी तो नहीं।"

महाराज भी इस समय वहां आ गये। मल्लिका ने उन्हें आये हुए देख हाथ जोड़, भानुमित्र को नमस्कार करते हुए कहा, "कभी अयोध्या में आओ मित्र! तो अवश्य मिलना।"

इतना कहकर वह महाराज के साथ रथ के समीप आ गयी और ज्यों ही रथ पर बैठी, रथ चल पड़ा। उसके पीछे सब सेवक-मंडल रथों, घोड़ों, ऊंटों पर सवार हो या पैदल चल पड़े। इनके चलने से उड़ती धूल में खड़ा भानुमित्र विचारों में लीन अपने को भूल गया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वैशाली

: 1 :

मानसिक क्लेश तथा शरीरिक दुःख सहन करते-करते मिट जाते हैं। साथ ही युवावस्था शरीरिक और मानसिक घावों को भर देने में सबल होती है।

जैसे घाव भरते समय उचित चिकित्सा नये बनते मांस में विकार नहीं आने देती, वैसा ही प्रभाव आचार्य जयदेव और भानुमित्र के पिता पंडित महिदेव के उपदेशों का हुआ। जब भानुमित्र अपने पिता के पास पहुंचा तो मल्लिका को न पाने योग्य एक वस्तु समझ मन से निकाल चुका था। अपनी माता को उसने पूरी कथा वैसे सुना दी, मानो उसका उससे कोई संबंध नहीं था। मां को यह विचार करने की आवश्यकता हुई कि भानुमित्र का विवाह शीघ्र हो जाए, जिससे मल्लिका की स्मृति उसके जीवन कार्य में बाधा न बन सके।

पास-पड़ोस तथा संबंधियों की लड़कियों को बुला-बुलाकर भानुमित्र के संपर्क में लाने का यत्न किया जाने लगा। एक-आध ने भानुमित्र की ओर रूचि दिखायी भी, परंतु भानुमित्र किसी से संतुष्ट नहीं हुआ। एक दिन उसने अपने पिता से कहा, ''पिताजी! मैं कहीं विदेश में जीविकोपार्जन करने जाना चाहता हूं। मैंने जो कुछ पढ़ा है, उसका उपयोग यहां काश्मीर में नहीं हो सकता। यहां राज्य को मेरी आवश्यकता नहीं है।''

पंडितजी तो यही चाहते थे, परंतु भानुमित्र की मां के डर से स्वयं यह प्रस्ताव उपस्थित करने में संकोच करते थे। अब भानुमित्र को स्वयं यह बात करते देख, उन्होंने उसे प्रोत्साहन दिया। मां नहीं मानती थी, परंतु एक आश्वासन पर कि किसी स्थान पर काम जम जाने पर माता-पिता को भी बुला भेजेगा, जाने की अनुमति देने को उद्यत हो गयी।

अब भानुमित्र ने अपने मस्तिष्क में भारत खंड का मानचित्र टटोलना आरम्भ किया। काश्मीर से लेकर रामेश्वर तक सब राज्यों पर एक-एक कर विचार किया। अंत में उसने अपने पिताजी की सम्मति से वैशाली में जाने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का निश्चय किया। एक तो वहां एक पंडित देवधर्मा, भानुमित्र के पिता के सहपाठी रहते थे। कभी दो-तीन वर्ष में एक-आध पत्र उनका आता था और उत्तर भेजा जाता था। इसके अतिरिक्त भानुमित्र सोच रहा था कि एक गणराज्य में उसके लिए अपना चातुर्य दिखाने और ख्याति प्राप्त करने का अवसर प्राप्त हो सकता है।

बात निश्चित हो गयी और तिथि मुहूर्त देख भानुमित्र, देवधर्मा के नाम, पिता का पत्र ले चल पड़ा। श्रीनगर से दो मास से कुछ अधिक काल बाद वैशाली के विशाल नगर के सम्मुख राज-मार्ग पर एक पंथागार में जा पहुंचा।

नगर के बाहर, नगर-द्वार से आधी घड़ी के मार्ग पर यह पंथागार नगर की गणिका के नाम पर चलता था। गणिका का नाम लक्ष्मी देवी था और उसने मरते समय यात्रियों की सुविधा के लिए, पत्थर का विशाल भवन बनवा, पंथागार के रूप में प्रयोग करने का आदेश लिख दिया था।

पंथागार में तीन सौ छोटे-बड़े आगार थे, जिनमें यात्री आराम से बिना शुल्क दिये रहते थे। प्रबंधकर्ताओं के लिए वेतन का प्रबंध गणिका की दूसरी संपत्ति से होता था।

भानुमित्र जब पंथागार के द्वार पर पहुंचा तो, वह इतने सुंदर तथा स्वच्छ भवन को देख, जिसका द्वार अवन्ति के श्वेत पत्थर से बना था, भीतर जाने में संकोच अनुभव करने लगा। उसके अपने वस्त्र मैले थे और स्थान-स्थान पर फट गये थे। जूता टूटा था, दिनभर यात्रा करने के कारण घुटनों तक टांगे मिट्टी में सनी हुई थीं। ऐसी अवस्था में वह लक्ष्मीदेवी के पंथागार के द्वार पर खड़ा संकोच से भीतर जाने के लिए साहस बांध रहा था। भवन के द्वारपाल ने उसे देखा तो मन के भावों को समझ, उसके पास पहुंच पूछने लगा, ''कहां से आ रहे हो युवक?''

''काश्मीर से, भद्र!''

''काश्मीर से?'' द्वारपाल ने भानुमित्र को सिर से पांव तक देखते हुए अचंभे में पूछो।

''हां।''

''यहां निवास करोगे?''

''मैं इस नगर में जीविका पाने की आशा लेकर आया हूं।''

''किसी के नाम का परिचय है?''

''है।''

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"किसके?"

"पंडित देवधर्मा काव्यतीर्थ का।"

"उनके नाम का कोई पत्र?"

"है।"

"तो तुम यहां ठहर सकते हो। आ जाओ।"

देवधर्मा के नाम की प्रतिष्ठा सुन उसका मन उत्साह से भर गया। द्वार के भीतर पहुंच द्वारपाल ने कहा, "युवक! वह देखो स्वच्छ जल की पुष्करिणी बनी है। उसमें जाकर अपने पांव, हाथ और मुख की धूल धो डालो। पश्चात् दक्षिण हाथ को चले जाओ। वहां इस पंथागार के संरक्षक सेठ भूधर बैठे हैं। उनसे जाकर कहना। वह तुम्हें निवास के लिए स्थान दे देंगे।"

भानुमित्र ने मुख-हाथ धोया और अपने मैले कपड़े गठरी में बांध, धुले वस्त्र पहन लिये। तदुपरांत वह कार्यालय में जा पहुंचा। वहां एक बृहद्-काय व्यक्ति को बैठे देख आशीर्वाद दे खड़ा हो गया। यही ढंग था, जिससे ब्राह्मण दूसरे वर्ण वालों को अपना परिचय देते थे। उस बृहद्-काय , कृष्ण-वर्ण, गोलमटोल व्यक्ति ने उसे सिर से पांव तक देख कहा, "आओ बालक! भीतर आ जाओ।"

भानुमित्र कार्यालय में चला गया। उस काले, नाटे तथा मोटे कर्मचारी ने स्वयं ही बात आरंभ कर दी, "मैं सेठ भूधर, इस भवन का प्रबंधक हूं। लक्ष्मीदेवी की मेरे पिता से मैत्री थी, इस कारण से वह भवन का प्रबंध पिता. जी पर छोड़ गयी हैं। उन्होंने यह प्रबंध मेरे हाथ में दे रखा है। हां, अब तुम बताओ, कौन हो, कहां से आये हो, किस प्रयोजन से आये हो?"

भानुमित्र ने अपना पूर्ण परिचय दिया और फिर देवधर्मा के नाम पत्र का उल्लेख किया। भूधर देवधर्मा का नाम सुन अवाक् मुख उसे देखता रह गया। कितने ही काल तक उसे देखकर भूधर ने पूछा, "युवक! कैसे जानते हो उन्हें?"

"श्रीमन्! मेरे पिताजी के सहपाठी हैं।"

भूधर ने कुछ और कहे बिना समीप रखी संदूकची खोली और उसमें से लोहे की एक ताली निकाल भानुमित्र को देते हुए कहा, "आगार अंक बीस खोल लो और वहां जब तक मन करे रहो।"

भानुमित्र ने देखा कि बीस नंबर एक विशाल आगार है। उसमें सोने के लिए पलंग रखा है। एक संदूक सामान रखने के लिए है। दीवार में खूंटिया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लगी हैं, जिन पर भानुमित्र ने अपना थैला लटका दिया। कपड़े उतार दूसरे खूंटी पर लटका दिये और पलंग पर लंबी यात्रा की थकावट मिटाने के लिए लेट गया।

सूर्यास्त से पूर्व एक सेवक आया और सोये हुए भानुमित्र को जगा भोजन का निमंत्रण देने लगा।

भानुमित्र ने पूछा, "भोजनालय कहां है?"

"भूमि पर स्वच्छ जल की पुष्करिणी के उत्तर की ओर।"

"कितना दाम देना पड़ता है?"

"कुछ नहीं। वैशाली का राज्य सब यात्रियों को एक मास तक भोजन निःशुल्क देता है।"

भानुमित्र इस व्यवस्था से चकित था। यूं तो भारत-भर में किसी के भी द्वार पर जानें से भोजन मिलता था, परन्तु राज्य की ओर से ऐसा प्रबंध चकित करने वाला ही था। वह काश्मीर से चलते समय अपने पिता से केवल तीस स्वर्ण मुद्रा लेकर चला था और ढाई मास की यात्रा में एक स्वर्ण मुद्रा से भी अधिक व्यय नहीं कर सका था। प्रत्येक स्थान पर किसी भी गृहस्थ के घर में जाने से स्वागत और भोजन पाता था।

वैशाली में इस विषय में राज्य की ओर से एक मास तक के लिए यह प्रबंध देख वह वैशाली की महिमा ही समझता था। सेवक से निमंत्रण पा वह पलंग से उठा और नीचे पुष्करिणी जा पहुंचा। प्रायः यात्री लोग व्यापारी थे, जो समीप अथवा दूर स्थानों से या तो क्रय करने या विक्रय करने आये हुए थे। सब निस्संकोच भोजन कर रहे थे। भानुमित्र भी एक आसन पर बैठ गया और उसके सम्मुख भोजन परोस दिया गया।

भोजनोपरांत भानुमित्र ने कई यात्रियों से बातचीत की। उसे ज्ञात हुआ कि गान्धार, काश्मीर, कच्छ, फारस इत्यादि दूर-दूर विदेशों से और अवध, मगध, अवन्ती, कालिन्दी इत्यादि भारत के भीतर के देशों से आये हुए यात्री थे।

जो सबसे विशेष बात भानुमित्र को प्रतीत हुई, वह उनके बहुत सुंदर ओर कीमती वस्त्र थे, जो वे पहने हुए थे। इससे उसने निश्चय कर लिया कि अगले दिन वह अपने लिए रेशमी वस्त्र मोल लेगा और पश्चात् देवधर्मा से मिलने जाएगा।

भोजनोपरांत वह पंथागार के द्वार पर खड़े द्वारपाल से पूछने आया, "क्यों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जी! यह पंथागार रात में किस समय बंद हो जाता है?''

''यह रात भर खुला रहता है। प्रायः यात्री लोग रात को मनोविनोद के लिए नगर में जाते हैं और वहां से बहुत देर कर आते हैं। इसी कारण यह रात भर खुला रहता है।''

''और नगर का द्वार कब बंद होता है?''

''आजकल हमारा राज्य सबसे मित्रता रखता है। इससे नगर के द्वार खुले रहते हैं।''

''कोई चोरी कर भागे तो जा सकता है क्या?''

द्वारपाल ने अचम्भे में भानुमित्र का मुख देखकर कहा, ''इस नगर में आज पहली बार आये हो?''

''हां।''

''तभी यहां की बात नहीं जानते। दिन और रात्रि के समय नगर के भीतर-बाहर जाने वालों को पूर्ण स्वतंत्रता है। संदेहप्रद लोगों को रोक लिया जाता है। इस पर भी वर्षों से यहां कोई चोर पकड़ा नहीं गया, न ही नगर में कभी चोरी हुई। इस नगर में परदेशी भी आते हैं और जब भी चोरी हुई है उन्हीं से निकली है। कई वर्ष की बात है कि एक पारसी, गणपति के गृह से, एक रत्नजड़ित पुष्पपात्र उठा लाया था और द्वार के बाहर जाता हुआ पकड़ा गया तो उसे मृत्यु दंड दिया गया था। उसके पश्चात् तो आज तक कोई घटना हुई नहीं।''

''पंडित देवधर्मा का गृह किस ओर है?''

''द्वारपाल भानुमित्र का मुख देखता रह गया। इससे तो भानुमित्र के मन में अपने पिता के मित्र के विषय में वास्तविक बात जानने की इच्छा जाग उठी। उसने पूछा, ''मित्र! विस्मय में क्यों पड़ गये हो? क्या बात है? सेठ भूधर भी इनका नाम सुनकर चुप हो गया था। वे क्या हैं यहां?''

''तो तुम नहीं जानते? वे वैशाली राज्य के गणपति हैं। पिछले वर्ष वे पांचवीं बार गणपति निर्वाचित हुए हैं। लोग उनसे प्रेम करते हैं, उनका सम्मान करते हैं और अड़ोस-पड़ोस के राज्य उनके भय से कांपते हैं।''

भानुमित्र यह शुभ संवाद सुन मन-ही-मन अति प्रसन्न हुआ और आशा करने लगा था कि शीघ्र ही वह कोई उत्तरदायित्वपूर्ण राज्य कार्य पर नियुक्त कर दिया जायेगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

: 2 :

देवधर्मा, वैशाली का गणपति, प्रातः से मध्य रात्रि तक राज्य कार्य में व्यस्त रहता था। दिन का प्रत्येक क्षण उसके भिन्न-भिन्न कार्यों के लिए निश्चित था। प्रातः ब्रह्ममुहूर्त में उठ, स्नान आदि से छुट्टी पा प्रातः का अल्पाहार होता था। इस समय उसके परिवार के लोग एकत्रित हो जाते थे। दो घड़ीभर यह कार्य चलता था और पारिवारिक समस्याओं पर विचार तथा बातचीत होती थी। देवधर्मा की स्त्री और दो लड़कियां, फिर देवधर्मा के भाई का परिवार और स्त्री की ओर के कुछ सम्बंधी गणपति निवास में ही रहते थे। सब लोग प्रातः के अल्पाहार के समय एकत्रित हो जाते थे।

इसके तुरंत बाद ही मंत्रिमंडल की बैठक होती थी। मंत्रिमंडल के लिए लगभग एक प्रहर का समय था। पश्चात् गणपति प्रजा से मिलते थे। कोई भी इस समय में उनसे मिलने के लिए आ सकता था। मिलने वालों को अपना नाम-धाम और काम लिख पहले भेजना होता था और फिर बारी-बारी से लोग मिलने और अपना काम बताने के लिए बुलाये जाते थे। प्रत्येक को अपनी बात लिखकर देनी होती थी और संक्षेप में अपना आशय बताना होता था। प्रायः प्रजागण की प्रार्थना पर उसी समय आज्ञा दे दी जाती थी। यदि कोई बात जांच करने की होती तो उचित अधिकारी के पास भेज दी जाती थी। इस प्रकार मध्याह्न काल हो जाता था।

इस समय तक दिन के भोजन का समय हो जाता। गणपति इस समय का भोजन एकान्त में केवल अपनी स्त्री के साथ करते थे। तत्पश्चात् एक घड़ीभर विश्राम करते थे।

पश्चात् कार्यालय का कार्य देखते थे। तीसरे पहर के मध्य में पुनः अल्पहार होता था। इस समय संसद का सदस्य, जो भी चाहे, गणपति का अतिथि हो सकता था। गणपति इस समय सदस्यों के साथ राज्य के अनेकानेक विषयों पर विचार-विनिमय करते थे।

सूर्यास्त से पूर्व गणपति सब कामों से अवकाश पा नगर के विनोद भवन में चले जाते थे। यह भवन नगर की प्रसिद्ध गणिका के प्रबंध में होता था। उसको नगर-वधू के नाम से पुकारा जाता था। यहां नगर के बड़े-बड़े सेठ-महाजन, नगर के धुरंधर विद्धान, योद्धा और अन्य सार्वजनिक कार्यकर्ता आते थे और परस्पर मिलते थे, कार्य अथवा विनोद की बातें होती रहती थीं। प्रायः सार्वजनिक कार्यों की रूपरेखा इस भवन में ही बनती थी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नगर-वधू को दस सहस्र स्वर्ण-मुद्रा राज्य की ओर से वार्षिक वेतन के रूप में मिलती थीं। एक विशाल भवन उसके निवास के लिए राज्य ने दे रखा था और उसे राज्य के उच्च कर्मचारियों, नगर के धनी-मानी लोगों, सेना के नायकों और सेनापतियों तथा कलाविज्ञ विद्वानों के मनोरंजन का प्रबंध करना होता था। नगर-वधू ने सैकड़ों दास-दासियां रखी हुई थीं, जो इस भवन में आने वालों की सेवा-शुश्रूषा करती रहती थीं।

विनोद भवन में बीसियों बड़े-बड़े आगार थे, जो भिन्न-भिन्न व्यवसाय के लोगों ने अपने व्यवसाय करने वालों के विनोद के लिए सुरक्षित रखे हुए थे। सब लोगों के मिलने और वार्तालात करने और मनोविनोद के लिए सांझे भवन भी थे। फिर बीसियों ऐसे आगार थे, जिनमें लोग एकांतवास भी करते थे।

विनोद भवन केवल मन बहलाव, सुरापान और दासियों की संगत का स्थान नहीं था। वास्तव में यह स्थान था, जहां राज्य संचालन की नीति निश्चित होती थी। लाखों के मूल्य का व्यापार हो जाता था और फिर देश-विदेशों में भेजे गुप्तचरों का समागम होता था। ऊपरी तड़क-भड़क, नाच-रंग, हँसी ठट्ठा और वासना तृप्ति ्के नीचे प्रत्येक प्रकार के राजनीतिक दांव-पेंच यहां विचार किये जाते थे और उनको कार्यान्वित किया जाता था।

इस विनोद भवन में केवल वही आ सकते थे, जो या तो वैशाली की संसद का सदस्य हो, या जनपद में सम्मति देने का अधिकारी हो। ये लोग वार्षिक शुल्क देकर विनोद भवन के सदस्य बन जाते थे। राज्य की ओर से कुछ लोगों को उनकी विद्वता, कला कुशलता, शौर्यता तथा अन्य किसी प्रकार से राज्य, जनपद तथा मनुष्य मात्र की सेवा करने के उपलक्ष्य में प्रतिष्ठा का पद प्रदान कर दिया जाता था, तो वे लोग निःशुल्क ही विनोद भवन में आने-जाने के अधिकारी होते थे।

मध्य रात्रि तक विनोद भवन खुला रहता था और उस समय भांति-भांति के लोग इस भवन से निकल, नगर के भिन्न-भिन्न मुहल्लों में चले जाते थे। कोई गम्भीर रहस्य के स्वामी बन, कोई विशद् सत्यता का ज्ञान प्राप्त कर, कोई लाखों की जीत, कोई सर्वस्व हार, कोई सुरापान कर मार्ग पर ठोकरें खाता हुआ और कोई अपनी बुद्धि के बल अपना भविष्य स्वयं निर्माण कर, इस विनोद भवन को धन्य-धन्य कहता हुआ अथवा गालियां देता हुआ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जाता था।

गणपति इस स्थान पर आना और यहां की विनोद क्रीडा में भाग लेना भी राज्य का कार्य समझता था। लगभग बीस वर्ष से गणपति पद पर रहते हुए, पंडित देवधर्मा राज्य के प्रत्येक व्यक्ति को, जो किसी कारण से भी राज्य में गणना योग्य था, जानता था और उसके स्वभाव और अंतरंग कार्यो को भली-भांति समझता था। यह सब कार्य वह विनोद भवन के आगारों में घूम-घूमकर करता रहता था।

इस कारण नगर-वधू का पद बहुत ही महान् और उत्तरदायित्वपूर्ण माना जाता था। इस स्थान पर राज्य की सर्वश्रेष्ठ सुंदरी को नियुक्त किया जाता था। यह नियम था कि जो सुंदरी इस पद पर नियुक्त हो, उसे संयम से रहना पड़ेगा। वहां आने वालों के लिए आकर्षण का केंद्र होते हुए भी किसी के प्रेम जाल में न फंसना उसका कर्तव्य होता था। यदि किसी के साथ उसके विशेष संबंध का पता चल जाता तो वह पद्च्युत कर दी जाती और राज्य नियम तोड़ने पर अपराधी मान, दण्ड का भागी बन जाती। नगर-वधू की नियुक्ति प्रति पांच वर्ष के पश्चात् एक निर्वाचन समिति करती थी।

इस प्रकार मध्य रात्रि तक गणपति राज्य कार्य में व्यस्त रहकर लौट आते थे।

: 3 :

वैशाली लगभग सौ वर्ष से गणराज्य था। वर्तमान मिर्जापुर जिला में गंगा के पूर्वी तट से पांच कोस के अंतर पर यह भवन स्थित था। वैशाली गणराज्य का अधिकार गंगा के पूर्व तट के साथ-साथ बीस कोस और गंगा के बीस कोस उत्तर-पूर्व की ओर फैला हुआ था। वैशाली राज्य के पश्चिम की ओर अवध राज्य था।

वैशाली गणराज्य में वैशाली ही एक नगर था, परन्तु इसमें छोटे-छोटे गांव अनेक थे। आरंभ में तो वैशाली की संसद में ब्राह्मण और क्षत्रिय परिवारों के प्रतिनिधि बैठते थे। परंतु ज्यों-ज्यों नगर के व्यापार में उन्नति होती गयी और राज्य संचालन में धन का विशेष स्थान होता गया, वैश्य परिवारों के प्रतिनिधि भी लिए जाने लगे। चौदह सहस्र क्षत्रिय परिवारों के सौ प्रतिनिधि, तीन सहस्र ब्राह्मण परिवारों के चालीस प्रतिनिधि और चालीस सहस्र वैश्य परिवारों के दो सौ बीस प्रतिनिधि संसद में बैठते थे। संसद गणपति और मंत्रिमंडल का निर्वाचन करता था। मंत्रिमंडल में एक उपगणपति, एक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महामंत्री और पांच अन्य मंत्री थे। अर्थमंत्री प्रायः वैश्य समाज से होता था और रक्षामंत्री, जो सेनापति भी होता था, प्रायः क्षत्रिय जाति से होता था।

मंत्रिमंडल में आज भारी हलचल थी। अवध के प्रधानमंत्री श्री रिपुदमन ने एक दूत भेजा था। उसके द्वारा उसने वैशाली के गणपति से दोनों राज्यों को एक कर, एक विशाल गणराज्य स्थापित करने का प्रस्ताव किया था। रिपुदमन ने संद्रेश भेजा था कि जब से अवध महाराज एक गांधार कन्या को विवाह कर लाए हैं, प्रजा उससे अति रुष्ट है। गांधार के असुरों का पतित पावनी अयोध्या में डेरा लग गया है और राज्य का धन खुले हाथों लुटाया जा रहा है। इस कारण जनता और राष्ट्र के हित में ही उसका यह प्रस्ताव है। दूत ने यह भी बताया कि राज्य मंत्रीमंडल भी महाराज के कुप्रबंध से उचाट हो चुका है और यदि वैशाली इस प्रस्ताव के मानने पर उद्यत हो तो एक ही रात में दोनों राज्यों का एकीकरण किया जा सकता है।

दूत का यह संदेश मंत्रिमंडल के सम्मुख गणपति ने रखा और मंत्रिमंडल में इस विषय पर गरमागरम वाद-विवाद चल पड़ा। गणपति का अपना मत यह था कि अवध एक विस्तृत राज्य है। बीस वैशाली उसमें समा जाएंगी। इस कारण उस राज्य को वैशाली में सम्मिलित करने का अर्थ है, वैशाली का उसमें लीन कर देना। वैशाली के लिच्छवि तो अवध के बत्तीस कुल क्षत्रियों में एक कुल बन जाएंगे। इस पर भी मंत्रिमंडल में कुछ ऐसे थे, जो इस विषय में इस प्रस्ताव के अनुकूल सम्मति रखते थे। वे कहते थे, "साढ़े सात सहस्र लिच्छवि परिवार बढ़कर पंद्रह सहस्र हो गये हैं और हमारे युवकों को उन्नति करने का स्थान नहीं रहा। अवध के साथ अपना मेल हो जाने से भारत-भर में अपने युवकों को मानयुक्त स्थान मिलने लगेगा।"

इस पर विवाद को कुछ दिन के लिए स्थगित कर वैशाली के गुप्तचरों से वहां की वास्तविक परिस्थिति का ज्ञान प्राप्त करने का निश्चय हुआ। मंत्रिमंडल की बैठक के पश्चात् गणपति देवधर्मा प्रजा के लोगों से मिलने के लिए जनतागार में चला गया।

जनतागार गणपति के निवास गृह के साथ मिला हुआ था और मंत्री भवन से, जो निवास गृह का ही एक अंग था, भीतर ही भीतर वहां जाया जा सकता था। देवधर्मा जब उस विशाल आगार में पहुंचा तो कर्मचारी ने मिलने आये हुओं की सूची उपस्थित की। सूची में भानुमित्र का नाम भी था। लिखा था, काश्मीर-निवासी पंडित महिदेव का पुत्र भानुमित्र।'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गणपति ने सर्वप्रथम उसी को बुलाया। द्वारपाल ने पुकारा, ''भानुमित्र भीतर आये।''

देवधर्मा ने उसे सिर से पांव तक देखा। उसे बिल्कुल अपने मित्र की प्रतिमूर्ति पा प्रसन्न हो, अपने आसन से उठ, भानुमित्र को हृदय से लगा, सिर पर हाथ रख, आशीर्वाद दे, अपने समीप बिठा, पूछा, ''कहां ठहरे हो, वत्स?''

''लक्ष्मीदेवी के पंथागार में।''

''कैसे आना हुआ?''

भानुमित्र ने अपने पिता का पत्र देवधर्मा के हाथ में दे दिया। पत्र पढ़ देवधर्मा ने भानुमित्र को कहा, ''अभी पंथागार में चले जाओ और मेरे संदेश की प्रतीक्षा करो।''

गणपति भानुमित्र को इस प्रकार भेज अपने काम में लग गया।

भानुमित्र वहां से निकल नगर देखने के लिए भिन्न-भिन्न मार्गों पर घूमने लगा।

उन दिनों वैशाली एक समृद्ध नगर था। उसके हाटों में और मार्गों पर भिन्न-भिन्न देशों के पहरावे पहने लोग बैठे तथा घूमते दिखायी देते थे। तक्षशिला विश्वविद्यालय में भिन्न देशों के विद्यार्थियों के पहरावे को देख वह पहचान रहा था कि ये लोग किन-किन देशों से यहां आये हुए हैं। वैशाली की पूर्ण भूमि गंगा के पानी से सींची जाती थी। इससे वहां इतना अनाज और तूल होती थी कि संसार भर का व्यापार यहां होने लगा था। फिर गंगा में व्यापारिक नावें वैशाली की सीमा तक ही चलती थीं। गंगा-तट पर गंगापुरी नामक एक छोटा-सा नगर था, जहां देश के भीतर का माल लाकर नावों और जलयानों में लादा जाता था। यहां से वह माल मगध देश, अंग, बंग और पाण्ड्र देशों में जाता था। फिर गंगा से होकर समुद्रपार कर ब्रह्मदेश में भी जाता था। इस प्रकार वैशाली इस व्यापार से दिन-प्रतिदिन अधिक और अधिक समृद्धशाली बनता जाता था। देवधर्मा के बीस वर्ष के प्रबंध से देश का धन बाहर जाने से रुका हुआ था।

इस धन और वैभव के लक्षण वैशाली नगर में फूट-फूट कर प्रकट हो रहे थे। दास और दासियों की नगर में बहुत भारी संख्या थी, जो मार्गों पर बेधड़क चांदी सोने के आभूषण पहने क्रय-विक्रय करती फिरती थीं। सेठ लोग आढ़त की दुकान पर बैठे लाखों का व्यापार कर रहे थे। सागर पार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से मसाले, लवंग, दालचीनी इत्यादि लाखों स्वर्ण मुद्राओं के मूल्य के गंगा मार्ग से आते थे और गंगापुरी में उतरते थे। वहां से वैशाली के सेठों द्वारा देश-देशांतर में भेजे जाते थे। जो नावें मसालें लादकर लाती थीं, वे सब देश का बना कपड़ा, तूल और लाख के खिलौने लादकर ले जाती थीं। यह सब व्यापार वैशाली के सेठों के हाथ में था।

बड़े घरों के युवक-युवतियां भी रेशमी वस्त्र और रत्नजड़ित भूषण पहने पालकियों, रथों, घोड़ों पर सवार इधर-उधर घूमते दिखायी देते थे।

भानुमित्र ने यद्यपि वैशाली में आकर नये रेशमी वस्त्र बनवा लिये थे, इस पर भी वह यहां के युवकों के सम्मुख वस्त्रों में तथा रूप रंग में बहुत ही साधारण लगता था।

: 4 :

मध्याह्न का समय हो गया था। उसे भूख लग आयी थी और वह किसी भोजनालय की खोज में था। पंथागार नगर के बाहर दूर था। वह किसी से पूछना चाहता था कि भोजन कहां मिल सकेगा। इस समय उसकी दृष्टि एक विशाल भवन पर गयी। उसका फाटक संगमरमर का बना था। विशाल सीढ़ियां दूध के समान श्वेत पत्थर की बनी थीं। सीढ़ियों के दोनों ओर दो लाल पत्थर के सिंह बने थे, मानो राह जाने वालों पर झपटने को तैयार बैठे हैं। दस सीढ़ियां चढ़कर एक चौड़ा चबूतरा था और इस चबूतरे पर दस हाथ पीछे हटकर भवन का बीस हाथ ऊंचा द्वार का फाटक ब्रह्मदेश की सागौन का बना था। द्वार खुला था, परंतु वहां पहरे के लिए सैनिक ढंग के वस्त्र पहने, दो सुभट्ट हाथों में बरछे लिए खड़े थे। चबूतरे पर तीन युवतियां मार्ग पर आने-जाने वालों की शोभा देख रही थीं। सीढ़ियों के नीचे मार्ग के किनारे पर तीन द्वारपाल चांदी की चोब लिये खड़े थे।

भानुमित्र इस सुंदर विशाल और भव्य भवन को देख ठहर गया। वह सोच रहा था कि यह भवन तो गणपति के भवन से भी अधिक सुंदर और विशाल है। किसका हो सकता है यह? उसे खड़े विस्मय में आंखें फाड़-फाड़कर देखते हुए पा वे युवतियां उसे ही देखने लगीं। एक ने औरों से कुछ कहा। तीनों हँसने लगी। भानुमित्र को समझ आ गया कि वे उस पर हँस रही हैं। अभी तक वह देख चुका था मार्ग में कई लोग उसके पहरावे की सादगी देख मुस्कराते थे। इन युवतियों को खिल-खिलाकर हँसते देख, उसका मुख लज्जा से लाल हो गया। फिर अपने मन की लज्जा और क्रोध

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को शांत कर अपने मोती समान दांत दिखाता हुआ मुस्कुराया। इस पर फिर उसी युवती ने, जिसने पहले अपनी सखियों को कुछ कहा था, पुनः कुछ कहा। इस पर एक ने भानुमित्र को सीढ़ियों पर चढ़ आने का संकेत किया। भानुमित्र को यह बात पसंद नहीं आयी। इससे वह प्रश्नभरी दृष्टि से उनकी ओर देखता रहा। इतने में एक द्वारपाल ने उन युवतियों का संकेत पा भानुमित्र से पूछा, "क्यों खड़े हो यहां?"

भानुमित्र ने अचंभे में द्वारपाल के मुख को देखते हुए पूछा, "तुम क्यों पूछते हो? मैं राजमार्ग पर खड़ा हूं।"

इतने में एक युवती ने ऊंचे स्वर में पुकार कर द्वारपाल को कहा, "इसे पकड़ लाओ।"

फाटक में खड़े सुभट्टों में एक सीढ़ियों के नीचे गया और भानुमित्र को भुजा से पकड़ बोला, "चलो।"

"कहां?" भानुमित्र ने पूछा।

"वे बुलाती हैं।"

"वे कौन हैं?"

"उनसे आप ही पूछ लेना।"

इस समय दोनों द्वारपाल धकेलते हुए भानुमित्र को सीढ़ियों के ऊपर ले गये और चबूतरे पर खड़ी युवतियों के सम्मुख ला खड़ा कर दिया। भानुमित्र ने देखा कि तीनों एक से एक अधिक सुंदर हैं और वे हँसती हुई, उसे सामने खड़े देख गंभीर हो गयीं। भानुमित्र प्रश्नभरी दृष्टि से उनकी ओर देखता रहा। उनमें से एक के संकेत पर द्वारपाल और सुभट्ट भानुमित्र को वहां छोड़ अपने-अपने स्थान पर जा खड़े हुए। वह युवती, जिसने भट्ट और द्वारपालों को संकेत किया था, भानुमित्र को डांटकर पूछने लगी, "युवक! इस प्रकार निष्प्रयोजन राजमार्ग पर घूमना और इस भवन की ओर अकारण देखना वर्जित है।"

"सुंदरी!" भानुमित्र ने नम्रता से कहा, "मैं इस नगर में नया आया हूं। यहां का यह विचित्र नियम नहीं जानता था। इससे भूल हो गयी है।"

"तो तुम निष्प्रयोजन घूमते थे, तुम मानते हो?"

"मैंने यह नहीं कहा देवी।"

"तो भूल क्या हुई तुमसे?"

इस पर मुस्कराते हुए भानुमित्र ने कहा, "यदि मुझे विदित होता कि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
निष्प्रयोजन घूमने वालों को पकड़ लिया जाता है, तो मैं अपने गले में अपने घूमने का उद्देश्य एक पट्ट पर लिखकर लटका लेता, जिससे आपको मुझे पकड़ने का कष्ट न करना पड़ता।''

इस तर्क से तीनों युवतियां खिल-खिलाकर हँस पड़ीं। भानुमित्र धीमी हँसी हँसकर बोला, ''मुझे संदेह हो रहा है कि ऐसे सभ्य नगर में जहां, देवधर्मा जैसे कार्यकुशल गणपति हैं, इस प्रकार का अयुक्तिसंगत नियम होगा?''

''तो किस कारण से भगवन! राजमार्ग पर भ्रमण कर रहे हैं?''

''यद्यपि मुझे विश्वास नहीं होता कि सुकुमारी सुंदरी वैशाली जैसे समृद्ध राज्य में न्यायाधीश का काम करती हैं, तो भी कोई छिपाने योग्य बात न होने से बताता हूं। वैशाली की सुंदर वस्तुओं के दर्शनार्थ घूम रहा हूं। इस सुंदर भवन को देख और चबूतरें पर अद्वितीय सुंदरियों को चलते-फिरते निःस्पृह अपरिचितों पर कटाक्ष करते देख खड़ा हो गया था।''

हँसी की सीमा बढ़ती देख युवती ने कहा, ''दोष सिद्ध नहीं हो सका, जा सकते हो।''

''परंतु मेरा एक और भी प्रयोजन था। मैं जानना चाहता हूं कि समीप कोई स्वच्छ और बढ़िया भोजनालय है? मुझे भूख लगी है।''

''तो पथिक!'' फिर पहले बात करने वाली स्त्री ने कहा, ''तुम ठीक स्थान पर ही आये हो। यह भोजनालय ही तो है।''

भानुमित्र ने हँसी ठट्ठे का अंग समझ ही कहा, ''बहुत विचित्र है! इतना सुंदर भोजनगृह मैंने अन्य किसी नगर में नहीं देखा और फिर इस प्रकार कुलवती महिलाओं को अपने सौंदर्य से ग्राहकों को आह्वान करते देखना शायद वैशाली की ही विशेषता है। कुछ भी हो। परंतु देवी! दाम तो निर्धन परदेशी की शक्ति के भीतर ही होंगे?''

इससे वे तीनों हँसने लगी। भानुमित्र भी धीमी हँसी हँसता रहा। एक ने कहा, ''यह भोजनालय राज्य की ओर से चलता है। इसमें भोजन बिना दाम मिलता है। आइये।''

भानुमित्र पंथागार में राज्य की ओर से भोजन व्यवस्था देख चुका था। इससे उसे उसके कहने में कुछ सत्यता प्रतीत हुई। इस पर भी उसे संदेह ही हो रहा था कि कोई षड्यंत्र न हो। फिर कुछ विचार कर बोला, ''राज्य का अतिथि बनने में मुझे संकोच नहीं है। पंथागार में भी तो मैं राज्य का ही अन्न खा रहा हूं।''

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"तो चलो।" तीनों बोल उठीं और उसे द्वार के भीतर ले गयीं। भीतर घुसते ही एक विशाल आगार था, जिसकी भूमि रंग-बिरंगे पत्थरों के समरूप टुकड़ों से बनी थी। दीवारें भी पत्थर की बनी थीं, जिन पर पत्थर की खुदी हुई अति सुंदर देवी-देवताओं की मूर्तियां बनी थीं। एक ही दृष्टि में वह समझ गया कि बहुत ही सुंदर आगार है। इसके बीचोंबीच पत्थर का एक स्तूप था, जिसके आश्रय इस विशाल आगार की छत टिकी थी। वे युवतियां उसे उस आगार के बीचोंबीच खड़ा कर पूछने लगी, "अतिथि ब्राह्मण है क्या?"

"देवी का अनुमान सत्य है।"

"तो आओ।" वे उसे भवन के वामपक्ष में एक संकीर्ण मार्ग में ले जाती हुई एक आगार में ले गयीं। यह पहले आगार से कुछ छोटा था, परंतु सज-धज में उससे अधिक था। द्वार पर मखमल के पर्दे लगे थे। भूमि पर बहुत ही बढ़िया फारस देश का बना कालीन और उस पर दूध-समान श्वेत चादर बिछी थी। दीवारों पर कपड़े पर रंगों से बने भांति-भांति के चित्र लटके थे। कहीं कोई स्त्री वीणा बजा रही थी और कहीं नृत्य का दृश्य था। कहीं कोई पुरुष जंगल में मृगया करते हुए दिखाया गया था और कहीं कोई रमणी हिरण से जंगल में किलोल करती प्रतीत होती थी।

उन स्त्रियों ने भानुमित्र को श्वेत चादर पर बैठने के लिए कहा, "आप यहां बैठिये। अभी कर्मचारी आकर भोजन करा देंगे।"

इतना कह वे युवतियां जिस द्वार से उस आगार में आयी थीं, उसके सामने के द्वार से चली गयीं। एक क्षण तक तो भानुमित्र को यह हँसी सीमा से बाहर जाती प्रतीत हुई। फिर वह हँसी को हँसी के रूप में ही लेने के लिए मन में विचार करते हुए कि अब क्या होता है, बैठा रहा।

आगार में आने के दो द्वार थे। एक वह, जिससे वे भीतर आये थे, दूसरा वह, जिससे वे युवतियां बाहर गयी थीं। भानुमित्र की पीठ की ओर दीवार में एक खिड़की थी, जिसमें पत्थर की जाली लगी हुई थी और उसमें से प्रकाश आ रहा था। ऐसा प्रतीत होता था कि वह खिड़की भवन के आंगन में खुलती है। भानुमित्र के सम्मुख दीवार पर एक अति सुंदर स्त्री के नृत्य करने का चित्र था।

भानुमित्र उस चित्र को देख विचार कर रहा था कि यह किसका भवन है, जिसमें इस प्रकार मूल्यवान चित्र और सामान हैं? उसकी दृष्टि छत पर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गयी तो अनेक रंगों से छत पर चित्रकारी की गयी दिखायी दी। छत के बीचोंबीच स्फटिक मणियों के टुकड़ों से बना एक भारी दीपगुच्छ लटक रहा था।

इस समय उसे ऐसा भान हुआ कि पीछे खिड़की में से खड़ा कोई देख रहा है। आंगन के बाहर आते हुए प्रकाश में बाधा खड़ी हो गयी थी। भानुमित्र ने खड़े होकर देखा तो किसी स्त्री के रेशमी लहंगे के हिलने की सरसराहट सुनायी दी। उसे विश्वास हो गया कि कोई स्त्री थी जो उसे वहां बैठे देख विस्मय करती होगी।

इतने में दासी एक द्वार से भीतर आयी और झुककर भानुमित्र को नमस्कार कर दूसरे द्वार से निकल गयी। कुछ काल पश्चात् एक और दासी आयी और एक क्षण ठहरकर भानुमित्र को देख, नमस्कार कर, दूसरे द्वार से निकल गयी। उसके जाने के पश्चात् भानुमित्र की हँसी निकल गयी। वह दासी लौट आयी और झुककर पूछने लगी, ''श्रीमान ने मुझे बुलाया है?''

''नहीं।'' भानुमित्र ने गम्भीर हो उत्तर दिया।

वह चली गयी। कुछ काल पश्चात् एक सुंदर स्त्री, जो न तो दासी प्रतीत होती थी और न ही गृह की स्वामिन्, द्वार के कुछ भीतर आकर खड़ी हो गयी और पूछने लगी, ''क्या अतिथि निरामिष भोजी है?''

भानुमित्र ने समझा कि सत्य ही भोजन मिलने वाला है। बोला, ''जैसा भी तैयार हो, देवी! खा लूंगा।''

कुछ झुक कर नमस्कार कर वह स्त्री भी चली गयी। पश्चात् दो दासियां आई और हाथ धुला गयीं। फिर एक दासी एक लकड़ी की चौकी सम्मुख रख गयी। एक और आयी अैर सोने के थाल में बत्तीस प्रकार के व्यंजन रखे हुए लायी। मछली थी, हिरण का भुना मांस था, रसदार बकरे का मांस था, जंगली वराह के मांस की और अनेक प्रकार की भाजियां थीं। सब चांदी की कटोरियों में रखी थीं। बढ़िया हिमाचल प्रदेश के चावल और पांचाल के गेहूं की रोटी, जल के स्थान पर शीतल माधवी गंगा-जमुनी सुराही में थी। एक दासी धीमे-धीमे पंखा करने लगी और दूसरी कुछ अंतर पर खड़ी आज्ञा की प्रतीक्षा करती रही।

भानुमित्र काश्मीरी ब्राह्मण होने से मांस इत्यादि तो खाता था, परंतु उसने आज तक मदिरा पान नहीं किया था। इस कारण भोजन करते-करते उसने कहा, ''जल मिल सकेगा क्या?''

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"भगवन! इस गृह में केवल जलपान करने से राज्य का अपमान करना माना जाता है। यह माधवी कुछ तीव्र नहीं। इसमें उन्मत्तता नहीं होती।" दूर खड़ी दासी का कहना था।

इस समय भानुमित्र को फिर ऐसा प्रतीत हुआ कि पीछे खिड़की में कोई खड़ा है। उसने शीघ्रता से घूमकर उधर देखना चाहा, परंतु वह स्त्री अति चपल प्रतीत होती थी। केवल उसकी पीठ ही दिखायी दी।

भानुमित्र भोजन को स्वादिष्ट पा दत्तचित्त हो खाने लगा। प्यास लगने पर माधवी सोने के पात्र में डाल थोड़ी-थोड़ी कर पीने लगा। उसे भूख लगती गयी और वह खाता गया। इससे प्यास बढ़ती गयी और माधवी पीता गया।

अभी भोजन समाप्त नहीं हुआ था कि उसके मस्तिष्क में खुमारी चढ़ने लगी। उसे ज्ञान नहीं रहा कि उसने कब खाना बंद किया और कब वह अचेत हो वहीं भूमि पर लेट गया।

इस अचेतनावस्था में उसने अनेक प्रकार के स्वप्न देखे। एक अति सुंदर युवती उसके समीप बैठी उसके सिर पर हाथ फेर रही है। कभी उसका मुख चूमती है, कभी उससे आलिंगन करती है। वह उस स्वप्नावस्था में कभी सोचता है कि वह मल्लिका ही है। कभी उसे विचार होता है कि यह कोई देवलोक की अप्सरा है। कभी वह सब कुछ उसकी दृष्टि से ओझल हो जाता और वह अपने को एक अंधकारमय सुनसान में भटकता पाता।

इस प्रकार सुख-स्वप्नों में लुढ़कता हुआ जब वह सचेत हुआ उसने देखा कि कोई उसके सिर पर घड़े से पानी की धार डाल रहा है। चेतना होते ही वह उठकर बैठ गया। उसने देखा कि रात हो गयी है, हर ओर अंधेरा ही अंधेरा है और नगर के बाहर मार्ग के किनारे, एक पेड़ के नीचे बैठा है। अंधेरे में तारों के प्रकाश में एक काला-सा साया हाथ में घड़ा ले उसके सिर पर पानी डाल रहा है। जब भानुमित्र उठकर बैठा तो उसने पानी डालना बंद कर दिया। भानुमित्र ने सिर हिलाकर अपने को पूर्ण रूप से सचेत कर, उस साये से पूछा, "क्या कर रहे हो?"

घड़ा उठाये हुए साया, चांदी की घण्टी के से बारीक स्वर में हँस पड़ा। भानुमित्र समझ गया कि कोई लड़की है। इससे उसे अपने स्वप्न पुनः स्मरण हो आये। उसने कहा, "मुझे सचेत कर मेरे सुख-स्वप्न मिटा दिये हैं तुमने।"

वह साया फिर हँसा और बोला, "भद्र! यदि तुम्हें सचेत न करती तो मृत शव समझ सियार तुम्हारे हाथ-पांव खा जाते। मैं कुएं से पानी भरकर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
आ रही थी कि एक सियार तुम्हारा मुख सूंघ रहा था। मैंने तुम्हें सचेत करना उचित समझा।

"मैं कहां हूं?"

"नगरद्वार के बाहर। गंगापुरी के मार्ग पर।"

"ठीक समझ गया। लक्ष्मीदेवी का पंथागार किधर है?"

"वह देखो। वह सामने दिखायी देता है।"

भानुमित्र उठा। उसके कपड़े पानी में भीग गये थे। फिर उस साये को सामने अभी खड़े देख उसने कहा, "देवी! तुम कौन हो?"

"मैं उस चैत्य में रहती हूं। वहां मेरे पिता भोजनालय में कार्य करते हैं। चैत्य के कुएं में बिल्ली गिर पड़ी और मर गयी है। इससे इस जंगल के कुएं का पानी लेने आना पड़ा है।"

"क्या नाम है तुम्हारा?"

"प्रचला।"

"बहुत सुंदर नाम है।"

"विहार के महाप्रभु ने रखा है। लो, मैं चली।" यह कह वह जंगल की ओर चली गयी।

: 5 :

गणपति देवधर्मा जनता से भेंट कर अपने निवास गृह में मध्याह्न का भोजन करने चले। मार्ग में उसे भानुमित्र की याद आयी। जेब में से मित्र महिदेव का पत्र निकाल कर पढ़ने लगा। लिखा था, "लड़का तक्षशिला से राजनीति का सर्वोत्तम पद प्राप्त करके आया है। काश्मीर जैसे पिछड़े देश में अपनी शिक्षा और प्रतिभा का लाभ नहीं उठा सकेगा। इस कारण आपकी सेवा में भेज रहा हूं। अपना पुत्र मान इससे उचित काम लो....।"

मित्र महिदेव उसका सहपाठी था। फिर दोनों पृथक्-पृथक् हो गये और पश्चात् एक की नाव नदी के तट के घुमाव के अटके जल में पहुंच खड़ी रह गयी और दूसरे की, नदी के बहाव में पड़, सैकड़ों मील आगे निकल गयी। देवधर्मा ने अपने मित्र को कभी नहीं लिखा था कि वह राज्य का गणपति है। उसे संदेह बना रहता था कि इस बात का ज्ञान होने से महिदेव उससे अपने को छोटा मान पत्र-व्यवहार ही बंद कर देगा। आज भी जो पत्र आया था, उससे यही पता चलता था कि उसके गणपति होने का समाचार उसे विदित नहीं था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साथ ही उसे स्मरण हो आया कि कुछ वर्ष पूर्व उसने तक्षशिला के एक विद्यार्थी को गणराज्यों के दोषों का वर्णन करने पर सम्मानित किया था, वह भानुमित्र ही था।

देवधर्मा घर पहुंचा तो उसे चिंता में देख उसकी पत्नी सुनीति ने पूछा, "क्या बात है, आज मुख चिंतित प्रतीत होता है?"

"चिंता नहीं प्रिये! एक प्राचीन स्मृति से मन दूर भूतकाल में विचरने चला गया है।"

"कोई मधुर स्मृति है, नाथ?"

"हां देवी, मैंने अपने परम मित्र महिदेव का उल्लेख कई बार किया है। उसका सुपुत्र आज हमारी नगरी में कुछ काम पाने की आशा से आया है।"

"सत्य? कैसा है वह? आपसे मिला है?"

"देखा है। मुझसे मिलने आया था। लंबा, गोरा, सुंदर और मेधावी प्रतीत होता है।"

"तो उसे घर बुलाकर ठहराओ न! कहां ठहरा है वह?"

"लक्ष्मी गणिका के पंथागार में।"

"उसे यहां बुला लूं?"

"नहीं, अभी नहीं। मैं उसके लिए एक काम विचार कर रहा हूं, जिससे उसका मेरे घर में रहना उचित न होगा।"

"तो भी उसे एक दिन तो बुलाइये। तनिक आपके मित्र के सुपुत्र के दर्शन तो हो जाएं। तक्षशिला का स्नातक है। अवश्य विशेष प्रतिभाशाली होगा।"

देवधर्मा अपनी पत्नी का भाव समझ गया। लड़कियों की माता के भावों का आदर कर उसने कहा, "छुट्टन को भेज दो और उसे बुला, उसका आदर-सत्कार कर मुझसे मिलने के लिए विनोद भवन में भेज देना।"

छुट्टन भेज दिया गया परन्तु वह लौटा नहीं। देवधर्मा भोजन कर राज्य कार्यालय में चला गया। वहां से संसद के सदस्यों के साथ अल्पाहार करने चला गया, पश्चात् विनोद भवन में।

उसका विचार था कि भानुमित्र उसकी प्रतीक्षा करता होगा। परन्तु न तो छुट्टन दिखायी दिया और न ही भानुमित्र। देवधर्मा नगरवधू के आगार में जा पहुंचा। बहुत से मंत्री और नगर के प्रतिष्ठित जन वहां उपस्थित थे और सुरापान तथा विनोद की बातें हो रही थीं। देवधर्मा को आया देख सब

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
खिलखिलाकर हँस पड़े। देवधर्मा ने हँसते हुए पूछा, ''मित्रवर्ग! आज बहुत प्रसन्न प्रतीत होते हैं?''

''हां!'' देवी आज एक आपबीती बताने लगी थीं। लोकनाथ ने कहा था कि देवी की आपबीती तो गणपतिजी के सम्मुख होनी चाहिए कि आप आ पहुंचे हैं।''

''तो मैं बहुत ही सौभाग्यवान हूं! देवी की आपबीती देवी जैसी ही सुंदर और मनोरम होगी और मुझे सुनने को मिलेगी।''

''हां, क्यों नहीं!'' एक अति सुंदर युवती ने, जो पूर्ण श्रृंगार कर आगार के मध्य में भूमि पर रेशमी गद्देदार आसन पर बैठी थी, मुस्कुराते हुए कहा। उस युवती के चारों ओर, कोई तकिये का आश्रय लिये बैठा था, कोई अर्द्धलेटी अवस्था में था और कोई दत्तचित्त हो हाथ में सुरभित मदिरा का प्याला लिए थोड़ा-थोड़ा पी रहा था।

गणपति को आगे निकल कर सुंदरी के समीप बैठने का स्थान दे दिया गया तो वह सुंदरी सुनाने लगी, ''आज मध्याह्न के समय मालती, चम्पा और कुमकुम मन बहलाने के लिए बाहर चबूतरे पर खड़ी थीं कि उनकी दृष्टि एक देहाती गंवार ब्राह्मण कुमार पर पड़ी। वे उसे भोजन देने का प्रलोभन दे भीतर ले आयी। उसे यह समझ में आया कि वैशाली के राज्य की ओर से यह धर्मार्थ भोजनालय है। वह निस्संकोच आया और बैठ गया। दासियों ने उसे बत्तीस व्यंजनों सहित भोजन कराया और मदिरापान करायी। वह इतना खा गया, जितना यहां के दस आदमी खा सकें और तीव्र माधवी की भरी हुई सुराही पी गया। परिणाम में अचेत हो गया, तो दासियां उससे विनोद करने लगीं। कोई उसका मुख चूमती, कोई उसको प्यार करती और वह प्रत्येक को, जो पास जाती, मल्लिका, अवध महिषी मल्लिका, कहकर पुकारता था। एक मुहूर्त भर भवन में हंसी-ठट्ठा रहा। जब वह पूर्णतया अचेत हो गया तो उसे उठाकर नगर द्वार के बाहर एक पेड़ के नीचे डलवा दिया गया।''

सब हँसने लगे, परंतु गणपति गंभीर मुख, नगरवधू की ओर देखता रहा। एक सेठ ने कहा, ''आर्य को कोई हँसी की बात प्रतीत नहीं हुई?''

गणपति ने कहा, ''नहीं, यह बात नहीं। घटना तो अवश्य ही हास्यास्पद है, परन्तु यह सोच रहा हूं कि वह कोई देहाती गंवार न होकर अवध से आये दूत का कोई साथी हो सकता है। अवश्य गंवार बन कोई भेद की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बात जानने आया होगा, देवी!'' उसने नगर वधू को सम्बोधन कर कहा, ''उसकी रूपरेखा का वर्णन करो तो।''

''लंबा, दुबला-पतला शरीर, तीखी नाक, आँखें ओजस्वी, सस्ते रेशमी वस्त्र पहने था, जो यहां के गंवार लोग पहनते हैं। सिर पर कानों को ढांपे टोपी, लाल किनारे की धोती और पांव में चप्पल।''

''यह तो कुछ नहीं। वैशाली के दस निर्धन युवकों को पकड़ लो। उनमें से नौ इस रूपरेखा वाले होंगे। कोई विशेष चिह्न बताओ।''

''हां, उसकी ठुड्डी सुदृढ़ और आगे बढ़ी हुई थी।''

''अच्छा, छोड़ो इस बात को। देखो देवी! हमें तुम्हारा संगीत सुनने का सौभाग्य चिरकाल से नहीं मिला है। क्या बात है कि तुमने स्वयं कभी ऐसा प्रस्ताव कर हमें कृतार्थ नहीं किया?''

''आर्य! दासी तो सदैव प्रस्तुत है। मैं देखती हूं कि नगर के युवक द्यूत क्रीड़ा और मद्यपान में अधिक लीन हो रहे हैं। उनकी दृष्टि में नृत्य और संगीत इतना मनोरंजक नहीं रहा, जितनी उक्त बातें।''

''तो यदि आज राग मालकौंस हो जाए तो कैसी रहे?''

नगरवधू ने द्वार के पास खड़ी दासी को कहा, ''चुटकी! शीघ्र करो। मेरा तानपूरा और मृदंग-निपुण असुर को ले आओ।'' अब गणपति को देख पूछने लगी, ''कहां रंग लगे आज?''

''जहां देवी की इच्छा हो।''

''नहीं आर्य! गणपति को मेरा गायन सुनने की इच्छा एक वर्ष पश्चात् हुई है। मैं आज अपने को कृतकृत्य मानती हूं। इससे जहां गणपति की इच्छा हो, वहीं संगीत होगा।''

''तो यहीं हो।'' गणपति ने कहा। पश्चात् अपने पास से स्वर्ण मुद्राओं की एक थैली निकाल भेंटस्वरूप नगर वधू के सम्मुख फेंक दी।

इस समय तानपुरा लाया गया और एक काला नाटे कद का, दक्षिण देश निवासी, मृदंग बजाने वाला नगर वधू के पीछे बैठ गया। तानपूरा और मृदंग स्वर होने लगे। इस समय नगरवधू के संगीत का समाचार सुन और लोग भी आगार में आ उपस्थित हुए। आगार खचाखच लोगों से भर गया।

नगरवधू ने गले को साफ कर स्वर भरना आरंभ किया। फिर मालकौंस का आलाप आरंभ हुआ। धीरे-धीरे संगीत में बल, ओज और रस बढ़ने लगा। स्वर ऊंचे और ऊंचे जाने लगा और श्रोतागणों के हृदय, नगर वधू

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के मादक स्वर से कांपने लगे। उस समारोह में दासियां जल मिश्रित माधवी प्यालों में भर-भरकर श्रोतागणों को देने लगीं। केवल दो व्यक्ति थे, जिन्होंने मद्य नहीं पी—एक नगरवधू और दूसरे गणपति।

नगरवधू ने गाना आरंभ किया :

बिसुरत नाहीं नैन तिहारे।।
जल बिन मीना तड़पत जैसे
व्याकुल रहत बिन पिय प्यारे।।

तानालाप और फिर बोल-तान आरंभ हो गयी। ऐसा समय बंधा कि सब सुध-बुध भूल गये। नगर वधू वैशाली में अद्वितीय कलाकार थी और बड़े-बड़े संगीत-कला-विशेषज्ञ उसके सम्मुख हार मान चुके थे।

संगीत समाप्त हुआ और गणपति की थैली के समीप श्रोतागणों ने स्वर्ण मुद्राओं का ढेर लगा दिया। अभी नगर-वधू को बधाइयां ही दी जा रही थीं कि छुट्टन, गणपति को ढूंढ़ता हुआ, उस कमरे के बाहर आ पहुंचा। उसने एक दासी के द्वारा भीतर कहला भेजा कि वह उपस्थित है और आज्ञा की प्रतीक्षा में है। दासी ने श्रोतागणों की भीड़ को चीरते हुए गणपति के कान में आकर छुट्टन का संदेश दे दिया।

गणपति ने सिर हिलाकर दासी को कहा, "छुट्टन को कहो, मेरे निजी आगार में प्रतीक्षा करे।" फिर अवसर पा नगरवधू से कहा, "देवी! मुझे तुमसे एक विशेष काम है। मेरे निजी आगार में अवकाश पा आना। मैं प्रतीक्षा कर रहा हूं।"

इतना कह गणपति उठकर इस समारोह से बाहर हो गया। श्रोतागणों ने एक गीत और सुनने का आग्रह किया। नगर वधू आज अति प्रसन्न थी, इससे बिना ना किये गाने लगी। इस प्रकार एक घड़ी भर यह गीत चला। लोगों ने और भेंटें दीं।

मध्यरात्रि समीप आ गयी और विदाई का घड़ियाल भवन की छत पर से बजा। सब लोग वाह-वाह कर उठ पड़े। दासियों ने स्वर्ण मुद्राएं एकत्रित कर लीं। असुर अपना मृदंग समेट खड़ा हो गया। नगर वधू ने दासी की झोली में से एक मुट्ठी-भर स्वर्ण मुद्राएं निकाल असुर को दीं और वह झुककर नमस्कार कर चला गया।

नगर वधू दासियों को आदेश दे कि स्वर्ण मुद्राएं गिन कोषाध्यक्ष के पास जमा करा दें, गणपति के निजी आगार में जा पहुंची।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

: 6 :

गणपति ने अपने निजी आगार में पहुंच सर्वप्रथम छुट्टन से पूछा, "बहुत देर कर दी, क्यों?"

"महाराज! ये पंथागार में नहीं थे। दो घड़ी रात गये पहुंचे। उसी समय इनको ले कोट में पहुंचा। वहां से माताजी ने इन्हें यहां भेज दिया है।"

"कहां रहे वत्स?" देवधर्मा ने भानुमित्र से पूछा।

"मैं नगर देखता-देखता दूर निकल गया था। लौटने में बहुत देर हो गयी। पंथागार में पहुंचा तो यह वहां मेरी प्रतीक्षा कर रहा था। सो साथ चला आया हूं।"

गणपति ने छुट्टन को घर जाने को कह दिया। जब वह चला गया तो भानुमित्र से कहने लगा, "देखो वत्स! मैं तुमसे एक ऐसा कार्य लेना चाहता हूं, जो अति गुप्त है। इस कारण तुम्हारा मुझसे प्रत्यक्ष में मिलना अथवा मेरे घर में रहना ठीक नहीं होगा। कार्य यह है कि अवध के महामात्य ने अपना गुप्त दूत यहां भेजा है, जो हमारे मंत्री लोगों को अवध पर आक्रमण करने के लिए तैयार कर रहा है। मैं चाहता हूं कि तुम इस जाल को सुलझाओ। मालूम करो कि महामात्य रिपुदमन का इस दांव में क्या प्रयोजन है? फिर वह यहां के मंत्रियों को क्या प्रलोभन दे रहा है? साथ ही मैं यह जानना चाहता हूं कि यदि अवध पर आक्रमण ही करना पड़े, तो सफलता की क्या आशा है? मैं चाहता हूं कि यहां के स्थायी गुप्तचर विभाग से पृथक् काम करो और अपने साथी यदि चाहिएं तो स्वयं ढूंढ़ो। धन जितना चाहिए मिलेगा। मैं तुम्हें एक स्त्री से परिचित कराने के लिए यहां लाया हूं। उसे तुम अपना उद्देश्य नहीं बताना। हां, धन अथवा संरक्षक जितने चाहिए, वह देगी। मेरे नाम भी जो संदेश भेजना चाहो, इसी स्त्री को दे सकते हो। यहां तुम निस्संकोच आ सकते हो। देखो, मेरा नाम किसी और के सम्मुख नहीं लेना।"

भानुमित्र इस कार्य की व्याख्या से गम्भीर विचार में पड़ गया। कुछ विचार कर बोला, "क्या श्रीमान् अवध पर आक्रमण करने के इच्छुक हैं?"

"नहीं। परंतु अपने पड़ोस में और अपने मित्र राज्य की प्रगति से परिचित रहना अत्यावश्यक है। जब भी वहां प्रगति अपने प्रतिकूल जाने लगे, तो उसकी तुरंत चिकित्सा कर देनी चाहिए। तुम्हारा काम यह है कि तुम महामात्य रिपुदमन के इस प्रस्ताव का कारण ढूंढ़ो। तुम अवध राज्य में होने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
वाली विचार-प्रगति का पता करो। यदि वह हमारे राज्य के विरोध में जा रही हो, तो उसकी चिकित्सा भी बताओ।

"भली-भांति सावधानी से कार्य करना। मुझे संदेह हो रहा है कि अवध का कोई गुप्तचर आज यहां भी आया है।"

इस समय नगरवधू गणपति के आगार में, बाहर से संकेत कर भीतर आ गयी। भानुमित्र तो विनोद भवन को यहां आते ही पहचान गया था और उसने छुट्टन से यह जान लिया था कि यह भवन किसका है। वह मन में सोच रहा था कि क्या वैशाली की नगरवधू ही थी, जो उसको, मद्य से अचेतनावस्था में, प्यार करती रही थी। वह उसके रूप को स्मरण करने का यत्न कर रहा था। जब गणपति ने उसे आवश्यक कार्य सौंपा तो वह अपनी बात भूल उस आवश्यक कार्य पर विचार करने लगा। अब नगरवधू को सम्मुख देख, वह पुनः मध्याह्न की घटना पर विचार करने लगा। उसे देख भानुमित्र को विश्वास हो गया कि अचेतनावस्था में प्यार करने वाली स्त्री ही सम्मुख खड़ी है।

नगरवधू भी मध्याह्न की घटना वाले देहाती गंवार को सम्मुख देख अवाक् मुख खड़ी रह गयी। भानुमित्र समझ गया कि वह स्त्री उसके वहां होने की आशा नहीं करती थी। इससे उसने बात को छिपाकर रखने के लिए आंख से संकेत कर दिया। नगरवधू अपने को संभाल गणपति की ओर देख सतर्क हो बोली, "क्या आज्ञा है?"

"बैठो देवी।"

नगरवधू दोनों के सम्मुख भूमि पर बैठ गयी। गणपति ने भानुमित्र का उस स्त्री से परिचय कराने के लिए कहा, "यह मृदुलादेवी, वैशाली की नगरवधू हैं। मैं इन पर पूर्ण विश्वास करता हूं। जिस भी वस्तु की आवश्यकता हो इनसे ले सकते हो।"

पश्चात् भानुमित्र का परिचय कराते हुए मृदुलादेवी से कहा, "यह मेरे वत्स समान है। इसको मैंने राज्य के एक अत्यंत गोपनीय कार्य पर नियुक्त किया है। सो जितना भी धन यह मांगे इसे देना। इस गृह में आने जाने की सुविधा तथा भिन्न गोष्ठियों और लोगों से मेलजोल की पूर्ण सुविधा इसे मिलनी चाहिए।"

"जैसी आज्ञा आर्य!" नगर-वधू का उत्तर था।

"बस, अब तुम जा सकती हो। इसका कार्य आज से आरंभ हो रहा है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अतएव अपने कर्मचारियों को इसके विषय में उचित आज्ञा तुरंत दे देनी चाहिए।''

नगर-वधू के चले जाने पर गणपति ने भानुमित्र से कहा, ''अभी दस सहस्र स्वर्ण मैं मृदुलादेवी के पास रख दूंगा। मुझे तक्षशिला की शिक्षा पर पूर्ण विश्वास है। मैं और तुम्हारे पिता भी इसी विश्वविद्यालय के स्नातक हैं। देखो, अपनी शिक्षा को कलंकित न होने देना।''

इस समय भानुमित्र को एक बात याद आई। उसने कहा, ''अभी मैं माताजी से मिलकर आ रहा हूं। उन्होंने मुझे कल अल्पाहार के समय आमंत्रित किया है। ऐसे अवसरों के लिए क्या आज्ञा है?''

''जब-जब ऐसे अवसर मिलें, उनसे मेल-मिलाप का लाभ उठाओ। मेरे घरवालों के लिए गणपति भवन का पिछला द्वार, जो विष्णुवीथिका में खुलता है, सदैव खुला रहता है। जब भी बुलायें, जाओ, आओ।''

गणपति देवधर्मा भानुमित्र को वहीं छोड़ चला गया। उसे कुछ काल पश्चात! जाने की आज्ञा थी। परंतु जाने से पूर्व उसकी मृदुलादेवी से एक और भेंट हो गयी। भानुमित्र जाने के लिए तैयार खड़ा था कि मृदुला मध्याह्न की घटना का अर्थ समझने आ गयी। एक क्षण तक उसको सिर से पांव तक देख उसने पूछा, ''जा रहे हो मित्र?''

''हां देवी!'' भानुमित्र ने मुस्कराते हुए उत्तर दिया।

''मैं तो आपका परिचय कुछ अधिक जानने आयी थी और आज मध्याह्न की घटना का अंतिम चरण जानने की इच्छा है।''

भानुमित्र हँस पड़ा और बोला, ''वह उल्लेखनीय नहीं है। न तो वह उस आतिथ्य की शोभा बढ़ाता है, जो मध्याह्न समय एक अपरिचित का किया गया था और न ही वह अतिथि की मर्यादा का सूचक है।''

''थोड़ा और बैठिए। क्या रात का भोजन कर लिया आपने?''

भानुमित्र की हँसी निकल गयी। हँसकर उसने कहा, ''अभी मध्याह्न काल की खुमारी तो उतरी नहीं। क्या फिर वही नाटक खेला जायेगा?''

''छोड़िये उस बात को। मैं उस समय आपको कोई देहाती समझती थी और आपकी हँसी करने के विचार से सबकुछ किया गया था। परंतु जब आपने अवध-महिषी मल्लिका का नाम लिया तो मैं कांप उठी थी। मुझे उसी समय संदेह हो रहा था कि आप कोई भले घर के युवक हैं। सो वह संदेह सिद्ध हो गया है। देखिए, गणपतिजी मुझ पर भारी विश्वास करते हैं और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दस सहस्र स्वर्ण-मुद्रा की हुंडी दे गये हैं।''

कुछ काल तक भानुमित्र को देखते हुए उसने कहा, ''मैं आपको यह एक मुद्रा देती हूं। यह मुझसे मिलने में आपकी सहायता करेगी। आठ प्रहर में किसी भी समय जब आप आएं, आपको रोकने वाला कोई नहीं है। फिर यहां का आगार पचपन आपके लिए नियत कर दिया गया है। उसकी चाबी आपके पास रहेगी।''

इस समय दासी भोजन के लिए कहने आई। मृदुलादेवी ने फिर आग्रह किया, परंतु भानुमित्र ने बताया कि आज रात वह भोजन नहीं करेगा।

दासी को भी भानुमित्र को वहां बैठे देख अचंभा हुआ। मृदुला ने भानुमित्र से कहा, ''अच्छी बात है, तो आप जाइये। आपको दूर जाना है।'' इस समय चांदी की चाबी देकर बोली, ''यह आपके आगार की है।''

भानुमित्र विदा हो गया।

: 7 :

भानुमित्र ने पंथागार छोड़ दिया और एक मकान भाड़े का लेकर रहना आरंभ किया। राजमार्ग पर सेट्ठियों के ग्राम में एक सुंदर पक्का मकान, जिसमें तीन-चार आगार थे, ले लिया। दो सेवक रख लिए, जो मकान की देखभाल भी करते थे और भोजन भी तैयार कर देते थे। मकान में कुछ अधिक सामान नहीं लगाया गया, न ही भानुमित्र वहां अधिक रहता था। वह प्रायः घर के और फिर नगर के बाहर चला जाता था। यदि कोई मूल्यवान वस्तु उस घर में थी तो वह चार बहुत बढ़िया अश्व थे, जो सदैव यात्रा के लिए तैयार रहते थे।

मकान के एक आगार में देश का मानचित्र दीवार के साथ टंगा था और प्रतिदिन भानुमित्र उस मानचित्र पर लाल मसि से चिह्न बनाया करता था।

भानुमित्र कभी-कभी देवधर्मा के घर भी जाया करता था और गणपति की छोटी लड़की प्रभा के साथ उसका मेलजोल बढ़ता जा रहा था। देवधर्मा की स्त्री सुनीला प्रत्येक प्रकार से अपनी लड़कियों और भानुमित्र में संपर्क उत्पन्न करने में यत्नशील थी। कभी-कभी जब प्रातः के अल्पाहार के समय भानुमित्र वहां होता तो गणपति से भी एक-दो क्षण के लिए वार्तालाप हो जाता था। भानुमित्र के कहने पर कि कार्य प्रगति कर रहा है, देवधर्मा संतोष अनुभव कर रहा था।

गणपति के सेवकों और भानुमित्र के सेवकों में यह बात विख्यात हो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गयी थी कि वह सुनीलादेवी के संबंधियों में से है। यह भी विख्यात हो रहा था कि गणपति तो उससे विशेष स्नेह का व्यवहार नहीं रखता, परंतु सुनीलादेवी उसको बहुत मानती हैं।

भानुमित्र जब भी वैशाली में होता था, विनोद-भवन में अवश्य जाता था। उसे प्रायः मृदुलादेवी से पृथक् मिलने का अवसर मिलता रहता था। मृदुलादेवी का व्यवहार अति सुहृदय तथा सहिष्णुपूर्ण रहता था। कई बार भानुमित्र को संदेह होता था कि उसका उस पर विशेष अनुराग है।

एक दिन रात के तीसरे प्रहर में वह कुछ अस्थिर चित्त विनोद-भवन के सम्मुख खड़ा विचार कर रहा था कि भीतर जाने का यत्न करे अथवा नहीं। यह समय ठीक नहीं था, परंतु उसे सूर्योदय से पूर्व ही अयोध्या के लिए प्रस्थान करना था। कुछ धन की आवश्यकता भी थी और साथ ही अपने घर से बाहर शेष समय व्यतीत करना था। फिर साहस कर और आवश्यकता का अनुमान लगा वह मुख्य द्वार पर पहुंचा और प्रहरी को निश्चयानुसार बोला, "चंपादेवी से मिलना है।"

इस प्रकार कुसमय तो वह पहली ही बार आया था इस कारण प्रहरी ने उसको सिर से पांव तक देख सिर हिला दिया भानुमित्र ने मृदुलादेवी की दी हुई अंगूठी दिखाकर कहा, "मित्र! बहुत आवश्यक काम है।"

अंगूठी देख प्रहरी ने दीवार के साथ जल रही दीपशिखा को उतार, भानुमित्र के मुख पर देखा और फाटक के साथ लटक रहे एक रज्जू को दो-तीन बार खींचा। शीघ्र ही फाटक खुला और एक दासी ने सिर बाहर निकालकर पूछा, "क्या है?"

प्रहरी ने कहा, "ये भद्र पुरुष चंपादेवी से मिलना चाहते हैं।"

भानुमित्र ने अपने हाथ को अपने मस्तक पर इस ढंग से रखा कि मृदुलादेवी की दी अंगूठी दीपशिखा के प्रकाश में स्पष्ट दिखायी दे गयी। दासी ने वह देख ली और भानुमित्र को भीतर आने की स्वीकृति दे दी।

भानुमित्र उस दासी के पीछे-पीछे संकीर्ण मार्ग से होता हुआ, ऊपर की छत पर जाने के लिए सीढ़ियों के पास पहुंच गया। वहां एक दासी दीवार का ढासना लिए भूमि पर बैठ ऊंघ रही थी। भानुमित्र के साथ आने वाली दासी ने उसे पांव की ठोकर लगा, जगाकर कहा, "इन्हें चंपादेवी के आगार में ले जाओ।"

वह दासी घबराकर उठ और विस्मय में भानुमित्र और साथ आई दासी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का मुख देखने लगी। फिर भानुमित्र के हाथ में अंगूठी देख बोली, "आइए।"

सीढ़ियों के ऊपर दो छत चढ़ने पर, एक संकीर्ण मार्ग में कुछ दूर जाकर, एक आगार के सम्मुख बैठी एक और दासी के पास खड़ी होकर बोली, "चंपा बहन के पास पहुंचा दो।"

यह कह वह दासी पुनः सीढ़ियों के नीचे अपने स्थान की ओर चली गयी। इस दासी ने भानुमित्र को वहां खड़े रहने को कह धीरे से आगार का द्वार खोला और भीतर चली गयी। एक-दो क्षण के पश्चात् वह आई और भानुमित्र को भीतर जाने को कह दिया।

भानुमित्र भीतर गया तो सम्मुख उन तीन में से एक स्त्री को खड़े देखा, जो पहले दिन की घटना के समय बाहर चबूतरे पर उसकी हंसी उड़ा रही थी। भानुमित्र ने नमस्कार की तो उसने कहा, "संकेत?"

भानुमित्र ने हाथ की अंगूठी दिखायी। उस स्त्री ने कहा, "यह समय भेंट का नहीं है, परंतु इस संकेत रखने वाले के आदेश को ना नहीं हो सकती। आइये।"

वह उसे एक और आगार में ले गयी, जो इसमें ही खुलता था। वहां उसे खड़ा कर वह बगल के एक द्वार से भीतर गयी। फिर कुछ ही समय में वापस आकर बोली, "देवी सो रही थीं। उन्हें जगाने में समय लगा है। आप भीतर जा सकते हैं।"

मृदुला पलंग पर लेटी हुई आँखें मल रही थी। एक दासी पलंग के सिरहाने खड़ी पंखा कर रही थी। इस समय मृदुला श्रृंगारविहीन और तड़क-भड़क के वस्त्र उतार केवल श्वेत धोती और चोली पहने थी। बाल खुले थे, जो पलंग पर काले बादलों के समान बिखरे थे। इन बादलों में उसका गौरवर्णीय मुख चंद्रमा के समान दिखायी दे रहा था। पलंग आगार के बीचों-बीच लगा हुआ था और छत से दीप गुच्छ लटक रहा था, जिसमें केवल एक बत्ती जल रही थी। इस बत्ती के धीमे प्रकाश में वैशाली की सर्वश्रेष्ठ सुंदरी अर्धनग्नावस्था में, बहुत बारीक आवरण लिये अलसाई आँखों से प्रश्न-भरी दृष्टि से भानुमित्र की ओर देखने लगी। फिर एकाएक उसे पहचान, उठकर पलंग पर बैठ गयी और पूछने लगी, "आप? मित्र! क्या बात है?"

भानुमित्र ने देखा कि वैशाली के लोगों का सौंदर्य-भान वास्तव में बहुत ही उत्कृष्ट है। उसके सम्मुख पलंग पर बैठी वह स्त्री अद्वितीय सुंदरी,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देवलोक की अप्सरा-सी दिखायी देती थी। वह शंख के समान श्वेत-वर्ण और चमकदार पारदर्शक चर्म वाली थी। चोली तो केवल उसके वक्षोज को ही संभाल रही थी। त्रिवल्लीयुक्त पेट, गंभीर नाभि और मृदुल लता-सी बांहें सर्वथा अनावृत थीं। भानुमित्र को बैठने का संकेत कर मृदुला ने पूछा, "क्या बात है, जो इस समय आने का कष्ट किया है?"

भानुमित्र पलंग के नीचे भूमि पर बैठ गया और बिना बोले, तृषित नेत्रों से सौंदर्य-सुधा पान करता रहा। मृदुला ने दासी को, जो पंखा कर रही थी, बाहर जाने का संकेत कर प्रश्न-भरी दृष्टि से उसकी ओर देखा। जब दासी चली गयी तो भानुमित्र ने कहना आरम्भ किया, "मैं आज राज्य कार्य से कुछ अति भयंकर लोगों के संघ में जा पहुंचा था। मैं भेष बदलकर वहां गया था। किसी कारण से उनको मुझ पर संदेह हो गया और पांच भट्ट खड्ग ले मुझ पर लपके। मैं मकान की खिड़की से कूदकर बाहर निकला और पूर्व इसके कि वे नीचे आ मुझे मार डालते, मैं भाग खड़ा हुआ। मार्ग में कृत्रिम दाढ़ी-मूंछे उतार, मार्ग के तट पर फेंक आया हूं। जब विनोद भवन के सम्मुख पहुंचा तो मुझे विचार आया कि अपने गृह में नहीं जाना चाहिए। शायद आज वे मेरा पीछा वहां तक करें। इस कारण जान बचाने के लिए देवी को कष्ट देने चला आया हूं। आपको शयनागार में कष्ट देने का मेरा आशय नहीं था।

"मेरा विचार सूर्योदय से पूर्व वैशाली छोड़ बाहर जाने का है। उसके लिए कुछ तैयारी की आवश्यकता भी है और वह तैयारी देवी की सहायता के बिना नहीं हो सकती। कुछ तो धन स्वर्ण मुद्राओं में चाहिए। एक दास, जो विश्वस्त हो, मेरा पत्र लेकर मेरे घर जाना चाहिए। अब प्रातःकाल से पूर्व मैं इस भवन से बाहर नहीं जा सकता।"

यह सब सुन मृदुला पहले तो गंभीर विचार में पड़ गयी। फिर कुछ मुस्कराकर, एक बार ताली बजाकर बोली, "आपको पत्र लिखने के लिए मसि, लेखनी इत्यादि चाहिए न?"

भानुमित्र उसकी सूझ देख मुस्कराया। इस समय वही दासी, जो पंखा कर रही थी, भीतर आ गयी। मृदुला ने उससे कहा, "चिट्ठी लिखने का सामान लाओ और चंपा बहन से कहो कि कज्जन को कहीं जाने के लिए तैयार कर दे।"

मसिपात्र, लेखनी और एक टुकड़ा पत्र का आया। भानुमित्र ने अपने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सेवक के नाम पत्र लिखा, "नगर के उत्तरी द्वार के बाहर [illegible] अश्व पर मेरी खड्ग और यात्रा के लिए उचित वस्तुएं लेकर [illegible] सूर्योदय से पूर्व पहुंच जाओ।"

फिर अपने हस्ताक्षर [illegible], अपने घर का पता लिख, पत्र दे दिया। पत्र चंपा के हाथ [illegible] को भेज दिया गया और कहला दिया गया कि पत्र पहुंचाने का [illegible] समाचार लाए।

[illegible] समय भवन की छत पर लगा घड़ियाल बजा। रात अभी एक प्रहर शेष थी। भानुमित्र ने कहा, "अब मैं अपने आगार अंक पचपन में जाता हूं। मुझे सौ स्वर्ण-मुद्राएं ब्रह्ममुहूर्त आरम्भ होने से पूर्व मिल जानी चाहिएं।"

"आप यहीं बैठिये। आप नीचे नहीं जा सकते। बहुत हल्ला हो जायेगा।"

"परंतु मेरे, यहां इस स्थान पर रहने से, आपको कष्ट होगा।"

"नहीं मित्र! मुझे इसमें बहुत प्रसन्नता हो रही है कि आपकी संगत एक प्रहर तक मिलेगी।"

"परंतु.....।"

"कुछ नहीं, मैं लेट जाती हूं। आप पलंग के समीप ही बैठ जाइये। कई बातें हैं, जो आपसे करना चाहती हूं। आप कौन हैं? श्री देवधर्मा आपके क्या हैं?"

भानुमित्र पलंग के समीप खिसक गया। मृदुलादेवी एक पहलू पर लेट भानुमित्र की ओर प्रश्न-भरी दृष्टि से देखने लगी।

भानुमित्र ने अपना परिचय इस प्रकार दिया, "श्रीनगर-काश्मीर का रहने वाला हूं। श्री देवधर्मा मेरे पिता श्री महिदेवजी के सहपाठी हैं। दोनों तक्षशिला में शिक्षा प्राप्त किये हैं। मैं यहां राज्य में काम पाने की आशा से आया हूं।"

मृदुला उत्सुकता से भानुमित्र का कथन सुन रही थी। जब उसने बताया कि वह देवधर्मा के मित्र का पुत्र है तो मृदुला ने निश्चिन्त हो सांस ली। भानुमित्र ने उसके मुख पर चिंता और अब सुख की रेखा देखी। इससे कुछ विस्मय में पूछने लगा, "क्या हुआ देवी?"

"कुछ नहीं।"

दीप के प्रकाश में भानुमित्र ने मृदुला की आँखों में अश्रु-जल देखा। इससे कुछ चिन्तित हो भानुमित्र ने फिर पूछा, "आप तो रो रही हैं? मैं पहले ही कहता था कि मेरा यहां रहना आपके दुख का कारण होगा।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इतना कहते-कहते भानुमित्र उठने लगा। मृदुला ने उसका हाथ पकड़कर कहा, "न[illegible]ये। ये आँसू दुख के नहीं हैं। मेरे मन में एक भावना थी। उसमें एक बाधा प्रतीत होती थी और आज मुझे विदित हुआ कि उसमें कोई बाधा नहीं है। इससे मेरा हृदय प्रसन्नता से भर गया और उसका प्रकट रूप, ये आँसू हैं।"

भानुमित्र इसका अर्थ नहीं समझा। इससे मृदुला ने कहा, "मैं आपको एक कथा सुनाती हूं। शायद आप मुझे समझ सकें। किन्नर देश के महाराज की कन्या सुवीरा एक दिन वन-भ्रमण पर थी कि उसे एक अति ओजस्वी पुरुष, सिंह का आखेट करता मिला। कुमारी एक पालतू सिंह के साथ किलोल करती हुई वन में पुष्करिणी के तट पर बैठी थी। वह युवक उस सिंह पर बाण छोड़ने ही वाला था कि राजकुमारी की दृष्टि उधर चली गयी। उसने हाथ खड़ा कर युवक को बाण चलाने से रोका। इस प्रकार एक युवती को सिंह के पास बैठे देख, युवक ने चकित हो उसके पास आकर उसका परिचय पाने की इच्छा प्रकट की।

"राजकुमारी का पता पा युवक ने भी अपना परिचय दिया। तदुपरान्त दोनों में प्रेम जाग उठा और दोनों ने अपना गान्धर्व विवाह कर लिया। वह युवक कुछ दिन तक उसी वन में आखेट करता रहा और दोनों परस्पर मिलते रहे। विदा के समय निश्चय हुआ कि यदि कोई संतान हुई तो राजकुमारी उस संतान को ले उस युवक के नगर में चली आएगी और उसे पत्नी रूप में स्वीकार कर लिया जायेगा। यदि संतान न हुई तो कुमारी की इच्छा होगी कि वह आए अथवा न आए।

"राजकुमारी के लड़की उत्पन्न हुई, परन्तु राजकुमारी का देहान्त हो गया। मरते समय राजकुमारी ने उस युवक का पता लिखकर स्वर्ण पत्र में लपेट लड़की के गले में बांध दिया। राजकुमारी के पिता महाराज किन्नर देश अपनी लड़की के बिना विवाह गर्भ ठहरने से रुष्ट थे। इस कारण उसके मर जाने पर, सेवक को शिशु को मार डालने की आज्ञा दे दी। सेवक के मन में दया आ गयी और उसने उस बालिका का पालन-भार अपनी स्त्री को दे दिया। उस लड़की की शिक्षा-दीक्षा किन्नर देश में हुई और लड़की अति सुंदर और संगीत तथा नृत्य में निपुण निकली। जब लड़की पंद्रह वर्ष की हो गयी तो उसे वैशाली लाया गया और उसे नगर-वधू बनने के लिए तैयार किया गया। तीन वर्ष की शिक्षा-दीक्षा के उपरांत लड़की नगर-वधू

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चुन ली गयी।

"नगर-वधू निर्वाचित होने के पश्चात् लड़की के पालकों ने वह स्वर्ण मंडित पत्र लड़की को दिखाया और बताया कि इसमें उसके पिता का नाम लिखा है। लड़की ने जब अपने पिता का नाम पढ़ा तो चकित रह गयी। उसका पिता इस नगर का गणपति था। इस समाचार से वह बहुत संकोच में पड़ गयी। वह नहीं चाहती थी कि उसके पिता को यह विदित हो कि उसकी लड़की ही उसी से नगरवधू निर्वाचित करायी गयी है। परंतु एक दिन परिस्थिति ऐसी हो गयी कि लड़की को अपना परिचय पिता को देना पड़ा।

"तब से गणपति नगर-वधू का मान करने लगे और उसको अधिक और अधिक जटिल राज्य कार्य में लगाने लगे। आप तो समझ ही गये होंगे कि नगर-वधू मृदुला ही है और श्री देवधर्मा इस क्षुद्र के पिता हैं।"

मृदुला ने हँसी करने के लिए विनोद भवन में लाए गए एक देहाती दिखायी देने वाले युवक को देखा और उसकी हँसी करने के लिए उसका मुख चूमा और आलिंगन किया। यह उसके मन में एक विशेष प्रकार के भावों को उत्पन्न करने वाला सिद्ध हुआ। पश्चात मृदुला को विदित हुआ कि वह युवक गणपति का वत्स-तुल्य है। अब यह जानकर कि युवक उनके मित्र का लड़का है, मृदुला के मन में वह प्रभाव उमड़ आया है, जो उस दिन आलिंगन के समय उत्पन्न हुआ था।

"मेरे इन आनंदपूर्ण अश्रुओं की यह कथा है। अब आप अनुमान लगा सकते हैं कि कितनी बड़ी बाधा आपकी दासी के सम्मुख आ उपस्थित हुई थी। परंतु एक संशय मन में अभी भी है। क्या आप उसका निवारण करेंगे? आप अचेतनावस्था में अवध की महारानी मल्लिका का स्मरण करते थे। क्या वह भी मेरे मार्ग में बाधा होगी?"

भानुमित्र के लिए यह कथा और मन के ये उद्गार सर्वथा नवीन और विस्मयजनक थे। वह इसके उत्तर में अपने मन के भावों को नहीं समझ सका था। इससे चिरकाल तक मृदुला के मादकोत्पादक सुंदर मुख को देखता रहा। वह भानुमित्र के मुख से अपने वक्तव्य का उत्तर सुनने के लिए उत्सुक थी। वह चुपचाप भानुमित्र के गंभीर मुख को देख रही थी। भानुमित्र ने इस चुप्पी को तोड़ा और कहा, "मल्लिका मेरी घृणा की पात्र एक लड़की है, जो अब अवध की महारानी बनी हुई है।"

इस पर मृदुला ने भानुमित्र के हाथ को, जो वह अभी तक अपने हाथ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में पकड़े हुए थी, जोर से दबाकर कहा, "मुझे आपने आज अति आनंदित किया है। तो मैं आशा कर सकती हूं कि एक दिन अपना मनोवांछित फल पा सकूंगी?"

भानुमित्र ने कुछ उत्तर नहीं दिया। न ही उसने अपना हाथ, जो मृदुला के कोमल स्पर्श से पुलकित हो रहा था, खींचा। इस पर भी वह अभी अ़पने को वचनबद्ध नहीं करना चाहता था। उसने अपना दूसरा हाथ मृदुला के हाथ पर रख कहा, "देवी! मैंने एक लड़की को प्रेम किया था और उसने धन और वैभव के लोभ में एक राजा के सम्मुख मेरा तिरस्कार किया है। अब उससे भी अधिक सुंदरी और संभवतः चतुर स्त्री को प्रेम की भिक्षा मांगते देख रहा हूं। मैं नहीं जानता कि मैं क्या कहूं या करूं। यदि वासना तृप्ति की बात होती तो कुछ इतने विचार करने की बात नहीं। अनेक राजा-महाराजा अथवा सेट्ठी लोग सुंदर स्त्रियों को इस अर्थ घर में रखते हैं, परंतु इसे तो प्रेम नहीं कह सकते। न ही ऐसे संबंध के लिए इतनी भूमिका की आवश्यकता होती है।"

फिर कुछ सोचकर भानुमित्र ने कहा, "अभी चार वर्ष तक तुम नगर-वधू हो। तुम वचनबद्ध हो कि तुमने किसी से विवाह नहीं करना। मैं एक भारी कार्य में संलग्न हूं। नहीं जानता कि किसी समय भी पकड़े जाने पर मार डाला जाऊंगा। क्या ऐसी अवस्था में यह अच्छा नहीं कि हम ऐसे ही रहें जैसे हैं? दोनों स्वतंत्र रहें। जैसा जिसके मन में आए वैसा करें।"

मृदुला का मुख उतर गया। उसका हाथ, जो भानुमित्र के हाथों में था, कांप उठा। उसने कांपते स्वर में कहा, "ऐसे नहीं। मेरा सुझाव है कि यह मान लें कि हम एक-दूसरे के प्रेमी हैं। ऐसा मान लेने से शेष जीवन सुलभ हो जायेगा। आशा की डोर हाथ में पकड़ मैं अपने इस कठिन मार्ग को सहज में पार कर सकूंगी।"

"देवी!" भानुमित्र ने अपने हाथों में उसके हाथों को दबाकर कहा, "तुम जैसा भी समझना चाहती हो, समझ लो। जो भी आशा बांधना चाहती हो, बांध लो। परंतु मेरा तो यह कहना है कि इस अग्नि पर विचार रूपी घी डालने से कहीं यह इतनी प्रज्ज्वलित न हो उठे कि उस समय तुम्हारे नगर-वधू के उत्तरदायित्व और मेरा जीवन-उद्देश्य सबकुछ जलभुनकर राख हो जाएं।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तीन

अवधपुरी

: 1 :

मल्लिका और अवध नरेश मुरहारी विक्रम तक्षशिला में विवाह करने के उपरांत घूमते-घामते दो मास में अयोध्या में पहुंचने वाले थे। उनके अयोध्या पहुंचने की सूचना कई दिन पहले ही पहुंच चुकी थी। घुड़सवार दूत सूचना लाए थे कि महाराजा एक अति सुंदर गान्धार-कन्या को विवाह कर साथ लाए हैं।

इस सूचना के मिलने पर महाराज और महारानी के स्वागत का प्रबंध होने लगा। नगर-भर की सफाई की गयी। नगर से बाहर पश्चिम से आने वाले मार्ग को दो कोस तक पुष्प, आम्र पत्र और रंगारंग कपड़ों के तोरण, मालाओं और पताकाओं से सजाया गया। नगर का पश्चिम द्वार और फिर मार्ग पर दो कोस नगर से दूर फूल पत्तों से निर्मित एक द्वार का निर्माण किया गया और दोनों स्थानों पर स्वागत प्रबंध किया गया।

नगर से दो कोस की दूरी पर जो द्वार था, वहां महाराज तथा उनकी नव विवाहिता के आगमन के दिन, नगर के प्रतिष्ठित जन और मंत्रिगण प्रातःकाल से ही पहुंच चुके थे। ये लोग हाथों में मालाएं लिये द्वार के पास उपस्थित थे। यहां पर स्वागत के लिए आने वालों की संख्या कई सहस्र तक हो गयी थी। वहां से लेकर नगर-द्वार तक लोग पंक्तियां बांध मार्ग के दोनों ओर खड़े हो गये। लोग पुष्पों के बड़े-बड़े टोकरे भर-भर कर लाये थे, जिससे महाराज और महारानी पर पुष्प वर्षा कर सकें।

सब लोग नवीन, रंग-बिरंगे वस्त्र पहने थे। स्त्रियां भूषण और फूलों के गजरे वेणियों में बांधे हुए अपने पतियों तथा माता-पिताओं के साथ भारी संख्या में उपस्थित थीं। फाल्गुन का मास था और मंद-मंद सुरभित सुखद समीर लोगों के मन में उत्साह और उल्लास भर रही थी। ऐसे वातावरण में कामदेव भी निश्चल नहीं बैठा था।

एक ब्राह्मण देवता, पांव में लकड़ी की पादुका पहने, पीतवर्ण धोती और अंगरखा धारण किये, गले में रेशमी दुपट्टा डाले, सिंहद्वार की ओर अपने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रथ में आ रहा था। उसके समीप एक पंचदशवर्षीय कन्या बैठी थी। उसके हाथों में पूजा की सामग्री सजी हुई सोने की थाली थी। रथ वेग से चला आ रहा था। जब रथ सिंहद्वार पर पहुंचा तो खड़ा हो गया। इसके खड़े होते ही लड़की कूदकर रथ से नीचे उतर पड़ी। लड़की ने लाल रंग की रेशमी चोली और पीले रंग का रेशमी लहंगा पहना था। लहंगे पर नीचे तिलैई किनारा लगा था, सिर से बिना चुनर थी और वेणी पर मोतियों का गजरा बंधा था। गले में स्वर्णमाला थी, जिसमें हीरा-माणिक इत्यादि रत्न जड़े थे।

ब्राह्मण राज-कुल पुरोहित पं. मैलन्द था और लड़की उसकी माताविहीन पुत्री राका। राका की चंचलता और सौंदर्य वहां पर उपस्थित स्त्रियों और लड़कियों को पछाड़ रहे थे। उसे फुर्ती से कूदकर रथ से उतरते देख एक युवक के मन में उल्लास उत्पन्न होने लगा। वह इस सुंदर अधखिली कली को देख जहां खड़ा था, स्तब्ध खड़ा रह गया।

युवक अवध के महामात्य रिपुदमन का पुत्र प्रद्युम्नकुमार था। वह पिता का इकलौता पुत्र था और मां की ममता के कारण शिक्षा ग्रहण करने कहीं बाहर नहीं जा सका था। जो कुछ शिक्षा उसे मिली थी, वह घर पर ही दी गयी थी।

राका रथ से उतर थाल में आरती का सामान संवारने लगी और प्रद्युम्नकुमार राका की चंचल उंगलियों को वह समान ठीक करते देखने लगा। प्रद्युम्नकुमार पं. मैलन्द को तो जानता था, परंतु राका को उसने पहली ही बार देखा था। इतनी सुंदर लड़की को अयोध्या में देख उसे अचम्भा हुआ। उसने मन में निश्चय कर लिया कि इस लड़की से विवाह करेगा।

इतने में एक दुर्घटना हो गयी। एक रथ घूमकर मार्ग से नीचे उतरने में उलट गया। चाहिए तो यह था कि मार्ग पर रथ खड़ा कर दिया जाता, परंतु सारथी ने रथ को एकदम मार्ग से नीचे उतारकर खड़ा करने का निश्चय किया और भागता हुआ रथ नीचे उतरने में उलट गया। रथ में नगरसेठ भद्रसेन और उनकी स्त्री सुभ्रदा बैठी थी। रथ उलटने पर दोनों बहुत बुरी भांति गिरे। माथे और हाथों पर चोट आयी। इससे अधिक हानि नहीं हुई। वे शीघ्र उठकर खड़े हो गये और अपने नवीन रेशमी और तिल्ले गोटे से जड़ित वस्त्रों से धूल झाड़ने लगे। कई अन्य लोग उनसे सहानुभूति प्रकट करने के लिए उनके चारों ओर एकत्रित हो गये। पं. मैलंद भी उनमें जा पहुंचा। राका मार्ग के एक ओर अकेली खड़ी रह गयी। प्रद्युम्नकुमार ने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अवसर जान उसके समीप आ कहा, "देवी! स्वर्ण थाल के भार से कोमल कलाई मुड़ी जा रही है। क्या मैं तुम्हारी सहायता कर सकता हूं?"

"नहीं, मैं इतनी दुर्बल नहीं।" राका का उत्तर था।

"फिर भी तो लड़कियों की सहायता की ही जाती है।"

राका ने कहने वाले के मुख पर देखा। एक भद्दी आकृति के युवक को देखकर बोली, "यह थाली स्वर्ण की है। भला आपका विश्वास कैसे कर सकती हूं?"

"तो मैं तुम्हें चोर दिखायी देता हूं।"

"मैं नहीं जानती कि तुम कौन हो?"

"महामात्य श्री रिपुदमनजी का सुपुत्र हूं।"

"तो महामात्य के सुपुत्र जी! क्षमा करिये। आपकी सहायता की आवश्यकता नहीं।"

इस समय पं. मैलन्द राका के पास लौट आया। प्रद्युम्न को राका से बाते करते देख, माथे पर त्योरी चढ़ा, उसने कहा, "चलो राका! सिंहद्वार में खड़ी हो जाओ। वह देखो, दूर आकाश धूल से भर गया है। महाराज आ रहे हैं।"

राका सिंहद्वार में एक ओर खड़ी हो गयी। उसके समीप पं. मैलन्द और अन्य प्रतिष्ठित नागरिक, उनकी पत्नियां तथा लड़कियां खड़ी हो गयीं। सिंहद्वार में मार्ग के दूसरी ओर मंत्रिगण खड़े हो गये।

अवध-नरेश महारानी के साथ सर्वप्रथम रथ में बैठे थे। उसके पीछे तीन रथ और थे, जिन पर चमुचूड़ इत्यादि उच्च पदाधिकारी और महाराज के सखा थे। उनके पीछे दो सौ घुड़सवार थे।

जब महाराज का रथ सिंहद्वार पर पहुंचा तो महामात्य के हाथ उठाने पर रथ खड़ा कर दिया गया। पीछ आने आने वाले रथ और घुड़सवार पीछे खड़े हो गये। रथ खड़ा होते ही महामात्य ने हाथ जोड़कर प्रणाम किया और दूसरी ओर कुल पुरोहित ने पूजा की थाली में रखे घी के दीपक को जला दिया। राका रथ पर चढ़ गयी और थाल को हाथ में पकड़ महाराज तथा महारानी की आरती उतारने लगी। पं. मैलन्द मंगलाचरण गान करने लगा।

इसमें चौथाई घड़ी लग गयी। राका आरती का थाल महारानी के सम्मुख रख रथ के नीचे उतर आयी। पश्चात् स्वागत के लिए आये लोग रत्नमुक्तादि-जड़ित मालाएं अथवा पुष्प और किनारी की मालायें महाराज और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महारानी को पहनाने लगे। और फिर महाराज मुरहारी विक्रम की जयजयकार में पुष्पवर्षा होने लगी। इस पुष्पवर्षा और जयजयकार की गगन-भेदी ध्वनि के बीच रथ नगर की ओर चले। सबसे आगे महाराज और महारानी का रथ था। उनके पीछे पं. मैलन्द और राका रथ में थी। पश्चात् महामात्यादि मंत्रिगण। फिर राजा के सखा चमुचूड़ इत्यादि रथों में थे। इन सबके पीछे महाराज के शरीर-रक्षक घोड़ों पर सवार थे।

: 2 :

मल्लिका के लिए अवध का वातावरण सर्वथा नवीन था। विश्वविद्यालय में तो सब लोग बराबरी का व्यवहार करते थे। लड़कों के साथ संपर्क बहुत कम था और लड़कियां उससे हँसी-ठट्ठा करती थीं। यहां अयोध्या में वह महारानी थी। सब लोग उसके दास-दासियां थीं। सब उसको देखते ही झुककर वंदना करते और कोई भी उसके मुख की ओर देखने का साहस नहीं करता था।

महाराज की माता थीं और महल में पहुंचते ही सबसे पहला कर्तव्य उसने माताजी के चरण छू उनका आशीर्वाद प्राप्त करना समझा। महाराज के साथ उनके भवन में पहुंची। राजमाता को बहू के आने का समाचार मिल चुका था, इससे वह उसके सत्कार और भेंट देने का प्रबंध कर चुकी थी। वहां पहुंच महाराज और मल्लिका ने माता के चरण स्पर्श किये। उसने उठाकर दोनों को गले लगा आशीर्वाद दिया और अपने सामने बिठा उनको तिलक लगाया। उनके गले में रत्नजड़ित मालाएं पहनाईं और फिर फल-पुष्प उनकी झोली में डाले।

"मां, बहू पसंद है?" महाराज ने पूछा।

"बेटा! जब तुम पंसद कर लाए हो तो मुझे नापसंद कैसे हो सकती है! हां, इतना तो कहूंगी कि तुम्हारी पसंद अच्छी है।"

"धन्यवाद मां! मुझे तुम्हारा ही डर था।"

अवध की प्रथा के अनुसार महाराज और महारानी दोनों सम्मिलित राज्य के भागी होते थे। इस कारण मंत्रिमंडल में विचार-विनिमय के समय महारानी भी इसमें भाग लेती थीं। मंत्रिमंडल की प्रथम बैठक में ही महाराज को अपने दो वर्ष तक राज्य में अनुपस्थित रहने का प्रभाव स्पष्ट हो गया। एक बात तो यह थी कि राज्यकोष प्रायः खाली हो रहा था। इस प्रकार के व्यय हुए थे, जो न होने चाहिएं थे। दूसरे बौद्ध-संप्रदाय का प्रचार अधिक हो गया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

था और बहुत से सेट्ठि लोग अपनी धन-दौलत सब कुछ बौद्ध विहारों को दे भिक्षुक हो गये थे, जिससे राज्य में व्यापार तथा कला-कौशल धीमा पड़ गया था और कर से राज्य की आय कम हो गयी थी। इसके अतिरिक्त दो वर्ष में अयोध्या में गणिकाओं और मधुशालाओं की संख्या अधिक हो गयी थी। इन दोनों प्रकार के कार्यों पर राज्य-कर लगा दिया गया। यद्यपि इससे राज्य को कुछ आय हुई थी, तो भी व्यापार के कम होने से जो हानि हुई थी, वह पूरी नहीं हो सकी थी।

महाराज की इच्छा थी कि अयोध्या में तक्षशिला के ढंग का एक विश्व. विद्यालय प्रारम्भ किया जाए जिसमें वेद, शास्त्र, राजनीति इत्यादि विषयों में उच्चकोटि की शिक्षा दी जाए। इस प्रस्ताव पर यह बताया गया कि कोष में धन नहीं रहा।

इस प्रकार धन-संपदा से संपन्न राज्य दो वर्ष की अनुपस्थिति में एक निर्धन राज्य बन गया। मल्लिका मंत्रिमंडल में चुपचाप बैठी बातें सुनती रही। एक बार सायं जब महाराज के साथ एकांत में थी तो बोली, "महाराज का गुप्तचर विभाग शिथिल प्रतीत होता है?"

"कैसे कहती हो यह, रानी?"

"इस प्रकार कि राज्य का कोष समाप्त हो गया। अर्थ-मंत्री ने कोष का हिसाब तो लिखा ही होगा। इस पर भी यह सूचना आपको गुप्तचर विभाग से मिलनी चाहिए थी। यह सब कैसे हुआ? क्यों गणिकाओं की नगर में भरमार हो गयी? क्यों इतनी मधुशालाएं खुल गयीं? क्यों लोग भिक्षुक भी अधिक बने और फिर विषयगामी बने? यह जीवन का संतुलन क्यों टूटा? इस सबकी सूचना तो आपको मिलनी ही चाहिए थी। केवल यह कह देने से कि ऐसा हो गया, काम नहीं चलता।

"आप जानते हैं कि राज्य के कोष में आपके जाने के समय कितना धन था?"

"कई लाख तो स्वर्ण-मुद्राएं थी। कई सौ लाख स्वर्ण मुद्रा के दाम के रत्नादि थे। फिर प्रतिवर्ष एक करोड़ रजत मुद्रा की कर आय थी।"

"ये सब-कुछ कहां गया?"

"मैं जानना चाहता हूं, परंतु जांच करने वाले भी तो ये ही मंत्रिगण होंगे।"

"मैं आपको एक सम्मति दूं?"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"हां।"

"तक्षशिला के राजनीति के आचार्य जयदेव से कोई कर्मचारी मांगिये। एक योग्य स्नातक का पता तो मुझे भी मालूम है, परंतु शायद वह यहां आना स्वीकार न करेगा।"

"कौन है वह?"

"भानुमित्र। उसे मेरे साथ ही विशेष पुरस्कार मिला था।"

"बात तो ठीक है। कोई बाहर का योग्य आदमी यहां बुलाकर जांच करायी जाए और फिर इस दुर्व्यवस्था की चिकित्सा करायी जाए।"

"तो आप इस विषय में आचार्य जी को लिखिये। यदि वे भानुमित्र को लिखेंगे तो वह अस्वीकार नहीं करेगा। अभी एक कार्य आप करिये कि एक गुप्तचर विभाग सीधा अपने अधीन बनाइये। मंत्रिगण का उसमें कोई हस्तक्षेप न हो। फिर मुख्य-मुख्य नागरिकों से संपर्क उत्पन्न कर, उनसे पूर्ण समाचार प्राप्त करने का यत्न करिये। आप प्रतिदिन एक समय नागरिकों से मिलने और उनकी कठिनाइयों को जानने के लिए नियत करिये।"

महाराज को मल्लिका का विचार बहुत पंसद आया। चमुचूड़ को निजी गुप्तचर विभाग का मुख्य प्रबंधक नियत कर दिया गया। महाराज ने प्रतिदिन नगर के दो-दो, तीन-तीन प्रसिद्ध प्रतिष्ठित नागरिकों को सपत्नीक बुलाने का प्रबंध करवा दिया।

प्रतिदिन सायं के अल्पाहार के समय नगर के कुछ लोग महाराज और महारानी से मिलने आने लगे। मल्लिका इन सब अवसरों पर उपस्थित होती थी और लोगों से नगर और राज्य प्रबंध के विषय में प्रश्न पूछती थी।

यह बात और चमुचूड़ के प्रबंध में एक नये गुप्तचर विभाग की बात महामात्य से छिपी नहीं रही। वह महाराज में यह सतर्कता देख इस बात का अनुमान लगा बैठा कि महारानी ने मंत्रिमंडल के विरुद्ध महाराज के कान भरने आरंभ कर दिये हैं।

एक दिन नगर के लोगों से वार्तालाप में महाराज को विदित हुआ कि महामात्य का लड़का प्रद्युम्नकुमार एक गणिका के मकान पर सुराभोज में नगर के चरित्रहीन लोगों को एकत्रित कर वैशाली के गणराज्य-प्रबंध की महिमा बता रहा था।

एक और दिन यह सूचना मिली कि बहुत-सा धन ऐसे लोगों को दिया जा रहा है जो महारानी को दुश्चरित्रा बता रहे हैं। यह धन कहां से आ रहा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है, पता नहीं चला।

इन समाचारों से उद्विग्न हो एक दिन मंत्रिमंडल में तू-तू-मैं-मैं हो गयी। महाराज ने पूछा कि प्रद्युम्नकुमार लोगों को राज्य पलटने को कहता है, उस पर अभियोग क्यों नहीं चलाया जाता? इस पर महामात्य ने कहा, "प्रद्युम्न की यह सम्मति है और आज तक भारत वर्ष में किसी को भी सम्मति देने पर दण्ड नहीं दिया गया। एक राजा तो राजा ही है परंतु चर्वाक जैसे ईश्वर को न मानने वाले भी यहां ऋषि कहाए हैं।"

इस पर मल्लिका ने कहा, "राजनीति और परमात्मा को न मानना दो अलग-अलग बाते हैं। परमात्मा की धारणा तो केवल मात्र मन से तथा आत्मा से संबंध रखती है और फिर परमात्मा के विरुद्ध चलन रखने वाले को ईश्वरीय नियम दण्ड देते ही हैं। परंतु राज्य के विरुद्ध आचरण करने वालों को तो राज्य ही दण्ड देता है।"

"परंतु महारानीजी को विदित होना चाहिए कि राज्य और राजा में अंतर है।"

"राज्य, महाराजा से लेकर नगरपालक के प्रतिहार तथा ग्राम के पटवारी तक पूर्ण राज्य-कर्मचारी-मण्डल का नाम है। जो अधिकार इनमें से एक के हैं, उन अधिकारों से उसको वंचित करने का यत्न करना राज्य का विरोध माना जाता है। राज्य का विरोध दण्डनीय नहीं मानते, महामात्य?"

"परंतु यदि कोई कर्मचारी अपना कर्तव्य पालन न करे तो?"

"तो उस कर्मचारी को दण्ड दिया जा सकता है।"

"और यदि किसी कर्मचारी का स्थान ही व्यर्थ अथवा राष्ट्र के लिए अहितकर हो तो क्या किया जाए?"

"इसका निर्णय करने के लिए धर्मशास्त्री अथवा न्यायशास्त्री उपयुक्त व्यक्ति हैं। एक मूर्ख, गंवार, कम शिक्षित व्यक्ति नहीं और फिर मधुशाला इस बात का प्रचार करने के लिए उपयुक्त स्थान नहीं।"

इस पर महामात्य निरुत्तर हो गया, परंतु अपने लड़के की रक्षा के लिए उसे कुछ न कुछ कहना अथवा करना आवश्यक था। इस कारण कहने लगा, "श्रीमती महारानीजी आजकल की राजनीति नहीं जानती। इस कारण ऐसा कहती हैं। जनता वर्तमान काल में राज्य का आधार है। जनता को शिक्षित करना ध्येय है और यदि जनता मधुशालाओं में जाती है तो वहां पर जाकर ही तो प्रचार किया जा सकता है।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस पर महाराज ने माथे पर भृकुटी चढ़ाकर कहा, "महामात्य, कब से अनार्य पथ के पथिक बने हैं? जनता के सुख और संतोष के लिए तो राज्य है, परंतु यह बात अनार्य है कि जनता की सम्मति से राज्य चलेगा। राज्य का आधार तो पढ़े-लिखे विद्वान और चरित्रवान लोग हैं।"?

"महाराज! कौन जानेगा कि अमुक व्यक्ति विद्वान और चरित्रवान है?"

"यह क्या वितंडावाद है? विद्वान की परीक्षा तो विद्वान ही कर सकता है। साधारण जनता तो परीक्षक नहीं बन सकती। जो साधारण जनता को राजकीय कार्यों का परीक्षक बनने के लिए उकसाता है, वह अनर्थ करता है। इसका परिणाम राज्य के लिए और राष्ट्र के लिए अनर्थकारी होगा।"

"मैं महाराज के मत से सहमत नहीं हूं।"

"तो महामात्य को त्याग-पत्र दे देना चाहिए।" महारानी मल्लिका का कहना था।

"मैं त्याग-पत्र देने के लिए तैयार हूं।"

महाराज ने कहा, "यह वाद-विवाद बहुत गंभीर हो गया है। मैं आज्ञा देता हूं कि इस विषय पर विचार कुछ काल के लिए स्थगित कर दिया जाए।"

बात को दबा दिया गया।

: 3 :

इस कृत्रिम शांति के दिनों में ही महामात्य का गुप्त दूत वैशाली गया था। उस दूत ने महामात्य रिपुदमन की आज्ञा से ही वैशाली के मंत्रिगण को अवध में भारी जागीरें मिलने की आशा दी थी। इसका रहस्य और प्रमाण ढूंढ़ते-ढूढ़ते ही वैशाली के कुछ मंत्रियों से भानुमित्र विरोध में आ गया था और एक रात तो मंत्रियों के सुभट्ट उसे मार ही डालने लगे थे। तब उसने एक खिड़की से कूदकर जान बचाई थी और विनोद भवन में आश्रय लिया था। उन सुभट्टों में एक भानुमित्र के घर का पता जानता था। इससे वह अपने साथियों को लेकर उसके घर पर जा पहुंचा। जब सेवकों से उन्होंने भानुमित्र का पता पूछा तो एक ने दाल में कुछ काला समझ कह दिया पंडित ऊपर छत पर सो रहे हैं। इस सूचना के मिलते ही उन्होंने उस घर को आग लगा दी। सेवक जानते थे कि घर में अश्वों के अतिरिक्त और कुछ भी मूल्यवान नहीं है। इससे दो सेवक दो-दो अश्व लेकर घर से बाहर निकल आये और जलते मकान को निश्िंचत हो देखने लगे। लोगों के पूछने पर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उन्होंने बता दिया कि पंडित जी मकान में सो रहे थे।

इस समय कज्जन, नगर-वधू का विश्वस्त सेवक, भानुमित्र का पत्र लेकर वहां पहुंचा। उसने भानुमित्र के सेवकों को जलते मकान के बाहर खड़े लोगों को पंडितजी के विषय में उत्तर देते देख जान लिया कि ये सेवक हैं। इससे एक को संकेत द्वारा लोगों से पृथक् कर भानुमित्र का पत्र दे दिया। इस पर वे दोनों घोड़े ले नगर के उत्तरी द्वार से बाहर निकल अपने स्वामी की प्रतीक्षा करने लगे।

भानुमित्र को कज्जन ने मकान को आग लगने का समाचार बता दिया था। इससे वह सूर्योदय के समय जब द्वार के बाहर पहुंचा तो उसने एक सेवक को साथ ले जाना उचित समझा। दूसरे को आज्ञा दी कि दो शेष अश्व नगर-वधू के घुड़साल में बांध आए। साथ ही उसे यह कह दिया कि उसके मकान में जल जाने की पुष्टि वह रोकर और माथा धुनकर लोगों को दे, जिससे उनको विश्वास आ जाए।

इससे एक बात यह हुई कि भानुमित्र के शत्रु यह समझ गये कि वह मर गया है और उनका रहस्य सुरक्षित है। दूसरा यह कि अयोध्या में उसकी खोज और मारने की योजना बनाने की आवश्यकता न रही और वह वहां शांति से कार्य कर सका।

भानुमित्र जब अयोध्या पहुंचा तो वहां राज्य के पंथागार में तीर्थयात्रा के लिए देश में भ्रमण कर रहे यात्री के रूप में ठहर गया।

जिस दिन वह वहां पहुंचा, उसी दिन धोती-अंगोछा ले सरयू स्नान को गया। वहां ब्राह्मणों को बुला अपने पितरों के लिए पिण्डदान करने लगा। पश्चात् सरयू के किनारे ही दान-दक्षिणा ब्राह्मणों को बांट पंथागार में लौट आया।

मध्याह्न के भोजनोपरांत कुछ विश्राम कर बाजार की टोह लेने निकल पड़ा। वह टोह लेता हुआ नगर-सेठ भद्रसेन की कोठी में जा पहुंचा। भद्रसेन रत्नों का व्यापार करता था। भानुमित्र ने अपना परिचय दिया कि वह काश्मीर का रहने वाला है, तीर्थ यात्रा के लिए भ्रमण कर रहा है, प्रत्येक तीर्थ-स्थान से वह कोई वस्तु स्मृति-योग्य मोल ले रहा है, सो यहां से वह एक पुखराज खरीदना चाहता है।''

भानुमित्र का सेवक कमर में खड्ग लटकाये साथ था। जब भानुमित्र बातें कर रहा था, तो वह कुछ दूर अपने स्वामी के अंगरक्षक के रूप में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खड़ा रहा।

भद्रसेन ने भानुमित्र का नाम पूछा। उसने झूठा नाम कमलापति बता दिया। भद्रसेन ने एक-दो टुकड़े पुखराज के निकालकर दिखाए। भानुमित्र को पसंद नहीं आये। इस पर भद्रसेन ने कहा, ''आपको अयोध्या में और बढ़िया रत्न नहीं मिलेंगे।''

''क्यों? मैंने तो सुना था कि यह भारी धनाढ्य नगर है।''

''हां, था, परंतु जब महाराज तीर्थ यात्रा को गये तो महामात्य ने मनमानी की, जिसका परिणाम यह हुआ कि यहां का व्यापार समाप्त हो गया है। बाहर से आने वाली वस्तुओं और यहां से बाहर जाने वाली वस्तुओं पर भी कर लगाया गया है। हमने तो यहां से दूकान उठा लेने का निश्चय कर लिया है।''

भानुमित्र इतना समाचार पा उठ खड़ा हुआ और बोला, ''मुझे शोक है कि आपको व्यर्थ ही कष्ट दिया। आशा है, आप क्षमा करेंगे।''

वह दुकान से बाहर निकलता-निकलता रुक गया। पुनः लौट आया और कहने लगा, ''यदि मैं आपसे एक बात पूछूं तो आप बताएंगे?''

''हां-हां पूछिये।''

भानुमित्र पुनः बैठ गया और पूछने लगा, ''यहां की कौन-सी विशेष वस्तु है, जो मैं एक स्मृति के रूप में ले जा सकता हूं।''

भद्रसेन हँस पड़ा। कहने लगा, ''आजकल यहां गणिकाएं हैं जो बिकाऊ हैं। साकेत की इस पवित्र भूमि में यह अनर्थ भी संभव हो गया।''

भानुमित्र ने अपने को ऐसा विस्मित हुआ प्रकट किया कि सत्य ही वह अयोध्या को पवित्र भूमि समझता था और इस दुराचार पर उसे विश्वास नहीं हो रहा था। अन्त में उसने मुख खोला और पूछा, ''तो क्या ये सब गणिकाएं महारानीजी गांधार से लायी हैं?''

भद्रसेन ने सिर हिलाकर कहा, ''न! न !! वे तो बेचारी सती साध्वी हैं। यह हमारी महामात्य के सुपुत्र प्रद्युम्नकुमार की करनी है। वैशाली, मगध देश और बंग प्रदेश की गाने और नाचने वालियों को निमंत्रण दे-देकर बुलाया है और यहां के युवकों को उनके नृत्य और संगीत दिखाने के लिए एकत्र किया जाता है तथा महाराज और महारानी के विरुद्ध विषवमन किया जाता है।''

''परंतु क्यों?''

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"महाराज के एक कुलपुरोहित हैं। उनकी एक कन्या है। प्रद्युम्नकुमार की कहीं उस पर नजर पड़ गयी और उससे विवाह करने की इच्छा कर बैठा। लड़की ने स्वीकार नहीं किया। वह बलपूर्वक विवाह की इच्छा करने लगा। पुरोहित की लड़की महारानी से प्रार्थना करने गयी तो उन्होंने आज्ञा दे वहां दो दर्जन सुभट्ट बैठा दिये। इससे वह महारानी को बदनाम कर रहा है।"

भानुमित्र बिना उत्तर दिये, लंबा मुख किये वहां से निकला और दुकानों का माल देखने के बहाने घूमने लगा। अंग देश का रेशमी माल एक दुकान में भरा पड़ा था। भानुमित्र ने एक धेती का दाम पूछा। दूकानदार ने दो स्वर्ण मुद्रा बताया। भानुमित्र ने मुख लंबा कर कहा, "क्यों जी! परदेशी जान ठगना चाहते हो?"

दुकानदार ने तुरंत उत्तर दिया, "नहीं भगवन्! यहां हमें एक धोती पर आधी स्वर्ण मुद्रा तो कर देना पड़ता है।"

"इतना क्यों?"

"राजा का कम में पेट नहीं भरता।"

"क्या राज्य में सेना अधिक कर दी गयी?"

दुकानदार हँस पड़ा और बोला, "हां ब्राह्मण देवता! परंतु यह सेना योद्धाओं की नहीं है। यह तो नाचने-गाने वाली गणिकाओं की है।"

"इससे क्या होगा?"

"अवध के युवकों को चर्वाक ऋषि की शिक्षा का क्रियात्मक पाठ पढ़ाया जा रहा है।"

"तो अवध के महाराज, भगवान राम के वंशज नास्तिक हो गये हैं?"

"क्या जाने महाराज! समझ में नहीं आता। कुछ लोग कहते हैं कि महामात्य की नीति से ऐसा हो रहा है। कुछ का यह कहना है कि महाराज ही भारी व्यसनी हैं। हम लोग क्या जानें। हमें तो यह मालूम है कि हमारा व्यापार नष्ट हो रहा है।"

भानुमित्र बिना इस पर किसी प्रकार की टीका-टिप्पणी किये दुकान से बाहर आ गया। पश्चात् स्थान-स्थान पर उसने लोगों से पूछा और परिस्थिति का ज्ञान प्राप्त करता रहा। अगले दिन उसने अपने सेवक को बाजार से देहातियों के से वस्त्र मोल लाने को भेज दिया और स्वयं आगे की योजना पर विचार करने लगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

: 4 :

रिपुदमन ने प्रद्युम्न को अपने पास एकांत में बुलाया और पूछा, ''क्यों जी राजकुमार! वैशाली से कुछ सूचना मिली?''

''हां पिताजी! सूचना मिली है कि वहां भारी गड़बड़ हो चली थी। एक भानुमित्र नामक काश्मीर का रहने वाला उनके कार्य में कूद पड़ा था। उसने चतुरायी से जान लिया कि किस-किसको कितना धन और कब मिलेगा। तभी भूधर लक्ष्मीदेवी पंथागार का प्रबंधक वहां आ गया। वह अपना व्यक्ति है। आजकल बौद्ध उपासक बन गया है। उसने भानुमित्र को पहचान लिया और हमारे एक सुभट्ट को बता दिया कि वह देवधर्मा का संबंधी है। हमारे सुभट्ट अपनी खड्ग ले उस पर टूट पड़े। एक क्षण का अंतर रह गया और वह ऊपर की छत से नीचे कूद गया और भाग खड़ा हुआ। सुभट्टों ने उसका पीछा किया और जब वह अपने मकान में सो रहा था, मकान को आग लगा दी। वह उसमें जलकर राख हो गया। देवधर्मा को जब उसके जला दिये जाने की सूचना मिली तो बहुत रोया और नगरपाल को बुलाकर आज्ञा दी कि आग लगाने वाले का पता करे। परंतु प्रतिहारों के नायक को हम पहले ही अपने सोने का रंग दिखा चुके थे।''

रिपुदमन चिंता का अनुभव करने लगा। उन्होंने कहा, ''प्रद्युम्न! देवधर्मा सहज में रोने वाला व्यक्ति नहीं है। कहीं उसका रोना एक बहाना-मात्र न हो?''

''पिताजी! यह मालूम हुआ कि भानुमित्र देवधर्मा की स्त्री सुनीला का चचेरा भाई था। यदि देवधर्मा झूठमूठ रोया है तो अपनी स्त्री को दिखाने के लिए रोया होगा। सुना है वह अपने पति पर भारी दबाव रखती है।''

''अच्छा, तो अब यहां क्या हो रहा है?''

''युवकों की एक सेना तैयार हो जायेगी। फिर जब आप आज्ञा देंगे उसी दिन राजमहल पर आक्रमण कर राजा और रानी को कैद कर आपके चरणों में ला खड़ा करेंगे।''

''कितने युवक जमा हो गये हैं?''

''पांच सहस्र तो एक चुटकी-भर में एकत्रित कर सकता हूं और यदि इनको सेट्ठियों को लूटने की स्वीकृति दे दें तो यही पांच सहस्र पचास सहस्र हो जायेंगे।''

''अभी ठहरो बेटा! वैशाली से शुभ समाचार आ जाने दो। तुम तो जानते

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
ही हो कि राजमाता लिच्छवी वंश की लड़की है और यदि उसने अपने परिवार वालों से सहायता मांगी तो हमारी हड्डी बोटी भी नहीं बचेगी। लिच्छवी लोग ही वैशाली में राज्य करते हैं। उनके एक लाख भट्ट सदैव शस्त्र लिए लड़ने-मरने को तैयार बैठे रहते हैं। और इस पर देवधर्मा ने मगध, मल्ल गणराज्य और अंग-बंग देशों से संधियां की हुई हैं कि उनमें से कोई भी युद्ध में जायेगा तो इन संधियों में हस्ताक्षर करने वाले सब देश एक-दूसरे की सहायता करेंगे। इन सबका विरोध करने की हम सबमें शक्ति नहीं है। इतनी सौभाग्य की बात है कि अवध नरेश की इनमें से किसी के साथ भी परस्पर सहायता देने की संधि नहीं। इस पर भी वैशाली की सहायता में सब इस घटनाक्रम में कूद पड़ेंगे।''

प्रद्युम्न इस पेच की बात को नहीं जानता था। आज उसे पता लगा कि राज्य उलटना कितनी कठिन बात है। वह तो अवध की राजगद्दी पर बैठने का स्वप्न देख रहा था। आज इन सब बातों को सुन वह निराश हो गया। उसने अपने मन की एक आकांक्षा अपने पिता से कही, ''पिताजी! यह राका की बात मैं अब अधिक सहन नहीं कर सकता। मैं आपको बता देता हूं कि एक दिन आप सुनेंगे कि राका अयोध्या में कहीं नहीं मिल रही।''

''देखा बेटा! धैर्य धरो। सहज पके सो मीठा होय।''

प्रद्युम्प ने यह सुना तो, परन्तु इस ओर ध्यान नहीं दिया और चुपचाप घर से निकल, चौमुखे पर एक गृह में घुस गया। यह 'पारख' गणिका का गृह था।

जब प्रद्युम्न इस गणिका के भेंट करने के आगार में पहुंचा तो उसने बहुत से युवकों को हँसते और किसी को तंग करते देखा। एक देहाती ढंग के कपड़े पहने युवक, सुरा पीकर अर्धचेतनावस्था में बैठा, गणिका को अपने समीप बैठने को कह रहा था। एक युवा उसके समीप बैठा हुआ उसके गले में बांह डालकर कह रहा था, ''देखो भाई! मैं पारख ही तो हूं। बताओ तुम्हारे पास कुछ दाम भी है या ऐसे ही पारख की संगत का फल उठाने चले आये हो?''

''हां..हां..क्यों नहीं? दाम दूंगा...क्या पहले लोगे..बताओ क्या लोगे...एक रजत...दो...अच्छा यह लो....।'' उसने अपनी धोती की आंटी में चार रजत मुद्राएं छिपा रखी थीं। वे मुद्राएं उसने दाहिने हाथ पर रखकर बाएं हाथ से उठाकर गिननी आरंभ कर दी, ''एक..यह लो.....।''

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समीप बैठे युवक ने कहा, "लाओ" और अपना हाथ बढ़ा दिया। देहाती ने रजत उसके हाथ पर रखकर कहा, "बस...और...अच्छा यह लो...दो..यह लो...तीन...यह और लो...चार...बस....? बस, और मेरे पास नहीं है....।"

इतना कह उस देहाती ने समीप बैठे युवक को स्त्री समझ उसका मुख चूमने का यत्न किया। उसने उसे धक्का दे दूर कर दिया। देहाती लुढ़ककर औंधे मुंह भूमि पर लेट गया और वहीं पड़ा रहा। सब युवक उस देहाती की दुर्दशा देख हँसने लगे। इस समय प्रद्युम्न ने कहा, "छोड़ो जी! इस गरीब को पड़ा रहने दो। प्रातः ठीक होने पर स्वयं चला जायेगा। आज मैं एक भारी काम आप लोगों के करने के लायक लाया हूं।"

सब चुपचाप सुनने लगे। प्रद्युम्न ने कहा, "पुरोहित की लड़की आज उड़ाकर काशी पहुंचा दी जायेगी। मध्य रात्रि के समय हम दो सौ युवक अपने शस्त्रों सहित पुरोहित का घर घेर लेंगे। सुभट्टों को मृत्यु के घाट उतार राका को ले, वहां खड़े रथ पर बिठा, पारख के साथ बनारस भेजना है। बताओ पारख तैयार हो?"

"बिलकुल! परन्तु क्या मिलेगा इसके लिए?"

"पांच सौ स्वर्ण मुद्राएं काशी पहुंचने पर।"

"स्वीकार है।"

इस पर एक युवक बोला, "तो समय होने तक नाच गाना और माधवी का प्रबंध होना चाहिए।"

"हां-हां, अवश्य होगा। जमाओ रंग पारख! मैं शेष प्रबंध करके लौटता हूं।"

इतना कह प्रद्युम्न गृह से नीचे उतर गया।

पारख ने दासी को गृह के नीचे मधुशाला में भेज एक घड़ा माधवी का मंगवा लिया। साथ ही तबला और वीणा बजाने वाले बुलाये।

युवक आज राज्य के सुभट्टों से पहली मुठभेड़ की संभावना से अति उत्साहित और उल्लसित हो उठे थे। फिर माधवी पीने से उत्तेजित हो परस्पर वाद-विवाद करने लगे। एक ने कहा, "हम आज ही राजमहल पर आक्रमण करेंगे।" दूसरे ने मुख पर उंगली रख उसे चुप रहने का संकेत किया। पहले ने पूछा, "क्या है?"

दूसरे ने उंगली से औंधे मुख पड़े देहाती की ओर संकेत कर दिया। पहले ने पांव से धक्का दे देखा कि वह सचेत है अथवा अचेत। देहाती पांव की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ठाकर से ऐसे लुढ़क गया, मानो मृत शव है। इस प्रकार निश्चिन्त हो पहले ने एक घूंट माधवी पी कहा, "मुझे अपने ग्राम से आये आज दो मास से ऊपर हो गये हैं। यहां पारख के घर में पड़े-पड़े मेरे अंगों को जंगाल लग रहा है। इससे मैं कहता हूं कि आज ही सब काम समाप्त हो जाना चाहिए।"

इस पर एक तीसरा बोल उठा, "भाई! सत्य बात तो यह है कि प्रद्युम्नजी को मिली राका और उसके पिता को मिला राज्य। परंतु मुझे क्या मिला, आपको क्या मिला और हम सबको क्या मिला? जवानी इसी प्रकार प्रतीक्षा में व्यतीत हो जाये, यह मुझे पसंद नहीं।"

इस पर एक और उठकर बोला, "इस प्रकार स्वार्थ की बातें करते हुए तुझे लज्जा नहीं लगती? इस समय देश में विप्लव हो रहा है। ब्राह्मणों ने यज्ञ, धर्म, दान-दक्षिणा, स्वर्ग-पुण्य, वेद-शास्त्र, परमात्मा-आत्मा इत्यादि के शाब्दिक जाल बना जनता को दास बना रखा है। हमें सर्वसाधारण को इस जाल से मुक्त कराना है। इसके लिए ब्राह्मणों के प्रबल सहायक राजा-महाराजाओं के जड़ से उखाड़ फेंक देना है। इतने महान कार्य के लिए दो महीने घर से आये हो गये तो कौन बड़ी बात हो गयी?

"तथागत भगवान का स्मरण करो। देखो, उन्होंने पूर्ण जीवन-भर लोक-सेवा में लगा कितना यश प्राप्त किया है। प्रजातंत्र होने से बौद्धमत का प्रचार होगा। इसके प्रचार से ब्राह्मणों के पाखण्ड का भंडा फूटेगा और फिर सर्वसाधारण की श्रृंखलाएं टूटेंगी और संसार में वास्तवितक स्वतंत्रता विराजमान होगी।"

जब यह कथन समाप्त हुआ तो सबने 'धन्य हो! धन्य हो!' के शुभ शब्द कहे और माधवी के घूंट भर-भर पीने लगे।

इस समय तबला और वीणा एक स्वर हो गये और पारख स्वर भरने लगी। एक संगीत के प्रेमी ने ऊंचे स्वर से कहा, "बंद करो इस राजनीतिक बकवास को। अब तनिक स्वर्ग का आनंद ले लेने दो।"

पारख केरल देश की रहने वाली थी। स्वर बहुत मीठा था और संगीत कला में वह बहुत निपुण थी। स्वरलाप के पश्चात् उसने गाना आरम्भ किया। उसने लोकगीत गाया, "गगरी भरने कैसे जाऊं। पनघट पै खड़े सखी सैयां हमारे।"

संगीत में सब युवक लीन थे, जब देहाती ने सरकना आरंभ किया। एक-आध की दृष्टि उधर गयी, परंतु दूसरी ओर संगीत तारतम्य लय में चल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रहा था।

"मेरी कोमल बैंया, पकड़ मरोड़ी, अंगिया फाड़ डारी, मोसों करत बरजोरी। कैसे जाऊं......।"

देहाती की ओर किसी का ध्यान नहीं था। वह लड़खड़ाते कदमों से उठा और झूमता हुआ सर पर गगरी संभालने का अभिनय करने लगा। फिर धीरे-धीरे दो पग आगे, एक पग पीछे रखता हुआ आगार के द्वार की ओर जाने लगा। किसी ने कहा, "कहां जाते हो, रसिक?"

उसने ठहरकर ध्यान से पूछने वाले की ओर देखा। फिर सोचने का भाव बनाया और कहा, "कहां जा रहा हूं? ओ...हो...लघु शंका...हां...हां..., ठीक है न? बहुत बढ़िया गाती हो...गगरी भरन...." वह द्वार के पास गिर पड़ा। सबका ध्यान भंग हुआ। परंतु पूर्व इसके कि कोई उसे उठाये वह स्वयं उठा और लुढ़कता हुआ सीढ़ियां उतर चौमुख में जा खड़ा हुआ। पश्चात् उसी प्रकार झूमता हुआ एक ओर चल पड़ा। कुछ दूर जाकर वह वेग से चलने लगा और फिर एक स्थान पर पहुंच कर खड़ा हो गया।

यह देहाती के भेष में भानुमित्र ही था। यहां उसका सेवक खड़ा प्रतीक्षा कर रहा था। सेवक मार्ग के एक ओर मकानों के साये में अंधेरे में खड़ा था। भानुमित्र को आये देख अंधेरे से निकल उसके सामने आ खड़ा हुआ। भानुमित्र ने उससे कहा, "आओ किसी मधुशाला में चलें।"

वहां से थोड़ी दूर एक नीची छत की दुकान में कोई दस-बारह लोग बैठे शराब पी रहे थे। भानुमित्र अपने सेवक सहित वहां पहुंच दुकानदार से बोला, "मैं एकांत में बैठ दो-चार घूंट पीना चाहता हूं। है कोई स्थान?"

"हां, आइये।" वह उसे सबके बीच में से निकालकर दुकान के पिछले भाग में ले गया। वहां दरी, श्वेत चादर और फूलदान रखे थे। दीवार पर नग्न स्त्रियों चित्र बने थे। भानुमित्र को वहां बिठा दुकानदान ने पूछा, "क्या कोई प्रेयसी भी चाहिए?"

भानुमित्र ने मुस्कराकर कहा, "प्रेमिका को पत्र लिखना चाहता हूं। मसिपात्र, लेखनी और पत्र ला दीजिए। एक पात्रभर सुरा भी ले आइये।"

जब दुकानदार इन वस्तुओं को लेने चला गया तो भानुमित्र ने सेवक को कहा, "मैं तुम्हें एक पत्र दे रहा हूं। सीधे राजमहल के द्वार पर चले जाना। वहां कहना कि महारानीजी के नाम पत्र है। यदि कोई पूछे, किसने दिया है तो कहना, भानुमित्र ने। फिर यह भी कहना कि अत्यावश्यक है। अभी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मिलना चाहिए।"

दुकानदार मिट्टी के एक कुल्हड़ में सुरा भर लाया। साथ ही एक पत्र मसिपात्र और लेखनी ले आया। भानुमित्र ने एक स्वर्ण-मुद्रा दुकानदार की ओर फेंकते हुए कहा, "दाम ले लो और शेष ले आओ।"

दुकानदार स्वर्ण-मुद्रा हाथ में अंगूठे से मलकर देखते हुए कि सोना खरा है या नहीं, बाहर चला गया। भानुमित्र ने लिखाः

"श्रीमती अवध-महिषि,

"मुझे विश्वस्त सूत्र से पता चला है कि आज रात को पुरोहित की लड़की राका को चुराने के लिए छापा डाला जायेगा। पांच सौ से ऊपर सशस्त्र युवक इसकी तैयारी कर रहे हैं। मुझे यह भी बताया गया है कि महारानी उस लड़की की रक्षा में रुचि रखती हैं। इस कारण यह सूचना भेज रहा हूं।

"मेरी सम्मति यह है कि लड़की को वहां से निकाल राजमहल में लाया जाए। अभी इन उपद्रवकारी लोगों से झगड़ा नहीं करना चाहिए।

"आवश्यकता हुई तो फिर लिखूंगा।

भानुमित्र"

चिट्ठी लिख एक कागज में लपेट उस पर मोहर लगा दी। चिट्ठी सेवक के हाथ में देकर कहा, "चिट्ठी देकर सीधे पंथागार में चले आना। मैं वहां प्रतीक्षा करूंगा।"

सेवक चला गया। भानुमित्र ने सुरा का कुल्हड़ उठाया और आगार की खिड़की में से सुरा को बाहर फेंक कुल्हड़ खाली कर सामने रख बैठ गया। दुकानदार स्वर्ण मुद्रा का शेष लाया और कुल्हड़ को खाली देख बोला, "और भर लाऊं?"

"पहले देखें तुमने कितना दाम लिया है?"

"एक रजत मुद्रा आगार का भाड़ा, चौथाई रजत मुद्रा सुरा का दाम, चौथाई रजत मुद्रा मसि पत्रादि का दाम शेष साढ़े अट्ठारह रजत-मुद्रा यह हैं।" भानुमित्र ने अट्ठारह रजत-मुद्रा उठाकर कहा, "यह शेष अर्ध रजत मुद्रा तुम्हें उपहार। जाओ, मैं अभी अर्ध-घड़ी भर प्रतीक्षा कर अपनी प्रेमिका के पास जाऊंगा।"

दुकानदार ने मुस्कराकर अर्ध-रजत मुद्रा उठायी और हाथ जोड़ धन्यवाद कह बाहर चला गया।

: 5 :

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भानुमित्र का सेवक राजद्वार पर गया तो बीसियों सुभट्टों को खड्ग धारे खड़े देख अति प्रभावित हुआ। वह एक सुभट्ट के सम्मुख जाकर बोला, "भन्ते! महारानी के नाम की चिट्ठी है। किसको दूं?"

सुभट्ट ने कहने वाले को सिर से पांव तक देखा और फिर पूछा, "कहां से आये हो?"

"राज्य पंथागार से।"

"तो आओ।" वह भट्ट उसे साथ ले फाटक के भीतर चला गया। वहां एक ओर कुछ प्रतिहारी खड़े थे। भट्ट ने एक से कहा, "यह महारानी के नाम एक पत्र लाया है।"

एक प्रतिहारी ने कहा, "दिखाओ।"

पत्र मुहरबंद था। उसे हाथ में ले वह प्रतिहार उस सेवक को ले महल के भीतर चला गया। वहां एक आगार में चमुचूड़ के सम्मुख सेवक को उपस्थित कर दिया। चमुचूड़ ने पत्र लाने वाले को सिर से पांव तक देखकर पूछा, "कहां से आये हो?"

"पंथागार से।"

"यह चिट्ठी भेजने वाला कहां से आया है?"

"मैं नहीं जानता।" सेवक नहीं समझ सका कि बताए या नहीं।

"अच्छा, ठहरो। शायद कोई उत्तर देना हो।"

विवश सेवक को ठहरना पड़ा। चमुचूड़ वहां से निकल महल के भीतरी भाग में जा पहुंचा। वहां एक दासी को पत्र देकर बोला, "कहना चमुचूड़ बाहर प्रतीक्षा कर रहा है और पत्र लाने वाले को रोका है। यदि कुछ आज्ञा हो तो कहें।"

शीघ्र ही दासी आयी और बोली, "महारानीजी बुलाती हैं।" चमुचूड़ दासी के पीछे-पीछे महारानी और महाराज के सम्मुख खड़ा हुआ।

महाराज ने पूछा, "यह पत्र कौन लाया है?"

"एक देहाती प्रतीत होता है। कहता है उसके स्वामी पंथागार में ठहरे हैं।"

"उसके साथ रथ लेकर स्वयं जाओ और पत्र लिखने वाले को ले आओ। देखो, पिछले द्वार से आना और उस व्यक्ति को छिपाकर लाना है। और यह देखो।" महाराज ने पत्र चमुचूड़ को दिखया। चमुचूड़ ने पत्र पढ़ा और चकित रह गया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महाराज ने कहा, "अभी हम एक रथ में दो दासियों को कुछ सुभट्टों के साथ भेज रहे हैं और राका को यहां बुला रहे हैं। तुम महल पर प्रहरी दोगुने कर दो।"

चमुचूड़ झुककर नमस्कार कर बाहर चला गया। वह विस्मय कर रहा था कि यह भानुमित्र कौन है, जो अयोध्या की गुप्त बातों की सूचना रखता है। भानुमित्र के सेवक को ले रथ पर सवार हो पंथागार में जा पहुंचा। वहां उसी विद्यार्थी को देख, जिसको उसने तक्षशिला में कहा था, 'अयोध्या में होते तो जिह्वा निकलवा देता' चकित रह गया। भानुमित्र को प्रकाश में देख बोला, "तुम! विचित्र हो। तुम यहां के रहने वाले नहीं, तो भी तुम हमसे अधिक जानने का दावा करते हो?

"अभी तो मेरे साथ चलो! महाराज बुलाते हैं।"

"आप मुझे कैद कर ले जा रहे हैं?"

"नहीं महाराज ने कहा है कि आपको आदर के साथ रथ पर बिठाकर ले आऊं।"

"मेरी जाने की इच्छा नहीं। मैं पत्र भी नहीं लिखता यदि एक ब्राह्मण कन्या पर बलात्कार किये जाने की बात न होती।"

"देखो भद्र! एक बार तुमने तक्षशिला में महारानी का तिरस्कार किया था। इस पर भी वे स्वयं चलकर तुम्हारे पास आयी थीं। आज पुनः उन्होंने मुझे भेजा है कि आपको ले आऊं। क्या तुम चाहते हो किं आज भी वे स्वयं तुम तक चलकर आएं? इसमें महाराज की प्रतिष्ठा कम होगी और उनके शत्रुओं का पक्ष बल पकड़ेगा।

"फिर यह तो साधारण शिष्टाचार है कि यदि कोई स्त्री किसी प्रकार की याचना करे तो पुरुष होने के नाते हम उसे स्वीकार करें।"

भानुमित्र इच्छा न रहते हुए भी उठा और साथ चल पड़ा। मार्ग में चमुचूड़ कुछ भी पूछने से डरता रहा। वह समझ गया कि यह कोई झिक्की स्वभाव का व्यक्ति है, कहीं व्यर्थ में ही रुष्ट न हो जाए।

महल के पिछले द्वार से भीतर जाने के लिए भानुमित्र को कुछ पैदल चलना पड़ा। सरयू के तीर पहुंच वहां से एक पगडंडी पकड़ महल की पिछली दीवार के साथ-साथ चलते हुए, एक छोटी-सी खिड़की के समीप पहुंच, चमुचूड़ ने हाथ से संकेत किया। खिड़की खुली तो दोनों भीतर घुस गये। वे सीधे महल के एक आगार में थे। फिर सीढ़ियों से चढ़ वे महाराज और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महारानी के सम्मुख जा पहुंचे।

भानुमित्र को देखते ही महारानी ने कहा, "मित्र! तुमने बहुत कृपा की है जो इस समय यहां आये हो। आचार्य जयदेव का पत्र मिला है तुम्हें?"

भानुमित्र इस प्रश्न का अर्थ नहीं समझ सका। वह केवल-मात्र हाथ जोड़ नमस्कार कर खड़ा रहा। महाराज ने कहा, "प्रिय मित्र! बैठो!"

उसे अपने समीप बैठने को स्थान देकर कहा, "हम पिछले छह मास से आचार्य जयदेव से लिखा-पढ़ी कर रहे हैं। उनको हमने लिखा था कि जहां कहीं भी आप हों, यहां भेज दिये जाएं। सत्य ही हम तुम्हारे कृतज्ञ हैं कि तुम आ गये हो।"

भानुमित्र को अब समझ में आया कि महारानी के कहने का क्या अर्थ है। उसने कहा, "महाराज! आचार्यजी का मुझे कोई पत्र नहीं मिला। मैं तो किसी निजी कार्य से अयोध्या आया था और एक स्थान पर मुझे वह सूचना मिली थी, जो मैंने पत्र में निवेदन कर दी थी।"

"उस सूचना के अनुसार कार्यवाही हो रही है। राका अभी यहां आ जाएगी। परंतु हम तो चाहते हैं कि तुम हमारे यहां ही कार्य करो। हमारी अनुपस्थिति में यहां कुछ लोगों ने अनर्थ कर दिया है। हम इसको सुधारने में तुम्हारी सहायता की इच्छा रखते हैं।"

"हां..हां..मित्र! तुम ना नहीं कर सकते। इसमें तो तुम्हें मेरी सहायता करनी ही होगी।" महारानी बोली।

भानुमित्र के मन में एक बात सूझी। यह विचार कर उसने कहा, "मैं स्वतंत्र नहीं हूं। मैं किसी दूसरे के कार्य से यहां आया हूं। इस पर भी यदि आप बताएं कि आपकी क्या कठिनाई है और मैं उसमें क्या सहायता कर सकता हूं, तो मैं अपने स्वामी से पूछूंगा और यदि उन्होंने कुछ दिन के लिए स्वतंत्र कर दिया तो आपका कार्य कर दूंगा।"

"कौन है वह, जिसके काम से तुम यहां आये हो?"

"यह बताने की आज्ञा नहीं है।"

इससे महारानी और महाराज तथा चमुचूड़ तीनों विस्मय में भानुमित्र का मुख देखते रह गये। अंत में महारानी ने पूछा, "तुम हमारे शत्रु पक्ष से संबंध रखते हो क्या?"

भानुमित्र मुस्कराया और बोला, "यदि मैं कहूं, नहीं, तो मेरा विश्वास करेंगी आप?"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

''मैंने तो तुम पर कभी अविश्वास किया ही नहीं, मित्र!''

''मन में विचार करो, देवी! आपको विश्वास नहीं था कि मैं कभी धन-संपदा का अधिकारी बन सकूंगा। छोड़ो इस बात को। देवी! मैं सत्य कहता हूं कि मेरा स्वामी अवध का शत्रु नहीं है। शायद वह आपके शत्रु का शत्रु है। इससे अधिक बताने का मैं अधिकार नहीं रखता।''

''कुछ हानि नहीं।'' महाराज ने कहा, ''हम एक ब्राह्मण कुमार से बातें कर रहे हैं। भरत-खण्ड में ब्राह्मण अभी भी अपमानजनक व्यवहार नहीं करते। देखो भाई! मेरे पिता, बड़े महाराज, का देहांत हुआ तो अवध हर प्रकार से शक्तिमान और समृद्ध था। राज्य के कोष में अपार धन था। महाराज की मृत्यु से मुझे भारी शोक हुआ और कुछ काल पर्यन्त यहां रह मैं राज्य की बागडोर एक मंत्रिमंडल के हाथ देकर तीर्थयात्रा को चला गया। दो वर्ष तीर्थाटन के पश्चात् मैं यहां आकर देखता हूं कि यहां का व्यापार नष्ट हो गया है। दो वर्ष से वर्षा न होने से देहातों में अकाल पड़ रहा है। कोष में धन समाप्त हो गया है। हमारे अर्थमंत्री ने हिसाब बनाकर दिखा दिया है और उसकी गणना में दोष प्रतीत नहीं होता। कोष में धन न होने और वृष्टि न होने से सेना को छह मास से वेतन नहीं मिल रहा। करों की प्राप्ति नहीं हो रही और जब कठोरता से कर लेने का प्रबंध होता है, तो लोग नगर छोड़-छोड़ जाने लगे हैं। इसके अतिरिक्त देहातों के लोग भूखे-नंगे धड़ाधड़ नगर आ रहे हैं। कुछ युवकों ने विद्रोह करने की ठान ली है और मेरी और महारानी की निंदा करते हैं।

''मैं बल से कुछ कर सकता, यदि सेना को वेतन मिला होता और वह मेरी आज्ञा में होती। बताओ, इसमें तुम हमारी सहायता कर सकते हो क्या? हमें किसी चतुर महामात्य की आवश्यकता है।''

भानुमित्र यह कथा सुन बहुत देर तक चुप बैठा सोचता रहा। महारानी याचना के भाव से उसकी ओर देखती रहीं। भानुमित्र मन-ही-मन योजना बना रहा था और विचार कर रहा था कि यदि देवधर्मा इनकी सहायता करने पर उद्यत हो जाए, तो विप्लव होते-होते बच जायेगा। अपने मन में योजना बना उसने कहा, ''महाराज! मैं समझता हूं कि अवस्था इतनी कठिन नहीं, जितनी आप समझते हैं। इस पर भी आप मुझे एक सप्ताह का समय दीजिए, जिससे मैं अपने स्वामी से राय कर लूं। यदि उन्होंने मेरी बात मान ली तो दो मास में अवध में पुनः रामराज्य स्थापित हो जायेगा। इस समय मैं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समझता हूं कि अब मेरा पंथागार में रहना ठीक नहीं। मुझे आप किसी ऐसे स्थान पर रखिये, जहां से मेरा सेवक बिना किसी के देखे आज-जा सके।"

महाराज ने पूछा, "राजमहल में रहना चाहोगे, मित्र?"

"मुझे इसमें आपत्ति नहीं है। जो बात आवश्यक है वह किसी को भी मेरे यहां होने का संदेह तक भी न हो।"

"यह हो सकता है। चमुचूड़! इनको पीछे की खिड़की के साथ वाला आगार दे दो। दो दास इनकी सेवा में रख दो और इनके सेवक को पंथागार से यहां ले आओ।"

इस समय राका को लाकर उपस्थित किया गया। राका ने पिता पुरोहित पं. मैलन्द भी साथ थे। भानुमित्र ने देखा कि वास्तव में यह लड़की राज्य के मोल खरीदने योग्य है। महारानी ने राका को समीप बिठाकर पूछा, "राका! आज तुम बाल-बाल बच गयी हो। इसमें यह युवक तुम्हारे रक्षक सिद्ध हुए हैं। तुमको और पंडित जी को रहने के लिए हम महल में एक आगार दे रहे हैं।"

इतना कह महारानी ने एक दासी को बुलाकर इनको ठहरने के लिए स्थान बता विदा कर दिया।

: 6 :

भानुमित्र ने देवधर्मा को पत्र लिखा। उसमें उसने अवध की अवस्था लिखी और बताया, "रिपुदमन ने अवध का राज्य हस्तगत करने का षड्यंत्र किया है। वैशाली से वह सहायता की आशा नहीं करता, न ही उसने यहां गणराज्य स्थापित करना है। वह केवल विप्लव खड़ा करने में वैशाली की स्वीकृति मांगता है और इसी कारण वह आपकी संसद् में यह प्रस्ताव करवाना चाहता है कि अवध में रिपुदमन को स्वतंत्रता से विप्लव करने दिया जाए।

"राज्य में विप्लव करने के लिए उसने झूठमूठ की बातों में राज्य का कोष खाली कर दिया। वस्तुओं पर कर इतने लगाएं हैं कि व्यापार बंद हो गया है। वर्षा कुछ कम होने से गांव में लोग लगान नहीं दे सकते और वह बलपूर्वक वसूल कर रहा है, जिससे राजा की बदनामी होती है। सेना को छह मास से वेतन नहीं मिला। ऐसी अवस्था में विप्लव होने ही वाला है और यहां के महाराज, महारानी और उनसे सहानुभूति रखने वाले अन्य अनेक शांतिप्रिय प्रजागण इसमें मारे जाएंगे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"वैशाली का सीधा तो इस राज्य से कोई संबंध नहीं, परंतु यहां अराजकता फैलने पर वैशाली में भी उपद्रव होंगे। वहां के व्यापार को भी हानि होगी। एक समय वैशाली में बौद्ध मत का प्रचार बहुत हो गया था, यहां तक कि उस समय के गणपति से लेकर नगर-वधू तक भिक्षु हो गये थे। उसका परिणाम वैशाली वालों ने भोग लिया। नगर में भिक्षु रह गये थे अथवा चोर। यदि उस अवसर पर आप गणपति न बनते और फिर बाईस वर्ष तक इस उपाधि पर न रह सकते तो वैशाली की अवस्था भी कपिलवस्तु-सी हो जाती।

"कपिलवस्तु आज एक गांव भी नहीं है। उसके अंतिम समय में वहां भिक्षुक और भिक्षुणियां ही रह गयी थीं और उनकी रक्षा करने वाला कोई नहीं रहा था।

"यही अवस्था अवध और अयोध्या की होने वाली है। रिपुदमन वाममार्गी है। वह अनीश्वरवादी है। सांसारिक वैभव को ही सब-कुछ मानता है और उसको प्राप्त करने के लिए प्रत्येक प्रकार के साधन प्रयोग में ला रहा है। पाप-पुण्य में भेद नहीं मानता। सफलता को पुण्य और विफलता को पाप समझता है। सत्य, उसके विचार में धन-संपदा का नाम है।

"ऐसे व्यक्ति का वैशाली के पड़ोस में राजा हो जाना वैशाली की सुख-शांति को मिटा देगा। साथ ही यह भी समझ लेना चाहिए कि विष बीज का नाश करना सुगम है। विष-वृक्ष से विषवन बनता है।

"अतएव मेरी योजना यह है कि अवध के महाराज को पांच लाख स्वर्ण मुद्रा ऋण में देने का प्रबंध किया जाए, जिससे वे सेना को वेतन दे सकें। व्यापार से कर हटाकर उसको प्रोत्साहन दे सकें। गांव के लोगों से भूमि कर बंद दें, जिससे वे अपनी बिगड़ी अवस्था सुधार सकें। इन बातों के साथ और योजनाएं भी हैं। उदाहरण के रूप में बौद्ध मत और वाममार्गी मत-विरोधी संस्थाओं का निर्माण करना है। परंतु ये तभी हो सकती हैं, जब सेना और व्यापार पर अधिकार बन जाए।

"उत्तर शीघ्र दें। परिस्थिति विस्फोटक की भांति कभी भी फट सकती है। इससे पूर्व ही प्रबंध हो जाए तो ठीक है।"

पत्र गया और तुरंत उत्तर आया।

: 7 :

प्रद्युम्न ने अपनी योजनानुसार मैलन्छ पंडित के घर छापा मारा, परंतु

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चिड़िया तो उड़ चुकी थी। अगले दिन नगर में विख्यात हो गया कि मैलन्द पंडित का घर लूट लिया गया। उसकी लड़की का हरण हो गया है।

इस समाचार को लेकर चमुचूड़ भानुमित्र के पास आया, तो भानुमित्र ने पूछा, "आपने इस समाचार का संशोधन करवाया है या नहीं?"

"इसकी आवश्यकता नहीं समझी गयी।"

"मैं समझता हूं कि यदि आपने संशोधन न करवाया तो राज्य-सत्ता का प्रभाव कम हो जायेगा।"

"तो क्या करवाया जाए?"

"डुग्गी पीटने वालों से नगर-भर में घोषणा करवा दी जाए कि यह किवदन्ती मिथ्या है। राका और मैलन्द पंडित राजमहल में सुरक्षित हैं और डाका डालने वालों का पता किया जा रहा है। उनको घोर दण्ड दिया जायेगा।"

ऐसा ही किया गया और भानुमित्र की सम्मति के अनुकूल यह भी घोषणा करा दी गयी कि दो वर्ष से वर्षा न होने से अनाज की उपज कम हो गयी है। इससे महाराज भूमि कर में कमी करने का विचार कर रहे हैं। भूमिपतियों को चाहिए कि जितनी कमी वे चाहते हैं, अपने-अपने पटेल के पास लिखवा दें।

यह घोषणा पूर्ण राज्य-भर में और गांव-गांव में करा दी गयी। तीसरे दिन फिर एक घोषणा करायी गयी, "व्यापारिक कर में कमी पर विचार किया जा रहा है। व्यापारियों से बातचीत करने के लिए महाराजाधिराज एक उच्च पदाधिकारी नियुक्त करने वाले हैं।"

इन घोषणाओं का प्रभाव यह हुआ कि मंत्रिमंडल के अधिवेशन में महामात्य ने कहा, "महाराज! आजकल राजकार्य महारानीजी चला रही प्रतीत होती हैं। यदि हम लोगों की आवश्यकता नहीं रही तो हमारी छुट्टी कर दी जाए।"

उत्तर महारानी ने दिया, "क्या अनियमित बात हो गयी, महामात्य?"

"आजकल घोषणाओं पर घोषणाएं हो रही हैं। ये हमसे पूछकर नहीं की जा रहीं।"

"तो इसमें राज्य की हानि ही क्या हुई है?"

"जब इन करों में छूट कर दी गयी तो राज्य-कार्य कैसे चलेगा?"

"हमें कम में निर्वाह करना पड़ेगा।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"मैं तो पहले ही कम वेतन लेता हूं। इसमें और कमी के लिए स्थान ही नहीं।"

"हमारे निजी व्यय में तों कमी हो सकती है, सो हम कर रहे हैं।" महारानी ने कहा।

"यह तो पीछे देखा जायेगा। परंतु महाराज की ओर से जो भी घोषणा हो, उस पर पहले मंत्रिमंडल से स्वीकृति की आवश्कता है। बड़े महाराज का जब देहांत हुआ था तो उनके अंतिम संस्कार तक का खर्च मंत्रिमंडल की स्वीकृति से हुआ था।"

"सो तो ठीक है महामात्य! परंतु यहां तो एक पाई भी व्यय नहीं की जा रही। यहां तो आशा मात्र दिलवाई गयी है। उसमें से क्या आशा हम पूर्ण कर सकेंगे, यह मंत्रिमंडल ही निश्चय करेगा।"

बात यहीं समाप्त हो गयी, परंतु महामात्य क्रोध से उबलता हुआ घर पहुंचा।

रिपुदमन भोजन कर उतावलों की भांति प्रद्युम्नकुमार की प्रतीक्षा करने लगा। मैलन्द पण्डित के घर डाका डालने के अगले दिन ही वह एक तीव्र घोड़ा ले वैशाली की ओर रवाना हो गया था। आज उसके लौट आने की आशा थी।

तीसरे पहर वह सिर से पांव तक धूल से लथपथ महामात्य-भवन में पहुंच घोड़ा सेवक को दे वैसे ही पिता के सम्मुख जा खड़ा हुआ। महामात्य ने प्रश्नभरी दृष्टि से पुत्र की ओर देखा। उसने मुस्कराकर कहा, "वैशाली के मंत्रियों को रुपया दे दिया है, उनको यह वचन भी दे दिया गया है कि उनको अवध देश में गांव दिये जाएंगे। भानुमित्र का मारा जाना निश्चित हो गया है। उसकी खोपड़ी जले मकान में से प्राप्त हुई है। हमारा मंत्रियों को घूस देना तभी सफल हुआ है। उस गुप्तचर के जीवन काल में हमारे युद्ध में वैशाली निष्पक्ष न रह सकती थी।"

इतना कह प्रद्युम्नकुमार चुप कर गया। पिता ने माथे पर त्योरी चढ़ाकर कहा, "बस या और कुछ भी?"

"अगले मंगल के दिन संसद की बैठक हो रही है। उसमें पहला प्रस्ताव अवध के विषय में होगा।"

"और?"

"मैं बौद्ध विहार में भी गया था। महाप्रभु कल्याण मिले थे। उन्होंने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वचन दिया है कि एक-दो दिन में अयोध्या आ जाएंगे और सब बौद्धों से आपकी सहायता करायी जाएगी।''

इस पर रिपुदमन ने कहा, ''देखो प्रद्युम्न! यहां जल गरम होता जा रहा है। कुछ दिनों में ही हाथ जलने लगेगा। मेरा कहना यह है कि अब तैयार हो जाओ। मंगल को वैशाली की संसद में यह बात निश्चय होते ही विप्लव उत्पन्न कर देना चाहिए। बाहर नगरों और गांवों में अपने पक्ष के लोगों को यहां आने का आदेश भेज दो। मैं समझता हूं कि वर्षा आरंभ होते ही हमारा प्रहार प्रारंभ हो जाना चाहिए। वर्षा से नदियों में बाढ़ आ रही है और सेना का एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाना कठिन हो रहा है।

''अर्थमंत्री उदयेश्वर को मैं वैशाली भेज रहा हूं। उसके मंत्रियों से बात. चीत करने में बात अधिक विश्वसनीय हो जायेगी। देवधर्मा को तो यही बताना पड़ेगा कि हम यहां गणराज्य स्थापित कर रहे हैं। वास्तव में हमें यहां अब रिपुदमन का राज्य स्थापित करना है। तभी हम उन सब वचनों को पूरा कर सकेंगे, जो हम अब अपने सहायकों को दे रहे हैं।''

इतना कह उसने वैशाली भेजने के लिए अर्थ-मंत्री उदयेश्वर को बुला भेजा। वह आया तो उसे बताया, ''वैशाली, मल्ल राज्य और मगध परस्पर संधि से सम्बद्ध हैं। एक की लड़ाई दूसरे की लड़ाई है। और वैशाली राजमाता का जन्मस्थान है। यहां पर यदि कुछ गड़बड़ हुई तो लोग राजमाता की सहायता करने आएंगे। इस पर हम अपने चारों ओर के राज्यों के युद्ध में लिपट जाएंगे। ऐसी अवस्था में हमें वैशाली के मंत्रियों में यह बात प्रचारित करनी होगी कि अवध के महाराज मूर्ख और अनुभवहीन हैं, महारानी दुराचारिणी हैं, प्रजा भूखी है, कोष खाली है, सेना महाराज को नहीं चाहती, इत्यादि जिससे यदि यहां पर कुछ गड़बड़ मचे तो उसका दोष महाराज और महारानी के कुप्रबंध का ही माना जाए।

''सो आप वहां भ्रमणार्थ जाएं। अपने निजी रूप में वहां के मंत्रियों से मिलें और अपने लाभ का ध्यान रख उनका मत परिवर्तन करने का यत्न करें।''

अर्थ-मंत्री वैशाली जाने को तैयार हो गया। उसी सायंकाल महाराज को अर्थ-मंत्री का पत्र मिला, उसने अपने उदर-रोग की चिकित्सा के लिए वैशाली जाने की इच्छा प्रकट की। उसका कहना था कि वह अगले दिन प्रातःकाल ही वैशाली के लिए जाना चाहता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस पत्र के पहुंचते ही चमुचूड़ को बुलाया गया और राय ली गयी। चमुचूड़ भानुमित्र की सूझ-बूझ की श्रेष्ठता को मान चुका था। इससे उसने जाकर भानुमित्र की राय ली। भानुमित्र समझ गया कि वैशाली में कोई नया षड्यंत्र रचा जा रहा है। वह नहीं चाहता था कि उसकी देवधर्मा को भेजी योजना पर कोई और प्रभाव डाल सके। इससे उसने चमुचूड़ को कहा, "महाराज से इस पत्र का उत्तर का लिखा दो कि महाराज को उनके रोग की बात सुनकर बहुत चिंता लग गयी है। वे इस संकट की घड़ी में उन जैसे योग्य अर्थ-मंत्री को खो नहीं सकते। इससे वे चाहते हैं कि उदयेश्वर जी शीघ्र चिकित्सा कराकर लौट आएं। हां, राजमाता अपने भाई को संदेशा भेजना चाहती हैं। इससे महाराज चाहते हैं कि जाने से पूर्व उदयेश्वरजी माताजी का संदेशा ले जाएं। वे प्रातःकाल मिलकर जाएं।

"चमुचूड़! इसका अभिप्राय यह है कि उदयेश्वर समय पर ही यहां से विदा होगा और हमें उसके जाने के समय का ज्ञान रहेगा। मैं चाहता हूं कि वैशाली की सड़क पर, यहां से दो कोस दूर पर जंगल पड़ता है, वहां हमारे सैनिक भेज दिये जाएं, जो उदयेश्वर को पकड़ कैद कर लें। उसकी तलाशी लेकर जो कुछ उसके पास निकले, वह हमारे पास यहां भेज दे और उदयेश्वर को उसके साथियों सहित अमितपुर के दुर्ग में बंदी बनाकर रखा जाए। यह सब आयोजन ऐसे ढंग से और ऐसे लोगों से कराया जाए कि इसकी गंध तक भी अयोध्या में न पहुंच सके।"

चमुचूड़ ने सब बात महाराज को बता दी। भानुमित्र की योजनानुसार सब कार्य किया गया और अगले दिन सायंकाल तक उदयेश्वर उसके दो सेवकों सहित अमितपुर दुर्ग में बंदी बना रख दिया गया।

देवधर्मा का पत्र आया जिसमें उसने वैशाली के सेठों से ऋण दिलवाने की योजना उपस्थित की थी। देवधर्मा ने लिखा था, "गणराज्य में बिना संसद की स्वीकृति के इतना बड़ा ऋण किसी को दिया नहीं जा सकता। हां, यहां के पांच धनी सेठों को भेज रहा हूं और यदि महाराज उनको गंगा के किनारे के पसास गांव गिरवी कर दें, तो वे आपस में मिलकर स्वर्ण मुद्रा अवध के महाराज को देने को तैयार हैं। वे सेट्ठी लोग धन सहित एक-दो दिन में अयोध्या पहुंच जाएंगे। वचन-पत्र, जो महाराज की ओर से लिखा जायेगा, उस पर राज्य की मुहर होनी चाहिए और उस पर वैशाली राज्य के प्रतिनिधि के रूप में मेरी साक्षी होनी चाहिए। इस अर्थ मैं भी एक-दो दिन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में वहां आऊंगा। इसका अभिप्राय यह होगा कि यदि अवध राज्य ने उस धन का सूद और धन देने से इंकार कर दिया तो वैशाली राज्य अपने बल से उन गांवों को उन सेठों को दिलवा देगा।''

जब भानुमित्र ने यह योजना महाराजा और महारानी के सम्मुख रखी तो वे चकित रह गये। उन्हें आशा नहीं थी कि इतना धन उनको इस प्रकार मिल सकेगा। इसके अतिरिक्त उनको भानुमित्र का वैशाली की सेवा में होने से अचंभा हुआ। इस समय भानुमित्र ने रिपुदमन का, अवध के विरुद्ध वैशाली में षड्यंत्र का समाचार बताया। राज्य की ओर से इस षड्यंत्र का पता करने के लिए वह अयोध्या में आया हुआ है, यह भी बताया।

महारानी ने देवधर्मा का पत्र सुन पूछा, ''परंतु तुम्हारे विषय में कुछ नहीं लिखा। हम चाहते हैं कि तुम अवध में महामात्य की पदवी पर कार्य करो।''

''पर देवी! मैं किसी का क्रीतदास नहीं, जो मुझे मेरी इच्छा के विरुद्ध किसी को दे दे। मैंने स्वयं अवध की सेवा स्वीकार नहीं की।''

''इस पर भी तुमने बहुत कुछ किया है, मित्र!''

''यह सब वैशाली के भले के लिए किया है। अवध का भला तो अनायास ही हो चला है।''

''यह कैसे?'' महाराज ने अचम्भे में पूछा।

''यह गूढ़ नीति की बात मैं बता नहीं सकता।''

महारानी ने कहा, ''अच्छी बात है। वैशाली के गणपति तो आ रहे हैं। हम उनके द्वारा आपसे प्रार्थना करेंगे।''

भानुमित्र चुप रहा। मन ही मन वह समझता था कि मल्लिका से प्रार्थना की बात कहलाकर उसने अपने अपमान का, जो उसने उससे विवाह न कर किया था, बदला ले लिया। इससे वह प्रसन्न था।

इसके दो दिन पश्चात् वैशाली के सेठ ऊंटों पर स्वर्ण-मुद्रा लादे हुए पांच सौ सुभट्ठों की रक्षा में अयोध्या पहुंचे और राज्य के पंथागार में उनका आदरसहित सत्कार किया गया तथा उनको निवास दिया गया। बातचीत और लिखा-पढ़ी में एक दिन से अधिक नहीं लगा। अगले दिन वैशाली के गणपति आये और वचन-पत्र लिखकर हस्ताक्षर हो गये। धन गिनकर राजा के निजी कोष में डलवा दिया गया।

विदा होने से पूर्व गणपति का अवध राज्य की ओर से महल में सत्कार किया गया। महाराज, महारानी, महामात्य रिपुदमन, नगर सेठ भद्रसेन,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चमुचूड़ और भानुमित्र इस सत्कार में सम्मिलित थे। महामात्य भानुमित्र को वहां देख मन में विचार कर रहा था कि यह कोई देवधर्मा के साथ वैशाली से व्यक्ति आया है। अभी तक उसे उदयेश्वर के बंदी हो जाने का समाचार नहीं मिला था। न ही उसे वैशाली की संसद में अवध के विषय में प्रस्ताव के परिणाम का पता चला था। इससे वह जो कुछ देख रहा था, उस पर विस्मय कर रहा था। देवधर्मा और वैशाली के सेठों के अवध में आने के प्रयोजन को गुप्त रखा गया था और महामात्य समझ नहीं सका था कि हो क्या रहा है। उसके गुप्तचर पंथागार को घेरे बैठे थे, परंतु पंथागार के कर्मचारी और अन्य सब अपरिचित वहां से हटा दिये गये थे और कोई नहीं जानता था कि क्या हो रहा है।

देवधर्मा के आने से तो महामात्य की आशा बंध गयी थी। वह समझता था कि देवधर्मा स्वयं यहां की अवस्था देखने आया है। देवधर्मा दो दिन अवध में रहा, परंतु उसने महामात्य से पृथक् मिलने की इच्छा प्रकट नहीं की। महाराज और महारानी वचन-पत्र पर हस्ताक्षर करने पंथागार गये तो उसने समझा कि महाराज गणपति का स्वागत करने गये हैं। अब गणपति महल में भोज पर आया तो उसने समझा कि उसका आना केवल मात्र आदर के लिए है। गणपति का अयोध्या में आना तीर्थ-स्थान के अर्थ बताया गया था। इस समय महामात्य भोज में भानुमित्र को वहां देख, उसके पास बैठ पूछने लगा, ''गणपति अयोध्या में बिना परिवार के आये हैं, इससे तीर्थ यात्रा का लाभ क्या होगा?'

भानुमित्र मुस्कराया और बोला, ''प्रतीत होता है कि गणपति होने से इनके पापों का बोझा माताजी के पापों से अधिक हो गया है।''

''भद्र! आप इस देश के प्रतीत नहीं होते?''

''आपने ठीक ही समझा है।''

''तो कहां के रहने वाले हैं आप?''

''बाहुक देश का।''

बात आगे नहीं चल सकी। चमुचूड़ भानुमित्र को बुलाकर दूसरे आगार में ले गया। वहां जा आगे की योजना पर विचार करने लगा। वास्तव में भानुमित्र को वहां से ले जाने का अभिप्राय यह था कि महारानी और महाराज देवधर्मा से भानुमित्र की सेवाएं मांगने वाले थे।

महाराज ने गणपति से कहा, ''यह ब्राह्मण बालक यदि आप अवध को

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दे दें तो हम आपके अत्यंत आभारी होंगे।''

''रिपुदमन के कान खड़े हो गये। देवधर्मा ने कहा, ''इसकी सूझ-बूझ से मैं बहुत प्रसन्न हूं। मैं समझता हूं कि वैशाली को इससे भारी हानि होगी। इस पर भी यह यदि स्वयं अवध में रहना चाहेगा तो मैं आपत्ति नहीं उठाऊंगा।''

''यह अपनी इच्छा से तो यहां नहीं रहेगा।''

''क्यों?''

मल्लिका का मुख इस प्रश्न से लाल हो उठा। रिपुदमन इसका अर्थ समझने में मन ही मन भाग-दौड़ करने लगा। देवधर्मा भी इसका कारण नहीं समझ सका। फिर एकाएक उसको स्मरण आया कि मल्लिका भी तक्षशिला की स्नातिका है। उसे इसमें कोई प्रेमगाथा छिपी प्रतीत हुई। इतना अनुमान कर उसने कहा, ''मैं उससे पूछूंगा। यदि कुछ विशेष कारण न हुआ तो कुछ काल के लिए तो अवश्य ही उसे यहां का काम सुधारने के लिए छोड़ जाऊंगा।''

दूसरे आगार में भानुमित्र ने बताया, ''धन तो आपके पास आ गया है। कल सेना में वेतन वितरण करवा दो और साथ ही महामात्य के विरूद्ध कोष में चोरी करने का अभियोग चलाने की घोषणा कर दो। महामात्य को आज महल से बाहर जाने न दिया जाए। उसे बहाने से एक आगार में कुछ विश्वस्त सैनिकों द्वारा महल में बंदी करवा दें। आज रात वैशाली के लोगों के विदा हो जाने के पश्चात्, नगर-भर की मधुशालाओं में एकत्रित युवकों को सेना भेज क़ैद कर लो।

''महाराज की ओर से परसों प्रजा परिषद की घोषणा कर दी जाए। उस परिषद में जो घोषणा होनी चाहिए, वह मैं बना दूंगा।''

चमुचूड़ बोला, ''यदि महामात्य आज घर न गया तो रात को ही उपद्रव हो जायेगा।''

''यह ठीक है, परंतु आज यदि महामात्य को बाहर जाने दिया गया तो यह अयोध्या के बाहर जाकर विद्रोह की पताका खड़ी कर देगा। यह समय साहस से काम लेने का है। ऐसा करो कि नगर में अपने गुप्तचरों द्वारा यह समाचार विख्यात कर दो कि महामात्य रिपुदमन किसी आवश्यक कार्य से काशी गये हैं।''

चमुचूड़ और महाराज मुरहारी विक्रम दोनों सखा थे। दोनों को साहस से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
कार्य करने के स्थान अपने को बचाकर कार्य करने का अभ्यास था। अवध राज्य के मंत्रिगण महाराज की इस दुर्बलता को समझ गये थे, इससे लाभ उठाकर राज्य पलट देना चाहते थे।

भानुमित्र राजनीति में द्रुत गति से निर्णय करने और फिर निर्णय को कार्यान्वित करने का पाठ पढ़ा हुआ था। एक बात जो वह भली-भांति समझ गया था, वह यह थी कि धर्म युद्ध का समय चला गया है। वह समय जब लोग दिन को युद्ध करते थे और रात को इकट्ठे बैठ धर्मोपदेश सुनते थे, नहीं रहा था। अब तो शत्रु रात को भी आक्रमण कर देगा, ऐसा मान अपना कर्तव्य निश्चय करने की बात थी।

साथ ही वह यह बात भी जानता था कि यदि शत्रु से डरो, तब भी वह निन्दा करेगा और यदि न डरो तब भी निन्दा करेगा। शत्रु से चाहे सत्य बोलो और चाहे झूठ बोलो, वह विश्वास नहीं करेगा। इससे अपने व्यवहार का निर्णय करने के लिए शत्रु क्या कहेगा और क्या नहीं कहेगा का विचार नहीं करना चाहिए। लक्ष्य सिद्धि के लिए बिना शत्रु की सम्मति का ध्यान किये अपनी नीति का निश्चय करना चाहिए।

चमुचूड़ ने महामात्य को बन्दी करने की योजना बना ली। भानुमित्र पुनः बाहर गणपति के भोज में सम्मिलित हो गया। वहां गणपति और अवध-सम्राट में दोनों राज्यों में मैत्री स्थिर रखने की बातचीत हो रही थी। गणपति का कहना था, "वैशाली और अवध में एक बार पहले युद्ध हुआ था। उस समय मगध राज्य की कूटनीति ही इसमें कारण थी। महाराज उदयन को वृद्धावस्था में यह ज्ञान हुआ कि मगध राज्य के कारण ही परस्पर युद्ध हुआ था। उसके पश्चात् आपके पिताजी ने पचास वर्ष तक राज्य किया और इस काल में आपके राज्य और वैशाली में कोई वैमनस्य की बात उत्पन्न नहीं हुई। अब आप हैं। मैं समझता हूं कि दोनों राज्य युद्ध करते-करते ही बचे हैं। यदि एक-दो सप्ताह और निकल जाते तो शायद हम युद्धभूमि में एक-दूसरे का रक्त बहा रहे होते।

"भगवान की अपार कृपा है कि हम समय पर समझ गये हैं और युद्ध की सम्भावना दूर हट गयी है।"

महामात्य रिपुदमन यह वार्तालाप सुन मन में विचार कर रहा था कि दोनों राज्यों में संधि हो गयी है। वह मन ही मन अपने भविष्य के कार्यक्रमों पर विचार कर रहा था। एक बात वह समझ रहा था कि अवध की सेना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विद्रोह किये बिना नहीं रहेगी और तब समय होगा राज्य पलटने का।

भोज समाप्त हुआ। महाराज और गणपति तो बातें करते हुए महल के दूसरे अगार में चले गये। इस समय भानुमित्र महामात्य के समीप आकर बैठ गया और बातें करने लगा, "मैं वैशाली से आया हूं।"

महामात्य के कान खड़े हो गये और सचेत होकर पूछने लगा, "वहां आप किस कार्य में नियुक्त हैं?"

"मैं गुप्तचरों का मुखिया हूं।"

महामात्य को अब समझ आया कि क्यों महाराज इस युवक को अवध में लेने को तैयार हैं। वह मन में सोच रहा था कि यदि यह अयोध्या में रह गया तो भानुमित्र की भांति इसे भी जलाकर भस्म कर दिया जायेगा। महामात्य ने प्रकट में कहा, "मुझे आपसे मिलकर भारी प्रसन्नता हुई है।"

"पर मुझे यहां की घटनाएं देखकर अचंभा और दुख हुआ है। यदि आप उचित समझें तो हम किसी जगह पृथक् बातें करें। मैं आपको कुछ गुप्त बातें बताना चाहता हूं।"

"तो मेरे घर पर चलिए।"

"वहां जाने के लिए समय नहीं है। हम अभी तीसरे पहर यहां से विदा होने वाले हैं।"

"तो फिर?"

भानुमित्र ने चमुचूड़ की ओर देखकर कहा, "हम पृथक् में कोई बात करने चाहते हैं। कोई स्थान....."

चमुचूड़ ने उत्तर दिया, "हां-हां, आइये। यह साथ का आगार सर्वथा खाली है।"

भानुमित्र ने महामात्य को कहा, "आइये।"

दोनों उठ बगल के कमरे में चले गये। इस कमरे में कोई खिड़की नहीं थी। प्रकाश छत के एक गवाक्ष में से आ रहा था। दीवारों पर भांति-भांति के देवताओं और इक्ष्वाकु वंश में उत्पन्न महापुरुषों के चित्र बने थे। आगार में भूमि पर दरी, कालीन और उन पर आसन लगे थे। दोनों आसनों पर बैठ गये। एक क्षण बैठकर भानुमित्र ने अपने चारों ओर देखा, मानों उसे भय था कि कोई उसकी बात सुन लेगा। फिर वह उठते हुए बोला, "मैं देखना चाहता हूं कि कोई हमारी बात सुन तो नहीं लेगा।"

उसने दीवारों के साथ कान लगाकर और उनको ठोककर देखा, फिर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दरवाजे के बाहर झांककर देखने लगा। इस समय वह यह देखने का बहाना कर कि आगार के बाहर तो कोई खड़ा नहीं, द्वार से बाहर चला गया। उसके बाहर जाने के एक क्षण पश्चात् आगार का द्वार बंद हो गया। महामात्य को संदेह हुआ तो वह लपककर द्वार को बल पूर्वक खोलने के लिए धकेलने लगा। वह नहीं खुला। उसने चिंतित हो छत में गवाक्ष की ओर देखा। उसे छत पर हाथ में नंगे खड्ग लिए दो सुभट्ट खड़े दिखायी दिये। वह समझ गया कि वह बंदी हो गया है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चार

महामात्य

: 1 :

जब से अवध में महामात्य पद को स्वीकार करने के लिए भानुमित्र से कहा गया था, तब से ही वह असमंजस में फंस गया अनुभव कर रहा था। सबसे प्रथम समस्या मल्लिका की थी। वह अनुभव कर रहा था कि मल्लिका उसके हृदय को आन्दोलित करने में सबल है और उससे उसका दूर रहना ही ठीक है। यद्यपि वह मृदुला को देख चुका था और वह मल्लिका से अधिक सुंदर, चतुर और बुद्धिमान थी, तो भी उसके विवाह के लिए तैयार होने में चार वर्ष शेष थे। इधर अवध का महामात्य बन जाने पर मल्लिका दिन रात उसके सम्मुख रहेगी और किसी समय भी वह पथ भ्रष्ट हो सकता है। सबसे बड़ी बात यह थी कि अवध नरेश, शरीर का सुंदर ओर सुडौल होने पर भी, बुद्धि और कार्य पटुता में एक साधारण जीव ही था। वह देख रहा था कि मल्लिका का उसके प्रति अनुराग शिथिल होता जाता था और उसे अवध नरेश को अपना पति वरने पर शोक होने लगा है।

परन्तु इससे भी अधिक आवश्यक समस्या, राजा के राज्य और गणराज्य में श्रेष्ठता के विषय पर उसके मन में द्विविधा थी। वह कभी एक और कभी दूसरे को श्रेष्ठ मानता था। वह मन में यह सोचता था कि एक राजा के राज्य को सुदृढ़ करने में वह कहीं काल की प्रगति में बाधक तो नहीं बन जायेगा।

एक बार उसने गणराज्य के दोषों पर तक्षशिला में अपना लेख पढ़ा था, परन्तु तब वह बालक था और उसे अनुभव कम था। अब वह गणपति देवधर्मा को बीस वर्ष से वैशाली को अधिक से अधिक समृद्धशाली और शक्तिशाली बनाने में सफल होता हुआ देख रहा था। इधर एक मूर्ख और दुर्बल राजा को अपना राजपाट चौपट करते देख चुका था।

इससे उसके मन में यह आता था कि ऐसे राजा से तो गणपति का राज्य ही अच्छा है। फिर गणपति के दुर्बल होने पर वह बदला जा सकता है और राजा के दुर्बल और निर्बुद्धि होने से तो वह अपना पद बिना लड़ाई किये

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं छोड़ेगा।

इसी प्रकार की समस्याओं की उलझनों में फंसा हुआ वह अवध नरेश के प्रस्ताव को स्वीकार नहीं कर सका था। जब पंथागार में पहुंच देवधर्मा ने उससे कहा, ''वत्स! अवध नरेश तुम्हें यहां महामात्य बनाना चाहते हैं।''

भानुमित्र का उत्तर था, ''मुझे पिताजी ने आपके पास भेजा है। इससे जो आज्ञा आप देंगे, सो करूंगा।''

''परंतु वत्स! तुम स्वयं भी तो सज्ञान हो। राजनीति के महापंडित हो और तुम स्वयं समझ सकते हो कि कहां रहने में तुम्हें लाभ होगा।''

''लाभ-हानि की बात तो मैं नहीं जानता। हां, मैं आपसे अपने मन की धारणा छिपाने की आवश्यकता नहीं समझता। मुझे महारानी मल्लिका से घृणा है। मैं उसके राज्य में नहीं रह सकता। साथ ही मैं राजा के राज्य से गणराज्य को अधिकं उपकारी समझता हूं।''

''कैसे?''

''मल्लिका मेरी सहपाठिन थी। उसकी मेरे साथ विवाह की बात निश्चित थी। इतने में मुरहारी विक्रम आ गये और मल्लिका ने एक क्षण में ही मुझे छोड़ उनसे विवाह करने का निश्चय कर लिया। मैं समझता हूं कि संसार में राज्य पद ही बुद्धि भ्रष्ट करने में कारण बन जाता है। गणराज्य में राज्य प्रजा के हाथ में होने से बुद्धि भ्रष्ट करने में सबल नहीं होता।''

देवधर्मा गम्भीरता से भानुमित्र के मुख की ओर देख बोला, ''देखो वत्स! तुम शिक्षा में मुझसे कम नहीं हो। शायद अधिक हो, परंतु अनुभव तो कम ही है। यही कारण है कि एक ही आचार्य से शिक्षा पाकर भी हम भिन्न धारणाओं पर पहुंचे हैं। मेरा दृढ़ मत है कि स्त्रियों के विषय में तुम्हारे विचार मंजे हुए नहीं हैं। अच्छा, यह बताओ कि तुम मल्लिका से अब भी प्रेम करते हो क्या?''

''मैं प्रेम के अर्थ नहीं समझता, आर्य! मैं उससे विवाह करना चाहता था। वह नहीं कर सका। उसमें कारण है उस पुरुष का जन्म से एक पदवी पर होना, जिस पर जन्म से मैं नहीं हूं। मैं इस जन्म सिद्ध अधिकार की बात को मिटा देना चाहता हूं।''

''देखो, फिर तुमने दो बातों को मिलाकर अपने मस्तिष्क में बौखलाहट उत्पन्न कर ली है। मल्लिका से तुम अब विवाह करने के लिए उत्सुक नहीं। ठीक है न? इसलिए कि उसने तुम्हें छोड़ अवध नरेश को स्वीकार किया है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह क्यों किया है, यह एक पृथक् प्रश्न है। इसको हम पीछे विचार करेंगे।''

भानुमित्र ने अभी भी युक्ति में अपनी हार नहीं मानी। इस पर भी उसने कहा, ''आप ठीक कहते हैं। यदि इस समय मल्लिका और मेरी दूसरी प्रेमिका में से मुझे अपनी विवाहिता निर्वाचित करनी पड़े तो मैं मल्लिका को शायद नहीं चुनूंगा।''

''तब तो यह ठीक ही हुआ है कि उसने तुमसे विवाह नहीं किया और तुम्हें उसके अवध नरेश से विवाह करने पर शोक तथा रोष नहीं करना चाहिए। कोई कारण नहीं कि अब तुम उससे घृणा करो। क्या मैं झूठ कह रहा हूं?

''अच्छा, अब सुनो। मल्लिका ने तुम्हें न पसंद करने के कारण राजा में राज्य सत्ता होना नहीं, प्रत्युत् मल्लिका के एक व्यापारी की लड़की होना है। यदि मुरहारी विक्रम के स्थान वैसी ही युवा अवस्था में मैं वहां पहुंच जाता तो वह मुझे वर लेती। तुम जानते हो मैं ब्राह्मण हूं, परंतु एक समय था कि एक देश के राजा की लड़की ने मुझे वरा था। केवल इस कारण कि मैं एक विख्यात राज्य का गणपति था।

''एक लोभी लड़की को धन का लालच अपने निर्णय से फुसलाने में सफल हो जाता है। परंतु इसके यह अर्थ नहीं कि धनवानों का समूल नाश कर दिया जाए। जैसे बुद्धिमानों को कोई शक्ति संसार में मिटा नहीं सकती, वैसे ही धनवानों को संसार में निःशेष नहीं किया जा सकता। हां, उनकी प्रभुता नष्ट की जा सकती है और उस प्रभुता को मिटाने के लिए उनको श्रेष्ठ मानने वालों की मनोवृत्ति बदलना है। मल्लिका गांधार कुमारी होने से और फिर एक व्यापारी परिवार में उत्पन्न होने से धनिकों को श्रेष्ठ मानने की मनोवृत्ति रखती थी। इसमें मुरहारी विक्रम का राजा होना दोष नहीं, प्रत्युत् उसके राजा होने से उसे श्रेष्ठ मानने वाले का दोष है।

''अब रहा गणराज्य का राजा के राज्य से अच्छा होना। इसमें भी मैं समझता हूं कि तुम्हारा मत सर्वथा सत्य नहीं है। दोनों ढंग के राज्यों में अपने-अपने दोष हैं और अपने-अपने गुण। यदि इन गुण-दोषों को तराजू में रखकर तोलें तो शायद गणराज्य में दोष अधिक सिद्ध होंगे और गुण कम।

''तुम शायद भूल गये, परंतु मुझे स्मरण है कि तक्षशिला में तुमने एक बार गणराज्यों के दोष वर्णन किये थे और मैंने तुम्हें उस छोटी आयु में इतने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अनुभव की बात करते सुन प्रसन्न हो तुम्हें अपना मुक्ताहार उपहार में दिया था। मुझे उस समय की तुम्हारी एक बात विस्मृत नहीं हो सकती। तुमने कहा था, 'जनता के मनोद्गारों को उभारकर गणराज्य की नींव रखी जाती है। जनता के मनोद्गार बहुत ही निम्न कोटि के होते हैं। इनको उभारने से जनता में पतन बढ़ जाता है और निम्न प्रकार के मनोद्गारों से उभरी हुई जनता पूर्ण राज्य को ही पतन की ओर ले जाने में सफल होती है।' तुमने यह कहा था कि 'बुद्धिमत्ता बहुत ही कम लोगों के भाग्य में होती है। जनता प्रायः भावकुता से प्रेरित हो बातें करने में आनन्द अनुभव करती है। भावुकता और बुद्धि का समन्वय राजा के राज्य में ही हो सकता है।'

"अब तुम्हारे विचार-परिवर्तन में मल्लिका के अवध नरेश से विवाह के अतिरिक्त और कौन युक्ति है?"

भानुमित्र निरुत्तर हो गया था। वह समझ गया था कि मल्लिका के व्यवहार से उसने अपनी मान-हानि समझी थी। इसी कारण वह उससे घृणा करते हुए राजा के राज्य के विरुद्ध हो गया था। परन्तु जब उसे ज्ञान हुआ कि उसको मल्लिका से घृणा करने में कोई कारण नहीं तो शेष सब बातें निस्सार प्रतीत होने लगीं। वह गम्भीर विचार में पड़ गया।

देवधर्मा ने उसे अपनी अंतिम सम्मति दी—"यदि मैं पच्चीस वर्ष तक निरंतर गणपति न बन सकता तो वैशाली की दशा अवध से भी खराब होती। मेरा इतने लंबे काल तक गणपति बन सकने का रहस्य है लोगों को धोखा दे सकने में मेरी सफलता। मैं हृदय से अपनी योजनाएँ वैशाली के हित में समझता रहा हूँ। परन्तु सदैव यह रहा कि लोग मेरी योजनाओं का विरोध करते रहे हैं। इस कारण मैं भली-भाँति समझते हुए भी लोगों को कहता रहा हूँ कि मैं आपकी इच्छानुसार ही कार्य कर रहा हूँ। यह धोखा सब लोगों से सदैव नहीं चल सकता। इसका परिणाम जानते हो क्या होगा? एक दिन कोई अयोग्य गणपति होगा तो साधारण लोग, जो वास्तविक परिस्थिति से अपरिचित होंगे, अनर्थ कर बैठेंगे।

"जानते हो, पिछले मंगल के दिन संसद् की बैठक थी और उसमें प्रस्ताव रखा गया था कि वैशाली अवध में गणराज्य की स्थापना का स्वागत करेगा। इस प्रस्ताव के पास हो जाने का अभिप्राय यह होता कि जब महामात्य यहाँ विद्रोह करता तो हम महाराज की सहायता न कर सकते। मैंने नीति से यह प्रस्ताव उपस्थिति होने से रोक दिया है। मैं जानता था कि यदि संसद् के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सदस्यों के सम्मुख यहाँ पर गणराज्य स्थापना का प्रश्न आता तो बिना सोच-विचार किये सब लोग इसके पक्ष में सम्मति देते। उन लोगों को आंतरिक बातों का तो ज्ञान होता नहीं और न ही ये भीतर की बातें उनको बतायी जा सकती हैं।''

भानुमित्र ये अनुभव की बातें सुन चकित रह गया। इस पर भी वह यह सोच नहीं पा रहा था कि अवध की सेवा स्वीकार करे या नहीं। जब किसी निर्णय पर नहीं पहुँच सका तो उसने कहा, ''इस पर भी मेरा मन यह कहता है कि यदि आप उचित समझें तो कुछ काल के लिए मैं यहाँ काम करता हूँ। वास्तव में तो मुझे आपके चरणों में बैठकर बहुत कुछ सीखना है।''

''देखो भानुमित्र! मेरी राजनीति के आधार में एक विचार है। वह यह कि भारत-खण्ड की ऐक्यता। यह ऐक्यता राज्य प्रबंध में तो नहीं है। यह सांस्कृतिक है। सांस्कृतिक ऐक्यता रखने से ही हम सब राज्यों को लाभ है। इससे परस्पर के द्वेष और झगड़े बहुत कम हो जाते हैं और समय पड़ने पर एक दूसरे की सहायता करने में उत्साह भी आ जाता है। यही बात तुमने अपने पत्र में लिखी थी। तुमने लिखा था कि यदि अवध में वाममार्ग फैल गया तो वैशाली उसके प्रभाव से बचा नहीं सकेगा।

''इससे मैं चाहता हूँ कि अवध की अवस्था सुधरने तक तो तुम अवश्य ही यहाँ रह जाओ।''

''यदि आपकी यही आज्ञा है तो पाँच वर्ष तक मैं अपनी सेवाएँ अवध के अर्पण करता हूँ। इस काल के उपरान्त मैं यहाँ रहने अथवा कहीं और चले जाने में स्वतंत्र रहूँगा।''

''मैं तुम्हारे इस निर्णय से प्रसन्न हूँ वत्स! तुम्हारे लिए वैशाली और मेरे घर का द्वार सदा खुला है। यह लो।'' इतना कह गणपति ने अपने दाहिने हाथ की मध्यमा से अंगूठी उतार भानुमित्र की उँगली पर चढ़ा दी और कहा, ''यह मेरे प्रेम का चिह्न है और वैशाली में, जब तक मैं गणपति हूँ, मेरे स्थानापन्न तुम्हें कार्य करने का अधिकार है। जो कुछ तुम करोगे, वह स्वीकार समझा जाएगा।''

: 2 :

तीसरे प्रहर देवधर्मा तथा वैशाली के सेट्ठी और उनके साथ आये सुभट्ट वैशाली लौट गये। भानुमित्र देवधर्मा का पत्र ले राजमहल में, जहाँ उसकी उत्सुकता से प्रतीक्षा की जा रही थी, पहुँच गया। उसने देवधर्मा का पत्र

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महाराजा को दिया। उस पत्र में पाँच वर्ष के लिए भानुमित्र की सेवाएँ अवध राज्य के लिए लिख दी गयी थीं। यह पढ़ मुरहारी विक्रम ने उठ भानुमित्र को गले लगाया और अपने समीप बैठने का आसन दिया। महाराज ने कहा, "मित्र! मैं आज से तुम्हें अवध के महामात्य की पदवी पर नियुक्त करता हूँ। इस क्षण से तुम राज्य संचालन करो।"

चमुचूड़ को कहकर नियुक्ति पत्र तैयार कर, हस्ताक्षर कर और मुहर लगा भानुमित्र को दे दिया गया। जब तक उपयुक्त निवास स्थान का प्रबंध हो, भानुमित्र को रहने के लिए महल में कुछ आगार दे दिये गये।

भानुमित्र ने महामात्य-पद का नियुक्ति पत्र पा पहला कार्य जो किया, वह सेनापति को बुलाया और अपना नियुक्ति पत्र दिखाकर उसे पद त्याग करने के लिए कहा। सेनापति यह नयी बात सुन चकित रह गया। कुछ देर तक परिस्थिति पर विचार कर बोला, "बालक! यह तुम क्या कर रहे हो? अवध में विप्लव हो जाएगा।"

भानुमित्र इस बात के लिए तैयार था। उसने कहा, "वीरभद्र! तुम्हारी शूरवीरता का प्रशंसा मैं सुन चुका हूँ। यही कारण है कि तुम्हारे साथ वैसा व्यवहार नहीं किया, जैसा महामात्य रिपुदमन के साथ हुआ है। वह इस समय महाराज का बंदी है। उस पर राजकोष में चोरी करने और महाराज को मार स्वयं राजा बनने का अभियोग लगाया गया है।"

वीरभद्र ने क्रोध में आ कटार निकाल ली। परन्तु उस समय तक महल के दस सुभट्टों ने नंगे खड्ग ले सेनापति को घेर लिया। विवश सेनापति ने कटार हाथ से भूमि पर फेंक दी और अपने को कैद हो जाने दिया।

भानुमित्र ने पुनः कहा, "यदि तुम अपनी इच्छा से अपने पद से उन शब्दों में त्याग पत्र दे दो, जो मैं कहता हूँ, तो तुम पर अभियोग नहीं चलाया जाएगा। जब तक व्यवस्था स्थिर नहीं हो जाती तब तक तुम्हें महाराजा का प्रतिष्ठित बंदी बना रखा जाएगा और पश्चात् अवध राज्य में उपयुक्त कार्य पा सकोगे। बताओ, क्या अच्छा है?"

सेनापति जानता था कि रिपुदमन ने बहुत गड़बड़ की हुई है, इससे अपने को उससे पृथक् रखने के लिए भानुमित्र की आज्ञा पालन करने को तैयार हो गया। उसने उस त्याग पत्र पर, जो तैयार किया हुआ पहले ही रखा था, हस्ताक्षर कर दिये।

भानुमित्र ने सेनापति को अभी महल के आगार में बंदी कर दिया और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उस पर प्रहरी बिठा दिये।

उसी दिन सायंकाल होने से पूर्व अयोध्या में उपस्थित सेना में वेतन वितरण का कार्य किया गया और अगले दिन सेना के प्रमुख अधिकारियों को राज्य सभा में उपस्थित होने का आदेश भेज दिया।

रात एक प्रहर गई थी कि पचास-पचास सैनिकों की मंडलियाँ नगर की सब मधुशालाओं में तथा गणिकाओं के मकानों पर पहुँच गईं और सब युवकों को पकड़-पकड़कर बन्दीगृहों में बन्द कर दिया। लगभग दो सहस्र युवक पकड़े गए थे।

अगले दिन राज्य-सभा में नगर की पूर्ण प्रजा को निमंत्रण था। महल के भीतर मैदान में राजकीय शामियाना लगाया गया था, जिसमें दस सहस्र के लगभग लोगों के बैठने का प्रबंध किया गया था।

ठीक समय पर महाराज तथा महारानी पधारे और राजसिंहासन पर, जो सोने-चाँदी का बना था, बैठ गए। सिंहासन के नीचे, परंतु मंच पर एक ओर भानुमित्र और दूसरी ओर भद्रसेन, जो अर्थ-मंत्री नियुक्त किया गया था, बैठे थे। कुछ प्रतिष्ठित जन, जिनमें चमुचूड़ भी था, सिंहासन के पीछे हटकर मंच पर बैठे थे।

राज्य-सभा का आरम्भ सामवेद-गान और इक्ष्वाकु महाराज की वंशावली तथा वंश के गुणगान के साथ हुआ। इसके पश्चात् महाराज मुरहारी विक्रम ने इस राज्य-सभा का उद्देश्य वर्णन किया। उसने कहा, "प्रिय प्रजागण! स्वर्गीय महाराज, अपने पूज्य पिताजी के देहान्त से मुझे भारी शोक हुआ था और मेरा मन अति क्षुब्ध हो उठा था। सो अपने अभिषेक के तुरन्त ही पीछे मैं तीर्थाटन के लिए घर से निकल गया था। दो वर्ष पर्यन्त मैं बाहर रहा। इस काल में मैं राज्य का भार अपने पूज्य पिताजी के काल के महामात्य और मन्त्रियों पर छोड़ गया था। दो वर्ष में ही इन लोगों ने राज्य-कार्य को इतना बिगाड़ा कि राज्य-कोष खाली हो गया, कर बढ़ गए, व्यापार नष्ट हो गया और ईश्वर के कोष के कारण वृष्टि में कमी हुई। सेनाओं को वेतन नहीं दिया गया, परंतु नगर में गणिकाओं और मधुशालाओं की संख्या बढ़ गई।

"जब मैं अवधपुरी में लौटा तो मैंने अपने चारों ओर विनाश-ही-विनाश देखा। पहले तो मैं अपने मंत्रिगणों से ही अवस्था सुधारने के लिए कहता रहा। जो कुछ करना चाहिए था उन्होंने नहीं किया। तदनन्तर मैंने मन्त्रिगणों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के कामों पर जाँच करानी आरम्भ की। उसके परिणाम में मुझे यह पता चला कि महामात्य और कुछ दूसरे मन्त्री राज्य के विरुद्ध षड्यन्त्र कर रहे थे। अतः मैंने उन मंत्रियों को, जिनके विरुद्ध दोषारोपण स्पष्ट है, बंदी बना लिया है। उनको न्यायालय में उपस्थित किया जाएगा। शेष मंत्रियों को मैंने पद से पृथक् कर दिया है और उनके स्थान पर नए मंत्री नियुक्त किए हैं।"

"एक बड़ा भारी षड्यन्त्र, जो राज्य के विरुद्ध चल रहा था, पकड़ा गया है। उसमें दो सहस्र से ऊपर लोग सम्मिलित थे। उनके विरुद्ध भी न्यायालय में अभियोग चलाया जाएगा।"

"हम प्रसन्न हैं कि हमारी प्रजा ने, इन षड्यंत्रकारियों के कारण जो कष्ट उन्हें हुए हैं, धैर्य से सहन किए हैं। हम चाहते हैं कि शीघ्र ही उनके कष्टों का निवारण किया जाए। इस निमित्त हम निम्न घोषणाएँ करते हैं।"

1. सेना को वेतन तुरंत दे दिया जाए।

2. भूमि-कर दो वर्ष के लिए क्षमा कर दिया जाए।

3. बाहर जाने वाले माल पर कर कुछ न लिया जाए। साथ ही यदि कोई राज्य से बाहर के लोग हमारे राज्य में बना माल खरीद राज्य से बाहर ले जाएँ तो राज्य की ओर से उस माल पर दो पैसा रुपया छूट दी जाए।

4. बाहर से आने वाले माल पर कर उतना ही लिया जाए जितना स्वर्गीय महाराज के काल में था।

5. वर्षा होने के लिए एक बृहत् यज्ञ अयोध्या में और छोटे-छोटे यज्ञ राज्य के दस भिन्न-भिन्न भागों में किए जाएँ।

6. अयोध्या में लोगों की निःशुल्क चिकित्सा के लिए एक बृहत् रुग्णालय स्थापित किया जाए।

7. जो ब्राह्मण शिक्षावृत्ति करेंगे, उनको राज्य की ओर से निर्वाह के लिए बिना कर के भूमि दी जाएगी।

8. हमारे राज्य में कुछ लोग विदेशों से आकर दास-दासियों का क्रय-विक्रय करने लगे हैं। यह प्रथा अनार्य होने के कारण बंद कर दी जाती है। यदि राज्य में कोई दास अथवा सेवक हो और उसकी इच्छा स्वामी बदलने की हो तो वह अपनी इच्छा के अनुकूल, जब चाहे स्वामी बदल सकता है अथवा स्वामी छोड़ सकता है।

9. हमारी प्रजा में से किसी को किसी भी प्रकार का कष्ट हो और वह कष्ट उस अधिकारी से, जिसको हमने उस कार्य के लिए नियुक्त किया हुआ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है, दूर न हुआ हो तो हमारे पास आ सकता है। हम एक मुहूर्त-भर नित्य अपनी प्रजा से मिलने के लिए पंथागार में बैठा करेंगे।

10. हमारे राज्य में किसी भी मतावल्म्बी को उसके मत के कारण किसी भी प्रकार की सुविधा अथवा बाधा नहीं होगी। सब लोग स्वतन्त्रता से विचर सकते हैं और स्वतन्त्रता से विश्वास और विचार रख सकते हैं। देश के नियम मत-मतान्तर का विचार छोड़कर लागू होंगे।''

इस प्रकार की घोषणाओं पर लोगों ने अत्यंत हर्ष प्रकट किया। कुछ दिनों से उपद्रव करने के लिए बाहर से बुलाए हुए युवकों के कारण नागरिकों कि नाक में दम हो रहा था। यह समाचार सुनकर कि दो सहस्र से अधिक युवक पकड़े गए हैं, लोगों ने सुख की साँस ली।

महाराज की जय-जयकार के पश्चात् राज्य-सभा समाप्त हुई।

: 3 :

भानुमित्र की योजना का परिणाम तुरंत हुआ। सेना में यह बात विख्यात हो गई कि रिपुदमन ने ही उनका वेतन रोक रखा था। उदयेश्वर के मकान की तथा उसके कार्यालय की जाँच करने पर पता चला कि धन और रत्नादि राज्य-कोष से लेकर लोगों को भड़काने के कार्य में लगाए गए थे।

उदयेश्वर और रिपुदमन पर अभियोग खुले न्यायलाय में चलाया गया। सैकड़ों लोग इस अभियोग की कार्यवाही देखने नित्य आते और दिन-प्रतिदिन इन लोगों के लिए घृणा के भाव एकत्रित करते जाते थे। जब वैशाली के साक्षी आए और उन्होंने वहाँ पर रिपुदमन का अवध के विरुद्ध षड्यंत्र बताया तो खड़े लोगों ने बंदियों के मुख पर थूका।

एक दिन रिपुदमन ने बंदीगृह में आत्मघात कर लिया। उदयेश्वर को मृत्युदंड दिया गया।

दो सहस्र नवयुवकों में से प्रायः सबने अपना अपराध स्वीकार कर क्षमा-प्रार्थना कर दी। उनमें रिपुदमन का पुत्र भी था। उसे तो देश-निर्वासन दंड दिया गया और शेष युवकों को छोड़ दिया गया।

राज्य-कोष का लगभग आधा धन रिपुदमन, उदयेश्वर और वैशाली के भूधर के गृह में पड़ा मिल गया। कर कम हो जाने से पुनः अयोध्या के व्यापार में उन्नति होने लगी।

भानुमित्र को अवध का महामात्य हुए अभी छः मास भी नहीं हुए थे कि उसके सुप्रबन्ध की चर्चा अवध से बाहर तक भी पहुँचने लगी। मगध,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वैशाली, मल्ल, अंग, बंग, पुण्ड्र, विदेह, कलिंग आदि देशों से अवध के व्यापारिक और राजनैतिक संबंध स्थापित हो गए। पुनः अवध में धन प्रवाहित होने लगा।

जब अयोध्या में शांति स्थापित हो गई तो पंडित मैलन्द और उसकी लड़की राका, दोनों पुनः अपने घर में जाकर रहने लगे। राका प्रायः महारानी से मिलने आया करती थी। कई बार अन्य स्त्रियों से महारानी भानुमित्र की योग्यता की प्रशंसा किया करती थीं, जिसे राका सुना करती थी। उसने उसे केवल एक ही बार देखा था। रात के समय जब राज्य के सुभट्ट उसे अपने पिता सहित महल में रक्षार्थ लाए थे और वह महारानी से मिलने आई थी तो भानुमित्र को उसने वहाँ खड़े देखा था। इसके पश्चात् उसकी प्रशंसा के अतिरिक्त उसे और कुछ सुनने को नहीं मिला था। उसके मन में भानुमित्र को देखने की इच्छा तो कई बार उठी थी, परंतु इसमें कुछ विशेष प्रयोजन अथवा मनोकामना नहीं थी।

एक दिन वर्षा के लिए यज्ञ के प्रबंध की योजना बनाने में मैलंद पंडित महाराज से मिलने आया हुआ था। वहाँ महारानी भी उपस्थित थीं। बातों-ही-बातों में यह बात उठ खड़ी हुई कि राका का विवाह हुआ है या नहीं।

पंडित मैलंद ने कहा, ''महारानीजी! लड़की की आयु अभी सोलह वर्ष की ही है।''

''जब लड़की के विवाह के लिए झगड़ा हो चुका हो तो वह हो ही जाना चाहिए।''

''पर कोई सुयोग्य वर भी तो हो।''

इस पर महाराज ने कह दिया, ''पंडितजी! वर तो है। पंडित भानु मित्र, हमारे महामात्य अभी अविवाहित हैं। हर प्रकार से सुयोग्य हैं।''

यह प्रस्ताव सुन मैलंद पंडित की आँखें खुल गईं। उसका इस ओर कभी ध्यान भी नहीं गया था। इस पर भी वह बहुत भारी सोच में पड़ गया। उसे गंभीर विचार में पड़े देख महारानी ने कहा, ''यदि वह पंसद नहीं तो उससे श्रेष्ठ वर तो राज्य-भर में मिलना कठिन है, पंडितजी!''

''महारानीजी! मेरे नापसंद की बात नहीं। यह महामात्यजी की पसंद की बात है। इतने ऊँचे पद पर होकर भला वह मुझ निर्धन ब्राह्मण की कन्या स्वीकार करेंगे?''

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"अच्छी बात है, तो हम इस विषय में बातचीत करेंगे।"

इसके कुछ दिन पश्चात् महाराज और महारानी ने पंडित मैलंद और उसकी लकड़ी को महल में भोज पर बुलाया। इस भोज पर भानुमित्र, सेठ भद्रसेन और चमुचूड़ सपरिवार तथा कुछ अन्य परिवार निमंत्रित थे। भोज के समय स्त्री-पुरुष एक ही स्थान पर बैठे थे। इसके पश्चात् महाराज के आग्रह पर महारानी ने वीणा बजाकर सुनाई। भद्रसेन की लड़की ने नृत्य किया और पश्चात् राका से गाने के लिए कहा गया। राका इस कला में अभ्यस्त थी। उसने बागेश्री गाकर सुनाई। भानुमित्र मल्लिका का गाना सुन चुका था, परंतु उस समय वह विद्यार्थी था। अब उसका अनुभव कहीं अधिक हो चुका था। उसने वैशाली की नगर-वधू मृदुला का संगीत भी सुना था। राका उसके सम्मुख अभी नवशिक्षिता ही प्रतीत होती थी। इस पर भी उसके स्वर में, उसके तानालाप में और उसकी भावभंगिमा में अधिक स्वाभाविकता थी। फिर राका अभी खिलने वाली कली थी। उसका सौंदर्य एक विशेषता रखता था, जो मल्लिका और मृदुला से सर्वथा भिन्न थी। वह उसकी ओर आकर्षित हुआ, परंतु उसके मन पर मृदुला का चित्र अंकित था। इससे मन में यह सोचकर ही रह गया कि राका भी सुंदर लड़की है।

बात तो उग्र रूप में भोज के पश्चात्, जब स्त्रियाँ उठकर पृथक् आगार में चली गईं, भानुमित्र के सम्मुख आई। महारानी ने भानुमित्र से कहा, "मित्र! अब तुम्हें विवाह कर लेना चाहिए।" दोनों महल के भीतरी उद्यान में पौष मास की धूप में भ्रमण कर रहे थे।

भानुमित्र ने मुस्कराकर कहा, "महारानीजी के, मेरे विषय में चिंता करने के लिए, मैं आभारी हूँ।"

"मैं समझती हूँ कि जब तुम्हारा किसी मुझसे भी अधिक सुंदर लड़की से विवाह हो जाएगा तो तुम मेरा अपराध क्षमा कर दोगे।"

'"तो महारानीजी ने कोई अपराध किया है?'

"तुम ही तो एक दिन कहते थे कि मुझे तुम्हारे धनी होने का विश्वास नहीं था। अब मुझे विश्वास हो गया है और पहले अविश्वास करने का अपराध मिटा देना चाहती हूँ।"

भानुमित्र की हँसी निगल गई। मल्लिका उसके हँसने का अर्थ नहीं समझ सकी। इससे उसके मुख पर देखती रही। भानुमित्र ने कुछ गंभीर हो कहा, "तो महारानीजी किसी को बलि का बकरा बनाना चाहती हैं? अपने पाप,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किसी को बलि चढ़ा मिटाना चाहती हैं?''

''परंतु मैं तो अब तुम्हारे साथ किसी भी लड़की के विवाह को सौभाग्य की बात मानती हूँ।''

''यज्ञ में बलि दिए जाने वाले पशु के विषय में पुरोहित ऐसा ही कहता है।''

मल्लिका इस तुलना से लज्जित हुई। उसने समझा कि भानुमित्र के मन में अभी भी दुःख बना है। इससे उसने कहा, ''तुमने राका को देखा है?''

''पुरोहितजी की लड़की को? हाँ, वह किसी राजा-रईस की पत्नी बनने योग्य है।''

''और वह तुम बन गए हो।''

''परंतु महारानीजी! मैंने एक बार ठोकर खाई है और उससे इतनी शिक्षा प्राप्त कर ली है कि अब अपना मन किसी लड़की पर आसक्त नहीं होने दूँगा। क्या जाने सप्तपदि होते-होते उसकी दृष्टि किसी अन्य पुरुष पर पड़ जाए और वह वेदी पर ही मुझे छोड़ चली जाए।''

''तो इसका उपाय तो है।''

''मैं वह जानता हूँ, परंतु मैं वह भी नहीं करूँगा। मेरा तो यह विचार है कि किसी लड़की से प्रेम करना अपने को धोखा देना है। अपने में धन, बुद्धि और बल की वृद्धि करनी चाहिए, फिर स्त्रियाँ तो स्वयं आगे-पीछे चक्कर काटने लगती हैं।''

मल्लिका विवाह की यह मीमांसा सुन क्रोध से भर गई और उसने बात वहीं समाप्त कर दी। भानुमित्र ने बात बदल कर कहा, ''मैं कुछ दिन के लिए वैशाली जाना चाहता हूँ।''

''क्या है वहाँ?''

''कुछ है। मेरा निजी कार्य है।''

मल्लिका हँस पड़ी और बोली, ''क्या वहाँ कोई आगे-पीछे चक्कर काटने वाली है?''

''महारानीजी!'' भानुमित्र ने प्रसन्नता से देदीप्यमान होते हुए कहा, ''एक नहीं, दो हैं।''

इस समय महाराज मैलन्द के साथ वहाँ पहुँचे—''क्या बातें हो रही हैं, मित्र?''

''मैंने महारानीजी से कहा है कि मैं एक-दो दिन के लिए वैशाली जाने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का विचार रखता हूँ।''

''और मैंने पूछा है,'' मल्लिका ने कहा, ''कि वहाँ कोई प्रेम-सम्बन्ध है, जो खींच रहा है? तो हमारे महामात्यजी कहने लगे कि एक नहीं, दो हैं।''

''और यहाँ मैं तुम्हारे लिए एक तीसरा सम्बन्ध निश्चय कर रहा हूँ, मित्र!''

''महाराज की बहुत कृपा है।''

''तुमने राका को देखा है?''

''हाँ महाराज! अच्छी सुंदर लड़की है।''

''वह तुम्हें वरना चाहती है।''

''तो महाराज, मैं ना नहीं कर सकता हूँ। परंतु महाराज! मुझे वरने के लिए और भी तैयार हैं।''

''यह तो बहुत विषम समस्या है।''

''हाँ महाराज! हमारे समाज में वरने का अधिकार स्त्री को है। पुरुष स्त्री को अपनी पत्नी निर्वाचित नहीं कर सकता। जब यह हो कि स्त्री हो एक और उससे विवाह के इच्छुक पुरुष हों बहुत, तब तो समस्या सुगम है। स्त्री स्वयंवर कर जिसको चाहे वर सकती है। अस्वीकृत पुरुषों को धैर्य से अपने भाग्य को कोसकर रह जाना चाहिए, परंतु जब बात इससे उलट हो, अर्थात् पुरुष हो एक और उसे चाहने वाली स्त्रियाँ हों बहुत, तो केवल दो ही सुझाव हो सकते हैं एक तो यह कि पुरुष स्वयंवर करे और जिस स्त्री को चाहे वरे और अन्यों को छोड़ दे। दूसरा सुझाव यह है कि कई स्त्रियाँ एक ही पुरुष की भार्या बनकर रहें।''

मल्लिका इस युक्ति को सुन चकित रह गई। उसे दोनों सुझाव पसंद नहीं थे, परंतु इस अवस्था में उसे तीसरा सुझाव प्रतीत नहीं हो रहा था। पंडित मैलन्द ने कहा, ''मैं एक सुझाव इस विषय में रखता हूँ। वह यह कि उन बहुत स्त्रियों में से जो एक ही पुरुष को वरना चाहती है, पुरुष किसी एक को निर्वाचित कर ले और दूसरी स्त्रियाँ अपने भाग्य पर संतोष करें।''

''यह तो ठीक ही है, परंतु इसमें जो बात समझने की है वह यह कि क्या अन्य लड़कियाँ दूसरा विवाह करना स्वीकार कर लेंगी? यदि कर लें तब तो ठीक है और यदि वे आजीवन अविवाहित रहना चाहें तब तो राष्ट्र को भारी हानि पहुँचेगी और समाज में दुराचार बढ़ जाने की संभावना हो जाएगी। परंतु मैं तो इसके लिए भी तैयार हूँ। मैं उसको वरूँगा जो मुझे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सबसे कम चाहती है। जो मुझे इतना चाहती हैं कि मेरी दूसरी और तीसरी पत्नी बनकर भी रहना चाहेंगी, वे ही मेरी पत्नी बन सकेंगी।''

महाराज इस बात पर हँस पड़े। मैलन्द युक्ति में परास्त हो चुप कर गया। मल्लिका देख रही थी कि भानुमित्र का पूर्ण व्यवहार उसके द्वारा न वरे जाने के पश्चात उत्पन्न हुआ है। इससे वह समझती थी कि किसी अति सुंदर कन्या से विवाह कर देना ही इस मन की विकृत अवस्था को सुधार सकता है इससे उसने पुनः प्रयत्न किया और भानुमित्र से पूछा, ''मान लो मित्र! तुम्हें स्वयं वरने का अवसर दिया जाए तो तुम राका के विषय में क्या विचार रखते हो?''

''महारानीज़ी! यह मैं तब तक नहीं बताऊँगा जब तक मैं यह न जान लूँ कि राका का लगाव मुझसे कितना प्रबल है। यदि यह बहुत अधिक हुआ तो मैं अपनी दूसरी प्रेमिकाओं में से किसी को वरना उचित समझूँगा।''

महाराज ने बात बदल दी, ''मित्र! तुम कब जा रहे हो वैशाली?''

''महाराज जब अवकाश दें।''

''तुम यहाँ के महामात्य हो, मित्र! तुम्हारा उत्तरदायित्व मुझसे भी अधिक है। इससे अपने अवकाश के तुम स्वामी हो।''

''तो महाराज! मैं दो दिन में जाना चाहूँगा।''

''कब तक लौटोगे?''

''दो दिन जाने में, दो दिन आने में और एक सप्ताह वहाँ। इस एक सप्ताह में एक दिन अवध के काम में लगेगा। वैशाली के सेठों से गणपति देवधर्मा के सम्मुख ऋण चुकाने की बात करनी है। मैं समझता हूँ कि अब हम ऋण दे डालें तो अच्छा ही है।''

''तो जाने से पूर्व तुम राका से बातचीत करना पसंद नहीं करोगे, मित्र?'' मल्लिका ने पूछा।

''यदि ऐसा हो सके तो मैं अपना सौभाग्य मानूँगा।''

मल्लिका ने प्रश्न-भरी दृष्टि से महाराज की ओर देखा। महाराज ने इस योजना को स्वीकार किया। इस पर मल्लिका उद्यान से महल की ओर लौट गई। इस अवसर पर मैलन्द पंडित ने भानुमित्र की ओर भयभीत दृष्टि से देखा। भानुमित्र उसके भावों को समझ गया और कहने लगा, ''पंडितजी! अभी आपकी लड़की छोटी आयु की है। आपकी इच्छा के विरुद्ध वह किसी को वर नहीं सकती। इससे आप भयभीत न हों। मैं वही करूँगा, जो आपके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और राकादेवी के हित की बात होगी। मैं सत्य और स्पष्ट बात उसके सम्मुख रख दूँगा। इसके उपरांत आप स्वतंत्र हैं। जैसा आपको हितकर सिद्ध हो करें।''

इस बात पर भी मैलन्द की चिंता मिटी नहीं। महाराज मन में सोच रहे थे—यदि भानुमित्र विवाह-बंधन से अवध के साथ सम्बद्ध हो जाए तो अवध का भला होगा। इस अर्थ वे भानुमित्र की राका से भेंट कराने पर तैयार हो गए थे।

मल्लिका राका की बाँह पकड़कर उद्यान में घसीटकर ले आई। राका का मुख लज्जा से लाल हो रहा था और वह आँखें नीची किए हुए मल्लिका के साथ-साथ चली आ रही थी। जब मल्लिका ने उसे भानुमित्र के सम्मुख लाकर खड़ा किया तो राका ने अपनी आँखें जोर से मींच ली। उसे इस प्रकार खड़े देख सब हँस पड़े। कुछ स्त्रियाँ दूर उद्यान के एक कोने में खड़ी पेड़ों के पीछे छिप यह नाटक देख रही थीं।

भानुमित्र ने कहा, ''महारानीजी! यह तो बेचारी निरीह बालिका है। इसको बलि का बकरा किस निमित्त बनाया जा रहा है?''

''प्रश्न तो यह है कि यह बकरा देवता को स्वीकार है या नहीं?''

भानुमित्र इस सुंदर बालिका-मात्र को सामने खड़े देख मन-ही-मन मृदुला से, जो इससे कई गुना अधिक चतुर थी, तुलना कर रहा था। मृदुला इससे अधिक चतुर, शिक्षित, सुंदर और पत्नी बनने योग्य प्रतीत होती थी। इस पर भी मृदुला जिस वातावरण में रहती थी, उससे वह एक अच्छी साथिन सिद्ध हो सकेगी, संदेह हो रहा था। इस विचार के आते ही वह बोला, ''महाराज! जहाँ तक रूप-लावण्य का संबंध है, राकादेवी गृह-लक्ष्मी बनने योग्य हैं। जहाँ तक इनके मानसिक विकास का संबंध है, मैं इतनी जल्दी निर्णय नहीं कर सकता। यदि देवी मुझे अपने को जानने का अवसर दें, तो आशा करता हूँ कि शीघ्र ही मैं अपनी सम्मति इनके विषय में बना सकूँगा। जहाँ तक परिवार का संबंध है, मैं मैलन्द जी के परिवार में सम्मिलित किए जाने से प्रतिष्ठित हुआ मानूँगा।''

''तब तो बात बन गई।'' मल्लिका ने राका को गले से लगा मुख चूमकर कहा, ''जाओ रानी! जाओ, खेलो-कूदो। प्रारंभिक जीत तुम्हारी हो गई है।''

राका मल्लिका की भुजाओं से छूटी तो उधर भागी, जहाँ उसकी सखियाँ छिपकर देख रही थीं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

: 4 :

अयोध्या में अवध के महामात्य पर चलाए गए अभियोग की प्रतिध्वनि वैशाली में भी पहुँची। महाराज अवध का एक पत्र आया था, जिसमें वैशाली के गणपति से निवेदन किया गया था कि अवध राज्य-कोष से चुराया धन लक्ष्मी देवी पंथागार के प्रबंधक भूधर के पास पहुँचा है। उसकी तलाशी लेकर यदि धन प्राप्त हो तो अवध को वापस दिया जाए।

यह एक अनोखी माँग थी। देवधर्मा अपने अधिकार से वैशाली के एक नागरिक को एक ऐसे अपराध के लिए, जो वैशाली से बाहर घटा हो, पकड़ अथवा दंड नहीं दे सकता था। इससे विवश हो उसने मंत्रिमंडल की बैठक बुलाई। उस समय तक भूधर के घर के चारों ओर सैनिकों से घेरा डलवा दिया। मंत्रिमंडल अवध-नरेश की इस माँग को स्वीकार नहीं करता यदि देवधर्मा इस बात पर गणपति-पद से त्याग-पत्र दे देने की धमकी न देता। देवधर्मा का कहना था, ''यह ठीक है कि वैशाली और अवध का राज्य-प्रबंध एक-दूसरे से स्वतंत्र है, परंतु हम धर्म और संस्कृति के नाते एक हैं। हम पूर्ण भारत के लोग चोरी करने को पाप मानते हैं। इससें चोर ने कहीं भी चोरी की हो, वह चोर है और पापी है एक देश में पापी पाप के धन से फूले-फले तो उस देश का सत्यानाश हो जाएगा।'' युक्ति से सब मानते थे कि इस बात को कोई भी वैशाली वाला पसंद नहीं करता, परंतु झूठी मान-मर्यादा अवध-नरेश की माँग स्वीकार करने में बाधा बन रही थी।

अंत में गणपति ने कहा, ''मैं इस बात का ध्यान कर काँप उठता हूँ कि हमारे पड़ोस के राज्य के लोग हमारे राज्य में कोई पाप-कर्म कर भागकर यहाँ से चले जाएँ और हम उनको दंड न दिलवा सकें। मान लो, कल कोई अयोध्या का दुश्चरित्र व्यक्ति यहाँ से किसी लड़की का अपहरण कर ले जाता है, तो उस लड़की को छुड़ाने के दो ही उपाय हैं एक तो हम अवध-नरेश को लिखें कि लड़की वापस दिलाई जाए और अपराधी को दंड दिया जाए, या हम एक लड़की के लिए अवध से युद्ध ठान लें। पहले अथवा दूसरे मार्ग के अनुकरण करने से पूर्व विचार करना आवश्यक नहीं क्या?''

''मैं समझता हूँ कि भूधर को पकड़कर उसकी तलाशी लेनी चाहिए और अवध के अभियोग चलाने वालों को वैशाली के न्यायालय में आकर भूधर को दोषी सिद्ध करने का अवसर देना चाहिए।''

''यदि मंत्रिमंडल इस न्याय की प्रतिष्ठा स्थापित करने में मेरी सहायता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं करता तो मैं इसी समय गणपति के पद से त्याग-पत्र दे दूँगा और कल संसद् में यह सब बात खोलकर रख दूँगा।''

इससे मंत्रिगण, जो भूधर को बचाना चाहते थे, डर गए। वे जानते थे कि गणपति की बात संसद् में मानी जाएगी और तब उनको त्यागपत्र देना पड़ेगा। इस पर भी एक ने पूछा, ''यदि न्यायलय में भूधर के विरुद्ध अभियोग सिद्ध न हुआ तो?''

''तो भूधर को मुक्त कर दिया जाएगा और जो मान-हानि भूधर की हुई है उसके लिए अवध-राज्य से दंड माँगा जाएगा। इस प्रकार सबसे बड़ी बात यह सिद्ध होगी कि हम भारतीय संस्कृति तथा ऐक्य की रक्षा करने के लिए निःस्वार्थ प्रयत्न कर रहे हैं।''

''इस न्यायालय का न्यायाधीश कौन होगा?''

''वैशाली का कोई विद्वान् धर्मशास्त्री होगा।''

इसके पश्चात् आपत्ति करने को स्थान नहीं रहा। मंत्रिमंडल में अर्थमंत्री एक सेट्ठी था। उसने मंत्रिमंडल से निकलते ही अपने सेवक को भूधर के पास वैशाली छोड़ तुरंत भाग जाने की सम्मति भेज दी। यह सम्मति उसने लिखकर भेजी थी।

जब अर्थमंत्री का सेवक भूधर के गृह पर पहुँचा तो देवधर्मा द्वारा नियुक्त सैनिकों द्वारा पकड़ लिया गया। इसके कुछ ही पीछे भूधर को बंदी करने और घर की तलाशी लेने का आदेश ले नगर-पालक वहाँ जा पहुँचा। अर्थमंत्री का सेवक उसके हवाले कर दिया गया।

नगरपालक को जब यह पता चला कि वह अर्थमंत्री का सेवक है और उसके पास अर्थमंत्री की चिट्ठी निकली है, जिसमें लिखा था कि भूधर वैशाली छोड़ भाग जाए, तो गणपति से इस विषय पर आदेश माँगा गया। रात्रि के तीसरे प्रहर गणपति को जगाकर इस विषय की सूचना दी गई। गणपति ने निस्संकोच आज्ञा दे दी कि भूधर के विरुद्ध तो आज्ञापालन की ही जाए, साथ ही इस सेवक को पृथक् बंदी कर लिया जाए और अर्थमंत्री को अपने ही महल में बंदी बना लिया जाए।

भूधर के गृह से दस लाख स्वर्ण-मुद्रायें निकलीं, जिन पर अवध-राज्य की मुहर लगी थी। फिर कुछ ऐसे रत्नजड़ित भूषण निकले, जिनके विषय में अवध-राज्य का दावा था कि उनके हैं।

गणपति ने अवध-राज्य को लिख दिया कि भूधर पर वैशाली में अभियोग

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
चलाया जाएगा। अवध-राज्य को इस स्थान पर अपने प्रतिनिधि भेज अभियोग सिद्ध करना चाहिए, अन्यथा भूधर का अधिकार होगा कि अपनी मान-हानि का प्रतिकार अवध से प्राप्त करे। वैशाली राज्य अपने प्रत्येक नागरिक के अधिकारों की रक्षा के लिए सब कुछ करने को तैयार रहता है।

भूधर पर चलाने वाले अभियोग से अधिक गंभीर बात, अर्थमंत्री की मंत्रिमंडल की गुप्त बात को प्रकट करना बन गई। नगर भर में अर्थमंत्री के बंदी किए जाने की बात दिन चढ़ने तक फैल गई और स्थान-स्थान पर इस बात पर चर्चा होने लगी। कुछ लोग कहने लगे कि गणपति की यह अनाधिकार चेष्टा है। दूसरे कहते थे कि यह प्रश्न संसद् में उठेगा, तब तक धैर्य करना चाहिए। कुछ मनचले एकत्रित हो गणपति के महल के सम्मुख प्रदर्शन करने भी जा पहुँचे।

कई सहस्र सेट्ठी-पुत्र गणपति महल के सम्मुख जोर-जोर से पुकारने लगे—गणपति त्यागपत्र दें। अर्थमंत्री निर्दोष हैं।

जब यह प्रदर्शन हो रहा था तो गणपति अपने परिवार के साथ अल्पाहार कर रहा था। वह लोगों की गर्जना सुन समझ गया कि क्या हुआ है। उसकी स्त्री और अन्य लोग भयभीत हो उसका मुख देखने लगे। गणपति ने सबको कहा, ''भीरु मत बनो। अवध में क्रांति होते-होते भानुमित्र की बुद्धि से बच गई है और यहाँ यदि दृढ़ता से काम न लिया गया तो क्रांति हो जाएगी।''

गणपति ने समीप लटके घड़ियाल को बजाया। एक प्रतिहार भीतर आ गया। गणपति ने उससे कहा, ''महल के संरक्षक को बुलाओ।''

एक हृष्ट-पुष्ट, पाँच हाथ लंबा, अकड़ी मूँछों वाला सैनिक उपस्थित हो आज्ञा माँगने लगा।

गणपति ने कहा, ''अपने सैनिकों को कहो कि भीड़ में घुस जाएँ और ध्यान रखें कि कोई किसी प्रकार से उच्छृङ्खलता न करे। तुम स्वयं महल के चबूतरे पर खड़े होकर कहो—गणपति अभी यहाँ आएँगें और आपकी बात सुनेंगे। तब तक आप शांति से खड़े रहें।''

सैनिक आज्ञा पालन करने चला गया। गणपति पुनः आहार करने लगा। वह अपनी स्त्री से कह रहा था, ''अवध की महारानी मल्लिका तक्षशिला में भानुमित्र की सहपाठिन थी और दोनों का विवाह होना निश्चित था। मल्लिका ने अवध नरेश से विवाह कर लिया तो भानुमित्र उससे घृणा करने लगा। बहुत कठिनाई से उनके राज्य में काम करने पर तैयार हुआ है। हाँ,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक बात उसने कही है कि अब उसकी कोई प्रेमिका है और वह उसको मल्लिका पर उपमा देता है।''

इस कथा से देवधर्मा की स्त्री सुनीला का ध्यान प्रभा की ओर चला गया और वह भानुमित्र के पुनः वैशाली आने की आशा करने लगी।

भोजन समाप्त कर देवधर्मा उठा और महल के बाहर ऊँचे चबूतरे पर जाकर खड़ा हो गया। वह अकेला था। केवल महल का एक संरक्षक उसके समीप कुछ पीछे हटकर खड़ा था।

गणपति को खड़े देख लोगों ने घोषणा की, ''अर्थमंत्री निर्दोष है।''

गणपति ने हाथ ऊँचा कर लोगों को चुप होने का संकेत किया। लोग चुप हो गए। गणपति ने कहा, ''तुम लोग कहते हो, अर्थमंत्री निर्दोष है। मैं पूछता हूँ, तुम न्यायकर्ता हो? प्रजागण! वैशाली के न्याय-विधान में यह बात स्पष्ट लिखी है कि किसी भी व्यक्ति को बिना उसके विरुद्ध दोष सिद्ध किये दंड नहीं दिया जाएगा। परंतु मैं पूछता हूँ कि आप लोग, जिनको यह भी विदित नहीं कि अर्थमंत्री पर क्या दोष लगाया गया है, कैसे कह सकते हैं कि वह निर्दोष है? मैं उसको अपरधी नहीं कहता। मैंने तो उसे न्यायकर्ता के अधीन कर दिया है। क्या आपको न्यायाधिकारी पर भी विश्वास नहीं रहा? देखो, नगर के सेट्ठियों से मेरा निवेदन है कि अर्थमंत्री को इस कारण बंदी किया गया है कि मेरे विचार में उसने भारी अपराध किया है। इसलिए नहीं कि वह वैश्व वर्ण का है। इससे आप लोग भी यह विचार छोड़कर कि वह वैश्य है, उसके दोषों की न्यायालय में जाँच होने दें...''

इस समय एक कटार सर्र करती हुई गणपति के कान के पास से निकल पीछे दीवार में जा लगी। दीवार पत्थर की थी। इससे कटार खन्न करके उससे टकराई और भूमि पर गिर गई। कटार फेंकने वाले को सैनिकों ने पकड़ लिया। गणपति अपने स्थान से विचलित नहीं हुआ। उसने वैसे ही गंभीर भाव रखते हुए कहा, ''इस घातक को बंदी कर न्यायालय में उपस्थित करो।'' इसके पश्चात् उसने लोगों से कहा, ''जो कुछ तुम लोगों ने अभी किया है, यह यहाँ दुर्व्यवस्था उत्पन्न करने वाला है। मैं आप लोगों को सचेत कर देना चाहता हूँ कि यदि वैशाली में न्याय करना जनता के हाथ में हो गया तो सबसे अधिक हानि धनी-मानी सेठों की होगी। नगर में न तो कोई महल खड़ा रह जाएगा और न ही किसी की बहू-बेटी सुरक्षित रहेगी।''

''आप लोग अब शांतिपूर्वक अपने-अपने घर लौट जाएँ। जो लोग जानते

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
हैं कि अर्थमंत्री ने वह अवराध नहीं किया, जो करने का उस पर संदेह है, न्यायालय में जाकर प्रमाण दें। यहाँ उपद्रव करने से तो वे स्वयं अपराधी बन रहे हैं।''

इस भर्त्सना से लोग वापस होने लग गए। गणपति नित्य की भाँति अपने कार्य में लग गया।

भूधर पर चलाए अभियोग में इसी अपराध में नगर के बीसियों लोग पकड़ लिए गए। वे अवध के रिपुदमन को अवध नरेश बनाने में सहायता कर रहे थे। यह बात अपराध नहीं थी, क्योंकि यह वैशाली के राज्य के विरुद्ध नहीं थी; परंतु धन, जो उनको मिल रहा था, चोरी का था। न्यायकर्ता ने स्पष्ट कह दिया कि यदि ये लोग अपने पास से धन लेकर अथवा एकत्रित कर राज्य पलटने का यत्न करते तो समझा जाता कि वे परोपकार का कार्य कर रहे हैं। परंतु एक राज्य का चोरी किया धन लेकर उसी राज्य को पलटने का यत्न करना एक घृणित काम है। उनको दो-दो वर्ष के कारावास का दंड दिया गया।

परंतु गणपति ने अपने अधिकार से उन लोगों का, जो चोरी का लिया धन वापस कर दें, दंड क्षमा कर दिया।

भूधर इस षड्यंत्र का नेता था, इस पर वह भी धन देकर छूट गया।

अर्थमंत्री की समस्या अधिक गंभीर थी। उसने तो वैशाली का नियम भंग किया था। मंत्रिमंडल के निर्णय को क्रियान्वित होने से पूर्व प्रचारित कर देना; राज्य को हानि पहुँचाने के यत्न के समान था। अर्थमंत्री का उत्तर यह था कि भूधर का अपराध कुछ भारी नहीं था। इससे उसको बचाने का यत्न भी कुछ भारी अपराध नहीं। परंतु न्यायाधीश ने इस उत्तर को व्यर्थ समझा। न्यायाधीश का यह कहना था कि किसी के अपराध का छोटा अथवा बड़ा होना तो न्यायाधीश ही जान सकता है। न्यायाधीश के अतिरिक्त तो कोई नहीं कह सकता कि अपराधी को छोड़ना चाहिए अथवा फाँसी लगा देनी चाहिए। साथ ही अर्थमंत्री पर तो मंत्रिमंडल के रहस्य को खोलने का अभियोग हैं इसका किसी दूसरे के छोटे-बड़े अपराध से कोई संबंध नहीं।

अर्थमंत्री को देश-निर्वासन का दंड दिया गया। उसकी संपत्ति राज्याधिकार में कर ली गई।

: 5 :

जब भानुमित्र वैशाली आया तो सब झगड़े शांत हो चुके थे और नगर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
में कार्य शांतिपूर्वक चल रहा था। उसके आने का प्रयोजन देवधर्मा से कितने ही आवश्यक विषयों में परामर्श लेना था। इनमें सबसे आवश्यक बात थी मगध तथा अन्य पड़ोसी राज्यों से सन्धि-चर्चा।

भानुमित्र और देवधर्मा नगर वधू के महल के एक आगार में सर्वथा अकेले बैठे बातें कर रहे थे। भानुमित्र कह रहा था, ''गांधार एक गणराज्य था, वह पारस ने हड़प लिया है। परिणाम यह हुआ कि भारत का द्वार विदेशियों के हाथ से चला गया है। श्रीखंड और वाहिक देश तो पारसियों के आक्रमणों से आक्रांत हो उठे हैं। इस कारण देश की रक्षा का भार अधिक हो गया है। मेरी योजना है कि देश में एक सुदृढ़ राज्य-संघ स्थापित कर दिया जाए, अन्यथा किसी समय कोई भी विदेशी देश में आकर हमारी धन-दौलत को लूट लेगा, हमारे स्त्री-धन को भ्रष्ट और व्यर्थ कर देगा और हमारी संस्कृति को बिगाड़ देगा।''

देवधर्मा भानुमित्र की बात को समझता था, परंतु इसकी कठिनाई को भी जानता था। उसने कहा, ''भारत की वर्तमान स्थिति में यह असंभव है।''

''परंतु यह अत्यावश्यक भी है।''

''यह मैं मानता हूँ, वत्स! परंतु कभी आवश्यक और हितकर बातें भी हो नहीं सकतीं। मैं वैशाली की बात ही बताता हूँ। यदि मेरे अकेले की बात होती तो अवध और वैशाली की संधि सुगम हो जाती, परंतु वे सब बातें मैं संसद् में रहीं रख सकता। मंत्रिमंडल में भी यह बात मैं मनवा लूँगा, परंतु डरा-धमकाकर ही तो। वे अपनी इच्छा से यह नहीं करेंगे और यदि मैं कल गणपति न रहा तो यह संधि निरर्थक हो जाएगी। साथ ही यह भी समझ लो कि दूसरे गणराज्यों में मेरे जैसा अनुकूल गणपति मिलना सुगम नहीं।''

''तो फिर इसका क्या उपाय है, आर्य?''

''मैं जब अपने पूर्ण प्रयत्नों को विफल जाते देखता हूँ तो भारत की समस्या का एक ही सुझाव पाता हूँ और वह है यहाँ एक साम्राज्य स्थापित करना। यदि संभव होता तो मैं मगध के महाराज से अश्वमेध यज्ञ करने को कहता और उसका गांधार से लेकर अंग देश तक साम्राज्य बना देता। परंतु मैं बूढ़ा हो रहा हूँ और मगध सम्राट् भी न्याय का राज्य स्थापित करने में मेरी बात मानेगा या नहीं, कह नहीं सकता। कई वर्ष हुए यूनान, मिस्र और ईरान के सौदागरों ने पाटलिपुत्र में क्रीतदासों का व्यापार खोल दिया था। मैंने मगध राज्य को इसको वर्जित कर देने का आग्रह किया था। उन्होंने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
नहीं माना। यूनान और ईरान की सुंदरियाँ राजगृह में बिकती महाराज को पसंद आईं। कई सौ तो महाराज ने स्वयं खरीद लीं और उनको अपने परिवार के लोगों को भेंट कर दिया। परिणाम में दासों का क्रय-विक्रय वैशाली में भी आरंभ हो गया। मुझे संसद् से इस विषय में भी नियम बनवाने के लिए भारी यत्न करना पड़ा। बहुत कठिनाई से इसे मना करवाने में सफल हुआ था।

"विदेशी लोग वहाँ से स्त्रियाँ लाते थे। उन्हें यहाँ बेचकर प्राप्त किए धन से यहाँ का बना माल क्रय कर ले जाते थे। जानते हो, परिणाम क्या हुआ है? मगध-देश निर्धन हो रहा है। वहाँ व्यभिचार में वृद्धि हो रही है। इस पर भी मगध नरेश इस व्यापार को बंद नहीं कर सका। अब तो स्थिति यहाँ तक पहुँच गई है कि कई मागधी भी यही व्यापार करने लगे हैं।"

भानुमित्र ने कहा, "हमारे यहाँ तो दासों के क्रय-विक्रय का विचार भी नहीं उठ सकता।"

"वह तो है ही। आर्य देशों में मनुष्य बेचे और खरीदे नहीं जाते। परंतु यह तो तुम जानते हो कि मगध में आर्य सभ्यता का नाम-मात्र भी नहीं रहा। बौद्ध मत का अर्थ है प्राचीन आर्य आचार-व्यवहार को दूषित मानना। जब मनुष्य प्राचीन प्रथा को एकदम छोड़ स्वयमेव नवीन प्रथा का निर्माण करता है तो भूल हो जाना सुगम है। वह पहले किए परीक्षणों के लाभ उठाने से वंचित रह जाता है।"

भानुमित्र को देवधर्मा की उक्त विवचेना सुन बहुत निराशा हुई। उसके उदास मुख को देख देवधर्मा ने फिर कहा, "परंतु मैं समझता हूँ कि निराश होने में कोई कारण नहीं है। हमें दो बातें करनी चाहिए। एक तो ब्राह्मण और क्षत्रिय कुमारों की उचित शिक्षा का प्रबंध करना है। उनको केवल धर्म का ज्ञान ही प्राप्त नहीं कराना अपितु, जिनके मन में बौद्ध तथा विदेशी विचारों ने दूषित संस्कार उत्पन्न कर दिए हैं, आर्य धर्मानुसार राज्य करने की योग्यता उत्पन्न करना है।"

"दूसरी बात यह है कि भारत-खंड में एक ही संस्कृति का प्रसार होना चाहिए, जिससे एक-दूसरे के सुख-दुःख में सब सम्मिलित हो सकें। राज्यों की संख्या भी कम हो जानी चाहिए। छोटे राज्यों में परस्पर प्रतिस्पर्धा देश की रक्षा में बाधक होगी। परस्पर रक्षा-संधि होने पर भी भिन्न देशों की सेनाएँ एक सूत्र में बँधकर युद्ध नहीं कर सकतीं। एक देश की सेना दूसरे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देश के सेनापति के अधीन नहीं लड़ती।''

भानुमित्र ने अपना अनुभव वर्णन करते हुए कहा, ''मैंने इस विषय पर विचार किया है। परंतु बहुत-से राज्यों का एकीकरण करना भी कठिन हो गया है। छोटे-छोटे गणराज्यों को बलपूर्वक विजय कर अपने में सम्मिलित करना इतना सुगम नहीं जितना यह कहना सुगम है। विदेह राज्य के लोगों में मैंने अपने गुप्तचर भेज, उनकी इच्छा जानने का यत्न किया था। वहाँ के लोग इतने आत्माभिमानी हैं कि वे अपने देश को अवध के साथ सम्मिलित करना तो दूर रहा, वहाँ अपना दूत भेजना भी पसंद नहीं करते।''

''यह समस्या तो है ही। इसको सुलझाने में ही योग्यता का परिचय मिलेगा। तुम युवक हो। तुम्हारी बुद्धि अभी निर्मल और तीव्र है। तुम्हें इस बात का यत्न करना चाहिए—या तो सब राज्यों का एक संघ बन जाए और उस संघ का अधिपति गणेश निर्वाचित किया जाए। यह गणेश सब राज्यों की सेनाओं का महासेनापति माना जाए।''

''यदि यह संभव न हो तो तुम अवध राज्य की सेना को ऐसा सुदृढ़ और अस्त्र-शस्त्र-युक्त बनाओ कि महाराज अवध भारत के सम्राट् बन सकें। अवध की सेनाओं की छावनियाँ एक ओर कामरूप में हों, दूसरी ओर गांधार में। दक्षिण में कृष्णा और उत्तर में काश्मीर इस साम्राज्य की सीमाएँ बन सकें। तभी उन्नत हो रहे ईरान और यूनान से भारत की रक्षा की जा सकेगी।''

बातों और योजनाओं में बहुत समय निकल गया। अर्धरात्रि का घंटा बजा और देवधर्मा उठ बैठा। पूछने लगा, ''घर पर चलोगे?''

''मैं पंथागार में गुप्त रूप से ठहरा हूँ। प्रातःकाल माताजी के दर्शन करूँगा।''

देवधर्मा उठकर विनोद-भवन के आगार से निकल आया। भानुमित्र की इच्छा थी कि मृदुला से भेंट करे। इससे वह अभी सोच ही रहा था कि किस प्रकार अपने वैशाली आने की सूचना दे कि चंपा एक सोने के थाल में एक पत्र लेकर आई और झुककर नमस्कार कर, थाल भानुमित्र के आगे कर खड़ी हो गई। भानुमित्र ने पत्र पढ़ा।

लिखा था, 'दासी अपने भोजनागार में आपकी प्रतीक्षा कर रही है—मृदुला।'

भानुमित्र ने चम्पा के मुख की ओर देखा तो वह टेढ़ी दृष्टि से देखते

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हुए मुस्करा रही थी। भानुमित्र ने पूछा, "क्या बात है, चंपा?"

"स्वामिन की अपार कृपा है।"

"किस पर?" भानुमित्र का मुख खिल उठा।

"कोई हैं, जिनके स्वप्न वे पिछले छह मास से नित्य देखती हैं।"

"कौन ऐसा भाग्यशाली है, प्रिये?"

"बताने की आज्ञा नहीं, आर्य!"

"तुम बहुत चंचल हो, चंपा! मैं पहले दिन का, इस महल, का अनुभव भूल नहीं सकता। क्या अब भी वह खेल चलता है?"

"कौन खेल, आर्य?"

"तो भूल गई हो? शायद वह भी स्वप्न था। अच्छी बात है, चलो, मार्ग-प्रदर्शन करो।"

चंपा आगार के बाहर निकल छत पर जाने वाली सीढ़ियों पर चढ़ने लगी। भानुमित्र उसके साथ था। एकाएक चंपा ने खड़े हो पूछा, "तो आर्य भी स्वप्न देखा करते हैं?"

"हाँ, प्रिये!"

"किसके?"

"एक है, जो स्वर्ग-द्वार पर खड़ी भोले-भाले यात्रियों को उँगली के संकेत से बुलाकर जाल में फँसाती है और दीप-शिखा पर भँवरे की भाँति उसके पंख झुलस जाने पर उठवाकर नाली के किनारे फिंकवा देती है।"

"बहुत दुष्ट है वह?"

"हाँ। इस पर भी स्वप्नों में आती है।"

"क्यों?"

"बहुत सुंदर है वह।"

"तब तो और भी बुरी है, आर्य! उसे दंड देना चाहिए।"

"यह संभव नहीं।" इस पर पुनः दोनों सीढ़ियाँ चढ़ने लगे थे। भानुमित्र चंपा के पीछे-पीछे था और उसका मुख न देख सकने के कारण उसके मनोद्‌गारों को समझ नहीं सका था। सीढ़ियाँ चढ़ चंपा खड़ी हो गई। भानुमित्र उसके साथ ही प्रश्न भरी दृष्टि से उसकी ओर देखने लगा। चंपा ने पूछा, "किसी दुष्ट स्त्री को दंड देना संभव क्यों नहीं?"

भानुमित्र ने लंबी साँस खींचकर कहा, "जानना चाहती हो, चंपा? तो सुनो। स्त्री संसार की सर्वश्रेष्ठ विभूति है। उसके सब अवगुण उसके एक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गुण कोमलता में छुप जाते हैं।"

"आप बहुत दयालु हैं, भद्र!"

"मैं एक लड़की से बाल्यकाल से प्रेम करता था। जब वह बड़ी हुई तो किसी दूसरे से विवाह कर बैठी। एक समय उसे मेरी सहायता की आवश्यकता पड़ी तो उसने ऐसा विनीत भाव बनाया कि मैं ना नहीं कर सका। वह मेरी कृतज्ञ है, परंतु भार्या दूसरे की है।"

चंपा हँस पड़ी। इस समय वे पुनः चल पड़े। चलते हुए भानुमित्र ने पूछा, "क्यों हँसी हो?"

चंपा ने चलते-चलते पूछा, "क्या कृतज्ञ होने से भार्या होना आवश्यक है अथवा क्या भार्या होने से कृतज्ञ होना ही होता है?"

भानुमित्र सोच रहा था कि यह स्त्री दार्शनिकों की भाँति बातें करने लगी है। यह कोई विदुषी स्त्री प्रतीत होती है। अतएव वह उसके जीवन की बात पूछना चाहता था, परंतु इस समय वे भोजनालय के बाहर जा पहुँचे थे। दोनों भीतर चले गए।

: 6 :

मृदुला एक चौकी पर भोजन करने के लिए तैयार बैठी थी। एक और चौकी पर उसके सम्मुख थाल में भोजन रखा था। मृदुला ने कहा, "आइए, शीघ्रता कीजिए।"

भानुमित्र ने तुरंत बगल के आगार में जा हाथ-पाँव और मुख धोया और आकर चौकी पर बैठ गया। भोजन करते हुए उसने पूछा, "आपको कैसे मालूम हुआ कि मैं आया हूँ?"

"आज प्रातः से मेरी बाईं आँख फड़क रही थी और प्रातःकाल ही मुंडेर पर बैठा कौआ काँय-काँय कर, मुझे किसी शुभ समाचार के आगमन की सूचना दे रहा था। इस कारण मैं सायंकाल से चंपा को भेज-भेजकर आपके आने की खबर ले रही थी। जब आप आए तो मैं सेट्ठी-जनों में बैठी संगीत कर रही थी। इस कारण मैं उसी समय आपके दर्शन नहीं कर सकी। पश्चात् गणपतिजी के साथ आप बातचीत कर रहे थे। ज्यूँ ही आपको अवकाश मिला कि मैंने आपको बुला भेजा। बताइए, इतने दिन तक आपने स्मरण भी नहीं किया। कोई चिट्ठी-पत्री ही भेज दी होती।"

"देवी! मैं क्षमा चाहता हूँ। वास्तव में मैं अयोध्या में ऐसे काम में फँस गया था कि मुझे इस ओर ध्यान देने का अवकाश ही नहीं मिला। तीन दिन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हुए एक ऐसी घटना हुई, जिससे आपका स्मरण हो जाना स्वाभाविक ही था। सो कल अयोध्या से चल आज सायंकाल यहाँ आ पहुँचा और वस्त्र बदल सीधा इधर चला आया हूँ। अभी द्वार के भीतर पग ही रखा था कि गणपतिजी से भेंट हो गई और फिर उनसे बात अभी समाप्त भी नहीं हुई थी कि मध्यरात्रि का घंटा बजा। गणपतिजी गए तो आपकी आज्ञा मिली।''

भानुमित्र ने देखा कि मृदुला सर्वथा सादा भोजन कर रही है। दाल, भाजी, शाक, चावल ही थे। इसके विपरीत उसके सम्मुख मांस-मछली और फिर जल के स्थान माधवी रखी थी। रोटी, पुलाव और भाँति-भाँति के शाक थे। भानुमित्र ने दोनों थालों की तुलना की तो पूछा, ''इतना अल्पाहार करती हैं आप?''

''हाँ, मेरा इतने से निर्वाह हो जाता है।''

''परंतु मैं तो आज जल पिऊँगा। एक बार की गई भूल से शिक्षा ग्रहण कर चुका हूँ।''

मृदुला हँस पड़ी, ''मैं आपको अपने रथ में बिठाकर पंथागार में भिजवा दूँगी।''

''फिर भी मैं अपने जीवन से इतना दुखी नहीं हुआ हूँ कि इसे भूलने की आवश्यकता अनुभव करूँ।''

''तो आप बड़े भाग्यशाली हैं।''

''तो क्या मृदुला देवी! आप इस उत्तम भाग्य से वंचित हैं?''

''नहीं। जब से आपके दर्शन हुए हैं, मेरा जीवन इतना मधुर हो उठा है कि मैं उसके क्षण-क्षण का स्वाद लेती हूँ। इसी से मुझे सुरापान की आवश्यकता नहीं पड़ती।''

भानुमित्र ने मृदुला को देखा। उसे उसके मुख पर अलौकिक सौंदर्य की छटा दिखाई दी। इस समय उसे राका की याद आई। राका सुंदर अवश्य थी परंतु उसके व्यवहार में बचपना था। इधर मृदुला एक सुसंस्कृत लड़की प्रतीत होती थी। राका को देख कौतूहल उत्पन्न होता था और मृदुला को देखने से उन्माद।

भानुमित्र भोजन करते हुए मन-ही-मन विचार कर रहा था कि राका से विवाह करने पर भी वह मृदुला को ना नहीं कर सकेगा।

मृदुला भी गंभीर विचार में पड़ी हुई अपने भाग्य-चक्र को समझने का यत्न कर रही थी। एक अविवाहित राजकुमारी की लड़की, जिसे मृत्युदंड

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिया जा चुका था, एक सेवक की अनुकम्पा से बचकर वैशाली की नगर-वधू बन गई। फिर अनेक राजा-महाराजाओं, सेट्ठियों के प्रेम की भाजन हो एक अपरिचित युवक की हँसी उड़ाती हुई, उसके प्रेम में फँस गई। विचित्र समस्या था उसका जीवन।

इन्हीं विचारों में दोनों ने भोजन समाप्त किया। वहाँ से उठ, हाथ धो, कुल्ला कर भोजनालय से बाहर आ गए। भानुमित्र का शरीर छः मास से महामात्य के पद पर तथा प्रसन्न और संतुष्ट रहने से भर गया था। उसका मुख कुछ गोलाई पर आ गया और कद में भी कुछ लंबा हो गया था। इससे मृदुला अपने भावी पति को देख मन में उल्लास अनुभव कर रही थी।

भोजनालय से निकल उसने कहा, ''आर्य! इधर आइएगा?''

: 7 :

भानुमित्र मृदुला के पीछे-पीछे चल पड़ा। वह उसे एक बैठक-गृह में ले गई। वहाँ भूमि पर बिछे बहुत ही कोमल कालीन पर दोनों बैठ गए। एक दासी चाँदी की थाली में पान लगाकर ले आई। मृदुला ने थाली पकड़ भानुमित्र के सम्मुख कर कहा, ''लीजिए।'' भानुमित्र ने पान लेते हुए पूछा, ''आप किस समय सोती हैं?''

''मध्यरात्रि के समय तो भोजन होता है। एक पहर रात रहने पर सोती हूँ। एक पहर दिन गए उठती हूँ। शौचादि से निवृत्त हो संगीत और नृत्य का अभ्यास होता है। पश्चात् मध्याह्न का भोजन होता है। उसके उपरांत कुछ विश्राम करती हूँ और फिर सायंकाल के प्रबंध को देखने लगती हूँ। लोग खाते हैं, पीते हैं, दासीयों से किलोल करते हैं और कभी-कभी लड़ते-झगड़ते भी हैं। कभी कोई मनचला मेरी ओर भी वक्र-दृष्टि करता है तो मुझे बहुत चतुराई से रहना पड़ता है इस सब समय में मैं न खाती हूँ, न पीती हूँ। कभी-कभी संगीत और नाच करना होता है। यह जब भी होता है मुझे उपहार मिलते हैं। कभी-कभी तो दो-तीन सहस्र मुद्रा तक एकत्रित हो जाती हैं।''

''बहुत कठोर काम है। कभी किसी ने बलपूर्वक आपसे प्रेम नहीं किया?''

''क्यों नहीं? परंतु यहाँ का नियम ही है कि मुझे अछूता रहना चाहिए। इसके लिए राज्य की ओर से मुझे दस सहस्र स्वर्ण-मुद्रा प्रतिवर्ष मिलती हैं। पहले तो यह नियम था कि नगर-वधू जन्म-भर के लिए बनाई जाती थी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परंतु उस प्रथा में दोष प्रतीत होने पर अब पाँच वर्ष के पश्चात् बदल दी जाती है। यदि नगर-वधू अपनी इच्छा से किसी की भार्या बने तो वह दंड की भागी होती है और यदि कोई उसकी इच्छा के बिना उस पर बलात्कार करने का यत्न करे तो उसे यह रस्सी खींचने की आवश्यकता है और पचास सुभट्ट उसकी रक्षा के लिए एक क्षण में आ सकते हैं।''

''बहुत विचित्र प्रथा है यह?''

''है तो, परंतु राज्य-कार्य का यह एक अंग है। वैशाली की नगर-वधू राज्य के अंदर के लोगों के लिए और बाहर के लोगों के लिए एक भारी आकर्षण है। राज्य के सब मुख्य कार्य इस महल के आगारों में संपन्न होते हैं।''

''पर मृदुला देवी!'' भानुमित्र ने कहा, ''ऐसे वातावरण में रहते हुए संयम से रहना क्या कठिन नहीं?''

''है तो। कभी-कभी ही कोई नगर-वधू पूरे पाँच वर्ष तक महल में राज्य कर सकी है। प्रायः किसी धनी लड़के के साथ समय के भीतर ही भाग गई हैं। एक-दो बौद्ध भी हो चुकी हैं। एक ने आत्मघात किया था।''

''मुझे इस पदवी के लिए तैयार करते समय ये सब बातें बता दी गई थीं। इस पर भी जब निर्वाचित हो मैं यहाँ आई तो गणपति ही मुझसे प्रेम करने लगे। मैं जानती थी कि वे मेरे पिता हैं, इसी से मैं उनसे भागती थी और वे मुझे पाने के लिए और अधिक प्रयत्न करने लगे। अंत में मुझे बताना ही पड़ा। जब मैंने प्रमाण दिए तो वे कहने लगे कि शायद मेरी आकृति मेरी माँ से मिलती है, इसी से मैं उनकी दृष्टि में चढ़ गई थी।

''पश्चात् उन्होंने मुझे आश्वासन दिया कि मेरे विवाह का अच्छे परिवार में प्रबंध कर देंगे और मेरी रक्षा के लिए प्रत्येक प्रकार का प्रबंध कर रहे हैं।''

''उन्होंने मेरे विषय में कभी पूछा है?''

''जब आप यहाँ थे तो पूछा करते थे। जिस रात आप अयोध्या जाने से पूर्व यहाँ सोए थे, तो उनको पहले तो सूचना मिली कि आप अपने गृह में जलकर भस्म हो गए हैं। अगली रात उन्होंने मेरे से बहुत शोक में बात कही। इस पर मेरी हँसी निकल गई। जब मैंने उन्हें सत्यकथा बताई तो बहुत प्रसन्न हुए। तब से आज तक आपके विषय में कोई बात नहीं हुई।''

''उनकी स्त्री अपनी छोटी लड़की प्रभा से मेरा विवाह करने का यत्न

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कर रही है।''

मृदुला की हँसी निकल गई। भानुमित्र ने पूछा, ''क्यों, किसलिए हँसी हैं आप?''

''मैं जानना चाहती हूँ कि कब होगा आपका विवाह?''

''आप क्या समझती हैं, कब होना चाहिए?''

''मैं तो समझती हूँ कि शीघ्र ही हो जाना चाहिए। मैंने उस लड़की को देखा है।''

''इसमें मैं आपका प्रयोजन नहीं समझा?''

''बात तो स्पष्ट है वह अभी बालिका है। जब तक मैं इस पदवी से मुक्त होऊँगी तब तक वह तीन बच्चों की माँ बन चुकेगी। वह बेचारी उनके पालन-पोषण में लग जाएगी और तब मेरी बारी होगी। आपका दूसरा विवाह मुझसे होगा।''

भानुमित्र इस युक्ति से हँस पड़ा। मृदुला भी हँसने लगी। हँसकर जब दोनों कुछ शांत हुए तो मृदुला ने पूछा, ''मैं आपको चार वर्ष तक बंधन में नहीं रखना चाहती; परंतु एक बात पूछूँ? आप रुष्ट तो न हो जाएँगे?''

भानुमित्र ने उत्सुकता से कहा, ''हाँ, कहो। आपसे रुष्ट कैसे हो सकता हूँ?''

''यदि आपने विवाह ही करना है तो क्या प्रभा से सुंदर लड़की और मिल नहीं रही?''

''मिल तो रही है, पर मैं डरता हूँ कि यदि किसी अति सुंदर स्त्री का पति बन गया तो फिर तुमसे विवाह की रुचि रह जाएगी या नहीं?''

इससे मृदुला गंभीर विचार में पड़ गई। फिर कुछ सोचकर बोली, ''मैंने इस विषय पर बहुत विचार किया है। जब मैंने यह सुना कि आप अवध के महामात्य बन गए हैं तो मैं यह विचार करती थी कि जब तक मैं आपसे विवाह करने के लिए तैयार हो सकूँगी, आपका विवाह हो जाना स्वाभाविक ही है। भला इतने ऊँचे पद पर रहते हुए आपके पथ में प्रलोभन आएँगे ही नहीं, यह मैं नहीं मान सकती। फिर मेरा क्या अधिकार है कि मैं आपको एकाकी जीवन व्यतीत करने के लिए कहूँ। इतना विचार कर मैं सोचती थी कि मेरे साथ आपका क्या व्यवहार होगा? आपके विषय में मैं क्या सोच सकती थी? सब अपने मन के लड्डू ही तो होते थे। हाँ, मैं अपने व्यवहार के विषय में तो सोच ही सकती थी, सो सोच-विचार लिया है।''

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भानुमित्र आगे सुनना चाहता था। कारण यह कि बात अभी समाप्त नहीं हुई थी, परंतु मृदुला ऐसे चुप कर गई, मानो वह जो कहना चाहती थी, कह चुकी है। उसे चुप देख भानुमित्र ने पूछा, "क्या विचार किया है, प्रिये! तुमने?"

"मैं आपके द्वार पर धूनी रमा दूँगी और इससे मैं अपना अधिकार पा जाऊँगी।"

"परंतु देखो न, देवी! यदि मेरी स्त्री अति सुंदर हुई, आपसे भी सुंदर हुई तो आपकी रमाई धूनी व्यर्थ नहीं जाएगी क्या?"

"नहीं। कोई भी स्त्री सदैव अपने पति के काम की नहीं रह सकती। मैं भी तो आपका पूर्ण साथ नहीं दे सकती। प्रकृति ने स्त्रियों को ऐसा ही बनाया है। उन्होंने बच्चे जनने हैं और फिर उनका पालन-पोषण भी करना है।"

"तो उस समय के लिए पुरुषों को संयम से नहीं रहना चाहिए क्या?"

"हाँ, यदि वे रह सकें तो। परंतु मैं तो नित्य देखती हूँ। मेरे प्रासाद में सौ से ऊपर दासियाँ हैं और उनमें से प्रति मास दस से बीच तक गर्भवती हो बच्चा जनने चली जाती हैं। मनुष्य स्वभाव से और प्रकृति से बहुपत्नीक है।"

"और अपनी दासियों को देख क्या यह अनुभव नहीं करतीं कि स्त्रियाँ भी बहुपतीक हैं?"

"हैं तो, परंतु उनके गर्भ तो एक से ही स्थित हो सकता है। आर्य! मैं वासना की बात नहीं कर रही। वासना-तृप्ति में तो पुरुष-स्त्री में अंतर नहीं होता; परंतु विवाह के मुख्य प्रयोजन संतानोत्पत्ति में तो स्त्री एक समय में एक ही पति रख सकती है और पुरुष एक से अधिक स्त्रियाँ। यह प्रकृति का विधान है। जो इसका विरोध कर जी सकते हैं, उन्हें कौन मना करता है? जो नहीं रह सकते, वे एक से अधिक पत्नियाँ रखेंगे ही।"

"आपकी यह युक्ति दूषित है, मृदुला देवी! इसमें पुरुष-स्त्री में असमानता की गंध आती है। हम पुरुष अपनी स्त्री को किसी दूसरे पति से संतानोत्पत्ति कराते पसंद नहीं करते। नियोग हमारे जीवन में नियम नहीं, अपवाद है। यही प्रतिबंध हमें पुरुषें पर लगाना चाहिए। तभी तो गृहस्थ जीवन सुखमय हो सकेगा।"

मृदुला मुस्कराकर आँखें नीची किए हुए कहने लगी, "एक बार यह बात

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गणपतिजी से चल पड़ी थी। मैं उनको एक योग्य कार्यकुशल अनुभवी विद्वान् मानती हूँ। वह कहने लगे, आदर-सत्कार, भोजन-वस्त्र और अन्य प्रकार की शारीरिक और मानसिक सुविधाएँ तो स्त्रियों को पुरुषों से अधिक मिलनी ही चाहिए; परंतु जो कमियाँ प्रकृति ने स्त्रियों में रखी हैं, वे मैं या तुम मिटा नहीं सकते। स्त्रियाँ क्षेत्र हैं। इनमें बीजारोपण पुरुषों का कार्य है। बीजों की बाहुल्यता है। क्षेत्र में एक समय एक ही सन्तान उत्पन्न हो सकती है। परिणाम यह होता है कि पुरुष तो एक से अधिक क्षेत्रों में बीजारोपण कर सकता है परंतु क्षेत्र तो एक ही से बीज ग्रहण कर सकता है।''

''तो इसका परिणाम यह होगा कि संतान-आधिक्य से परिवार ओर देश आक्रांत हो उठेंगे।''

''ठीक यही बात मैंने उनसे कही थी और उन्होंने कहा था कि जब देश में जनसंख्या इतनी अधिक हो जाएगी कि देश उनके निर्वाह के लिए भोजन उत्पन्न नहीं कर सकेगा तो हम समाज में संतान-निरोध के लिए उपाय और नियम बना लेंगे। अभी इसकी आवश्यकता नहीं है।''

इस समय रात्रि के तीसरे प्रहर का घड़ियाल बजा। दोनों उठ पड़े। मृदुला अपने शयनागार की ओर चल पड़ी। भानुमित्र जब शयनागार के बाहर से विदा होने लगा तो उसने बहुत ही लालसा-भरी दृष्टि से उसकी ओर देखा। मृदुला इस दृष्टि में छिपे भावों को समझती थी। उसने भानुमित्र के दाहिने हाथ को पकड़, अपना हाथ उसको पकड़ाकर कहा, ''साढ़े तीन वर्ष मेरे नगर-वधू की पदवी के और रह गए हैं। प्रतिदिन प्रातः मैं दिनों की गिनती करती रहती हूँ और प्रतिदिन यह अवधि घटती देख मन में लक्ष्य-स्थान की ओर जाती हुई अनुभव करती हूँ। आज प्रातः बारह सौ अस्सी दिन की अवधि शेष गिनी थी।''

''मैं तो कभी यह सोचता हूँ कि इस नगर-वधू प्रथा का सत्यानाश क्यों नहीं हो जाता?''

''तो मेरी आपसे भेंट कैसे होती? फिर वैशाली की पूर्ण राजनीति और संगठन-आयोजन व्यर्थ हो जाता। इस देश में यह संस्था एक प्रथम श्रेणी की महत्ता रखती है। देखिये मित्र! मैं आपकी आशा बाँधे हुए ये दिन व्यतीत कर सकती हूँ। जिस दिन मैं यहाँ से मुक्त होऊँगी, उसी दिन मैं आपको रथ लिए द्वार पर मेरी प्रतीक्षा करते हुए देखना चाहती हूँ।''

इतना कह वह हाथ छुड़ा शयनागार में चली गई। भानुमित्र वहीं द्वार पर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मूर्तिवत् खड़ा रह गया। उसे चेतना हुई जब पीछे खड़ी चंपा ने कहा, "आर्य! आइये।"

भानुमित्र ने चौंककर पीछे देखा। चंपा की आँखों में अभी भी चपलता थी। भानुमित्र उसके साथ बाहर के द्वार की ओर जाते हुए पूछने लगा, "तुम यहीं छिपकर बातें सुन रही थीं?"

"देवीजी की कृपा है मुझ पर। मैं उनकी सब बातें जानती हूँ।"

"तब तो तुम बहुत काम की हो, चंपा!"

"किसके काम की, भद्र!"

"मेरे काम की, प्रिये!"

"आपकी सेवा कर मैं अपने को कृतकृत्य मानूँगी।"

"मैं यह स्मरण रखूँगा, चंपा देवी!"

: 8 :

प्रभा को जब मालूम हुआ कि भानुमित्र वैशाली में आया हुआ है और प्रातः के अल्पाहार के समय उनके घर में आने वाला है, तो वह अपने मन की प्रसन्नता को अपनी बड़ी बहन से छिपा नहीं सकी। उसकी बड़ी बहन ऊषा उसे सज-धजकर अपने आगार में से निकलते देख मुस्करा दी। प्रभा जानती थी कि वह एक मागधी से विवाहित है और उसका विवाहित जीवन पूर्ण रूप से असफल रहा था। इसीलिए वह अपने माँ-बाप के पास ही रहती है। इस कारण उसके मुस्कराने को वह शुभ न मान पूछने लगी, "ऊषा बहन! क्या है आज, जो मुख टेढ़ा कर रही हो?"

ऊषा हँस पड़ी और प्रभा के समीप आ उसके कान के समीप मुख को ले जाकर बोली, "यह वेणी पर जूही के गुच्छे का कारण जानती हूँ।"

"तो जानो। वह मागधी नहीं है।"

इस कटाक्ष से तो ऊषा की आँखें भर आईं और वह बिना उत्तर दिए भोजन-गृह में चली गई। परिवार के सब लाग वहाँ एकत्रित थे। ऊषा अपने स्थान पर जा बैठी। माँ ने देख लिया कि उसकी आँखें तरल हो रही हैं। उसने पूछा, "उषा! क्या बात है?"

"कुछ नहीं, माँ! मैं राजगृह जाने का विचार कर रही हूँ।"

"क्या है वहाँ?"

"तो माँ! तुम नहीं जानतीं कि क्या है वहाँ? मैं अपने पति के घर जा रही हूँ।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गणपति इस मनोद्गार को सुन चुप नहीं रह सका। बहुत प्रेम-भाव से बोला, "बेटी ऊषा! तुम्हारा विवाह भूल हुई है और मैं समझ नहीं सका कि इसको सुधारने का क्या उपाय करूँ?"

"पिताजी! मेरा जन्म ही भूल हुआ है। आप जैसे प्रख्यात प्रकांड विद्वान् की लड़की को इतना कुरूप नहीं होना चाहिए था। यदि मैं एक निर्धन की लड़की होती और अनपढ़ और गँवार होती तो किसी मूर्ख, कुरूप से विवाह कर संतुष्ट रहती। मेरे इतना सब पढ़ने-लिखने का क्या लाभ हुआ?"

देवधर्मा ने माथे पर त्योरी चढ़ाकर कहा, "देखो ऊषा! तुम्हें अपनी माँ से रोष करने की कोई आवश्यकता नहीं। यह रूप-रंग उसका अपना ही है। मुझसे भी तुम्हें रुष्ट होने के लिए कारण नहीं। मैंने तुम्हें शिक्षा दिला विदुषी बना दिया था। यदि इस पर भी तुम सुखी नहीं हो सकीं तो इसमें तुम्हारी ही भूल है। तुमने स्वयं साधारण रूप-लावण्य रखते हुए अपने से अधिक रूप-रंग वाले और अपने से कम शिक्षित को जयमाला पहनाई है। वह गँवार नहीं समझ सका कि तुम ज्योतिष गणित, संगीत और अनेक अन्य गुणों से युक्त हो।"

"पिताजी!" ऊषा आँखों में आँसुओं को न रोक सकने से विह्वल हो उठी। उसने साड़ी के आँचल से आँसुओं को पोंछते हुए कहा, "पिताजी! आपने भी तो माताजी से विवाह किया था।"

इस समय भानुमित्र वहाँ आ पहुँचा और प्रभा उठकर उसका आगार में स्वागत करने लपकी। भानुमित्र ने इस प्रकार भागकर आती प्रभा को देख अपनी दोनों हाथों से उसकी भुजाओं को पकड़ लिया और अपने से कुछ अंतर पर खड़ा कर उसे सिर से पाँव तक देखा। मृदुला के सौंदर्य को, जिसको रात वह एक प्रहर तक देख तृप्त होता रहा था, अभी भूला नहीं था। जब वह प्रभा को देख रहा था तो उसे ऐसा प्रतीत हुआ कि मृदुला की प्रतिमा प्रभा के पीछे खड़ी उसकी हँसी कर रही है। इस बात का मन में भास होते ही उसका मन उतर गया। उसने प्रभा को संबोधन कर कहा, "मेरी छोटी बहन! आजकल क्या पढ़ती हो?"

प्रभा बहन कही जाने से, फेन को हवा लगने की भाँति, शांत हो गई और उसका शरीर ढीला पड़ गया। दोनों शांत भाव में वहाँ आ गए, जहाँ सब आहार के लिए बैठे थे। भानुमित्र प्रभा की माँ के चरण-स्पर्श कर प्रभा के समीप बैठ गया। इस समय उसकी दृष्टि ऊषा की ओर गई। वह अपने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गालों से टपके हुए आँसू पोंछ रही थी।

"क्या बात है, ऊषा बहन? क्या मैं आज कुसमय पर आया हूँ?"

"नहीं वत्स! तुम ठीक समय पर ही आये हो। यह लड़की कहती है कि मैंने इसी के रंग-रूप वाली इसकी माँ से विवाह किया है और हम दोनों झगड़ते नहीं हैं। इसी प्रकार यह समझती है कि इसके मागधी पति को इससे झगड़ा नहीं करना चाहिए। मैं इसे यह बताना चाहता हूँ कि इसकी माता इससे अधिक बुद्धिमान और कार्य-कुशल है। उसने अपने से अधिक पढ़े-लिखे और बुद्धिमान को अपना पति वरा था। फिर उस पति को पूर्ण स्वतंत्रता दे रखी है। इस लड़की ने अपने से कम पढ़े-लिखे और प्रकृति में उजड्ड पति को वरा है और रोष कर रही है अपनी माँ पर कि उसने इसे कुरूप क्यों बनाया है।"

"देखो ऊषा बहन!" भानुमित्र ने बात समझकर कहा, "प्रत्येक बात में गुण-अवगुण दोनों होते हैं। तुम अपने में गुणों का प्रयोग करो तो निश्चय तुम मनवांछित फल पाओगी।"

"कौन गुण है मुझमें? आज इस जग में पढ़ने-लिखने को कौन पूछता है?"

"तुम ज्योतिष पढ़ी हो, बहन! क्यों नहीं इसमें अभ्यास बढ़ातीं? इस कार्य में कुछ निपुणता प्राप्त करो तो जीवन में मनोरंजन भली-भाँति होने लगेगा। हमारी अयोध्या में ही चली आओ तो तुम्हें इतना काम दिलवा दूँगा कि जीवन की सुध-बुध ही भूल जाओगी।"

भानुमित्र की बात को सबने हँसी में उड़ा दिया और प्रभा तो बड़ी बहन के ज्योतिषी बनने के विचार पर ताली पीट हँसने लगी। परंतु ऊषा के मस्तिष्क में अयोध्या जाकर रहने की बात समा गई। इस समय तो वह चुप कर रही, परंतु पृथक् में भानुमित्र से इस विषय में राय करने का निश्चय ठान बैठी।

प्रभा का मन बैठता जाता था। वह एक ओर तो अपनी मनोकामना की पूर्ति में भानुमित्र का उसे बहन कहना बाधा समझने लगी और दूसरी ओर ऊषा को अयोध्या जाने का निमंत्रण सुन, बहन से ईर्ष्या करने लगी थी। इससे मुख फुला चुपचाप बैठी रह गई।

अल्पाहार के पश्चात् गणपति, भानुमित्र से पुनः नगर-वधू के आवास में रात को मिलने को कह, उसे वहीं छोड़ अपने काम पर चला गया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रभा भी उठकर अपने आगार में चली गई। अन्य लोग भी चले गए, परंतु ऊषा और उसकी माँ वहाँ बैठी रह गईं। भानुमित्र ने काश्मीर से आए पत्र में अपनी माता की ओर से ऊषा की माता सें सस्नेह नमस्कार लिखा सुनाया। इस पर भानुमित्र के माता-पिता की बातें होने लगीं। फिर भानुमित्र के विवाह की चर्चा भी चली तो उसने कह दिया, "माता जी! जब विवाह होगा तो आपको, ऊषा के पिताजी को और फिर दोनों बहनों को बिना बुलाए थोड़े ही होगा।" इससे माँ के हृदय का संशय दूर हो गया और प्रभा के वहाँ से चले जाने का कारण भी स्पष्ट हो गया। ऊषा को इससे प्रसन्नता हुई और प्रभा के कटाक्ष ने जो उसके मन में उसके लिए द्वेष-भाव उत्पन्न कर दिया था, वह मिट गया।

उसने माँ के सामने ही पूछा, "भैया! मैं कब अयोध्या आऊँ?"

"कभी भी आ सकती हो, बहन! अपने में धैर्य, संतोष और दूरदर्शिता उत्पन्न करो तो सब काम सुगम हो जाएँगे। कोई अचंभे की बात नहीं कि तुम्हारा वरा हुआ पति तुम्हें मिल जाए। पार्वती ने देव-पति तपस्या के बल पर ही पाया था।"

: 9 :

भानुमित्र का वैशाली आने का एक प्रयोजन महाप्रभु कल्याण से मिलना भी था। उसकी महाप्रभु से चिट्‌ठी-पत्री चल रही थी, जिसमें वह अपना नाम 'आनंद' लिखता था। वास्तविक आनंद रिपुदमन का एक बौद्ध सहायक था, जो अयोध्या के कारावास में बंदी था।

अयोध्या के ऋण संबंधी कार्य को समाप्त कर भानुमित्र ने अपना ध्यान महाप्रभु की ओर किया। वैशाली में पाँच छोटे-छोटे विहार थे। ये सब एक ही अध्यक्ष के नियंत्रण में थे। यह अध्यक्ष मुख्य विहार में, जो गंगापुर के मार्ग पर लक्ष्मी पंथागार और नगर द्वार के मध्य में बना था, रहता था। विहार मार्ग से कुछ हटकर जंगल में था।

एक बड़ा-सा अहाता था, जिसके चारों ओर दस हाथ ऊँची मिट्‌टी की दीवार बनी थी। भीतर जाने को पक्की ईंटों का एक ऊँचा-सा फाटक था, जिसमें दृढ़ लकड़ी के किवाड़ लगे थे। अहाते के बाहर, फाटक के एक ओर एक अच्छा लंबा-चौडा चैत्य बना था। यह बाहर से आने वाले उपासकों के ठहरने का स्थान था। इसमें कई आगार थे। एक याचक और कुछ सेवक भी इसमें रहते थे। ये लोग चैत्य में ठहरने वाले उपासकों की सेवा-शुश्रूषा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के लिए थे। फाटक की रक्षा के लिए प्रतिहार भी इस चैत्य के एक आगार में ही रहते थे।

फाटक प्रायः बंद रहता था। फाटक में एक खिड़की थी, जो दिनभर खुली रहती थी और सूर्यास्त के समय बंद कर दी जाती थी। खिड़की के बाहर एक प्रतिहार सदैव बैठा रहता था, जो बिना स्वीकृति किसी को भीतर नहीं जाने देता था।

भानुमित्र खिड़की पर पहुँचा तो प्रतिहार ने कार्य पूछा। भानुमित्र ने बताया, "मैं महाप्रभु कल्याण से मिलने आया हूँ।"

"क्या नाम है आपका?"

"आनंद। अय़ोध्या से।"

प्रतिहार ने भानुमित्र को चैत्य में प्रतीक्षा करने को कहा और एक दूसरे सेवक को संदेशा समझा भीतर भेज दिया।

चैत्य के आगारों के बाहर बाँस और फूस का छाजन बना था। उसके नीचे दो चारपाइयाँ रखी थीं। भानुमित्र वहाँ जाकर खड़ा हो गया। एक लड़की हाथ में एक लंबी-सी छड़ी लिए वहाँ खड़ी थी। भानुमित्र का ध्यान उसकी ओर नहीं था, परंतु वह इस भले आदमी को खड़े देख रही थी। लड़की ने कहा, "भन्ते! बैठियेगा नहीं?"

भानुमित्र को कुछ ऐसा प्रतीत हुआ कि उसने यह स्वर कहीं सुना है। उसने ध्यान से लड़की की ओर देखा। वह सिर से बिना वस्त्र के थी। उसके सिर के पीछे बड़ा-सा जूड़ा, उसके लंबे बालों का सूचक स्पष्ट दिखाई दे रहा था। छोटा-सा लंबा मुख परंतु चौड़ा मस्तक, मोटी-मोटी आँखें और लंबी बरौनियाँ, पतली गोल नाक और पतले अधर, लंबी गर्दन तथा गोल पतली भुजाएँ, अति सुंदर नख-शिख थे। शरीर का रंग गन्दमी था, परंतु त्वचा में विशेष प्रकार की चमक थी। छाती अभी उभरनी आरंभ ही हुई थी, इससे लड़की की आयु चौदह-पंद्रह वर्ष से अधिक प्रतीत नहीं होती थी।

यह सब सौंदर्य अधमैली चोली और लहँगे से ढँपा था। नंगे पाँव थी, जिसमें बारीक चाँदी की कड़ियाँ थीं। पाँव छोटे-छोटे और सुकुमार दिखाई देते थे।

भानुमित्र को अपनी ओर ध्यान से देखते हुए पा पहले तो उसकी आँखें भूमि की ओर झुक गईं। पश्चात् उसने उसकी ओर देखकर पूछा, "क्या देख रहे हो, भन्ते?"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भानुमित्र ने इतनी सुकुमारी को यह कह कि उसका रूप-लावण्य देख रहा है, डराना उचित नहीं समझा। इससे उसने पूछा, "क्या नाम है तुम्हारा?"

"प्रचला। आप बैठ जाइए। प्रतिहार को आने में समय लगेगा। महाप्रभु उपासना करा रहे हैं। जब तक वे उपासना से नहीं उठते, तब तक आपको प्रतीक्षा करनी होगी।"

प्रचला का नाम सुन भानुमित्र को स्मरण हो आया कि उसने लड़की को, काले साये की भाँति, अपने पर पानी डालते देखा था। यह उस दिन था, जब वह मद्यपान से अचेत नगर-वधू के कर्मचारियों से सड़क के किनारे फेंक दिया गया था। उस समय उसने केवल शरीर की बाहरी रेखा ही देखी थी। इसी से वह देखी हुई प्रतीत हो रही थी। इस स्मृति से उसके मन में लड़की के विषय में अधिक जानने का कौतूहल उत्पन्न हो गया। वह एक चारपाई पर बैठ गया। लड़की उसके सम्मुख भूमि पर बैठ गई। भानुमित्र ने दूसरी चारपाई की ओर संकेत कर कहा, "वहाँ क्यों नहीं बैठतीं? नीचे भूमि पर बैठ गई हो?"

"हम सेवक हैं, भन्ते! बड़े लोगों के बराबर नहीं बैठ सकते।"

"तुम किसकी लड़की हो?"

"किसी की भी नहीं।" इतना कह वह हँस पड़ी।

हँसने से उसकी आँखों में विशेष आर्द्रता आ उपस्थित हुई, फिर एकदम चुप कर वह अत्यंत दयनीय दृष्टि से भानुमित्र की ओर देखने लगी।

"क्या बात है, प्रचला?"

"मेरे कहने का अभिप्राय है कि मैं अपने माता-पिता को नहीं जानती। कालमेघ कहता है कि वह मेरा पिता है। मैं जानती हूँ कि वह नहीं है और यही कहती हूँ। इस पर सब मुझे पगली कहते हैं।"

"तुम कैसे जानती हो कि कालमेघ तुम्हारा पिता नहीं है?"

"आपने उसे देखा है?"

"नहीं।"

"वह अब बाजार गया है, नहीं तो उसे देखते ही कहते कि वह मेरा पिता नहीं है।"

इतने में उस प्रतिहार के साथ, जो भानुमित्र की सूचना देने भीतर गया था, भूधर बाहर आया और महाप्रभु से मिलाने के लिए, अपने विचार से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आनंद को भीतर ले जाने के लिए, छाजन के नीचे पहुँचा। प्रचला को वहाँ से भगा देने के लिए डाँटकर बोला, "ओ पगली! क्या कर रही है यहाँ?"

"भूधर भैंसे की कथा..."

इतना सुनते ही भूधर उसे मार भगाने को लपका, परंतु भानुमित्र ने उसे बीच में ही रोककर कहा, "मैंने उसे बिठाया है।"

"तुम कौन...?"

भूधर ने इतना कहते-कहते भानुमित्र को ध्यानपूर्वक देखा और देखकर अवाक्मुख खड़ा रह गया। उसके मुख से बहुत कठिनाई से ये शब्द निकले, "तुम...? तुम आनंद...?"

इतना कहते हुए वह अपनी आँखें मलने लगा। प्रचला उठकर जाने लगी तो भानुमित्र ने कहा, "प्रचला! ठहरो। तुमसे अभी और बातें करनी हैं।" प्रचला पुनः भूमि पर बैठ गई और बोली, "मैं इस भैंसे से डरती थोड़े हूँ?"

भानुमित्र की हँसी निकल गई।

"तुम्हारा नाम आनंद है या भा...।"

भानुमित्र खिलखिलाकर हँस पड़ा और बोला, "उसे तो तुमने मकान में जलाकर भस्म कर दिया था न? मैं अब आनंद हूँ।"

"पर तुम आज तक रहे कहाँ हो?"

"आकाश से टपक पड़ा हूँ। परंतु सेठजी! डरिये नहीं। मैं आप पर अभियोग नहीं चलाऊँगा। उस समय आपने भूल की थी। मैं वास्तव में वैशाली का हितचिंतक था और आप लोग भी तो वैशाली का हित ही कर रहे थे न?"

भूधर के माथे पर पसीने की बूँदें झलकने लगी थीं। भानुमित्र उसको देख रहा था। वह यह जानना चाहता था कि क्या इसको उसके अवध का महामात्य होने का ज्ञान है या नहीं। इससे उसने कहा, "देखिए सेठ शिरोमणि! मैं बाहुक देश का रहने वाला हूँ। वहाँ फारस वालों ने आक्रमण करने आरंभ कर दिए हैं। अपने देश की रक्षा के लिए वैशाली के गणपति से सहायता लेने आया था। उन्होंने सहायता नहीं दी। इससे मेरे मन में आया कि उनके विरोधी दल से मिल जाऊँ। परंतु आपको विश्वास नहीं आया और एक सेट्ठी भाई का मकान जला दिया तथा मेरे एक भृत्य को जलाकर भस्म कर दिया।"

इतने में भूधर ने सचेत हो बात बदल कहा, "महाप्रभु उपासना कर रहे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं। एक घड़ी-भर में उससे निपटकर आपसे मिलेंगे।''

इतना कह प्रचला से बोला, ''ओ पगली! इनको ले जाकर महाप्रभु के आगार में बिठाओ।''

यह कहकर भूधर ने हाथ जोड़कर नमस्कार की और चैत्य से सड़क की ओर चल पड़ा, जैसे कि वह वहाँ से भयभीत हो जा रहा है। उसे जाते देख प्रचला ने भानुमित्र से कहा, ''चलो, आपको ले चलूँ। पर यह आपको देख डर क्यों गया है?''

''मैं नहीं जानता।'' भानुमित्र ने यह कह प्रचला के साथ विहार में प्रवेश किया।

: 10 :

द्वार लाँघ भानुमित्र ने देखा कि एक विस्तृत मैदान है। मैदान के दोनों बाजुओं में बहुत-से गृह बने हुए हैं। मैदान के बीच में एक ऊँचा चौंतरा है, जिस पर चढ़ने के लिए चारों ओर सीढ़ियाँ बनी हैं। चौंतरे के ऊपर एक मंदिर की रूपरेखा का गृह बना था।

इस समय बहुत-से लोग वहाँ पीत तथा श्वेत उत्तरीय वसन पहने, मुँडे सिर वाले बैठे थे।

प्रचला भानुमित्र के साथ-साथ चल रही थी। भानुमित्र ने कहा, ''यह तो बहुत सुंदर स्थान है।''

''हाँ। यह उपासना हो रही है।''

''इसमें क्या करते हैं?''

''चुपचाप बैठे रहते हैं। महाप्रभु अपने मुख में कुछ पढ़ते रहते हैं और भिक्षु-भिक्षुणियाँ आँखें मूँदे बैठी रहती हैं।'' इतना कह वह खिलखिलाकर हँस पड़ी।

''क्यों हँसी हो, प्रचला?''

इसका प्रचला ने उत्तर नहीं दिया। उसने बात बदल दी, ''आपका 'प्रचला' कहने का ढंग विचित्र है। यहाँ मुझे इस प्रकार कोई नहीं बुलाता।''

''कैसे बुलाते हैं तुम्हें, ये लोग?''

''आपने सुना नहीं भूधर भैंसे को? मुझे सब पगली कहते हैं।''

''पर तुम मुझे तो पगली नहीं दीखतीं।''

''यही तो मैं कहती हूँ। आप भले आदमी प्रतीत होते हैं।''

''ये बौद्ध-भिक्षुक भी तुम्हें ऐसा ही कहते हैं?''

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"इनकी बात छोड़ो। इनके विषय में जो कुछ न कहूँ सो ही ठीक है।"

"ओह!" भानुमित्र ने अचम्भा प्रकट करते हुए कहा।

इस समय मैदान पार कर ये चौंतरे के पीछे जा पहुँचे। वहाँ एक पृथक् गृह बना था। यह मंदिर वाले चौंतरे के पीछे कुछ अंतर पर था और मैदान के बाजुओं में बने गृहों से दूर पृथक् था।

प्रचला ने कहा, "यह महाप्रभु का आवास है।"

वह उसे गृह के भीतर ले गई और एक आगार में ले जाकर भूमि पर बिछी चटाई पर बिठा दिया। आगार के बीचोबीच चंदन की लकड़ी की एक चौकी रखी थी, जिस पर चटाई का एक टुकड़ा बिछा था। चौकी पर एक पुस्तक श्वेत वस्त्र में लपेटी रखी थी। आगार खाली था।

भानुमित्र बैठा तो प्रचला भी उसके सम्मुख बैठ उसका मुख देखने लगी। भानुमित्र भी इस श्रृंगार-शून्य सुंदर सुकुमारी को देख तृप्ति अनुभव कर रहा था। परंतु चंचल प्रचला से चुप नहीं रहा गया, "तो आप मुझे पागल नहीं समझते?"

"नहीं, बिलकुल नहीं। तुम तो बहुत ही अच्छी समझदार सुंदरी हो। मैं तो तुम्हें चिरकाल से जानता हूँ।"

"अब आप भी मुझे पागल बनाने लगे हैं। मैंने आपको कभी नहीं देखा।"

"तुम भूल गई हो, प्रचला! एक सायं चैत्य के बाहर, राजमार्ग के तट पर तुमने एक, सुरा से अचेत मनुष्य को पड़े देखा था। तुमने देखा कि एक सियार उसको सूँघ रहा है। यह समझ कि कहीं वह उसे, मृत शव समझ, खा न जाए, तुमने सियार को भगा दिया और उस अचेत व्यक्ति के सिर पर पानी का भरा घड़ा उँडेल, उसे सचेत कर दिया। वह अचेत पुरुष मैं ही था।"

"ओह! तो वह तुम थे? मुझे याद आ गया। पर इसे तो एक वर्ष के लगभग हो गया है।"

"तब तुमने कहा था कि तुम्हारा नाम प्रचला है और तुम चैत्य के पाचक की लड़की हो।"

"वह असत्य था। कालमेघ मेरा पिता नहीं है। मेरे माता-पिता कोई उच्च वर्ण के लोग हैं।"

"मेरा भी यही विचार है। मैं तुम्हारे माता-पिता को ढूँढ़ सकता हूँ।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"सत्य? तो शीघ्र पता करो। मैं तुम्हारी आभारी हूँगी।"

"परंतु मैं सोचता हूँ कि इससे लाभ क्या होगा? जिन माता-पिता ने तुम्हारा ध्यान तक नहीं किया, उनको जानकर क्या करोगी?"

इससे प्रचला गंभीर विचार में पड़ गई और फिर सोचकर बोली, "मैं समझती हूँ मेरा मान बढ़ जाएगा। मैं यदि किसी उच्च वर्ण के पुरुष को वरूँ तो वह मेरा मन करेगा।"

"प्रचलादेवी! तुम्हारे अज्ञात और शायद अनाचारी पिता के नाम से तुम्हारा रूप-लावण्य तुम्हारा अधिक मान कराएगा।"

"कौन रूप-लावण्य है मुझमें? आप कभी यहाँ की नगर-वधू को देखें तो आपको पता चले कि यहाँ कैसी-कैसी सुंदर स्त्रियाँ हैं। मेरी क्या गणना है उनमें?"

भानुमित्र ने उसकी मोटी-मोटी आँखों में देखते हुए कहा, "मैं समझता हूँ कि तुम्हें किसी ने भ्रम में डाल रखा है। तुम मृदुलादेवी से किसी प्रकार कम सुंदर नहीं हो।"

"आप भी मेरी हँसी करने लगे हैं?"

"नहीं देवी! मैं शपथ लेकर कहता हूँ कि तुम मृदुला से कम सुंदर नहीं हो कोई भी आँख रखने वाला पुरुष तुमसे विवाह कर अपने का भाग्यशाली मानेगा।"

"मुझे आपकी बात का विश्वास नहीं होता। सब मेरी हँसी करते हैं। शायद आपने नगर-वूध को देखा नहीं है।"

"तो मेरी शपथ पर भी तुम्हें विश्वास नहीं आया? मैं तो स्वयं तुमसे विवाह कर लेता, पर मैं कल अपने देश जा रहा हूँ।"

प्रचला ने त्योरी चढ़ाकर कहा, "तुम विवाह कर लेते मुझसे? क्यों झूठ बोलते हो, ठाकुर? निर्धन अनाथ जान हँसी करना ठीक नहीं।"

प्रचला की आँखों में आँसू छलक आए। भानुमित्र सोच रहा था कि राका से विवाह का वचन दे चुका है, मृदुला से विवाह की स्वीकृति दे चुका है और अब इस बालिका को वही बात कह रहा है। यह कहाँ तक चलेगा?

इस पर भी वह देख रहा था कि यह लड़की राका और मृदुला से कम सुंदर नहीं है। परंतु वह सर्वथा एक जंगली जानवर की भाँति है। अब युवा हुई है और संतानोत्पत्ति के लिए अपना वर ढूँढ़ रही है। यदि इसे कोई उचित वर न मिला तो किसी कुरूप को ही आत्मसमर्पण कर देगी और फिर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जन्म-भर ठंडी साँसें लेगी।

भानुमित्र को चुप देख प्रचला ने व्यंग्य से कहा, "ठीक है न! मैं तो पहले ही समझ गई थी कि आप भी मेरी हँसी कर रहे हैं।"

अब वह अपनी आँखें पोंछने लगी थी। भानुमित्र ने उसके उदास मुख को देखकर कहा, "देखो प्रचला! मैं जैसा हूँ, वैसे को तुम वरोगी?"

"कैसे हो तुम?"

"मेरा एक विवाह पहले हो चुका है।"

"इस पर भी आप मुझसे विवाह करेंगे?"

"हाँ, यदि तुम स्वीकार करो तो।"

"मैं इसी दम आपके साथ आपके देश चलने को तैयार हूँ।"

भानुमित्र की हँसी निकल गई। फिर बोला, "पर तुम्हें यहाँ से जाने कौन देगा?"

"मुझे कौन रोकेगा? यह कालमेघ? मैं उसकी परवाह नहीं करती।"

"यह महाप्रभु जो हैं।"

प्रचला इस बात को सुन गंभीर विचार में पड़ गई। फिर कुछ सोचकर बोली, "परंतु क्या तुम मुझसे विवाह कर लोगे?"

"हाँ।"

"मेरी मान-प्रतिष्ठा करोगे?"

"हाँ-हाँ।"

"उतनी ही जितनी अपनी पहली स्त्री की करते हो?"

"हाँ, शपथ लेकर कहता हूँ।"

"तो मैं महाप्रभु और कालमेघ को बिना बताए तुम्हारे साथ चलूँगी। मुझे बताओ, मैं तुम्हें कहाँ मिलूँ?"

भानुमित्र ने सोचकर बताया, "उसी स्थान पर, जहाँ तुमने मेरे सिर पर पानी उँडेल, मुझे सचेत किया था। कल सूर्योदय से पूर्व।"

"तुम मुझको वहाँ प्रतीक्षा करते पाओगे।"

भानुमित्र ने यह कहते हुए प्रचला की मोटी-मोटी आँखों में विचित्र चमक देखी।

: 11 :

इसके पश्चात् दोनों गंभीर हो अपने-अपने मन में सोचने लगे। भानुमित्र प्रचला के आकर्षण को सहन करने में अपने को अशक्त पा रहा था। प्रचला

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सोच रही थी कि यह स्वप्न है या सत्य?

इस समय दो भिक्षुओं के साथ महाप्रभु आगार में आए। गृह के बाहर भिक्षुओं के आपस में बातें करने का शब्द आ रहा था। महाप्रभु को आए देख प्रचला उठ खड़ी हुई। इससे भनुमित्र ने अनुमान लगाया कि उन तीनों में महाप्रभु भी हैं। फिर एक के मुख पर गंभीर और अधिकारपूर्ण मुद्रा देख महाप्रभु को अन्य दो से पृथक् करना कठिन नहीं था। भानुमित्र ने उठकर नमस्कार किया। महाप्रभु ने कहा, ''बुद्धं शरणं गच्छामि।''

भिक्षुओं ने चौकी पर रखी पुस्तक को उठाकर एक ओर रख दिया और महाप्रभु चौकी पर बैठ गया। उसके बैठने पर भानुमित्र और दोनों भिक्षुक बैठ गए। प्रचला खड़ी रही। बैठते ही महाप्रभु ने उसकी ओर देखकर पूछा, ''क्यों खड़ी हो यहाँ?''

''भूधर सेठ ने इस ठाकुर के साथ भेजा था।''

''तो अब भाग जाओ। देखो, कालमेघ आए तो मेरे पास भेजना।''

प्रचला ने उत्सुकता से भानुमित्र की ओर देखा, परंतु वह दत्तचित्त हो महाप्रभु को देख, उसके स्वभाव और प्रकृति का अनुमान लगा रहा था। प्रचला भानुमित्र को अपनी ओर न देखने पर, द्वार के बाहर निकल विलुप्त हो गई। पश्चात् महाप्रभु ने साथ आए दोनों भिक्षुओं को भी जाने को कह दिया, ''तुम लोग जाओ, फिर आना। मुझे इस भद्र पुरुष से कुछ काम है।''

जब वे बाहर निकल गए और आवाज की पहुँच से दूर हो गए तो महाप्रभु ने माथे पर त्योरी चढ़कर कहा, ''तुम आनंद प्रिय नहीं हो।''

''भगवान्, यह मेरा जन्म-नाम है। पीछे गुरु ने नाम बदल दिया था और जब कभी मुझे कोई गुप्त नाम से कार्य करना होता है, तो इसी नाम से करता हूँ।'' भानुमित्र ने उत्तर तो दे दिया, परंतु अपना भेद खुल जाने से वह लज्जित हो संकोच में पड़ गया।

महाप्रभु ने समझ लिया कि वार्त्तालाप में उसका पक्ष ऊँचा हो गया है। उसने अपनी विजय को पूर्ण करने के लिए कहा, ''परंतु तुम्हारा जो प्रत्यक्ष रूप है; उससे मैं तुसमे खुलकर बात नहीं कर सकता। अवध के महामात्य के विरुद्ध अवध के महामात्य से ही परामर्श करूँ, मुझे यह ठीक नहीं जान पड़ता।''

भानुमित्र ने समझ लिया कि उसके आने का प्रयोजन विफल गया है। इस पर भी अपनी बात के पक्ष में युक्ति देने के लिए हँसकर कहने लगा,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"इससे तो यह सिद्ध होता है कि मैंने यहाँ आकर ठीक ही किया है। आपका यह कहना कि ऐसी बातें चिट्ठी-पत्री में नहीं लिखी जा सकतीं, अब समझ में आने लगा है। आपको यह बात अपने मस्तिष्क में स्पष्ट कर लेनी चाहिए कि आप महामात्य का विरोध कर रहे हैं या अवध राज्य का। महामात्य ने आपका क्या बिगाड़ा है?"

"महामात्य भानुमित्र ने हमारे पूर्ण प्रयास को मिट्टी में मिला दिया है। रिपुदमन को आत्मघात करने पर विवश किया है। यहाँ के अर्थ-मंत्री को देश से निर्वासित कराया है। भूधर को ऐसा भयभीत किया है कि अब वह किसी कार्य के योग्य नहीं रहा। तुमने हमें परास्त किया है, पर एक बात तुमको समझ लेनी चाहिए कि अब हम तुम्हारे से ठगे नहीं जा सकते।"

"भगवन्! जब मनुष्य त्रसित होता है तो ऐसी ही बातें करता है। उसके लिए वास्तविक तत्त्व तक पहुँचने में कठिनाई उपस्थित हो जाती है।"

"देखिए, मैं आपको समझाऊँ। रिपुदमन किसी सिद्धांत का पोषक नहीं था। उसका प्रयत्न स्वार्थ निमित्त था। वह स्वयं राजा बनना चाहता था। मैंने उसको निकाल, क्षेत्र सिद्धांतों के संघर्ष के लिए तैयार कर दिया है। साथ ही मैंने अपने को देवधर्मा और महाराज अवध का विश्वासपात्र बना लिया है। अब मैं जो चाहूँ कर सकता हूँ। मैं आपकी योजना का विरोध तो करूँगा नहीं। हाँ, यदि आप मुझे विश्वास में लेंगे तो सफलता निश्चित ही है। अपने वचन की सत्यता के प्रमाण में मैं आपको यह बताना चाहता हूँ कि मेरा महाराज अवध से निजी द्वेष है।"

"मैं जानता हूँ। महारानी मल्लिका तुम्हारी भार्या बनने वाली थीं। इस पर भी मैं यह देख रहा हूँ कि मैलंद पंडित की लड़की राका तुम्हें भेंट में देकर तुम्हारी हानि की पूर्ति की जाएगी। इधर वैशाली तुम्हें मृदुला भेंट में देगा। इतने प्रलोभनों में तुम हमारे पक्ष की बात करोगे, मुझे संदेह है।"

भानुमित्र इस भिक्षु को वस्तुस्थिति का इतना ज्ञान देख चकित रह गया। वह समझ गया कि यह आदमी राज्य का महामात्य बनने के योग्य है; परंतु राज्य का विरोधी होने पर अत्यंत भयंकर सिद्ध होगा। इससे उसने इस व्यक्ति से बनाए रखने में ही देश का हित समझ अपने कंधों को ऊपर उठा अपने मन का असंतोष प्रकट कर कहा, "ये प्रलोभन मुझे अपने निश्चय से डिगा नहीं सकते, परंतु आपको विश्वास दिलाना कठिन हो रहा है।"

इस पर महाप्रभु कुछ काल तक गंभीर विचार में पड़ा रहा। भानुमित्र

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसके मुख पर बदलते भावों को पढ़ने का यत्न करता रहा। एकाएक महाप्रभु ने भानुमित्र की आँखों में देखते हुए कहा, ''एक बात तुम समझ गए होगे कि तुम हमको धोखा नहीं दे सकते। यह बात ठीक है कि तुम चतुर हो और हमारे प्रयत्नों को समझ गए हो। तुमने क्यों मुझे दंड नहीं दिलाया, मैं नहीं जानता। शायद मुझे और अधिक दोषी सिद्ध कर मृत्युदंड दिलाने का विचार है। जब इतना परस्पर अविश्वास है तो कैसे हम एक-दूसरे को अपना रहस्य बता सकते हैं।''

''तो ठीक है भगवान्! हमारा मार्ग एक ओर जाने वाला होता हुआ भी एक नहीं है। मैं समझता हूँ कि अधिक वार्त्तालाप से कुछ लाभ नहीं।''

महाप्रभु ने हाथ ऊँचा कर आशीर्वाद देते हुए कह दिया, ''बुद्धं शरणं गच्छामी... ।''

: 12 :

भानुमित्र ने जीवन में यह दूसरी पराजय खाई थी। पहले मल्लिका के विषय में और अब महाप्रभु को जाल में फँसाने में। यह भिक्षुक चट्टान की भाँति उसके विरोध में खड़ा था और वह उसके विरुद्ध कोई भी लिखित प्रमाण प्राप्त नहीं कर सका था। न ही कोई साक्षी मिल सका था, जो महाप्रभु कल्याण पर राज्य में विद्रोह खड़ा करने का दोष लगा सके।

भानुमित्र एक सिद्धांत को मानता था। वह यह कि बिना न्यायालय में किसी को दोषी सिद्ध किए हुए वह दंड नहीं देगा। उसके पास न्यायालय में रखने योग्य कोई प्रमाण नहीं था। अतएव उदास चित्त वह विहार से बाहर निकल आया। जब फाटक से निकल राज्य-मार्ग की ओर चला तो प्रचला मार्ग पर उसकी प्रतीक्षा कर रही थी। उसने भानुमित्र के पास आ कहा, ''कल सूर्योदय से पूर्व राज-मार्ग के तट पर प्रतीक्षा करूँगी।''

भानुमित्र का विचार भंग हुआ। उसने प्रचला के कहने का अर्थ समझा तो सिर हिलाकर कहा, ''देखो, देर न करना। प्रकाश होने से पूर्व हमें गंगा पार कर लेनी चाहिए।''

महामात्य नगर की ओर जाता हुआ विचार कर रहा था कि महाप्रभु के गुप्तचर बहुत चतुर हैं उसके मल्लिका के प्रति मनोभावों का इसको ज्ञान होना बहुत ही विचित्र बात थी। कहाँ से और कैसे उनको जान गया है, यह विचार करने की बात थी। फिर मृदुला से उसके संबंध का भी इसे ज्ञान था। इतना विचारकर भानुमित्र मार्ग पर चलते-चलते रुक गया। उसे एक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बात सूझी और वह उसको कार्य में लाने की योजना बनाने लगा।

उसी सायंकाल वह गणपति और मृदुला से मिलने के लिए विनोदभवन में गया। गणपति अभी नहीं आए थे। अतएव चंपा की खोज में एक दासी को भेज अपने आगार में चला गया। उसका संदेश पा चंपा और मृदुला दोनों आईं।

महाप्रभु से मिलने के पश्चात् भानुमित्र ने निश्चय कर लिया था कि उसके गुप्तचरों के जाल को तोड़ डालेगा। मृदुला से उसके संबंध को मृदुला के अतिरिक्त चंपा जानती थी। इससे उसकी परीक्षा आवश्यक हो गई थी। दोनों को आए देख बहुत आदर से उनको बिठाया। मृदुला के कुछ पीछे हटकर चंपा बैठ गई।

"चंपादेवी! तुम्हारा इतिहास जानने की लालसा मन में लिए हुए मैं यहाँ से जा रहा हूँ।"

"कब जा रहे हैं, प्रभु?"

"कल मध्याह्न के पश्चात्। यहाँ आने का अब निकट में अवसर नहीं मिलेगा।"

"परंतु प्रभु! मेरा इतिहास कुछ अधिक रोचक नहीं है। एक निर्धन की लड़की किसी सेठ की वासना का भोग बन अपने रूप को बेचने हेतु रूप की मंडी में आ बैठी है।"

"परंतु रूप के ग्राहक तो वैशाली में कम हैं न?" भानुमित्र ने कनखियों से उसके मुख की ओर देखते हुए पूछा, "इस कारण रूप-विक्रय के साथ कुछ अन्य कार्य भी करना पड़ता है। ठीक है न, देवी?"

चंपा का मुख विवर्ण हो गया। भानुमित्र इतना ही जानना चाहता था, परंतु अभी उसे डराना नहीं चाहता था। इस कारण तुरंत बात बदलकर बोला, "क्या आयु होगी चंपा, तुम्हारी?"

चंपा ने आँखें नीची कर धीमे स्वर में कहा, "पच्चीस वर्ष से दो मास कम।"

"अभी तो रूप-नगर में तुम्हारा दाम लग सकता है। फिर भी क्या तुम मेरे घर में चलोगी? वहाँ तुम्हें मेरी धर्म पत्नी की, गृह-प्रबंध में सहायता करनी होगी।"

चंपा का मुख इस समाचार से खिल उठा था। इस पर भी अपने उद्गारों को दबाते हुए उसने कहा, "यह तो मृदुला दीदी की इच्छा पर है।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"इनकी स्वीकृति तो मैं ले लूँगा।" भानुमित्र ने मुस्कराकर मृदुला की ओर देखते हुए कहा, "तुम अपनी ओर से तो तैयार हो न?"

चंपा के मुख पर प्रसन्नता की लालिमा छा गई। इस समय भानुमित्र ने कहा, "अच्छी बात है। मृदुला देवी तुमसे इस विषय में बात करेंगी। अब तुम जा सकती हो, मुझे इनसे कुछ काम है।"

चंपा लंबी साँस ले कर आगार से बाहर चली गई। भानुमित्र उसके पीछे-पीछे बाहर चला आया। संकेत से चंपा को समीप बुला कहने लगा, "देखो चंपा! मेरे मन के भावों को तुम समझती हो। मृदुलादेवी से नहीं कहना। मैं तुम्हें अपने रनिवास की स्वामिनी बनाने के लिए ले जा रहा हूँ।"

"दासी मरण-पर्यन्त आभारी रहेगी।" इतना कह चंपा एक ओर को चली गई। भानुमित्र उसे जाते देखता रहा। जब वह दृष्टि से ओझल हो गई तो वह आगार में लौट आया। मृदुला विस्मय में भानुमित्र को यह नाटक करते देखती रही। भानुमित्र उसके भावों को समझ गया और उसने उसका विस्मय तुरंत निवारण कर दिया। उसने पूछा, "देवी! यह दासी यहाँ कब से कार्य करती है?"

"मेरे यहाँ आने से भी पूर्व से है। अन्य दासियों से अधिक सुंदर, सुशील और शिक्षित जान मैंने इसे अपनी सेवा में रख लिया था। इसका प्रेम या यूँ कहो कि इससे प्रेम, एक साधारण रूपरेखा के व्यापारी कर्णदेव को है। वह प्रायः नगर के बाहर रहता है। जब भी वह नगर में होता है तो इससे मिलने आता है। दोनों बहुत सभ्य और सुसंस्कृत विचारों के हैं। यह उसे यहाँ छोड़ आपके संग नहीं जाएगी।"

"देवी! यही तो तुम्हें पता नहीं है। यह मेरे साथ जाएगी और कर्णदेव का व्यापार भी अयोध्या में बढ़ जाएगा। ये दोनों एक संस्था की ओर से गुप्तचर हैं, जो तुम्हारा भेद जानने के लिए यहाँ नियुक्त हैं।"

"अब इसको मैरी देखभाल करने का आदेश है। इस कारण वह मेरे साथ चलने को बहुत पसंद करेगी। परंतु मैं इसे साथ नहीं ले जा रहा।"

मृदुला इस समाचार को सुन हैरान रह गई और प्रसन्न भी हुई। भानुमित्र ने अपने भावों को समझाने के लिए कहा, "मैं इसे तुम्हारे यहाँ भी नहीं रहने दूँगा। मैं गणपतिजी से कह जाऊँगा और वे कल मध्याह्न के समय इसको तुम्हारे यहाँ से मेरा नाम ले मँगवा लेंगे और उचित स्थान पर भिजवा देंगे। कर्णदेव इसकी खोज में अयोध्या आएगा। उसे मैं चंपा के पास भेज

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दूँगा। तुम उसे कल मध्याह्न से पूर्व अपना सामान बाँध तैयार रहने का आदेश दे देना।''

मृदुला चंपा पर बहुत भरोसा करती थी और उसे ही इस प्रकार धोखा देते देख अत्यंत दुःख अनुभव कर रही थी। भानुमित्र ने कहा, ''देवी! मैं कल सूर्योदय से पूर्व ही यहाँ से जा रहा हूँ। अब भेंट शीघ्र नहीं हो सकेगी। इस कारण नमस्कार कहने के लिए आया हूँ।''

मृदुला ने इससे पुलकित हो कहा, ''आर्य! स्मरण रखिएगा। यह दासी आपके नाम की माला जपती रहेगी।'' इतना कह उसने भानुमित्र के चरणों पर अपना शीश रख दिया।

भानुमित्र ने उसे उठा अपने अंग से लगा लिया। मृदुला की आँखों से आँसू बह रहे थे। भानुमित्र ने उसके मुख पर चुंबन दे उसे अपने से पृथक् कर कहा, ''बस, अभी हमारे मिलन की यही सीमा रहेगी, देवी!''

''तुम्हें अधीर नहीं होना चाहिए। समय व्यतीत होते देर नहीं लगती। मुझे पूर्ण आशा है कि तुम्हारी तपस्या अपना फल लाएगी। हाँ, एक समाचार तुम्हें बताना चाहता हूँ। वैशाली के कीचड़ में एक पंकज लगा देख आया हूँ। उसे उखाड़ लिए जा रहा हूँ। यह इस कारण कि उस रात तुमने मुझे मन बहलाने की अनुमति दे दी थी।''

''लो, अब मैं चला। एक बात स्मरण रखना। इस पंकज के विषय में अभी किसी से नहीं कहना और चंपा को मेरे जाने का ठीक समय नहीं बताना। उसे तो मध्याह्न का समय देना ही ठीक रहेगा।''

इतना कह भानुमित्र ने एक बार पुनः मृदुला से आलिंगन किया और पृथक् हो आगार से बाहर निकल गया। वह गणपति के आगार में जा पहुँचा।

: 13 :

भानुमित्र वैशाली राज्य के पंथागार में गुप्त नाम से ठहरा हुआ था। उसने अपना गुप्त नाम 'आनंद प्रिय' बताया था। इस कारण दो-चार इने-गिने लोगों के अतिरिक्त और कोई नहीं जातना था कि अवध का महामात्य वैशाली में विद्यमान है।

जब से उसे विदित हुआ था कि चंपा द्वारा उसका रहस्य बौद्ध विहार में पहुँच गया है, वह पंथागार में नहीं गया। मध्यरात्रि तक विनोद-भवन में रहा, पश्चात् गणपति के भवन में जा पहुँचा। वहाँ एक प्रहर विश्राम कर गणपति के सेवक को भेज, अपना रथ मँगवा विदा हो गया। रथ और सारथी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अयोध्या से साथ आए थे।

नगर-द्वार से रथ निकलकर गंगापुरि की ओर चल पड़ा। जब रथ नगर-द्वार और लक्ष्मी देवी के पंथागार के मध्य पहुँचा, जहाँ प्रचला से मिलना नियत था, तो उसने रथ रुकवा मार्ग के एक ओर पेड़ों के नीचे खड़ा कर दिया। स्वयं रथ से उतर कुछ दूर पेड़ों के झुरमुट में जा प्रतीक्षा करने लगा। उसे वहाँ समीप प्रचला नहीं दिखाई दी। उसने चैत्य की ओर दृष्टि दौड़ाई। उधर से कोई आता नहीं दिखाई दिया। उसने समझा कि शायद प्रचला की नींद नहीं खुली। इससे कुछ काल तक प्रतीक्षा करना उचित समझ एक ओर खड़ा रह गया। कुछ काल पश्चात् उसे एक व्यक्ति रथ की ओर आता दिखाई दिया। वह छिपे-छिपे रथ के समीप पहुँचा। वह देखना चाहता था कि यह कौन व्यक्ति है। वह व्यक्ति बहुत लंबे ऊँचे डीलडौल वाला प्रतीत होता था। जब वह रथ को भली-भाँति देख चुका तो सारथी से पूछने लगा, "किसका रथ है?"

"गणपति महाराज का।"

"वे कहाँ हैं?"

"बताने की आज्ञा नहीं।"

"कब से खड़े हो, भाई?"

"दो घड़ी से ऊपर हो गए हैं।"

"किसी लड़की को यहाँ घूमते देखा है?"

सारथी हँस पड़ा और बोला, "इतने बीहड़ जंगल में ऐसे समय में लड़कियाँ घूमती हैं यहाँ?"

"तुम नहीं जानते, भाई! वह लड़की पगली है। रात को ऐसे ही घूमा करती है।"

"तो पगली की चिंता क्यों करते हो? जब थक जाएगी तो लौट आएगी।"

भानुमित्र ने समझ लिया कि पूछने वाला कालमेघ है और प्रचला घर से लापता है। इससे उसने यह भी समझ लिया कि प्रचला कहीं छिपी होगी और जब तक कालमेघ यहाँ खड़ा है, वह निकलेगी नहीं। अतएव उसे अब ले जाना असंभव है। इससे उसे निराशा हुई। जब वह सारथी से पूछने वाला पुरुष ढूँढ़ता हुआ चैत्य की ओर गया तो भानुमित्र जंगल से निकलकर रथ पर सवार हो गंगापुरि की ओर चल दिया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रथ वेग से गंगापुरि की ओर चला जा रहा था। लक्ष्मीबाई का पंथगार पीछे छूट गया था। इस समय भानुमित्र को ऐसा प्रतीत हुआ कि दूर मार्ग के बीचोबीच कोई खड़ा, रथ रोकने को कह रहा है। भानुमित्र ने सारथी को रथ रोकने को कहा, "ठहरो और देखो यह कौन है?"

"कोई लड़की मालूम होती है।"

"तो रोको।" प्रचला मार्ग के बीचोबीच खड़ी हाथ उठाकर रथ रोकने को ऊँचे स्वर से पुकार रही थी। रथ रुकते ही उसने रथ में भानुमित्र को पहचाना और लपककर रथ में सवार हो गई।

भानुमित्र ने कहा, "अरे! तुम यहाँ आ गई हो?"

"वहाँ कालमेघ मेरे पीछे पड़ा था।"

"हाँ, देखा था। अच्छा!" सारथी से बोला, "ले चलो।" प्रचला के हाथ में कपड़ों की एक गठरी थी। उसे वह अपने घुटने से नीचे दबा आराम से बैठ गई। भानुमित्र ने पूछा, "यह क्या लिए जा रही हो?"

"इसमें मेरे वे कपड़े हैं, जो मैंने उस समय पहने हुए थे, जब कालमेघ ने मुझे जंगल में पड़ा पाया था।"

"कालमेघ को तुम्हारे आने का कैसे संदेह हुआ? मैं तो उसे वहाँ देख निराश होता जा रहा था।"

"मैं समझती हूँ, इस पगली की कथा आपको विदित हो जानी चाहिए। मैं शायद दो-तीन दिन की थी जब कालमेघ मुझे जंगल में पड़ी देख उठा लाया था।"

"जब मैं आठ-नौ वर्ष की हुई तो मैंने एक दिन कालमेघ से पूछा कि मेरा रूप उससे क्यों नहीं मिलता। तो वह कहने लगा कि मैं अपनी माँ के ऊपर गई हूँ। वह बहुत सुंदर थी। इस पर मैंने पूछा कि मेरी सुंदर माँ ने उस कुरूप को क्यों वरा? तो इसका उत्तर उसने नहीं दिया।

"एक दिन यही प्रश्न मैंने भूधर से भी किया। वह चैत्य का प्रबंधक है। भूधर ने बहुत आनाकनी की; परंतु मैंने जब बहुत हठ किया तो उसने मेरे जन्म का रहस्य मझे बता दिया। भूधर ने मुझे यह भी बताया कि मेरे उस समय के कपड़े कालमेघ के पास रखे हैं।"

"मैंने एक दिन कालमेघ के संदूक की तलाशी ली। उसमें यह गठरी देखी। गठरी में सोने की एक कंठी थी। कंठी के नीचे एक छोटी-सी डिबिया बनी थी। वह डिबिया खोली तो उसमें एक बहुत सुंदर स्त्री का चित्र बना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

था। इससे मुझे विश्वास हो गया है कि वह मेरी माँ का चित्र है।

"अब मैं कालमेघ को कहने लगी कि वह मेरा पिता नहीं है। वह मुझे पगली कहने लगा। मैं भी पगली बनने में लाभ समझने लगी। मुझे काम-धंधे और रोटी बनाने से छुट्टी मिल गई।

"अब मैं पंद्रह वर्ष की हूँ। कालमेघ ने मेरा विवाह निश्चित कर दिया है। वह विहार के द्वार के एक प्रतिहार का लड़का, काला-कलूटा, छोटी-छोटी मिची हुई आँखें और सूखी-पतली टाँगें, अति बेडौल है, मेरे लिए ऐसा वर ढूँढ़ा है। मैंने उससे विवाह करने से इनकार कर दिया है। इस पर भी विवाह की तैयारी हो रही है। मैं महाप्रभु के पास गई और उन्हें बताया तो उन्होंने कहा, विवाह तो होगा ही। मैंने याचना की, तो उन्होंने मुझे भिक्षुणी बन जाने की राय दी।

"मेरा मन भिक्षुणी बनने को तैयार नहीं हुआ। मैंने उनसे कहा कि यदि मेरा विवाह इस छोकरे के साथ किया गया तो मैं आत्मघात कर लूँगी। इस पर उन्होंने मुझे पगली कह टाल दिया।

"मेरे विवाह की तिथि में एक सप्ताह शेष है। कल मुझे आप मिले और आपने कहा कि आप मुझसे विवाह कर लेंगे। मेरा मन पक्का हो गया।

"कल आप जब चले आए तो मैं आपके साथ आने की योजना बनाने लगी। मेरे मन में विचार आया कि अपने कपड़े साथ लेती चलूँ, जिससे कभी अपनी माँ का पता कर सकूँ। यह विचार कर मैंने कालमेघ का संदूक खोला और उसके कपड़ों के नीचे दबी यह गठरी निकालकर जंगल के कुएँ के पास घास में छिपाकर रख दी। यह कर जब घर लौटी तो कालमेघ नगर से लौट आया था और अपने खुले संदूक के समीप खड़ा विचार कर रहा था। मैंने उसे देखा तो मन कड़ा कर पूछा, 'क्या देख रहे हो?'

" 'उसने पूछा, 'तुमने खोला है इसे?'

"मैंने कह दिया, 'नहीं।'

"इस पर उसने डाँटकर कहा, 'तो किसने खोला है?'

" 'मैं क्या जानूँ?'

" 'इसमें एक गठरी थी।'

" 'मुझे नहीं मालूम।'

"इस पर वह नरम हो गया। कहने लगा, 'पगली! उसमें एक सोने की कंठी तुम्हारे विवाह पर देने के लिए ही रखी थी।'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"तो मैं क्या करूँ?"

"इस पर उसने मुझे घूरकर देखा। मेरा रंग उड़ गया। उसे कुछ संदेह हुआ तो छड़ी ले मेरे चूतरों पर दो-तीन लगाईं। मैं ऊँचे-ऊँचे रोने लगी। वह प्रतिहार, जिसके लड़के से मेरा विवाह होना निश्चित है, मेरे रोने का स्वर सुन आया तो कालमेघ को डाँटने लगा। कालमेघ ने उसे अपनी वस्तु गुम होने की बात नहीं बताई। मुझे छोड़ खाट पर जा लेट रहा। आजकल चैत्य में कोई उपासक नहीं ठहरा, इससे भोजन बनाने की आवश्यकता नहीं पड़ी। उसने भोजन नहीं बनाया। न मैंने खाया है, न ही उसने खाया।

"सायं होने पर मैं भी अपनी खाट पर लेट रही। वह दिन-भर और रात-भर लेटा रहा। सोया या नहीं, मैं नहीं जानती। मुझे नींद नहीं आई। मुझे डर था कि कहीं सो गई तो समय पर जाग न सकूँगी।

"रात के तीसरे प्रहर का घंटा बजते ही मैं उठी। वह अभी लेटा हुआ था। मैं चुपके से गृह के बाहर हो चैत्य से बाहर निकल आई। जब मैं मार्ग की ओर आ रही थी तो मैंने पीछे घूमकर देखा। मुझे कुछ ऐसा प्रतीत हुआ कि कालमेघ भी चैत्य के बाहर निकल रहा है। इस कारण मैंने कुएँ की ओर जाने के स्थान राज-मार्ग पर आ नगर की ओर जाना उचित समझा। कुछ दूर जा मैं एक पेड़ के पीछे छिपकर खड़ी हो गई। कालमेघ मार्ग पर पहुँच नगर की ओर चल पड़ा। वह अपने आगे-पीछे चारों ओर देखता जा रहा था। जब वह कुछ दूर चला गया तो मैं भागकर कुएँ की ओर गई और गठरी उठा लाई। कालमेघ नगर की ओर से वापस लौट आया और पुनः चैत्य की ओर गया। इस समय आपका रथ आया और एक ओर खड़ा हो गया। मैं आपकी ओर आने ही वाली थी कि रथ की आहट पा कालमेघ चैत्य की ओर से लौट आया और सारथी से कुछ पूछने लगा। मैं दूर पेड़ के पीछे खड़ी देख रही थी।

"कालमेघ को वहाँ से टलते न देख मैंने सोचा कि आपके मार्ग पर आगे निकल जाऊँ। सो वहाँ से जंगल-ही-जंगल मैं इधर को चल पड़ी। कुछ दूर आ सड़क पर निकल भाग खड़ी हुई ताकि चैत्य से इतनी दूर निकल आऊँ जितना संभव है।

"मैं समझती हूँ कि मेरी योजना सफल हुई है।"

भानुमित्र सोच रहा था कि यह अशिक्षित लड़की प्रभा आदि शिक्षित लड़कियों से अधिक चतुर है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पाँच

मनुष्य प्रकृति

: 1 :

बौद्ध विहार में प्रचला के लोप हो जाने से भारी हलचल मच गई। कालमेघ ने दिन निकलते ही यह समाचार सबको बताना आरंभ कर दिया था।

प्रातः की उपासना के पश्चात् भिक्षुणी कीर्ति महाप्रभु को इस समाचार से सूचित करने गई। महाप्रभु ने यह समाचार गंभीर भाव में सुना और कीर्ति के कहने के उत्तर में केवल 'बुद्धं शरणं गच्छामि' का मन्त्र उच्चारण कर दिया।

कीर्ति ने कहा, "भगवन्! इस प्रकार शांति-शांति कहने से कुछ नहीं बनेगा। लड़की को ढूँढ़ने का कुछ उपाय करना चाहिए। गणपति से जाकर कहना चाहिए।"

"और यदि गणपति स्वयं ही लड़की को उठाकर ले गया हो तो?"

इस सूचना से तो कीर्ति भौंचक खड़ी रह गई। वह गणपति से यह आशा नहीं करती थी। अपनी बात की पुष्टि में महाप्रभु ने कहा, "जब प्रचला लोप हुई है, उस समय गणपति का रथ गंगापुरि की ओर जाते देखा गया है।"

"यह तो अनर्थ हो रहा है, भगवान्!"

"शांति, देवी! प्रत्येक बात अपने समय पर परिपक्व होती है।"

कीर्ति जब लौटकर निवास-गृह में आई तो अन्य भिक्षुणियाँ महाप्रभु का विचार जानने को उनके पास एकत्रित हो गई। कीर्ति ने बताया, "महाप्रभु कहते हैं कि गणपति स्वयं पगली को हर ले गए हैं।"

"यह तो अनर्थ है। प्रचला की आयु बहुत छोटी है।" सब कह उठीं।

इन एकत्रित हुई भिक्षुणियों में एक नीलमणि थी। उसने कहा, "बेचारी बच गई है।"

सब घूमकर नीलमणि का मुख देखने लगीं। नीलमणि ने अपना आशय समझाने के लिए कहना जारी रखा, "कालू प्रतिहार के कुरूप लड़के से विवाह होने वाला था। अब किसी सभ्य की अर्द्धांगिनी बनेगी।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"अर्द्धांगिनी?" कीर्ति ने माथे पर त्योरी चढ़ाकर पूछा।

"वह कुछ काल तक तो गणपति की वासना का भोग बनेगी, पश्चात् नगर-वधू के भवन में वेश्यावृत्ति करेगी।" एक और ने कहा।

"यहाँ काले-कलूटे दुबले कालू के पुत्र की वासना-तृप्ति करती। यदि उससे असंतुष्ट होती तो भिक्षुणी बन जाती और फिर यहाँ जो होता है सो किसको मालूम नहीं। कम-से-कम खाने, पहनने और आराम से जीवन व्यतीत करने को तो पाएगी।"

"क्या खाना-पहनना ही जीवन का ध्येय है?" कीर्ति ने पूछा।

"ध्येय मैं नहीं जानती। कहते हैं, मनुष्य जीवन का लक्ष्य निर्वाण है। परंतु एक बात मैं जानती हूँ कि बिना खाए-पीए कोई रह नहीं सकता। क्या तुम बिना खाए रह सकती हो, कीर्ति दीदी?"

"कैसी बातें करती हो, नीलमणि, तुम? एक होती है जीवन की माँग। उसे पूर्ण करना विवशता की बात है। यह विवशता की बात जीवन का लक्ष्य नहीं हो सकती।"

"यह ठीक है, दीदी! परंतु यह विवशता कालू प्रतिहार के पुत्र से दूर नहीं हो सकती थी। वह गणपति के महल में मिट जाएगी।"

"परंतु क्या तुम यह नहीं समझ सकती हो कि खाने-पहनने का क्या मूल्य देना पड़ेगा उसे वहाँ? पहले गणपति, फिर न जाने किस-किसके आगे मूल्य चुकाना पड़ेगा।"

"परंतु यहाँ तो बात उलटी है, कीर्ति दीदी! मूल्य तो चुका दिया जाता, परंतु भोजन इत्यादि फिर भी नहीं मिलता।"

महाप्रभु ने कीर्ति के सम्मुख तो गंभीर बनाए भाव रखा, परंतु उसके जाते ही एक सेवक को भेज भूधर को बुला भेजा।

भूधर आया तो उसको सब घटना, जैसी कालमेघ ने बताई थी, बताकर कहा, "मेरा विचार है कि गणपति प्रचला का हरण कर ले गया है। तुम नगरपालक को यह सूचना दे दो और कहो कि तुम्हारा संदेह देवधर्मा गणपति पर है।"

"इससे क्या लाभ होगा, प्रभु?"

"सूचना लिखाने से नगर में गणपति के विरुद्ध असंतोष बढ़ेगा।"

"परंतु प्रचला तो नहीं छूटेगी। साथ ही गणपति के विरुद्ध बात कहने में लोग मेरी भी तो निंदा करेंगे।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"तुम तो केवल भैंसे ही रहे, भूधर! तुम नीति नहीं समझते। संसार की रीति यह है कि अपना ढोल पीटते जाओ, चाहे कोई सुने अथवा न सुने। अंत में तो लोगों को सुनना ही पड़ेगा।"

भूधर नगरपालक के कार्यालय में गया और उसे अपना समाचार दिया। नगरपालक ने जब गणपति का नाम सुना तो अचंभे में भूधर का मुख देखने लगा। जब भूधर सूचना लिखाने पर हठ करता रहा तो नगरपालक ने कहा, "अच्छी बात है, लिख लेता हूँ, परंतु सेठजी! बहुत लंबी हो गई है जिह्वा आपकी।"

सूचना लिखी गई और लड़की की खोज आरंभ हो गई। गणपति को भूधर से लिखाई सूचना का पता लगा तो खोज और भी कठोर कर दी गई। इसी दिन सायंकाल यह सूचना मिली कि एक आनंद प्रिय प्रहर दिन गए एक देहाती गँवार लड़की और रथ के साथ गंगा-पार गया है।

इस सूचना के मिलने पर गणपति को यह समझ आया कि इस लड़की का भी षड्यंत्र के साथ संबंध होगा। चंपा को तो गणपति ने भानुमित्र के कहने के अनुसार मध्याह्न समय रथ भेजकर पकड़वा लिया था।

इस सूचना के मिलने पर तो महाप्रभु को बहुत ही अचंभा और चिंता लग गई। उसके विचारानुसार भानुमित्र चंपा के साथ मध्याह्न के समय वैशाली से चला है और नगरपालक की खोज के अनुसार भानुमित्र प्रचला के साथ मध्याह्न से पूर्व ही गंगा पार कर चुका था।

भूधर को जब यह समाचार मिला तो वह अत्यंत भयभीत हो कुछ काल के लिए वैशाली छोड़ तीर्थाटन के लिए चला गया।

: 2 :

गणपति देवधर्मा ने चंपा को भानुमित्र के कहने पर पकड़वा लिया था। उस दिन मध्याह्न के समय वह अपना सामान ले रथ में बैठी तो रथ वेग से चल पड़ा। जब रथ नगर के बाहर निकलने लगा तो चंपा ने सारथी से पूछा, "किधर जा रहे हो?"

"महामात्य भानुमित्रजी के पास।"

"वे किधर हैं?"

"अयोध्या के मार्ग पर गंगा-तट पर प्रतीक्षा कर रहे हैं।"

"चंपा का चित्त कुछ काल के लिए शांत हुआ। रथ वेग से चलता गया। दो मुहूर्त-भर जाने के पश्चात् उसकी चिंता फिर बढ़ने लगी। उसने फिर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पूछा, "किधर जा रहे हो, सारथी?"

"गंगा-तट पर, जहाँ महामात्य आगे गए हैं।"

"गंगा इधर कहाँ है? तुम तो दक्षिण की ओर जा रहे हो?"

"यह मार्ग ही ऐसा है, देवी!"

"मुझे तुम पर संदेह हो रहा है।"

"संदेह की कोई बात नहीं, देवी! अभी एक घड़ी-भर और ठहरो और हम अपने लक्ष्य-स्थान पर पहुँच जाएँगे।"

"पर वह गंगा-तट नहीं होगा। ठहरो!"

सारथी ने रथ को और वेग से भगाना आरंभ कर दिया। केवल यह कहा, "थोड़ा और धीरज करो, सबकुछ ठीक हो जाएगा।"

चंपा इस बात के लिए तैयार नहीं थी, परंतु कर भी क्या सकती थी? रथ से कूदरती तो हड्डी-पसली टूट जाती। अपने पास कुछ शस्त्र भी नहीं रखती थी। इस कारण चुपचाप बैठी रही और अपने भाग्य में जो बदा है, वह होगा ही, मान भागते रथ में बैठी चलती गई।

रथ एक दुर्ग के बाहर जाकर खड़ा हुआ तो ड्योढ़ी पर खड़े सुभट्टों ने चंपा को दुर्ग में ले जाकर बंदी बना लिया। इसके दो घड़ी पश्चात् दुर्ग का संरक्षक चंपा से मिलने आया। उसने चंपा देवी से कहा, "देखो देवी! तुम नगरवधू के गृह में रहती हुई गणपति और वैशाली के भेद की बातें महाप्रभु कल्याण को बताती थीं। वैशाली में यह भारी अपराध माना जाता है, परंतु एक स्त्री को किसी राजनीतिक अपराध में भाग लेते देख उसकी पृष्ठभूमि में कोई प्रेम-गाथा के होने की आशंका की जाती है। इससे स्त्री को दंड का भागी नहीं माना जाता। साथ ही एक बात यह है कि जिस पुरुष का उस स्त्री से संबंध हो, उसे ही स्त्री के भाग का दंड दे दिया जाता है।"

"ऐसी परिस्थिति में तुम क्या चाहती हो, यह जानने के लिए गणपति देवधर्मा का आदेश आया है। यदि तुम चाहती हो कि तुम्हारे प्रेमी को दंड से मुक्त कर दिया जाए तो तुम्हें दो बातें करनी पड़ेंगी। एक तो अपनी पूर्ण सत्यकथा लिख दो और दूसरे यह कि जिस नगर में तुम्हारे रहने का प्रबंध किया जाए वहाँ तुम रहो। तुम्हारे प्रेमी का भी, तुम्हारे साथ रहने का प्रबंध कर देंगे।"

चंपा ने कहा, "मुझे पूर्ण स्थिति पर विचार करने का अवसर दिया जाए।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस पर दुर्ग के संरक्षक ने उसे बंदी के रूप में दुर्ग में रहकर विचार करने को तीन दिन की अवधि दे दी।

तीन दिन में इसी दुर्ग में कर्णदेव भी बंदी बनाकर लाया गया और फिर दोनों से दुर्ग के संरक्षक ने बातचीत की। कर्णदेव चंपा से अधिक भयभीत प्रतीत होता था। उसे भूधर के भयभीत हो तीर्थाटन को चले जाने की बात विदित थी। कुछ दिन के लिए वैशाली से महाप्रभु के तीर्थाटन को जाने का समाचार भी उसे मालूम हो गया था। इसका अर्थ वह यही समझता था कि महाप्रभु के सहायकों पर कोई भारी विपत्ति आने वाली है। इससे उसने चंपा से राय कर गणपति की शर्तें स्वीकार करने का निश्चय कर लिया।

चंपा की कथा बहुत साधारण थी। वह एक प्रतिष्ठित वैश्य परिवार की लड़की थी। उसका विवाह कर्णदेव के पड़ोसी सेठ के लड़के से हो गया था। कर्णदेव से उसका प्रेम हो गया तो घर से भाग खड़ी हुई। पश्चात् धनी बाप की पुत्री के पालन-पोषण का भार न सह सकने के कारण कर्णदेव को महाप्रभु की सेवा में गुप्तचर का काम करना पड़ा और चंपा को नगर-वधू की सेवा।

चंपा को नगर-वधू के भवन में खाने-पहनने को तो खूब मिलता था, परंतु लोगों को प्रसन्न करने के लिए उनकी इच्छा-पूर्ति भी करनी पड़ती थी। जब मृदुला नगर-वधू बनकर आई तो उसकी जान छूटी। मृदुला ने उसे अपनी सहायता के लिए अपने साथ रख लिया था। मृदुला की उस पर अपार कृपा थी। इसी कारण कर्णदेव से मिलना-जुलना विनोद-भवन के भीतर ही होने लगा था।

चंपादेवी को कर्णदेव के गुप्तचर होने का ज्ञान नहीं था। वह तो कर्णदेव को प्रेमवश विनोद-भवन की सब बातें बताया करती थी, परंतु कर्णदेव उन बातों को महाप्रभु को बताकर इनाम पाता था।

जब चंपा को विदित हुआ कि महाप्रभु राज्य-विरोधी षड्यंत्र कर रहा है और कर्णदेव उससे बताई बातें उसे बताता रहा है तो उसे बहुत शोक हुआ और उसे अपनी मृदुला के प्रति घोर कृतघ्नता प्रतीत हुई।

जब कर्णदेव भी पकड़ा हुआ लाया गया तो उसके मन में कर्णदेव के प्रति भय समा गया। इससे उसने दुर्ग के संरक्षक का प्रस्ताव स्वीकार कर लिया।

कर्णदेव और चंपा दोनों को किन्नर देश में राज्य की ओर से गुप्तचर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का काम करने के लिए भेज दिया गया। कर्णदेव का वेतन नियत कर दिया गया और उन्हें वैशाली लौट आने की मनाही कर दी।

चंपा और कर्णदेव की कथा से देवधर्मा को महाप्रभु के षड्यंत्रकारी होने का एक और प्रमाण मिल गया। इससे गणपति ने विहार के भीतर की बातें जानने के लिए कई गुप्तचर नियत कर दिए।

: 3 :

भानुमित्र प्रचला को लेकर मध्याह्न समय अयोध्या में पहुँचा। महामात्य को एक लड़की साथ लेकर आए देख भवन के कर्मचारियों ने समझा कि यह कोई दासी साथ लाए हैं, परंतु उनका यह भ्रम तब दूर हुआ जब महामात्य रथ से उतर, प्रचला को साथ ले अपने भवन के सबसे उत्तम सुसज्जित आगार में ले जाकर तथा बिठाकर बोला, ''प्रचला देवी! यह तुम्हारे रहने का स्थान है। जब तुम्हारा विवाह हो जाएगा, तब तुम मेरे आगार में पधारोगी।''

''परंतु आपने तो भूधर को कहा था कि आप बाहुक देश के रहने वाले हैं।''

''परंतु मेरा कार्य तो यहाँ अयोध्या में है।''

''तो आपकी पहली स्त्री कहाँ है?''

''तो इसी समय उससे मिलोगी? इन्हीं मैले कपड़ों में?''

मैले कपड़ों की बात सुन प्रचला का मुख लज्जा से लाल हो गया। वह अपने कपड़ों और उस आगार में रखे पलंग पर श्वेत रेशमी चादर को देखने लगी। इतने में उसकी दृष्टि सामने दीवार के साथ लगे दर्पण की ओर गई। उसमें अपना मुख और कपड़ों को देखा तो उसकी हँसी निकल गई। भानुमित्र ने उसे अपने मुख को दर्पण में देख हँसते हुए पूछा, ''क्यों, क्या बात है, प्रचला?''

वह चुप कर गई और लंबी साँस लेकर बोली, ''कुछ नहीं, प्रभु! आप बहुत दयालु हैं।''

भानुमित्र उसके मन के भावों को समझ गया। वह अपने को, अपने आस-पास की वस्तुओं से बहुत भिन्न और निकृष्ट समझने लगी थी। यह भाव वह उसके मन में बैठने नहीं देना चाहता था। इससे उसने तुरंत बात बदलने के लिए ताली बजाई। एक सेवक आया तो भानुमित्र ने उसे कहा, ''शीघ्र राजमहल में जाओ और महारानीजी को कहला भेजो कि महामात्यजी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ने दो परिचारिकाएँ माँगी हैं। घर में अतिथि आए हैं और वे उनकी सेवा-सुश्रूषा के लिए चाहिएं।''

सेवक चला गया। प्रचला का मस्तिष्क, महारानी से परिचारिकाएँ माँगने की बात सुन चकराने लगा। वह नहीं समझ सकी थी कि यह कौन महापुरुष है, जो राजमहल से महारानी से दासियाँ माँगने की धृष्टता कर सकता है। इससे उसने साहस कर पूछा, ''भगवन्! आप हैं कौन?''

''देखो प्रचला! इस पलंग पर बैठ जाओ।''

प्रचला बैठने में संकोच करती थी। भानुमित्र ने कहा, ''तुम्हें इस गृह में राज्य करना है। यदि तुमने मन को दृढ़ कर अपने अधिकार पाने में संकोच किया तो सेवक तुम्हारी हँसी उड़ाएँगे। बैठ जाओ।''

प्रचला बैठ गई। पलंग पर बहुत कोमल गद्दा था। उस कोमल स्पर्श से उसे ऐसा अनुभव हुआ कि यह उसका स्थान नहीं है। वह फिर खड़ी हुई। ''और कोई स्थान नहीं है?'' उसने पूछा।

''क्यों, क्या हुआ है? डरो नहीं, यह तुम्हारे सोने के लिए है। बैठो।''

प्रचला विवश हो बैठ गई। भानुमित्र उसके सम्मुख एक चौकी ले बैठ गया। ''देखो,'' वह बताने लगा, ''यह अयोध्यापुरी है। मैं यहाँ का महामात्य हूँ। समझती हो?''

''महामात्य क्या होता है?''

''वैशाली में मेरे जैसी पदवी वाले को महामंत्री कहते हैं, जो गणपति की अनुपस्थिति में राज्य-कार्य चलाता है। यहाँ गणपति नहीं होता। यहाँ महाराज हैं। मैं प्रधानमंत्री हूँ। राजा के स्थान पर मैं राज्य-कार्य करता हूँ।''

प्रचला यह सुन आवाक् मुख हो फिर खड़ी हुई। भानुमित्र ने उसे पुनः बैठने को कहा, ''बैठो, बैठो प्रचला! यह क्या कर रही हो? अभी कोई सेवक आ जाएगा तो क्या समझेगा? बैठो।''

प्रचला फिर पलंग पर बैठ गई और बोली, ''तो आप बहुत बड़े व्यक्ति हैं। आपने मुझे वहाँ क्यों नहीं बताया?''

''बताता तो तुम क्या करतीं?''

''आपके साथ विवाह के लिए न आती। मैं एक पाचक की पाली लड़की और आप हैं यहाँ के प्रधानमंत्री। कितनी धृष्टता कर बैठी हूँ।''

''चुप रहो, प्रचला! तुम अपना मूल्य नहीं जानतीं। तनिक दासियों को आने दो, तब देखना, तुम्हें मैं क्या कुछ बनवा देता हूँ।''

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"मैं बाजार से तुम्हारे लिए वस्त्र-भूषण और शृंगार का सामान मँगवा देता हूँ और तुम्हें नहला-धुला वे वस्त्र पहना, जब दर्पण के सम्मुख खड़ा करेंगी, अपने को दर्पण में देख बौद्ध चैत्य के पाचक कालमेघ से पाली हुई प्रचला को भूल जाओगी। कल तुम्हारा विवाह होगा। पश्चात् तुम्हारी शिक्षा का काम मैं अपने हाथ में लूँगा। देखो, तुम अवध के महामात्य की पत्नी बनने वाली हो। तुम्हें यह समझ लेना चाहिए कि संसार की कोई वस्तु ऐसी नहीं, जिसके भोग करने के तुम योग्य नहीं। स्मरण रखो, बड़ा वही होता है, जो बड़ा होना चाहता है। तुम अवध की स्त्रियों में द्वितीय पदवी पर हो। प्रथम अवध की महारानी श्रीमती मल्लिका देवी हैं और दूसरे स्थान पर रानी प्रचला देवी, श्री भानुमित्र महामात्य अवध की पत्नी है।"

इतने में सेवक राजमहल से दासियों को ले आया। भानुमित्र ने उनको देख कहा, "देखो, यह देवी प्रचला मेरी होने वाली धर्मपत्नी हैं। अभी मैं कपड़े वाले लोगों को तथा जौहरी को बुलाता हूँ। तुम इन्हें स्नानादि करवाकर बढ़िया-से-बढ़िया वस्त्र-भूषण पहनाकर, इनकी सेवा में रहना।"

इतना कह भानुमित्र चौकी से उठ, प्रचला से बोला, "देवी! तुम तैयार हो जाओ। मैं तनिक महाराज से भेंट कर आता हूँ।"

कपड़ा बेचने वाले आए तो दासियों ने महारानी के योग्य प्रचला के कपड़े खरीद लिए। कपड़ा सीने वाली आईं तो उन्हें प्रचला का नाप दिलवा कपड़े तैयार करने की आज्ञा दे दी। जौहरी आया तो सिर से पाँव तक जड़ाऊ भूषण खरीद दिए।

प्रचला को स्नानागार में ले जा, तेल-उबटन लगा, स्नान कराया गया। पश्चात् कपड़े पहना सुरमा, मिस्सी, सिंदूर लगा पाँवों पर महावर लगा दी। इस प्रकार सज-धज के पश्चात् भूषण पहना दिए। जूड़े पर जूही के फूलों का गुच्छा बाँधकर, उसे उसी आगार में लाकर खड़ा कर दिया। प्रचला ने दर्पण में जो अपने को देखा, तो सत्य ही अपने को एक नवीन, अति सुंदर कन्या समझा।

इस समय भानुमित्र महाराज से भेंट कर लौट आया। वह स्वयं प्रचला को देख चकित रह गया। प्रचला उसके अपने अनुमान से भी अधिक सुंदर प्रतीत हुई। उसे देख उसका हृदय हर्ष से भर गया। उसने दासियों को भोजन परोसने की आज्ञा दे बाहर भेज दिया और स्वयं प्रचला को बोला, "मैं सत्य कहता था, प्रचला! तुम अद्वितीय सुंदरी हो।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रचला भी अपना रूप-रंग देख फूली नहीं समाती थी। एक बात वह समझ रही थी कि उसके भाग्योदय होने में यह महापुरुष ही कारण है। अतएव वह घुटनों के बल उसके चरणों पर झुक प्रणाम करने लगी। भानुमित्र ने उसे भुजाओं से पकड़ उठा, छाती से लगा कहा, "तुम मेरे हृदय की रानी हो, देवी!"

: 4 :

अगले दिन नगर से पुरोहित बुला भानुमित्र ने प्रचला से विवाह कर लिया। विवाह के समय बहुत आडम्बर नहीं किया गया। न ही उस समय बहुत लोग बुलाए गए। घर के सेवक और भद्रसेनादि मंत्रिगण ही आमंत्रित थे। विवाहोत्सव के पश्चात् भानुमित्र महाराज से मिलने गया। भानुमित्र का विचार था कि वह अपने मुख से अपने विवाह का समाचार महाराजा और महारानी को देगा, परंतु विवाह का समाचार राजमहल में पहले ही पहुँच चुका था। महाराज ओर म्हारानी नगर के शिष्ट लोगों से भेंट कर उठे ही थे कि भानुमित्र वहाँ पहुँच गया। उसे आए देख मल्लिका की हँसी निकल गई। महाराज ने कहा, "नवीन वर भानुमित्र! बहुत-बहुत बधाई हो! बहू कैसी है, मित्र?"

"विवाह के समय महाराज और महारानी को कष्ट देना उचित न समझ आज सायं वर-वधू को आशीर्वाद देने को सेवक के घर पधारने के लिए निवेदन करने आया हूँ।"

"हम तो स्वयं ही विचार कर रहे थे कि जब तुम घर पर न होओ, हम वहाँ जा धमकें और बहूरानी के दर्शन कर आएँ। सुना है, बहुत सुंदर है वह।"

"हाँ, महाराज की कृपा है। मैं समझता हूँ कि अपनी प्रथम विवाहिता के निर्वाचन में मैंने भूल नहीं की।"

प्रथम विवाहिता का शब्द सुन महारानी को राका का स्मरण हो आया। इस कारण पूछने लगी, "पर राका के साथ विवाह के निश्चय का क्या हुआ?"

"वह निश्चय अनिश्च नहीं हुआ।"

"बहुत निर्दयी हो, भानुमित्र!"

"महारानी का यह भ्रम है। इसका निवारण तो समय ही कर सकता है।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बात आगे नहीं चली। महाराज और महारानी भानुमित्र से झगड़ना नहीं चाहते थे। उसी सायंकाल महाराज और महारानी महामात्य के निवास-गृह पर बधाई देने पहुँचे। महाराज और महारानी के वहाँ पहुँचने का समाचार सुन नगर के प्रायः प्रतिष्ठित व्यक्ति महामात्य को बधाई देने और महामात्य की रानी को भेंट देने उपस्थित हो गए। स्त्री-पुरुष सैकड़ों की संख्या में आए थे।

भानुमित्र ने भी गृह का सबसे बड़ा आगार साफ करवा, फूल-बेलों से सुशोभित और अनेक प्रकार के सुगंधित पदार्थों की सुगंधि से आवासित करवा रखा था।

महारानी और महाराज अपने सर्वोत्तम रथ पर सवार हो, दो सौ अश्वारोहियों के साथ महामात्य के सुसज्जित गृह के बाहर जा पहुँचे। उन्हें आए देख महामात्य ने बाहर आ महाराज और महारानी का स्वागत किया। उन्हें रथ से उतार गृह के भीतर सुसज्जित बृहत् आगार में ले जाकर स्वर्ण चौकियों पर बिठाया।

महारानी और महाराज के चौकियों पर बैठ जाने पर महामात्य ने प्रचला को बुला भेजा। वह रत्नजड़ित रेशमी वस्त्र पहने और भूषणों से लदी, हाथ में सोने की थाली में जलता हुआ घी का दिया लेकर आई और महारानी तथा महाराज की आरती उतार, थाली उनके चरणों में रख महारानी की चौकी के समीप भूमि पर बैठ गई।

महारानी ने उसे आशीर्वाद दिया, उसके मुख को उठाकर देखा और संतोष अनुभव किया। पश्चात् महामात्य दो मुक्ताहार लाया। एक उसने महाराज के गले में डाल दिया और दूसरा प्रचला ने महारानी के गले में डाल दिया। अब महाराज ने अपने भृत्यों को वे भेंट लाने के लिए कहा, जो वे रथ में अपने साथ महामात्य और उसकी नवविवाहिता को देने लाए थे।

एक बहुत बड़े स्वर्ण-थाल में महामात्य और प्रचला के लिए कपड़े तथा आभूषण थे। इस भेंट के दिए जाने के पश्चात् नगर के प्रतिष्ठित लोगों और उनकी स्त्रियों ने महामात्य और प्रचला को भेंट दीं।

आकर भेंट देने वाले लोगों में पं. मैलन्द भी था। वह अपने साथ अपनी लड़की राका को भी लाया था। पं. मैलन्द ने संस्कृत की प्रथम पाठ्य-पुस्तक एक स्वर्ण-पात्र में रखकर दी। इस कटाक्ष को मल्लिका ने देखा और मुस्कराकर प्रचला के मुख पर देखा; परंतु उसे या तो इसकी कटुता समझ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ही नहीं आई या उसने ध्यान ही नहीं दिया। महामात्य मैलन्द के उपहार को देख हँस रहा था।

महाराज ने भी यह देखा था और भानुमित्र का ध्यान दूसरी ओर करने के लिए पूछ लिया, ''मित्र! यह अनमोल रत्न कहाँ से पा गए हो?''

''वैशाली के बाहर एक क़ीचड़ के तालाब में यह कमल का फूल दिखाई दिया तो उखाड़ लाया हूँ।''

''परंतु इसके मानसिक विकास के विषय में क्या है?''

''वहाँ के लोग इसको पगली कहते थे।''

''यह तो ठीक नहीं हुआ। पं. मैलन्द ने इसी कारण कटाक्ष किया है।''

''महाराज! यदि कोई इतना भाग्यशाली न हो कि उसे एक ही पत्नी सर्वगुणसम्पन्न मिले, तो वह तीन गुणों वाली तीन पत्नियाँ वर, त्रिगुणात्मक प्रकृति का भोग क्यों न करे?''

महाराज इस व्याख्या को सुन हँस पड़े। पश्चात् कुछ सोचकर बोले, ''हमें भय है कि तीनों पत्नियों के तीनों दोष मिलकर कहीं अवध के महामात्य को सन्निपात न कर दें।''

''यह रोग तो महाराज! पूर्व-जन्म के दुष्कर्मों का फल ही होता है, जिसे कोई टाल नहीं सकता। इस पर भी मैं तो गुणों का ही समावेश करने का यत्न कर रहा हूँ।''

इस समय सेवक और सेविकाएँ सोने-चाँदी की थालियों में मिठाई बाँटने लगीं। स्त्रियाँ उठकर दूसरे आगार में चली गईं और पुरुष मिठाई के साथ माधवी पीने लगे।

: 5 :

राका भी अपने पिता को छोड़ दूसरे आगार में चली गई। वहाँ स्त्रियों में बैठने में अरुचि अनुभव कर, वह साथ के एक रिक्त आगार में चली गई। वहाँ भूमि पर क़ालीन इत्यादि बिछे थे। वह वहाँ बैठ अपने मन में उठ रहे अनेकानेक विचारों का मंथन करने लगी।

प्रचला को उसने भी देखा था। इस समय भूषण-वस्त्रों में और शृंगार किए हुए तो वह अद्वितीय सुंदरी प्रतीत होती थी। वह सोचने लगी तो क्या वे स्वप्न, जो वह कई दिन से देख रही थी, सब व्यर्थ गए?

वह सुन चुकी थी कि प्रचला पढ़ी-लिखी लड़की नहीं है। इससे वह भानुमित्र के प्रचला को उस पर उपमा देने पर विस्मय कर रही थी। वह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सोच रही थी कि भानुमित्र विवाह-संबंध को केवल शारीरिक संबंध ही समझता है। इससे उसे भानुमित्र एक छोटे विचारों का व्यक्ति प्रतीत हुआ।

इस समय मल्लिका प्रचला को साथ लिए हुए वहाँ आ पहुँची। वह भी किसी एकांत स्थान पर बैठ प्रचला से बातें कर, उसके मानसिक विकास का अनुमान लगाना चाहती थी।

राका को इस प्रकार एकांत में गंभीर बैठे देख, उसके मन के भावों को समझ गई। राका ने जब मल्लिका को देखा तो उठकर उसका सत्कार किया। महारानी ने स्वयं बैठते हुए कहा, "बैठो राका! यह देखो, किसको ले आई हूँ।"

राका ने प्रचला को सिर से पाँव तक देखा। फिर उसके विषय में अधिक जानने के लिए, उसे अपने और महारानी के मध्य बिठा लिया।

मल्लिका ने प्रचला से पूछा, "बहन! क्या नाम है तुम्हारा?"

"प्रचला।" आँखें नीची किए हुए उसने उत्तर दिया।

"बहुत सुंदर नाम है।" राका ने कहा।

"और काया भी बहुत सुंदर है।" मल्लिका ने प्रचला के छोटे-छोटे हाथों को देखते हुए कहा।

"आपका धन्यवाद है, जो आप ऐसा समझती हैं।"

"शृंगार तो बहुत सुंदर किया है।" राका ने गंभीर साँस खींचते हुए कहा।

"यह महारानीजी की दासियों का काम है। मैं इस विषय में कुछ नहीं जानती।"

"वे दासियाँ तो तुम्हें धोखा भी दे सकती हैं?"

"पर महामात्यजी को धोखा नहीं दे सकतीं। वह उनकी भूल जान लेंगे।"

"भला यह बताओ, प्रचला! तुमने पहले महामात्यजी से प्रेम अनुभव किया था या उन्होंने तुमसे?"

"भला इसका उत्तर मैं कैसे जान सकती हूँ? मैं तो अपने मन की ही बात जानती हूँ। जब मैंने उन्हें देखा तो मेरे मन में तुरंत यह बात उठी कि ये मेरे पति हों तो बहुत अच्छा हो। उनके मन में क्या विचार उठे होंगे, मैं कैसे बता सकती हूँ। मैं उस समय बहुत मैले कपड़े पहने थी। मेरे बाल बिखरे हुए थे और सिर-पाँव बिना ढके थे।"

"इस पर भी वे तुम्हें ले आए?"

"उन्होंने मुझे कहा कि मैं वैशाली की नगर-वधू से अधिक सुंदर हूँ। मैंने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहा—एक निर्धन अनाथ की हँसी न करिए। इस पर उन्होंने कहा कि वह मुझसे विवाह कर लेते यदि उनकी एक और पत्नी न होती।''

मल्लिका खिलखिलाकर हँस पड़ी। राका का मुख लज्जा से लाल हो गया। प्रचला ने मल्लिका को हँसते हए देख पूछा, ''क्या मैंने कुछ भूल की है?''

''नहीं। मैं तो यह सोच हँसी थी कि तुम यह जानकर भी कि उनकी एक और पत्नी हैं, उनसे विवाह के लिए तैयार हो गई थीं?''

''मैं इसे बुरी बात नहीं समझती। मैंने जब यह सुना तो बहुत प्रसन्न हुई थी।''

''प्रसन्न? भला क्यों?''

''तो यह प्रसन्नता की बात नहीं है क्या? जब एक पुरुष की दो स्त्रियाँ हों तो उनमें परस्पर प्रेम विशेष होना स्वाभाविक नहीं क्या? हम दो साथिन होंगी। परस्पर बैठने, बातें करने और खेलने-कूदने का अवसर मिलेगा। हम एक-दूसरे के सुख में सुखी और दुःख में दुखी होंगी।''

मल्लिका ने समझा कि भानुमित्र ने अपने विकृत विचारों से इसको प्रभावित कर रखा है। जब इसकी कोई सौत होगी तब यह अनुभव करेगी कि इसकी धारणा अशुद्ध है। उसे निपट अनाड़ी समझ चुप कर रही।

प्रचला ने महारानी को चुप और राका को अपने विचारों में खोए देख कहा, ''मैंने अपने गँवारों के-से विचार प्रकट कर आपको अप्रसन्न कर दिया है।''

''नहीं, अप्रसन्न नहीं, प्रचला! केवल विस्मित किया है।''

''अच्छा, आप महामात्यजी को कब से जानती हैं?''

''ग्यारह वर्ष से।'' मल्लिका का मुख यह बताते समय लाल हो गया। परंतु प्रचला उधर नहीं देख रही थी। उसने हाथ की उँगलियाँ मरोड़ते हुए पूछा, ''वे कैसे व्यक्ति हैं? मेरा अभिप्राय है, स्वभाव के कैसे हैं?''

''बहुत अच्छा स्वभाव रखते हैं।''

''तो उन्होंने अपने पहले विवाह के विषय में सत्य ही कहा होगा?''

''नहीं, उनका पहले कोई विवाह नहीं हुआ है। हाँ, उनका एक और लड़की से विवाह होने वाला था। अब वह स्वीकार करेगी अथवा नहीं, कहना कठिन है।''

''बहुत विचित्र है!'' विस्मय की मुद्रा बना प्रचला ने पूछा, ''वह लड़की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्यों विवाह नहीं करेगी? जब वे बहुत अच्छे हैं तो उनको वर कर छोड देना तो बुद्धिमता नहीं। मुझे वह लड़की मिले तो मुझे विश्वास है कि मैं उसे मना लूँगी।"

इस पर राका और मल्लिका दोनों हँसने लगीं।

: 6 :

Gurukula Kangri (Deemed to be University) Haridwar 167991

महाप्रभु कल्याण ने जब सुना कि प्रचला को ले जाने वाला भानुमित्र है तो वह चंपा और कर्णदेव के विषय में चिंता अनुभव करने लगा। दोनों का पता नहीं मिल रहा था। कर्णदेव को महाप्रभु की बहुत-सी योजनाओं का ज्ञान था, इससे उसके भानुमित्र अथवा देवधर्मा के हाथ आ जाने से, उसकी सब योजनाओं पर पानी फिर जाने की संभावना थी। केवल इतना ही नहीं, प्रत्युत् उससे उसके अपने पूर्ण बौद्ध विहारों के विरुद्ध भी किसी कार्यवाही की आशा की जा सकती थी।

अतएव तीन दिन पर्यन्त तो वह विहार से लुप्त रहा, परंतु जब उसकी खोज में कोई राज्य-कर्मचारी नहीं आया तो वह चंपा और कर्णदेव की खोज में निकल पड़ा। उसे विश्वास था कि नगर-वधू इस विषय पर अवश्य प्रकाश डालेगी।

एक दिन सायं समय वह विनोद-भवन के द्वार पर जा पहुँचा। एक बौद्ध भिक्षु को नगर-वधू के प्रसाद के सम्मुख खड़े देख, द्वार पर खड़े प्रतिहार विस्मय में एक-दूसरे का मुख देखने लगे।

महाप्रभु ने 'बुद्धं शरणं गच्छामि, धर्मं शरणं गच्छामि, संघं शरणं गच्छामि' की मधुर ध्वनि की ओर भवन की दूध समान श्वेत सीढ़ियों पर चढ़ फाटक के भीतर बड़े आगार में जाकर खड़ा हो गया। उसके वहाँ पहुँचते ही नियमानुसार दासी आई और पूछने लगी—

"भगवन्! क्या चाहिए?"

"नगर-वधू से काम है।"

"महाराज, पधारिए।" इतना कह दासी ने भवन में आगे चलने को निमंत्रण दे दिया।

"वह यहाँ नहीं आ सकतीं क्या?"

"आ सकती हैं, परंतु आपका आदर-सत्कार कर बिठाना हमारा कर्तव्य है।"

"नहीं, यहीं बुला लाओ।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दासी तुरंत नगर-वधू को ढूँढ़ने गई। वह उस समय गणपति के आगार में किसी आवश्यक विषय पर परामर्श कर रही थी। दासी ने आकर बताया, "एक बौद्ध भिक्षुक देवी की ड्योढ़ी में प्रतीक्षा कर रहे हैं।"

"उसे आगार संख्या दस में बिठाओ।"

"वे आपसे वहीं मिलना चाहते हैं।"

गणपति हँस पड़ा और बोला, "जाओ देवी! कोई नौसिखिया प्रतीत होता है।"

मृदुला उठकर बाहर ड्योढ़ी में आई तो महाप्रभु को दत्तचित्त हो आगार की दीवार पर बने सरस्वती के सुंदर चित्र की ओर आकर्षित देख हँस पड़ी। महाप्रभु का ध्यान भंग हुआ तो घूमकर मृदुला की ओर सिर से पाँव तक देख बोला, "क्या मैं नगर-वधू को देख रहा हूँ?"

"भगवन्! वह चित्र कैसा जँचा है? इस चित्र के बनाने वाले चित्रकार का नाम केतकर है। इसका दाम राज्य को दस सहस्र मुद्रा देनी पड़ी थीं। भारत-भर में सरस्वती देवी के सब चित्रों से इसको श्रेष्ठ माना जाता है। फारस और यूनान से कलाकार इसको देखने के लिए यहाँ आते हैं।"

"सत्य ही चित्र अति सुंदर है। परंतु...। छोड़ो इस व्यर्थ की बात को। मैं तुमसे मिलने आया हूँ।"

"अहोभाग्य दासी के! आइए, मेरे आगार में पधारिए। यहाँ मैं क्या सेवा कर सकूँगी? सब आने-जाने वाले और सेवक विस्मय में आपको देख रहे हैं।"

महाप्रभु की समझ में आ गया कि मृदुला बात तो ठीक कहती है। लोग क्या संशय करेंगे? इससे बोला, "काम तो साधारण है, परंतु चलो, जहाँ तुम्हारी इच्छा हो।"

मृदुला महाप्रभु का पथ-प्रदर्शन करती हुई उन्हें एक अति सुसज्जित आगार में ले गई। वहाँ भूमि पर मखमली कालीन और उस पर कोमल सेमल की रुई की गद्दियाँ लगी थीं। आगार के मध्य में इतरदान रखा था, जिसमें से धीमी-धीमी मौलसिरी की सुगंध उठ रही थी। आगार की पूर्ण वायु इस सुगंधि से भर रही थी।

दीवारों पर नग्न स्त्रियों के चित्र भाँति-भाँति की नृत्य-मुद्राओं में बने थे। छत में एक सौ एक बत्ती का दीपगुच्छ लगा था, जिसके सब दीप जल रहे थे। एक ओर वीणा रखी थी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नगर-वधू सायं समय प्रायः पूर्ण शृंगार किए होती थी। इस प्रकार के आगार में नगर-वधू जैसी सुंदर युवती को पूर्ण शृंगारयुक्त खड़ी देख, महाप्रभु का मस्तिष्क चक्कर काटने लगा। उसका पूर्ण शरीर एक विशेष प्रकार की मादकता से पुलकित हो उठा। उसने एक क्षण में अपने को सँभालकर कहा, "देवी! इस आगार में लाने का क्या अभिप्राय है आपका?"

"मुझे नहीं मालूम, भगवान् कि आपने क्यों दासी का स्मरण किया है। यह तो आप ही बताइएगा। बैठिए, इस आसन पर बैठने की कृपा कीजिए।"

महाप्रभु अति संकोच में पड़ गया और उसका कंठ शुष्क हो गया। उसने इसे साफ करने का यत्न कर कहा, "मैं तो चंपा के विषय में जानने आया था।"

"ओह! भला बैठिए तो!"

महाप्रभु पर वातावरण की मादकता चढ़ती जाती थी। उसकी टाँगें जवाब देने लगी थीं। इस कारण एक गद्दी पर बैठ गया। उसे बैठे देख उसके साथ रखी गद्दी पर मृदुला बड़े से प्रश्रय का आश्रय ले आधी लेटी अवस्था में हो गई। इससे उसका सौंदर्य अपने पूर्ण ओज में दिखाई देने लगा।

महाप्रभु नगर-वधू के सौंदर्य को देख चकित हो उसके मुख पर देखता रह गया। उसका कंठ अब सर्वथा शुष्क हो गया था और उसके मुख से शब्द निकलना कठिन हो गया। बहुत कठिनाई से यह कह सका, "देवी! मैं अभी बहुत दुर्बल जीव हूँ। मैं समझता हूँ कि मुझे यहाँ तुम्हारे साथ एकांत में नहीं आना चाहिए था।"

"आपका मुख सूख रहा प्रतीत होता है। जल मँगवाऊँ?"

फिर बिना उत्तर की प्रतीक्षा किए मृदुला ने ताली बजाई। एक दासी भीतर आई तो उसे पेय लाने की आज्ञा दे दी।

महाप्रभु ने भर्राई आवाज में कहा, "नहीं, मुझे जल की आवश्यकता नहीं है। आप चंपा के विषय में बताइए।"

"चंपा, मेरी दासी? क्यों? उसकी क्या बात है? आपसे भी उसका मेल-मिलाप था? तब तो आप बहुत अच्छे पारखी हैं वह मेरी सबसे अधिक सुंदर दासी थी। भगवन्, उसे तो अवध के महामात्य श्री भानुमित्र साथ ले गए हैं। यद्यपि वह उनसे..."

"लो, पेय आ गया। थोड़ा पी लीजिए। बात करने में सुभीता हो जाएगा।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दासी गंगा-जमुनी सुराही और एक पात्र ले आई। मृदुला उठी और सुराही में से पात्र भर महाप्रभु के सम्मुख कर दिया।

"यह तो सुरा प्रतीत होती है।" महाप्रभु ने कहा।

"यहाँ इस भवन में आकर इस स्वादिष्ट सुरा के पिए बिना कोई नहीं जाता। लोग तो इसके लिए लालायित रहते हैं।"

मृदुला के सुंदर हाथों से दी गई सुरा, ना नहीं की जा सकी। गला भी तो सूख गया था। महाप्रभु ने मुख को लगाई तो दो ही घूँट में गिलास समाप्त हो गया।

"और दूँ?"

"नहीं-नहीं, अब ठीक है। मेरे गले में न जाने क्या हो गया था, शब्द ही नहीं निकलता था। देखो देवी! चंपा से मेरा कोई संबंध नहीं है। हम भिक्षुक हैं। सबकी भलाई करना हमारा कार्य है। उसका प्रेमी कर्णदेव हमारा उपासक था।"

"ओह! आप बहुत दयालु हैं।" इतना कह मृदुला ने तिरछी दृष्टि से महाप्रभु की ओर देखा। महाप्रभु के पूर्ण शरीर में रोमांच हो उठा। उसने धीरे से, जैसे अपने-आपको कह रहा हो, कहा, "यह बहुत भयंकर स्थान है।"

मृदुला ने एक गिलास सुरा का और भरा और आगे कर कहा, "क्यों भगवन्! क्या भयंकर बात देखी है आपने यहाँ? क्या भिक्षु का बाना कष्ट देने लगा है अब?"

"यह तो नहीं कह सकता। परंतु हम भी तो दूसरों की भाँति हाड़-चाम के बने हैं। हमें ऐसे प्रलोभनों से बचना चाहिए।"

"क्यों? क्या आवश्यकता है बचने की?"

"ये प्रलोभन मनुष्य के परम लक्ष्य निर्वाण-प्राप्ति में बाधक होते हैं।"

"निर्वाण-प्राप्ति से क्या होता है, भगवान्?"

इस प्रश्न से घबराकर महाप्रभु ने कहा, "मैं कैसे जान सकता हूँ? हाँ, भगवान् शाक्य मुनि गौतम ने कहा है कि निर्वाण पाने पर परम सुख मिलता है।"

"परंतु भगवान् ने भी तो यह निर्वाण-प्राप्ति से पूर्व कहा था। यह भ्रम भी तो हो सकता है। उनके स्वर्गारोहण के पश्चात् तो उनका कोई संदेश मिला नहीं। उनका कहना सत्य हो सकता है, परंतु मैं जो कह रही हूँ वह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तो प्रत्यक्ष है। उसके लिए किसी साक्षी की आवश्यकता नहीं। उपलब्ध को छोड़ अनिश्चित के पीछे भागने वाले को बुद्धिमान नहीं कहा जा सकता। यह लीजिए, एक गिलास इस शीतल माधवी का और पीजिए। इससे बुद्धि का आवरण दूर होकर सत्य दर्शन की शक्ति उत्पन्न होती है।''

जब मृदुला यह कह रही थी, सुरा का गिलास पीने के लिए दे रही थी, महाप्रभु सामने बने एक चित्र की नगर-वधू से तुलना कर रहा था। उसे नगर-वधू अधिक सुंदर और ओजपूर्ण दिखाई दे रही थी। वह अपने मन में सोच रहा था कि नगर के कुरूप पुरुष तथा स्त्रियाँ बौद्ध विहारों में भर्ती हो गई हैं। उन्हें न तो बाहर जगत् में कोई चाहने वाला है, न उनके चाहने की परवाह करने वाला है। प्रायः अशिक्षित, अनपढ़ और हीन मति इकट्ठे हो दान-दक्षिणा के अन्न को गंदा कर रहे हैं।

इन्हीं विचारों में लीन उसने बिना जाने और विचार किए सुरा का पात्र पकड़ लिया और पीने लगा। पीते समय उसे विचार आया भी कि वह ठीक नहीं कर रहा, परंतु आधा पी शेष छोड़ना अशिष्टता समझ और सुरभित-स्वादिष्ट सुरा को त्यागने को मन तैयार नहीं कर सकने से, एक ही घूँट में सब पी गया।

मृदुला उसके मनोभावों को समझ रही थी। इससे उसका शेष संकोच भी दूर करने के बोली, ''भगवान्! आप चंपा के विषय में पूछ रहे थे न? देखिए, वह दासी इतनी मधुर-भाषी, विचारशील और सुंदर थी कि उसकी माँग इस भवन में सर्वव्यापक थी। यदि आप उसके विषय में जानने आए हैं तो मुझे अचंभा नहीं हुआ।''

''आप वही करने आए हैं, जो गणपति देवधर्मा अभी एक पल पूर्व कर रहे थे। अंतर केवल यह है कि वे वास्तविकता समझते हैं और आप जो करने आए हैं, उसके वास्तविक प्रयोजन को समझ नहीं सके। देखिए, मैं आपको बताती हूँ। यह ज्ञान प्राप्ति यहाँ पूर्ण रूप में उपलब्ध है।''

इतना कह उसने ताली बजाई और दासी को कहा, ''तनिक सुमति को बुलाओ। कहो, महाप्रभु को वीणा सुनानी है।''

''देखिए,'' उसने प्रश्रय से उठ कहा, ''आप निर्वाण को प्राप्त कर क्या पाएँगे यह तो आप जानें, परंतु आप यहाँ इस संसार में रहकर क्या पा सकते हैं, मैं दिखाती हूँ।''

महाप्रभु को सुरा की मादकता चढ़ रही थी और वह समझ रहा था कि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कितना मधुर, सुखद और सरस वातावरण है। इस पर भी स्वभाव से उसने कहा, "देवी! यह मैं मानता हूँ कि यह सब कुछ अति सुखप्रद है। तुम जैसी सुंदरी और इस स्वादिष्ट सुरा को अप्रिय कहकर मैं तुम्हारा अपमान नहीं करना चाहता; परंतु यह सब इंद्रियों का सुख है, तुच्छ है और क्षणभंगुर है। यह आत्मा की पुष्टि के लिए उपयुक्त नहीं है।"

मृदुला खिलखिलाकर हँस पड़ी। उसके अनार के दानों-समान दाँतों की दो लड़ियों ने तो महाप्रभु के हृदय को आंदोलित कर दिया। मृदुला ने हँसते हुए कहा, "यह आत्मा की आड़ लेने की आवश्यकता क्यों पड़ गई, भगवन्? भगवान् तो आत्मा के अस्तित्व को नहीं मानते थे। आप एक न होने वाली वस्तु की तुष्टि करने लगे हैं।"

महाप्रभु को, नगर-वधू के उसे युक्ति में पछाड़ते देख अचंभा हुआ। वह समझता था कि यह गणिका नहीं जानती होगी कि भगवान् बुद्ध क्या मानते थे और क्या नहीं मानते थे।

इस समय सुमति आ गई और आगार के कोने में रखी वीणा को ले महाप्रभु के सम्मुख बैठ, उसे स्वर करने लगी।

"देखिए, यह स्वगीर्य वाद्य भूतल पर स्वर्ग का विस्तार करने में सबल है या नहीं?"

इस समय मृदुला ने सुरा का एक गिलास भरकर और दिया। इस बार महाप्रभु ने इंकार नहीं किया। सुमति ने वीणा पर बागेश्वरी बजाना आरंभ कर दी। आरोह-अवरोह, अंतरा, मीड़, तान-अलाप एक के पश्चात् दूसरा बजने लगा।

मृदुला ने और सुरा देते हुए कहा, "यह शरीर का है अथवा मन का, किसी का भी समझिए। है यह सुख वास्तविक। इसका साक्षात्कार हो रहा है। निर्वाण का साक्षात्कार किसी ने किया हो, ऐसा संसार में कोई जीवित नहीं है।"

इस समय तक सुरा का प्रभाव पूर्ण रूप में हो चुका था। महाप्रभु मृदुला के कथन को न सुन वीणा की स्वर-लहरी का रसास्वादन कर रहा था। मृदुला उसे पात्र के पश्चात् पात्र भरकर सुरा के दे रही थी।

महाप्रभु के मन में छिपी वासना-प्रवृत्ति जाग उठी और वह नगर-वधू से प्रेम प्रकट करने लगा था। इस समय नगर-वधू, उसे यह कह कि 'मैं अभी आती हूँ', आगार के बाहर चली गई। आगार के बाहर खड़ी दासी भीतर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आई और महाप्रभु को सुरापान कराने लगी।

कुछ ही समय में महाप्रभु अचेत हो चित लेट गया।

: 7 :

विनोद-भवन के सम्मुख मार्ग-तट पर पड़े भिक्षु को जब चेतना हुई तो दिन निकल चुका था। मार्ग पर चलने वाले बीसियों लोग एक बौद्ध भिक्षु को नगर-वधू के द्वार पर मदिरा से अचेत पड़ा देख बौद्ध मत पर आलोचना करते दिखाई दिए।

महाप्रभु को जब पर्याप्त चेतना हुई और उसने अपनी दयनीय अवस्था को समझा तो चुपचाप अना दंड ले, बिना लोगों के कहने का विचार कर नगर द्वार की ओर चल पड़ा।

विहार में पहुँच अपनी दुर्दशा का बदला लेने की योजनाएँ बनाने लगा। उसकी हँसी, जो नगर-वधू के भवन के भीतर और बाहर हुई थी, वह उसे बिच्छू के डंक के समान लगने लगी।

उसके मन में अपने पतन पर भी ग्लानि हो रही थी। साथ ही रात के अधिक सुरा-पान का दुष्ट प्रभाव अभी था। इससे उसने तीन दिन का अक्षुण्य व्रत रखने का निश्चय कर लिया। वह किसी से न मिलने का निश्चय कर अपने गृह का द्वार बंद कर घर के भीतर पड़ा रहा।

इन तीनों दिन तक एक उपासक चैत्य में महाप्रभु से मिलने की प्रतीक्षा में पड़ा रहा। तीसरे दिन महाप्रभु ने अपने गृह का द्वार खोला, स्नान किया और फिर हल्का भोजन किया।

इस समय उसे सूचना मिली कि तीन दिन से एक उपासक उससे भेंट की प्रतीक्षा में बैठा है। उसने उसे बुलाया। वह व्यक्ति किसी भले घर का युवक प्रतीत होता था। सुंदर युवा था, परंतु मुख की आकृति से ऐसा प्रतीत होता था कि वह भारी दुःख और कठिनाई में है। महाप्रभु के सम्मुख उपस्थित हो, उसने उनके चरण छुए और चरण-रज नेत्रों को लगाई। महाप्रभु ने कहा, "बैठो भन्ते! कौन हो? किस अर्थ मुझसे मिलना चाहते हो?"

आगंतुक ने उत्तर दिया, "भगवन्! उपासक मगध देश में पाटलिपुत्र से पूर्व में स्थित एक छोटे-से गाँव 'कुसुमावक्त' का रहने वाला है। पिता भूमिपति थे और 'कुसुमावत' का पूर्ण गाँव हमारा था। पिताजी के देहान्त के उपरान्त बड़े भाई ने गाँव पर अधिकार कर लिया और मुझे पाटलिपुत्र में पढ़ने भेज दिया। वहाँ हमारा कुलपुरोहित था और मैं उसके पास पढ़ने लगा।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"पुरोहितजी ने मुझे अष्टाध्यायी पढ़ाई और पश्चात् महासूत्र का पाठ आरम्भ होने वाला था। एकाएक पुरोहितजी की इकलौती कन्या के गर्भ ठहर गया। लड़की को जब डाँटकर पूछा गया तो उसने मेरा नाम बता दिया। परिणाम यह हुआ कि मुझे अपमानित कर गुरुगृह से निकाल दिया गया। मैं घर गया तो मेरा अपमान, छाया-समान, मेरे साथ गया। मेरी भाभी ने मुझसे पूछा, 'मुख काला कर आए हो न लल्ला?'

"मैंने उत्तर दिया, 'नहीं भाभी! यह सब झूठ है।'

" 'तो क्या लड़की झूठ बोलती है?'

" 'निस्संदेह।"

" 'चल धूर्त! मैं पहले ही जानती थी कि तुम्हारी आँखों में तुम्हारे पिता की दुष्टता छिपी है। तुम्हारे भैया तुम्हारा पक्ष लिया करते थे। तो अब सिद्ध हो गया है कि मेरा अनुमान सत्य था। तुम्हारे लिए इस घर में स्थान नहीं।'

"मैं अपने डाँटे जाने को सह सकता था, परंतु अपने पिताजी को दुष्ट कहा जाना सहन नहीं कर सका। इस पर कि भैया सिर नीचा किए यह सब कुछ सुनते रहे। मैं उसी समय, ऐसे ही जैसे वहाँ बैठा था, उठ घर से निकल आया। वहाँ से पाटलिपुत्र और फिर प्रयाग होता हुआ वैशाली में पहुँच गया। इस यात्रा काल में मैं निरंतर विचार करता रहा हूँ और अंत में इस परिणाम पर पहुँचा हूँ कि यह संसार त्यागने योग्य है। मैं भिक्षु बनने के विचार से यहाँ आया हूँ और आपसे दीक्षा लेने की प्रतीक्षा में तीन दिन से बैठा हूँ।"

इस कथा को सुन महाप्रभु उस युवक के मुख पर देख विचार करने लगा कि होनहार युवक प्रतीत होता है। यदि यह संघ में सम्मिलित हो जाए तो निस्संदेह संघ के नाम को उज्ज्वल करेगा। इस पर भी बोला, "यह भिक्षु मार्ग अति कठिन है, युवक! पग-पग पर काँटों की बाड़ है। प्रलोभन संसार में भरे पड़े हैं। एक ओर पूर्ण संसार के आनंद-भोग हैं और दूसरी ओर वीरान कष्टप्रद कंटकाकीर्ण मार्ग है। मैं समझता हूँ, विचार कर लो। कोई कार्य उसका भविष्य देखे बिना नहीं करना चाहिए।"

"प्रभु! बहुत सोच चुका हूँ। मैं इस संसार से घृणा करने लगा हूँ। मुझे इसको देखकर जो मानसिक क्लेश होता है, वह वर्णनातीत है। मुझे बचा लीजिए। भगवन्! मैं गढ़े में धँसता जा रहा हूँ। नहीं जानता कहाँ जा पहुँचूँगा। मुझे बचाइए।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महाप्रभु ने विचार कर कहा, "अभी चैत्य में प्रतीक्षा करो। अपने मन में पूर्ण बात को समझने का यत्न करो। तब तक मैं भी देखूँगा कि तुम्हारा मानसिक विकास कहाँ तक हुआ है। कुछ दिन उपरान्त हम फिर इस विषय पर बातचीत करेंगे। तुम्हारा नाम क्या है?"

"पद्मनाभ, भगवन्!"

"अच्छी बात है। बीच-बीच में मिलते रहा करो। तब तक उपासना में सम्मिलित हुआ करो। अपने उद्देश्य पर मनन किया करो और समय पर तुम्हें दीक्षा मिल जाएगी।"

पद्मनाभ विहार में एक विशेष व्यक्ति माना जाने लगा। विहार में उच्च वर्ण के लोग कम आते थे। साथ ही पद्मनाभ पढ़ा-लिखा, विद्वान् था। अच्छी-खासी संस्कृत जानता था। यह बात विहार में अनोखी थी। यद्यपि संस्कृत-साहित्य पढ़ना पाप माना जाता था, तो भी इसके जानने वालों का विहार में अभाव होने से पद्मनाभ विशेष आकर्षण बन रहा था।

एक दिन कुछ भिक्षु और भिक्षुणियाँ उपासना के उपरांत उसे घेरकर खड़ी हो गईं। महाप्रभु अपने गृह में जा चुके थे। "भन्ते!" एक भिक्षु ने पूछा, "आपको दीक्षा नहीं दी जा रही, क्या कारण है?"

"मैं पातकी हूँ।"

"क्या पापकर्म किया है आपने?"

"एक क्षत्रिय वंश में उत्पन्न हुआ हूँ।"

"ओह! महाप्रभु ने बताया है यह?" एक भिक्षुणी ने पूछा।

पद्मनाभ ने प्रश्नकर्ता की ओर देखा। एक युवती उसकी ओर देखती हुई मुस्करा रही थी। पद्मनाभ ने आँखें नीची कर कहा, "नहीं देवी! मैं स्वयं भी ऐसा ही मानने लगा हूँ।"

"तब तो ठीक है। जो अपने को पापी मानता हो, वह वास्तव में ही पापी है, चाहे उसने पाप किया हो या नहीं।"

इस तत्त्व की बात को पद्मनाभ ने सुना तो पुनः कहने वाले के मुख की ओर देखने लगा। भिक्षुणी हँस रही थी। वह अन्यमनस्क भाव से उसकी ओर देखता रहा। भिक्षुणी नीलमणि थी।

: 8 :

महाप्रभु ने नगर-वधू प्रथा का सर्वनाश करने का विचार कर लिया। उसने एक-एक, दो-दो करके संसद् के सदस्यों को बुलाकर अपना मत प्रकट करना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आरंभ कर दिया।

वैशाली की संसद् में सत्तावन सहस्र क्षत्रिय, ब्राह्मण और वैश्य परिवारों के प्रतिनिधि थे। संसद् के सदस्यों की संख्या तीन सौ चालीस थी। इनमें दो सौ सदस्य वैश्य जाति के थे, चालीस ब्राह्मण थे और शेष सौ क्षत्रिय थे। गणपति तथा मंत्रिगण खुली संसद् में चुने जाते थे। जब कभी किसी पड़ोसी देश से झगड़ा होता था तो युद्ध के लिए सेनापति अथवा बातचीत करने के लिए दूत भी संसद् के खुले अधिवेशन में चुन लिया जाता था।

वैशाली के राज्य-संचालन के लिए एक विधान बना था। प्रत्येक संसद् के सदस्य को शपथ लेनी पड़ती थी कि वह विधान का उल्लंघन नहीं करेगा। विधान में परिवर्तन सर्वसम्मति से ही हो सकता था।

नगर-वधू रखने की प्रथा विधान का अंग थी। इस कारण इस प्रथा को हटाने के लिए सर्वसम्मति की आवश्यकता थी। संसद् के सदस्य महाप्रभु के सम्मुख इस प्रथा की बुराइयों को मान जाते थे, परंतु जब संसद् में इसके विरोध की बात होती थी तो आनाकानी करने लगते थे।

महाप्रभु के इस प्रयत्न की सूचना मृदुला को मिली और उसने गणपति से इस विषय में बातचीत की। गणपति सुनकर पूछने लगा, ''मृदुला देवी! तुम क्या चाहती हो?''

मृदुला का मुख इस प्रश्न से लाल हो गया। उसने कहा, ''आर्य! यह प्रथा वैशाली की है। इसके लाभ-हानि को वैशाली ही समझे। जहाँ तक मेरा संबंध है, मैं इस पद से तुरंत मुक्त होना चाहती हूँ।''

''क्यों?''

मृदुला ने आँखें नीची किए हुए कहा, ''मेरा उचित स्थान मेरी प्रतीक्षा कर रहा है।''

''तो तुम्हारा स्थान बन गया है?'' गणपति ने विस्मय से पूछा।

''हाँ आर्य! और मैं वहाँ जाने के लिए व्याकुल हूँ।''

''यदि आपत्ति न हो, तो क्या मैं जान सकता हूँ कि वह कहाँ है?''

मृदुला ने वैसे ही आँखें नीची किए हुए कहा, ''आप तो मेरे पिता हैं। आपसे मेरी कोई बात छिपी नहीं रहनी चाहिए। मैं अयोध्या जाने के लिए व्याकुल हो रही हूँ।''

''अयोध्या?'' गणपति ने चकित हो पूछा।

''हाँ आर्य! आप समझ सकते हैं कहाँ। वहाँ के महामात्य प्रासाद में एक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आगार मेरे लिए निश्चित हो चुका है।"

गणपति ने कुछ उदास होकर कहा, "तुम्हारे निर्वाचन से मैं प्रसन्न हूँ और यदि मेरे बस में होता तो मैं तुम्हें आज ही मुक्त कर देता, परंतु वैशाली के विधान में परिवर्तन मेरे बस की बात नहीं है। रही नगर-वधू रखने की प्रथा, मैं इसके तोड़ने के पक्ष में नहीं हूँ। इस समय वैशाली में गणिकाएँ बहुत कम हैं। उनमें से प्रायः सर्वश्रेष्ठ गणिकाएँ विनोद-भवन में हैं। इससे नगर के गण्य-मान्य लोग विनोद के लिए यहाँ आते हैं और वे राज्य के नियंत्रण में रहते हैं। यदि वह विनोद-भवन तोड़ दिया गया तो लोगों की प्रकृति तो वही रहेगी जो अब है। हाँ, एक विनोद भवन के स्थान पचास छोटे-छोटे विनोद भवन बन जाएँगे और वहाँ पर जो उच्छृखंलताएँ होंगी, उनका ज्ञान रखने के लिए राज्य को पचास स्थानों पर अपने गुप्तचर रखने पड़ेंगे।"

"इसके रहते, मैं तुम्हें समय से पूर्व मुक्त नहीं कर सकता। मैं समझता हूँ तुम्हारे यहाँ रहने के तीन वर्ष और हैं और तब तक भानुमित्र कम-से-कम एक विवाह और कर लेगा। तुम शायद उसकी तीसरी पत्नी बनोगी।"

मृदुला चुप रही। गणपति ने कहा, "महाप्रभु ने विनोद-भवन को तोड़ने का प्रयत्न यहाँ अपमानित किए जाने के पीछे आरंभ किया है। शायद यह उस अपमान का ही परिणाम है।"

मृदुला की हँसी निकल गई। गणपति ने कहा, "मृदुला देवी! यह हँसने का विषय नहीं। मैं समझता हूँ कि तुमने उसे यदि मार्ग-तट पर लिटाने के स्थान विहार तक पहुँचवा दिया होता तो ठीक रहता। वह धर्म में एक प्रतिष्ठित व्यक्ति है। उसके अपमान से पूर्ण धर्म का अपमान माना जा रहा है।"

"मैं यह स्वीकार करती हूँ कि कुछ अशिष्टता हो गई है। परंतु आर्य, वह महानुभाव किसी धर्म-कार्य से तो यहाँ आए नहीं थे। राज्यकार्य की विरोधी गुप्तचर गणिका की टोह लेने ही तो आए थे न? और अब तो एक नई बात चल रही है। क्या मैं महाप्रभु जी का अंतिम पत्र आपको पढ़कर सुनाऊँ? शायद आपके काम की वस्तु बन जाए। यह पत्र अभी आया है। ठहरिए, मैं अभी लाती हूँ। चंपा के धोखा देने के पश्चात् अब मैं किसी पर विश्वास नहीं कर सकती।"

"यह तो बहुत विचित्र है। जाओ, शीघ्र ले आओ। मैं आज जल्दी ही

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
जा रहा हूँ।"

मृदुला ऊपर की मंजिल पर गई और अपने आगार में एक लोहे के संदूक को खोलकर उसमें से एक पत्र ढूंढकर ले आई।

उसने पत्र लाकर गणपतिजी को दे दिया। यह इस प्रकार लिखा था–

"प्रिय चन्द्रवदनी!

"कल रात-भर मैं सो नहीं सका। पद्मनाभ एक गुणी आदमी मुझे मिल गया है, जो भाँति-भाँति के काव्य सुनाकर मेरा मन बहलाता रहता है, परंतु वह भी तो रात-भर मेरे पास बैठा नहीं रह सकता। मुझे जब झपकी आती थी तो तुम्हारा चंद्र-मुख मेरे सामने आ विराजमान होता था। मैं जानता हूँ कि यह वासना है। इस पर भी मैं इसको मन से निकाल नहीं सकता। मैं तुमसे एक रात पुनः वैसे ही प्रेम की भिक्षा माँगता हूँ, जैसी तुमने पहले दी थी। यह कैसे हो सकता है, यह तो तुम ही बता सकती हो। इससे मेरी चिंता समाप्त हो जाएगी। मैं स्थिर चित्त से उपासना और ध्यान में लग सकूँगा। इस वर्तमान अवस्था में मैं तो पागल होता जा रहा हूँ। अपने कार्य को भूल रहा हूँ, और सब कहते हैं कि मैं दुबला होता जाता हूँ।"

"मेरी इस अवस्था में भी तुम ही कारण हो। एक निष्पंक-निरपराध व्यक्ति को, जो संसार के सुखों से दूर था, तुमने ही घसीटकर इसके स्वाद में लपेट लिया है। अब तुम ही हो, जो मुझे इस बंधन से बाहर निकाल सकती हो।"

"कम-से-कम उत्तर तो दो। मैं दिन-भर तुम्हारे कार्य से घृणा करता हूँ। सब मिलने वालों को कहता रहता हूँ कि विनोद-भवन को जलाकर राख कर दो, परंतु रात को तुम मेरी दृष्टि में समाई रहती हो। प्रतीत होता है कि तुमने कोई जादू डाल दिया है मुझ पर।"

तुम्हारा कल्याण"

"तो तुम", गणपति ने पत्र वापस करते हुए कहा, "उसे इनका उत्तर नहीं देतीं?"

"एक पद्मनाभ नाम का उपासक पत्र लाता है। जब उत्तर माँगता है तो मैं कह देती हूँ कि कुछ उत्तर नहीं है।"

गणपति ने मुस्कराकर उत्तर दिया, "गवाँर लोगों में रहते-रहते प्रेम करने का ढंग भी नहीं जानता यह। मैं समझता हूँ, मृदुला देवी! उस बेचारे को उत्तर तो दिया करो। संसार में सफल वही हो सकते हैं, जो सबकी आशाओं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
को जीवित रखते हैं। आशाएँ दो प्रकार से मरती हैं। एक तो पूर्ण कर देने से। जब किसी की आशा पूर्ण हो जाती है, तब वह संतुष्ट हो जाता है और आशा रखने वाले व्यक्ति की भाँति वह खुशामद और मिन्नत नहीं करता रहता। कृतज्ञता, जो आशा पूर्ति के पश्चात् उत्पन्न होती है और वह क्षणभंगुर है, अधिक काल तक नहीं रहती।''

''आशाओं की मृत्यु होने में दूसरा कारण उन आशाओं की पूर्ति न हो सकने का विश्वास हो जाने में है। इस कारण मैं यह कहता हूँ कि जिस व्यक्ति से कोई कार्य लेना हो उसकी आशाएँ बनी रहनी देना ही ठीक है।''

''परंतु आर्य! मैंने तो उससे कोई कार्य नहीं लेना।''

''पर वैशाली राज्य ने तो उससे कई कार्य संपन्न कराने हैं और तुम हो राज्य की सेविका।''

''तो आप ही लिखा दीजिए न कि क्या उत्तर दूँ?''

गणपति कुछ विचारकर बोला, ''तुम्हारी लिखावट तो वह पहचानता नहीं। इससे उत्तर मैं ही लिखाकर भेज दूँगा। इसका उत्तर जब आए तो तुम मुझे दे देना। हाँ, अपने हाथ से कुछ भी लिख उसे न भेजना। वह बहुत काँइयाँ है। तुरंत समझ जाएगा।''

: 9 :

पद्मनाभ को दीक्षा नहीं दी गई, परंतु बिना दीक्षा के वह भिक्षुओं के समान विहार में आता-जाता रहता था। उसने अपना सिर नहीं मुँडाया था और भिक्षुओं वाले वस्त्र नहीं पहने थे।

इसका कारण यह था कि महाप्रभु ने उससे षड्यंत्र का कार्य लेना था। महाप्रभु ने समझाया, ''पद्मनाभ! जो कार्य तुम करने जा रहे हो, उसमें सिर मुँडाने से बाधा खड़ी हो जाएगी।''

''यह तो मैं मानता हूँ, प्रभु! परंतु एक बौद्ध-भिक्षु होने से आप सांसारिक बातों में हस्तक्षेप ही क्यों करते हैं? यह मुझे समझ नहीं आ रहा।''

''प्रिय पद्मनाभ! बौद्ध-मत के प्रसार में दो बाधाएँ आ उपस्थित हुई हैं। एक गणपति देवधर्मा और दूसरी वैशाली में नगर-वधू-प्रथा। इनको जड़ से उखाड़ने का अर्थ, बौद्ध-धर्म-प्रचार में महान् बाधा को हटाना है।''

''मैं तो समझता था कि अपनी उन्नति हमारा लक्ष्य है।''

''यदि ऐसा होता तो महामुनि शाक्य मुनि गौतम देश में चालीस वर्ष तक भ्रमण क्यों करते? उनका कहना था कि प्रत्येक मनुष्य को आत्मोन्नति

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के लिए आपने आस-पास पड़ी गंदगी दूर करना आवश्यक है। जब से देवधर्मा वैशाली का गणपति बना है, बौद्ध-मत का प्रचार रुक गया है। इस कारण इसको हटा दूसरा गणपति नियुक्त करना उचित ही है।''

''यदि गंदगी दूर करते-करते हम इसमें फँस गए तो?''

''इस कारण ही तो मैं तुम्हारे जैसे दृढ़ निश्चय वाले व्यक्ति को नियुक्त कर रहा हूँ।''

''मुझे तो आपके विषय में भय है, प्रभु!''

''मेरी चिंता न करो। मैं कभी प्रलोभनों में फँस भी जाता हूँ तो मन को सदा निर्लेप रखता हूँ।''

पद्मनाभ ने श्रद्धा से महाप्रभु के मन की दृढ़ता पर विश्वास कर लिया। इसके पश्चात् महाप्रभु के प्रेम-पत्र लेकर वह नगर-वधू के विनोद भवन में जाने लगा। इसके अतिरिक्त महाप्रभु व उनके कहने पर पद्मनाभ ने संसद् के सदस्यों को मिल नगर-वधू-प्रथा की निंदा करनी आरंभ कर दी।

पद्मनाभ विहार के प्रत्येक भिक्षु और भिक्षुणी से सुहृदयता और घनिष्टता का व्यवहार रखता था। उसकी बातों में रस और ज्ञान की मात्रा पर्याप्त होती थी।

उपासना के पश्चात् प्रायः विचार-विनिमय हुआ करता था और पद्नाभ उसमें विशेष भाग लेता था। आत्मा और मन में क्या अंतर है, यह एक जटिल प्रश्न था, जिसका उत्तर प्रत्येक विहार में रहने वाला जानने को उत्सुक रहता था।

भिक्षुणियों में नीलमणि विशेष दृष्टिकोण रखती थी और दिन-प्रतिदिन दोनों में वार्त्तालाप विशेष रूप से रुचिकर होता जाता था। एक दिन दोनों विहार के पीछे वाले वन में बेर एकत्रित करते हुए खुलकर बातचीत करने लगे। पद्मनाभ ने कहा, ''इस ऋतु में बेर अति स्वादिष्ट होते हैं।''

''हाँ, जब और कुछ न मिले तो।''

''और कुछ न मिले का क्या अर्थ है?''

''माँस, उदाहरण के रूप में।''

''वह तामसी भोजन है, देवी!''

''इस पर भी भिक्षुओं के लिए खाद्य पदार्थ है।''

''पर हम लोग खाते तो नहीं?''

''मिले तो छोड़ते भी नहीं।''

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"तो तुमने खाकर देखा है कि यह स्वादिष्ट होता है?"

नीलमणि हँस पड़ी। फिर कुछ गंभीर हो पूछने लगी, "भन्ते! तुम नगर-वधू के भवन में कई बार जा चुके हो। क्या वहाँ तुम्हें भोजन का निमंत्रण नहीं मिलता?"

"मिलता तो है। जब भी मैं नगर-वधू से मिलता हूँ तो सबसे पूर्व वह कहती है, 'बैठिए भन्ते!' मैं बैठ जाता हूँ। पश्चात् वह कहती है, 'क्या खाइएगा? क्या पीजिएगा?' मैं कहता हूँ, 'सब आपकी कृपा है।' इस पर वह कहती है, 'अच्छी बात है, आप जा सकते हैं। चिट्ठी का उत्तर कुछ नहीं है।' इस पर मैं चला आता हूँ।"

"एक दिन वहाँ भोजन करके देखिए। फिर बेरों का स्वाद समझ में आ जाएगा। बड़े-बड़े सेठ-महाजन वहाँ भोजन करने के लिए लालायित रहते हैं।"

"तुम्हें बहुत बातों का ज्ञान है, देवी!"

"हाँ, मैं इस विहार में रहने वाले लोगों की भाँति आँखें बंद कर नहीं रहती। मुझे बहुत कुछ विदित है।"

"सत्य?" पद्मनाभ बेर तोड़ना भूलकर नीलमणि की चमकीली आँखों में देख रहा था और नीलमणि उसके मुख पर देख मुस्करा रही थी।

"महाप्रभु एक दिन कहते थे कि नगर-वधू के एक रात के आतिथ्य ने उनके मष्तिक को इतना बिगाड़ दिया है कि कई रात से उन्हें नींद नहीं आती।"

"यह सब ढोंग है। कल रात वह ऐसे सोए हुए थे कि कई बार जगाने पर भी नहीं उठे थे।"

पद्मनाभ को यह सुन विस्मय हुआ। उसने कहा, "तो मुझसे जो नित्य नगर-वधू के नाम पत्र लिखवाए जाते हैं, झूठ है क्या?"

"तो पत्र आप लिखकर ले जाते हैं?"

"मेरा अभिप्राय यह है कि लिखाते वे हैं, लिखता मैं हूँ।"

"तभी! व पत्र भद्दे ढंग पर लिखे होते हैं।"

इससे पुनः पद्मनाभ को विस्मय हुआ। उसने नीलमणि को दोनों भुजाओं में पकड़कर कहा, "यह रहस्य की बात तुम्हें कैसे पता है, नीलमणि?"

"मैं और भी बहुत कुछ जानती हूँ।"

"क्या जानती हो?"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"वह यह कि जिस रात को नगर-वधू का आतिथ्य महाप्रभु को मिला था, उस रात उन्होंने वहाँ बहुत मदिरा पी थी। पश्चात् एक दासी को नगर-वधू समझ उससे प्रेम-प्रलाप करते रहे। जब अचेत हो गए तो उठवाकर मार्ग-तट पर फिकवा दिए गए। अब चाहते हैं कि नगर-वधू को बदनाम करें और फिर इस प्रथा क़ो तुड़वा दें।"

पद्मनाभ नहीं समझ सका था कि नीलमणि को इन बातों का ज्ञान कहाँ से होता है। उसने यह जानने के लिए नीलमणि से और घनिष्टता उत्पन्न करनी आरंभ कर दी।

एक सायं चैत्य के उस आगार में, जहाँ पद्मनाभ सोता था, नीलमणि आई। पद्मनाभ महाप्रभु के कार्य से नगर-वधू के भवन पर गया हुआ था। नीलमणि ने उस आगार का द्वार भींचकर बंद कर दिया और दीपक जला पद्मनाभ के सामान की तलाशी लेनी आरंभ कर दी। उसके पहनने के कपड़े थे। नीलमणि ने भली-भाँति देखे और पुनः उसी थैले में रख दिए, जिसमें वे थे। उसके आगार में संस्कृत में लिखे तीन ग्रन्थ थे। एक रामायण कविवर वाल्मीकि ऋषि की लिखी हुई, दूसरी वायुपुराण और तीसरी भारत-महाकाव्य। उनमें कुछ आपत्तिजनक न पा नीलमणि ने तीनों को उसी प्रकार लपेट दिया जैसे वे थीं। पश्चात् दीपक के प्रकाश में आगार का कोना-कोना ढूँढ़ डाला। जब उसे कुछ भी ऐसी वस्तु नहीं मिली, जिसकी वह आशा कर आई थी, तो हताश हो भूमि पर बैठ विचार करने लगी। दीपक उसने अपने सम्मुख भूमि पर रख लिया।

वह मन में सोचने लगी कि यहाँ तो कुछ पता नहीं चला। फिर अपनी चोली के भीतर से एक पत्र निकाल पढ़ने लगी। उसमें लिखा था, 'यह पद्मनाभ कौन है? कहाँ से आया है? भिक्षु नहीं है तो फिर विहार से और महाप्रभु से क्या संबंध है? जो कुछ संभव हो स्पष्ट कर लिखो।'

इतना पढ़ उसने वह पत्र पुनः अपनी चोली के भीतर डाल लिया और घुटनों पर सिर रख सोचने लगी। इस समय चैत्य के बाहर पद्मनाभ ने कालमेघ को पुकारकर कहा, "मैं आज भोजन नहीं करूँगा।"

नीलमणि ने उसकी आवाज सुनी तो दीपक बुझा दिया और उठकर किवाड़ खोल बाहर निकल जाना चाहती थी कि पद्मनाभ ने धकेलकर द्वार खोल दिए। नीलमणि पीछे हट गई। पद्मनाभ ने द्वार में खड़े-खड़े ही अपने कुरते की जेब से चकमक निकाला और घिसकर बत्ती जलाने लगा। यदि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वह द्वार से एक ओर हटकर खड़ा हो जाता तो नीलमणि अंधेरे में चुपचाप बाहर निकल जाती; परंतु वह द्वार में ही खड़ा रहा और वहीं खड़े-खड़े चकमक घिसकर कपड़े की बत्ती जला दीपक ढूँढ़ने लगा। उसने देखा कि दीपक भूमि पर पड़ा है। वह दीपक को एक अनहोने स्थान पर पड़ा और फिर उसकी बत्ती में से धुआँ निकलते देख अचम्भे में वहीं खड़ा देखने लगा।

नीलमणि ने समझ लिया कि अब उसका चोरी-चोरी वहाँ आने का भेद खुले बिना नहीं रहेगा। इससे अपने मन में बहाने सोचने लगी। इस समय दीपक से कुछ दूर एक स्त्री के नंगे पाँव बत्ती के धुँधले प्रकाश में पद्मनाभ को दिखाई दिए। विद्युत् की भाँति उसके मन के भावों को नीलमणि समझ गई। उसने लपककर उसके हाथ में जलती बत्ती पर हाथ दे मारा। बत्ती बुझ गई, परंतु पद्मनाभ ने उसे दोनों भुजाओं में पकड़ लिया। नीलमणि इस प्रकार पकड़ी जाने पर पद्मनाभ से लिपट गई।

पद्मनाभ ने नीलमणि का मुख नहीं देखा था। इस पर भी वह अपने से किसी को गाढ़ आलिंगन करते ही समझ गया कि कोई युवती है। एक क्षण तो वह इस सबका अर्थ समझ ही नहीं सका। पश्चात् उसके आलिंगन में व्यग्रता देख उसके मन में संशय हो गया कि किसी कामातुर भिक्षुणी ने उसे पकड़ लिया है।

इससे सचेत हो उसने पूछा, "कौन हो, देवी? अपना परिचय तो दो। इस प्रकार डाका डालना उचित नहीं।"

इस पर नीलमणि ने उसे और कसकर अपने साथ लगा लिया। पद्मनाभ उसे भुजाओं में न दबाए रहता, परंतु उसे भय था कि इस अंधेरे में वह भाग जाएगी। इससे उसने पकड़े-पकड़े ही पुनः कहा, "प्रिय! कौन हो तुम?"

नीलमणि ने देखा कि भागना असंभव है। इसीलिए बोली, "तुम तो मेरी हड्डी-पसली तोड़ डालोगे। छोड़ो तो बताऊँ।"

पद्मनाभ पहचान गया—"ओह! नीलमणि हो? ठहरो, दीपक जला लूँ।"

"नहीं, कोई देख लेगा।"

"डरो नहीं। कोई नहीं देखेगा। और फिर देखने से कोई क्या कर लेगा?"

पद्मनाभ समझता था कि आज यह काबू आई है। इससे और भेद की बातें लेनी चाहिए। इससे पुनः दरवाजे में खड़ा हो, मार्ग रोक चकमक से बत्ती जलाने लगा। नीलमणि उसके सामने खड़ी विचार कर रही थी कि क्या बहाना बनाए।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बत्ती जली। नीलमणि ने भूमि से दीपक उठा आगे कर जला लिया। पश्चात् दीपक को लकड़ी की बनी ख्यूट पर रख दिया। पद्मनाभ ने आगार का द्वार बंद कर दिया और भूमि पर बिछी चटाई पर दोनों बैठ गए। पद्मनाभ ने उसकी आँखों में देखा तो नीलमणि हँस पड़ी। पद्मनाभ की भी हँसी निकल गई। इस पर पद्मनाभ ने अपने आगार में चारों ओर देखकर पूछा, ''बस देवी! क्या तुम्हारे आने का प्रयोजन पूर्ण हो गया है?''

नीलमणि फिर हँसी और पश्चात् कुछ शांत हो बोली, ''पुरुष मूर्ख होते हैं या धूर्त, कह नहीं सकती।''

''यह संशय क्यों उत्पन्न हुआ, देवी?''

''तुम्हारे यह पूछने से कि प्रयोजन सिद्ध हुआ या नहीं।''

''पर मैं तो समझा था कि यह जो कुछ हुआ है, आकस्मिक घटना है। वास्तविक प्रयोजन कुछ और हो सकता है।''

''आकाश और पाताल हो सकता है। एक स्त्री और पुरुष तीन मास से आँख-मिचौनी खेल रहे हैं और पुरुष को समझ ही नहीं पड़ता कि प्रयोजन क्या है। मैं यह समझी कि तुम यहाँ होगे। अंधेरा होने पर अपने आगार से छिपकर निकल आई। प्रतिहारी इस समय फाटक की खिड़की बंद कर, जिससे कोई वन-पशु भीतर न चला जाए, शौचादि के लिए चला जाता है। मैं खिड़की खोल चुपचाप यहाँ आई, परंतु तुम नहीं थे।

''यहाँ दीपक जलाया और बैठ गई। फिर विचार आया कि यह ग्रंथ कोई जातक है। खोलकर पढ़ने का विचार हुआ। परंतु ये संस्कृत में निकले। अभी इनको लपेटकर रखा ही था कि तुम्हारी आवाज कालमेघ को भोजन के विषय में कहती सुनाई दी। बस, दीपक बुझा बैठ गई। तुम आए तो दीपक जलाने के लिए चकमक घिसने लगे। बत्ती जलाई तो मुझे लज्जा आ गई। मैंने बत्ती बुझा दी और फिर...।''

पद्मनाभ हँस पड़ा। नीलमणि भी हँसने लगी। पूर्व इसके कि उसके वहाँ आने के विषय में और पूछगीछ हो, वह पद्मनाभ से बोली, ''देखो, मैं एक ज्योतिष लगती हूँ। आज नगर-वधू तुमसे बहुत ही नम्रता से मिली है। ठीक है न?''

''वह तो सदैव ही बहुत सभ्यता से बात करती है।''

''आज उसने महाप्रभु के प्रथम पत्र का उत्तर दिया है।''

''नहीं, यह बात भी नहीं है।''

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"सुनते जाइए। आज के पत्र का उत्तर देने का वचन दिया है।"

"बिलकुल, ऐसा तो नहीं कहा है। हाँ, यह कहा है, यदि कुछ उत्तर हुआ तो भेज दिया जाएगा।"

"पहले से तो भिन्न है न?"

"हाँ, यह बात तुम्हारी कुछ-कुछ सत्य है।"

"तुम्हें भोजन करने का विशेष आग्रह किया गया और मांस, मछली, मुर्गा खाने को तथा सुरापान को मिली है।"

"यह तो तुमने ही कहा था कि कभी खाकर देखो। सो मैंने एक आध बार कहने पर ही खा लिया। परंतु इस पर ज्योतिष की क्या बात है? मेरे मुख से सुरभित सुरा की सुगंध आती ही होगी।"

"परंतु पत्र के उत्तर की बात तो ठीक है न?"

"हाँ, माना। यह तो नीलमणि। मैं पहले से ही मानता हूँ कि तुम विशेष दृष्टि और प्रतिभा रखने वाली स्त्री हो और आज तो तुमने मुझ पर अपार कृपा की है।

"एक बात मैं तुम्हें अपने मन की बताना चाहता हूँ। मैं समझता हूँ कि तुम्हारी महाप्रभु से बहुत घनिष्टता है और महाप्रभु की तुम पर बहुत कृपा है। तुम मुझ पर उनकी ओर से देख-रेख कर रही हो।"

इतना कह मुस्कराते हुए पद्मनाभ ने नीलमणि की ओर देखा। नीलमणि हाथ-पर-हाथ की ताली मारकर हँस पड़ी।

"क्यों, क्या यह बात असत्य है?" पद्मनाभ ने तिरछी दृष्टि से उसकी ओर देखते हुए पूछा।

नीलमणि ने गंभीर हो कहा, "तुम तो लाल बुझक्कड़ हो, भेड़ों में ऊँट पहचानते हो। लो, मैं तुम्हें अपनी कथा सुनाती हूँ–

"बचपन से ही मैं शाक्य मुनि गौतम के गुणानुवाद सुनती रही हूँ। उनका त्याग, तपस्या, उनका तेज, बल और ज्ञान सुन मन में उनका अनुकरण करने की ठान बैठी थी। बचपन में ही मुझे भगवान् बुद्ध के अम्बपाली गणिका के आवास में भोजन करने और फिर उसे बौद्ध-धर्म की दीक्षा देने की कथा सुनाई गई थी। वैशाली के गणपति का सहस्रों प्रजागणों के साथ भगवान् के चरणों में अपनी पूर्ण धन-संपत्ति अर्पण कर पीत वसन पहन दंड ले भगवान् के पीछे चल पड़ना मैंने सुना था। इन सब बातों को सुन मेरे मन में उन जैसा बनने की लालसा जाग उठी।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"मैं बारह वर्ष की हुई तो घर का काम-काज छोड़ घंटों ही बैठी भविष्य के स्वप्न देखा करती थी। मैं समझती थी, भिक्षुणी बनूँगी, तपस्या करूँगी और फिर ब्रह्मचर्य के ओज से देदीप्यमान हो नगर-नगर और गाँव-गाँव में घूमा करूँगी। लोग सहस्रों और लाखों की संख्या में मेरे पीछे-पीछे मेरे दर्शनार्थ घूमा करेंगे।

"घरवालों ने मुझे आलस्य और प्रमाद में निष्कर्म देख डाँटना आरंभ कर दिया, पर मैं किसी की न सुनती। एक दिन भगवान् कल्याण हमारे गृह में आए और मेरे पिता ने उन्हें मुझे शिक्षा देने के लिए कहा। जब उन्होंने मुझे घर के कामकाज में मन लगाने को कहा तो मैंने पूछा, 'घर के कामकाज से निर्वाण प्राप्त होगा क्या?'

"प्रभु उत्तर नहीं दे सके। मैंने तुरंत कह दिया कि मैं भिक्षुणी बनूँगी।

"घर में बहुत झगड़ा हुआ, परंतु मैं अपने हठ पर डटी रही। चौदह वर्ष की होने पर मैं भिक्षुणी बन गई। विहार में कुछ काम करने को नहीं था। भोजन करना, उपासना में सम्मिलित होना और सो रहना अथवा अन्य भिक्षुओं के साथ गप्पें हाँकना तथा खेलना।

"नगर में भिक्षा करने जाना सप्ताह में कवेल एक बार होता था।

"इस जीवन से मै। शीघ्र ही थक गई और मैं महाप्रभु को अपने मन में उठते भिन्न-भिन्न प्रश्नों को पूछकर तंग करने लगी। एक दिन मैंने जा पूछा—

" 'मनुष्य जीवन का क्या उद्देश्य है, प्रभु?'

"उत्तर था, 'निर्वाण-प्राप्ति।'

" 'यह उद्देश्य किसने बनाया है?'

" 'यह जानने की आवश्यकता नहीं।'

'मैंने जानने का हठ किया, तो प्रभु ने बताया,

" 'प्रकृति के धर्म ने।'

"उस दिन मुझे संतोष हो गया, परंतु रात सोए-सोए जब मैं विचार करने लगी तो बीसियों और प्रश्न जाग उठे। अगले दिन मैंने फिर प्रभु को जा पकड़ा। मैंने पूछा, 'प्रकृति का धर्म निर्वाण-प्राप्ति है तो वह अपना धर्म छोड़ इस जीवन-मरण के बंधन में आई क्यों?'

"उत्तर मिला, 'इसमें विकार उत्पन्न हो गया था।'

"मेरा प्रश्न था, 'विकार स्वयं हुआ था अथवा किसी बाहरी वस्तु के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रभाव से?'

" 'प्रकृति में अपने स्वभाव से विकार हुआ है।'

" 'तो स्वभाव से विकार मिटना भी स्वयं ही चाहिए।'

"इस प्रकार वाद-विवाद चलता रहता। अंत में महाप्रभु निरुत्तर हो जाते तो झुँझलाकर कहते, 'देखो, तुम अभी बालिका हो। तुम्हें तो अपने गुरुजनों की बात स्वीकार कर लेनी चाहिए। बड़े हो जाने पर सब समझ आ जाएगा।'

"मैं सोलह वर्ष की हुई तो मेरे में एक नवीन प्रकार की भावना उत्पन्न होने लगी। मेरे मन में लालसा उत्पन्न होने लगी कि मैं पुरुषों और विशेष रूप में युवा पुरुषों के सम्मुख जाकर बैठूँ। उपासना में भी आँखें खोल युवा भिक्षुओं को बैठे देख आनंद अनुभव करती थी। इस विषय में मैंने अपनी अध्यक्ष कीर्तिदेवी से जाकर पूछा कि यह क्यों है? वह हँस पड़ी और बोली कि यह वासना है।"

" 'वह क्या होती है?' मैंने पूछा।

"उसने इसका उत्तर नहीं दिया। केवल यह कहा, 'भगवान् बुद्ध का चिंतन करो। उनकी शरण में जाओ। तुम्हें मार्ग दिखाएँगे।'

"मुझे एक नवयुवक भिक्षुक का तेजस्वी मुख कष्ट देने लगा। सोते-जागते वह मेरी आँखों के सम्मुख घूमने लगा। जब मैं व्याकुल हो गई तो एक मध्याह्न के समय प्रभु के गृह में जाकर अपनी कठिनाई का वर्णन कर दिया। बताते हुए मेरी आँखों में आँसू भर आए। वे मेरे सिर पर हाथ फेर मुझे ढाढ़स बँधाने लगे।

"मुझे उनका स्पर्श सुखद प्रतीत हुआ। उनके समीप खिसककर पूछने लगी, 'प्रभु! मुझे बताओ, मैं क्या करूँ?'

"उनका कहना था, 'भगवान् की शरण में जाओ। तुम्हें वे मार्ग दिखाएँगे।'

"मैंने उनके घुटने पर सिर रख रोते हुए कहा, 'रात-भर उनके मंत्र का जप करती रहती हूँ, परंतु कुछ परिणाम नहीं निकलता।'

"उन्होंने मेरे मुख पर हाथ फेर प्यार करना आरंभ कर दिया। मुझे ऐसा प्रतीत हुआ कि मेरे पूर्ण शरीर में रोमांच होने लगा है। मैं इस रोमांच से अचेत-सी हो गई। प्रभु मुझे अपनी छाती से लगा मेरा मुख चूमने लगे। अंत में वही हुआ जो इसका परिणाम था।

"इसके कई दिन पीछे मैंने पूछा, 'भगवान्! यह क्या था?'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"उन्होंने कहा, 'यह पतन का मार्ग था।'

"परंतु अति सुखप्रद था।"

"ठीक है, पर इससे बचने का यत्न करो। भगवान् बुद्ध तुम्हारी सहायता करेंगे।"

"इस पर भी मैं इस मार्ग को छोड़ नहीं सकी। प्रकृति मुझे इस ओर खींचकर ले जाती है। अब मैं जानती हूँ कि कुछ वृद्ध भिक्षुओं के अतिरिक्त विहार में शायद ही कोई होगा, जो इस पिपासा को सहन कर सकता हो।"

पद्मनाभ अभी नगर-वधू के भवन से होकर आया था। उसके मस्तिष्क में अभी वहाँ का सौंदर्य, कलामय वातावरण, सभ्य नियंत्रित जीवन का प्रभाव विद्यमान था। उसने नीलमणि को देखा। युवती तथा सुंदर होने पर भी नगर-वधू की दासियों के मुकाबले में कुरूप ही कही जा सकती थी। उसने उसके मुख पर देख कहा, "नीलमणि! तुम यदि विवाह कर लो तो कैसा रहे? भिक्षु-जीवन तुम्हारे अनुकूल नहीं पड़ रहा।"

: 10 :

महाप्रभु अपने गृह में बैठा एक पत्र पढ़ रहा था। इस समय पद्मनाभ आ पहुँचा। महाप्रभु ने वह पत्र पद्मनाभ को देते हुए कहा, "इसे पढ़ो।" पद्मनाभ ने पत्र पढ़ा। उसमें लिखा था—

"श्री 1008 परिव्राजक स्वामी कल्याण जी,

चरण-वंदना।

"दासी आर्य है। अतः आपको आर्य-परिव्राजकों की मान-प्रतिष्ठा देने पर बाध्य है। संन्यासी पितातुल्य होते हैं। सब संसार के प्राणी उनके लिए पुत्र-पुत्रियाँ होते हैं। अतः आपका वात्सल्य पाकर दासी अति कृतज्ञता अनुभव करती है। आप विनोद-भवन में आइए। दासी का आतिथ्य स्वीकार करिए। इससे दासी कृतकृत्य हो जाएगी।

"उस दिन आप एक संन्यासी के रूप में नहीं आए थे, प्रत्युत् किसी गणिका की खोज में आए थे। उस गणिका की खोज में आपका प्रयोजन क्या था, सो तो मैं नहीं जानती। इस पर भी उस दिन की घटना का अर्थ तो उसी खोज का परिणाम माना जाना चाहिए।"

"विनोद-भवन वासना-तृप्ति का साधन नहीं। यह कला-प्रदर्शन का केंद्र है। दुर्भाग्य से मानव-समाज अति दुर्बल है। उच्च-से-उच्च मानसिक उड़ान पर उड़ता हुआ मनुष्य दुर्बलता के कारण भूमि पर आ गिरता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
विनोद-भवन में वासना-विवशता है। ऐसे ही विहारों में वासना को माना जाता है। यहाँ भी कला के पुजारी वासना में फँस, इससे उठ पुनः कला-क्षेत्र में उड़ने का यत्न करते हैं। मैं समझती हूँ, यही बात आप लोग विहारों में करते हैं। दोनों में अंतर नहीं। आप निर्वाण की खोज में हैं। हम लोग कलामय सृष्टिकर्ता में लीन होने के प्रयत्न में लगे हुए हैं शायद दोनों का लक्ष्य एक ही है और नाम-भेद हम दोनों की भूल के कारण हो सकता है।

'अतएव विनोद-भवन में पधारिए। दासी के गृह को पवित्र करिए।

विनीता

मृदुला''

''बहुत सुंदर लिखा है।'' पद्मनाभ ने पत्र पढ़कर कहा।

''परंतु हमारे उद्देश्य की पूर्ति नहीं हुई।''

''आपका उद्देश्य क्या था, भगवन्?''

''उसे फँसाना। यदि वह लिखकर देती कि मेरा प्रेम उसने स्वीकार किया है अथवा करने को उद्यत है, तो मैं वैशाली के विधान से उसे मृत्यु-दंड दिलवा देता और मेरे अपमान का बदला निकल जाता।''

पद्मनाभ ने अचंभा प्रकट करते हुए कहा, ''मैं यह उद्देश्य नहीं समझा था। मैं तो यह समझा था कि आप उस सुंदरी को भूल के मार्ग से निकाल निर्वाण-पथ पर ले जाना चाहते थे। खैर, छोड़िए। अब क्या आज्ञा है? आपके लिए विनोद-भवन का द्वार पुनः खुल गया है। क्या आप इससे लाभ उठाना चाहते हैं?''

''इस स्थिति से तो मैं अपमानित हो जाऊँगा।''

''तो फिर क्या किया जाए?''

''अभी इस निमंत्रण को रहने दिया जाए। हमें अब दूसरी योजना पर अपना ध्यान केंद्रित करना चाहिए।''

''उसके लिए मेरी योजना तो यह है कि नगर के अपने पक्ष के पाँच प्रतिष्ठित लोगों की एक गुप्त सभा बुला ली जाए और उसमें पूर्ण योजना, उस योजना का उद्देश्य, योजना को सफल करने की विधि और फिर सफलता के पश्चात् उद्देश्य-सिद्धि निश्चित कर लें। इस सभा में हम धन, जन और शस्त्रों के विषय में भी विचार लेंगे।''

महाप्रभु ने कहा, ''उद्देश्य तो स्पष्ट ही है। हमें भारत और भारत के बाहर बौद्ध-धर्म का प्रचार करना है। उस उद्देश्य की पूर्ति में ब्राह्मण और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
क्षत्रियों के राज्य बाधक हो रहे हैं। अतएव इन राज्यों की कायापलट आवश्यक है। भारत खंड के बहुत-से भागों में गणराज्य स्थापित हो गए हैं। मगध, अवध, पांचाल, काश्मीर, कोंकण इत्यादि कुछ ऐसे राज्य रह गए हैं, जहाँ क्षत्रिय राजा राज्य करते हैं। इनको भी दूर कर गणराज्य बना दिया जाए तो बौद्ध-धर्म के प्रचार में बाधा मिट ज़ाएगी।

"यदि तुम यह सभा बुलाने में ही लाभ समझते हो तो एक-एक स्थान के लोगों को सभा बुलानी चाहिए। वैशाली में देवधर्मा को पदच्युत कर सेठ लक्ष्मीकांत को गणपति बना सकें, तो हमारी आधी विजय हो गई माननी पड़ेगी।"

❑❑❑

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गणराज्य

: 1 :

गणपति देवधर्मा अभी सोंकर उठा ही था कि उसे अयोध्या से एक दूत के आने का समाचार मिला। दूत एक पत्र लाया था जो उसने स्वयं गणपति की सेवा में उपस्थित होकर दिया।

देवधर्मा ने अपने शयनागार में ही उसे बुलाया और संदेश माँगा। दूत ने पत्र दे दिया। पत्र में केवल यह लिखा था—

"वैशाली में बल से राज्य पलटने का षड्यंत्र हो रहा है। सावधान रहिएगा।

भानुमित्र"

देवधर्मा ने पत्र पढ़कर पूछा, "और कुछ?"

दूत ने उत्तर दिया, "बस, यही पत्र देने के लिए भेजा है।"

"अच्छी बात है, जा सकते हो।"

दूत चला गया तो देवधर्मा विचार करने लगा कि भानुमित्र ने इतनी दूर से चेतवनी व्यर्थ नहीं भेजी होगी। उसे अपने गुप्तचरों से यह सूचना तो मिल रही थी कि एक उपासक, जिसका नाम पद्मनाभ है, बहुत भाग-दौड़ कर रहा है; परंतु उसका षड्यंत्र क्या रूप धारण करेगा, यह स्पष्ट नहीं हो रहा था।

देवधर्मा ने गुप्तचर विभाग के नायक को बुलाकर अधिक सतर्कता से देखभाल रखने का आदेश दे दिया।

उसी दिन संसद् की बैठक थी। उसमें नगर के प्रबंध के विषय में अनेक बातों पर निर्णय किए गए। देवधर्मा को ऐसा प्रतीत हुआ कि संसद् के शत-प्रतिशत सदस्य उसकी नीति को स्वीकार करते हैं।

उसी सायंकाल समाचार आया कि नगर में पूर्ण रूप से शांति है। सब लोग खेल-कूद और मनोरंजन में संलग्न हैं।

विनोद-भवन में जाने पर देवधर्मा को ऐसा प्रतीत हुआ कि किसी के भी मुख पर कोई विशेष मुद्रा नहीं है। वह अपने आगार में जा रहा था कि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
नगर के एक विख्यात सेठ सुचंद्र वहाँ उससे मिले। "ओह सुचंद्र जी? कहाँ भागे जा रहे हैं?"

"आप ही की ओर आ रहा था।"

"आइए। भीतर आगार में आ जाइए।"

दोनों भीतर चले गए। मखमली आसनों पर बैठ, निश्चिंत हो, पान-सुपारी ले, जो उनके भीतर आते ही एक दासी लेकर आई थी, सेठ सुचंद्र ने बात आरंभ की।

"आर्य! कल मेरे कनिष्ठ पुत्र की ग्यारहवीं वर्षगाँठ है। इस अवसर पर एक महोत्सव करने की योजना है। सो उस अवसर पर नगर की सब श्रेष्ठ संगीत तथा नृत्य-कला-प्रवीण गणिकाएँ आमंत्रित हैं। आपसे भी निवेदन है कि उस समय दर्शन देकर सेवक को कृतार्थ करें।"

"बहुत प्रसन्नता का विषय है, सेठजी! यह उत्सव किस समय हो रहा है?"

"कल सायंकाल से आरंभ होकर रात के तीसरे प्रहर तक चलेगा। मृदुलादेवी से भी निवेदन किया है। उन्होंने आना तो स्वीकार कर लिया है, परंतु अपना नृत्य करना अभी स्वीकार नहीं किया। कहती हैं, दस सहस्र स्वर्ण-मुद्रा एक नृत्य का लेंगी।"

"तो फिर क्या निश्चय हुआ है?"

"यूँ तो आपकी कृपा है। इतना धन दिया जा सकता है, परंतु यह है बहुत अधिक।"

"हाँ, कुछ अधिक तो है, परंतु जिस दिन वह यहाँ अपने भवन में नाचती है तो डेढ़-दो सहस्र मुद्रा एकत्रित हो जाना साधारण-सी बात है।"

"पर भद्र! दस और दो में भारी अंतर है।"

"ठीक है। उसके अतिरिक्त और कौन आ रही है?"

"आने को तो नगर-भर की गणिकाएँ आ जाएँगी और सबका खर्चा मिलकर भी सहस्र स्वर्ण-मुद्रा से कम ही पड़ेगा; परंतु मित्र लोग आग्रह कर रहे हैं कि मृदुला का वीणा-वादन और नृत्य आवश्यक हो।"

"सेठजी! इस वर्ष रेशमी माल में आपको बहुत लाभ हुआ है। कुछ व्यय हो जाएगा तो क्या हानि है? मृदुलादेवी जब से नगर-वधू बनी हैं, कभी किसी के घर नृत्य के लिए नहीं गईं। आपके घर पर जाने को तैयार हो गई हैं, यही बहुत बड़ी बात है।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"तो आपकी सम्मति है, दस सहस्र मुद्रा दे दी जाएँ?"

"मेरा कहना तो यह है कि ऐसी बातों में मोल-तोल के कुछ अर्थ नहीं।"

"बहुत ठीक। मैं अभी सेवक भेजकर धन जमा करा देता हूँ।"

इतना कह सेठ सुचंद्र प्रणाम कर वहाँ से चला गया। उसके जाने के पश्चात् मृदुलादेवी आईं। नमस्कर कर सम्मुख बैठ गईं। "क्या पान लीजिएगा?"

"अभी पान लिया है और कुछ आवश्यकता नहीं। तो सेठ सुचंद्र के यहाँ तुम जा रही हो?"

"निमंत्रण तो है। सेठ साहब बहुत ही सज्जन, मृदुभाषी और सभ्य नागरिक हैं।"

"ठीक है, ठीक है, मैं मना नहीं कर रहा। मैंने तो यह ऐसे ही पूछा है।"

"हाँ आर्य! आज अयोध्या के महामात्य का पत्र आया है।"

"अच्छा, क्या लिखा है?"

"बहुत ही दयालु हैं वे। ऐसा प्रतीत होता है कि उनको महाप्रभु के मुझ पर डोरे डालने का पता चल गया है। वे लिखते हैं कि यदि मुझे किंचित् भी भय प्रतीत हो तो मैं तुरंत भागकर अयोध्या चली आऊँ।"

"सत्य?" गणपति का मुख गंभीर हो गया। उसके मन में विचार आया कि भानुमित्र को किसी विशेष षड्यंत्र का पता चला है। तभी तो वह अपनी प्रेमिका को सचेत कर रहा है। उसने धीरे-धीरे कहा, "प्रतीत होता है कि भानुमित्र को किसी उपद्रव की आशंका हो गई है।"

बात इसके आगे नहीं चल सकी। देवधर्मा को इस विषय में कुछ भी मालूम न था।

: 2 :

देवधर्मा ने नगर-पालक को बुलाकर सचेत कर दिया, "मुझे विश्वस्त सूत्र से यह सूचना मिली है कि नगर में कुछ लोग उपद्रव करने वाले हैं। सब नगर-संरक्षकों को सतर्क और अपने-अपने स्थान पर सदैव उपस्थित रहना चाहिए।"

गुप्तचर विभाग को पुनः सचेत किया गया। इस पर भी नगर में पूर्ण रूप से शांति थी और व्यापार यथापूर्व चल रहा था।

सायं सुचंद्र सेठ के मकान पर भारी समारोह था। यह बात नगर-भर में विख्यात हो गई थी कि नगर-वधू सेठजी के उत्सव में नाचने आ रही है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इससे वे सब, जो सेठ साहब के मेहमान हो सकते थे, निमंत्रण पाने का यत्न कर रहे थे। नगर के वे लोग, जो नृत्य नहीं देख सकते थे, गृह के बाहर केवल दर्शन के लिए एकत्रित हो गए थे।

सहस्रों दीप-शिखाएँ और भाँति-भाँति की सजावट गृह में हो रही थी। नगर के धनी-मानी लोग रंग-बिरंगे वस्त्रों में रथों पर सवार हो उत्सव के समय से पूर्व ही वहाँ पहुँच रहे थे। जब गणपति अपने रथ में अपनी लड़कियों सहित आए, तो लोगों ने वैशाली की जय-जयकार की गर्जना की और जब नगर-वधू मृदुलादेवी पधारी तो सभी लोग एकटक उसका सौंदर्य देखते रह गए।

गृह के भीतर एक बहुत खुला मैदान था। उसमें एक बहुत लंबा चौड़ा शामियाना लगा था, जिसमें एक ओर लकड़ी का विशाल मंच बना था। मंच के सम्मुख दरियाँ, कालीन तथा सफेद चादरों पर दो सहस्र के लगभग मेहमानों के बैठने का प्रबंध था। इस मैदान के चारों ओर सेठ सुचंद्र के गोदाम थे, जिनमें विदेशों में भेजा जाने वाला माल जमा रहता था। इस मैदान के एक ओर सुचंद्र का निवास-गृह भी था।

उत्सव का प्रथम कार्य तो खाने-पीने तथा बधाई और बालक को आशीर्वाद देने का था। इसके समाप्त होते-होते अंधेरा हो गया था। पूर्ण मैदान और विशेष रूप में शामियाने के नीचे मंच दीप-शिखाओं से प्रकाशमय हो रहा था।

जब गाने-बजाने वाले मंच पर बैठे तो दर्शक भी शामियाने में आकर यथोचित स्थानों पर बैठ गए।

मंगलाचरण से उत्सव आरंभ हुआ। कभी वीणा-वादन, कभी संगीत और कभी नृत्य होता रहा। सब इस कला-प्रदर्शन से अति प्रसन्न थे। इस पर भी उत्सुकता से नगर-वधू के मंच पर आने की प्रतीक्षा कर रहे थे। इस बीच श्रोतागण को मिठाई और मद्य वितरण हो रही थी। लोग निस्संकोच खा-पी रहे थे।

इस उत्सव के मध्य में सेठजी का एक सेवक लोगों में लाँघता हुआ सबसे आगे बैठे गणपति के पास पहुँचा और बोला, ''आपसे नगर-पालक बाहर मिलना चाहता है।''

गणपति को भानुमित्र से सचेत किया जाना स्मरण हो अया। उसने समझा कि अवश्य कोई नवीन सूचना मिली है। सो वह पास बैठे सुचंद्र को

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह कह कि मैं अभी आता हूँ, बाहर चला गया।

इसके पश्चात् कुछ काल तक नगर की एक अन्य गणिका का नृत्य चलता रहा। इस नृत्य के पश्चात् नगर-वधू का गायन होना था। इस कारण सेठ सुचंद्र ने उठकर मंच पर खड़े हो यह घोषणा की, ''अब वैशाली नगर की विभूति, जगत्-प्रसिद्ध मृदुलादेवी अपनी कला का प्रदर्शन करेंगी। सर्वप्रथम वह वीणा-वादन करेंगी। पश्चात् संगीत होगा और अंत में आज के उत्सव की अंतिम कार्यवाही में उनका नृत्य होगा।''

इस घोषणा को सुन, 'धन्य हो, धम्य हो' का नाद चारों ओर से होने लगा। सेठ सुचंद्र मंच के नीचे उतर आया। मंच पर नया कालीन और उस पर कौशेय बिछा दिया गया। तीन कौशेय आवरण वाले प्रश्रय रख दिए गए और एक अति सुंदर, बहुत बड़ी वीणा रख दी गई। इस समय एक दासी वीणा स्वर करने और मृदंग बजाने वाला असुर नाम का आन्ध्र निवासी वहाँ आ गए और वाद्यों को स्वर करने लगे।

सेठ सुचंद्र उठ-उठकर बेचैनी से बाहर की ओर देख रहे थे। लोगों का अनुमान था कि मृदुला देवी, जो सेठ साहब के आगार में शृंगार कर रही थी, आने वाली है और उसकी प्रतीक्षा में सेठ साहब परेशान हैं।

वाद्य स्वर हो गए तो दासी, जो वीणा स्वर कर रही थी, प्रश्रयों के पीछे होकर बैठ गई। इस समय मृदुला देवी सेठ सुचंद्र के गृह से निकल, शामियाने में आ गई। उसका शृंगार सोने पर सुहागे का काम कर रहा था। सबकी दृष्टि उधर घूम गई। सिर पर कुछ बाईं ओर बड़ा-सा जूड़ा था, जिस पर मोतिये के फूलों की लड़ियाँ बँधी थीं। गले में वैजयंती माला और कमर में सात-लड़ी मोतियों की तकड़ी थी। पाँव में चाँदी के घुँघरू बँधे थे और नीचे लाल रंग के कपड़े का जूता था।

आँखों में काजल और अधरों पर मिस्सी, चिबुक पर काले तिल का चिह्न बना था; पीतवर्ण कौशेय की चोली, जो शरीर के साथ सटकर शरीर की सब रेखाओं को ठीक-ठीक प्रकट कर रही थी; नीचे लहँगा था, जिसका कमरबंध बहुत छोटा और नीचे घेरा बहुत बड़ा था।

नगर-वधू के पीछे दो दासियाँ हाथों में बड़े-बड़े तानपूरे लिए थीं, जिनमें सोने की तारें मढ़ी थीं।

नगर-वधू मंच पर चढ़ी तो लोगों ने प्रसन्नता से जय-जयकार की घोषणा की। लोगों ने पुष्पों की वर्षा की। पुष्प-गुच्छ और मालाओं का मंच पर ढेर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लग गया।

नगर-वधू ने अपना इतना स्वागत देखा तो प्रसन्नता से देदीप्यमान हो, हाथ जोड़ चारों ओर घूमकर नमस्कार की और तदुपरांत एक प्रश्रय के सम्मुख बैठ वीणा की तारों को हिला स्वर देखा, पश्चात् कुछ दोष पा वीणा को उठा उसका स्वर ठीक करना आरंभ कर दिया। साथ आई दासियाँ उसके दोनों ओर बैठ गईं और अपने-अपने तानपूरे का स्वर ठीक करने लगीं।

इस समय सेठ सुचंद्र घबराकर उठा और शामियाने के बाहर गया, परंतु तुरंत ही लौट आया और आकर अपने स्थान पर बैठ गया।

गणपति को वहाँ न देख मृदुला कुछ चिंतित थी। इस पर भी उसने वीणा-वादन आरंभ कर दिया। मालकौंस राग था। मींड और स्वर-कंपन, बीसियों तारों के स्वरों की झंकार और मालकौंस का स्वर-संग्रह इतनी कुशलता से आरंभ हुआ कि श्रोतागण मुग्ध हो सुनने लगे।

ज्यों-ज्यों समय बीतने लगा, स्वरों की तरंगें उच्च और उच्च ग्राम में चढ़ने लगीं और उनके साथ-साथ लोगों के सिर घूमने लगे। मृदंग से संगत देने वाला असुर अपनी उंगलियों से वह स्फूर्ति दिखा रहा था कि श्रोतागण वाह-वाह किए बिना नहीं रह सके।

अब फिर सुचंद्र अपने स्थान से उठा और बाहर की ओर चला। इस समय गणपति पीत तथा चिंतित मुख लिए शामियाने में आया। उसके पीछे एक और व्यक्ति अति प्रसन्न-वदन और अति संतोष-मुद्रा के साथ आता दिखाई दिया। लोग वीणा सुनने में इतने लीन थे कि उन्हें गणपति में कोई विशेषता प्रतीत नहीं हुई। न ही उनके पीछे-पीछे आने वाले व्यक्ति की ओर किसी का ध्यान गया।

परंतु ये दोनों घटनाएँ मृदुला की दृष्टि से बच नहीं सकीं। वह इन दोनों को देख विस्मय में वीणा बजाना भूल गई। उसने वीणा से हाथ उठा लिए। सबका ध्यान टूट गया। संगीत-प्रवाह में यह रोक दो क्षण तक ही रही। मृदुला सचेत हो गई। उसने दोनों हाथ जोड़, दोनों आने वालों को नमस्कार की और तुरंत ही पुनः वीणा बजानी आरंभ कर दी।

श्रोतागणों को कुछ ऐसा प्रतीत हुआ कि नगर-वधू के बजाने में विशेष स्फूर्ति आ गई है। उसके स्वर-संग्रह में अधिक माधुर्य उत्पन्न हो गया है। इस संगीत की उत्कृष्ट माधुरी में लोग अपने को इतना विस्मरण कर गए थे कि उनको पता ही नहीं चला कि सेठ सुचंद्र शामियाने के बाहर गए और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं लौटे।

आज मृदुला का वाद्य-वादन, गायन और नृत्य इतना श्रेष्ठ हुआ कि वे लोग भी, जो मृदुला का संगीत सुनने के अभ्यासी थे, वाह-वाह कर उठे।

जब वह गा रही थी—

अब मैं उन्माद भरी पायो प्रीतम अपनो।

लोगों ने स्वर्ण-मुद्राएँ, अँगूठियाँ, कंठियाँ उपहार में मंच पर फेंकनी आरंभ कर दीं। जब तक नृत्य समाप्त हुआ, इन स्वर्ण-उपहारों का ढेर लग गया था। नीचे भूमि पर दर्शकों की सबसे प्रथम पंक्ति में बैठा गणपति अपने साथ बैठे उस नवागंतुक व्यक्ति को कह रहा था, "वत्स भानुमित्र! यह सब कैसे हुआ?"

"भगवन्! मृदुला देवी का नृत्य तनिक देख लें। फिर चलकर सब बात समझ लेंगे। ऐसा स्वर्गीय अवसर पुनः न जाने कब मिले।"

अब देवधर्मा के रक्तविहीन होंठों पर भी हँसी दौड़ गई।

: 3 :

उत्सव के पश्चात् मृदुला लपककर मंच से नीचे उतर और भानुमित्र के चरण-स्पर्श कर हाथ जोड़ खड़ी हो गई। भानुमित्र इस शृंगार में उसे देख विस्मय, उल्लास और उसके सौंदर्य से चढ़ी मादकता में उसे देखता रह गया।

मृदुला को गणपति के साथ खड़े युवक के चरण-स्पर्श करते देख सब लोग विस्मय में उसका परिचय पाने के लिए तीनों को घेरकर खड़े हो गए। मृदुला ने पूछा, "आर्य! कब आए?"

"कल मिलूँगा।"

मृदुला आतुर नेत्रों से उसकी ओर देखती रही। इस पर एक सेठ ने गणपति के समीप पहुँच नम्रता से पूछा, "महाराज! इनका परिचय पाने के लिए सब उपस्थितगण उत्सुक हैं।"

देवधर्मा ने भानुमित्र की ओर प्रश्न-भरी दृष्टि से देखा और उस ओर से कोई आपत्ति न पा कहा, "आप अवध के महामात्य श्री भानुमित्र जी हैं।"

अवध के महामात्य का नाम सुन और उन्हें मृदुला के नृत्योत्सव में उपस्थित देख, सब विस्मय में हाथ जोड़ नमस्कार करने लगे।

उत्सव के उपरांत देवधर्मा भानुमित्र को अपने रथ में बिठा अपने निवास-स्थान पर ले गया। वहाँ बहुत-से लोग पहले ही उपस्थित थे। वे सब इन दोनों को देख मार्ग छोड़ खड़े हो गए। प्रभा और ऊषा, जो रथ में साथ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ही थीं, आवास की भीतरी भाग में चली गईं। देवधर्मा और भानुमित्र बाहर बैठक में जा पहुँचे। बैठते ही भानुमित्र ने कहा, "मुझे कल इस षड्यंत्र का पता मिला तो मैं अपने पास पंद्रह सैनिक ले स्वयं चल पड़ा। यहाँ पहुँच मैंने आपकी मुद्रा से लाभ उठाया। उसे दिखा नगरपालक से पचास संरक्षक ले जंगल में भेज दिए हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि वे लोग वहाँ से लौट आए और बाहर खड़े हैं।"

"उन लोगों को वहाँ भेजने का प्रयोजन यह था कि योजना के अनुसार आपको कैद कर वहाँ ले जाने का प्रस्ताव था और वहाँ से आपको या तो मल्लराज्य में भेज दिया जाता या आपकी हत्या कर दी जाती। मेरा अनुमान था कि महाप्रभु ने वहाँ उपस्थित रहना था।

"मुझे मेरे एक गुप्तचर ने नगर-द्वार पर मिलना था। वह वहाँ नहीं मिला। इस पर भी मुझे यह तो विदित हो चुका था कि आपको आज सायं बंदी बनाने की योजना थी। इस कारज मैंने नगरपालक से आपका पता पूछा। उसने सेठ सुचंद्र का गृह बताया। मैं अपने सैनिकों को ले सेठ साहब के घर पहुँचा। वहाँ पहुँचते ही मैंने आपके विषय में पूछा। विदित हुआ कि सेठ साहब के एक सेवक के साथ घर के भीतर गए हैं। वहाँ जाने से मुझे सेठ साहब के सेवकों ने रोका। मैंने बताया कि मुझे गणपतिजी को पकड़कर बौद्ध-विहार में ले जाने की आज्ञा हुई है। इसीलिए ये सैनिक लेकर मैं आया हूँ।"

"यह बात चल गई। सेवक मुझे उस आगार में ले गया, जहाँ आपके हाथ-पाँव बाँधे जा रहे थे। ईश्वर का धन्यवाद है कि मैं समय पर पहुँच गया। वे आपको छिपाकर मकान के पीछे खड़े रथ पर बाँधकर, उसी जंगल वाले स्थान पर जाने वाले थे। चार सैनिक थे। मेरे सैनिकों ने उनको पकड़ लिया। वहाँ मैंने अपने सैनिक नियुक्त कर दिए और आपको छुड़ाकर पुनः उत्सव में ले जाना अत्यावश्यक समझा। यदि कहीं आपके लोप हो जाने का समाचार नगर में फैल जाता तो नगर में उपद्रव हो जाना संभव था।"

"बहुत विचित्र है। मेरे गुप्तचर यह सब कुछ पता नहीं कर सके। शायद मैं अब बूढ़ा हो गया हूँ और राज्य कार्य चलाने के योग्य नहीं रहा। भानुमित्र! तुम्हारा अत्यंत धन्यवाद है। तुमने मेरी जान ही नहीं बचाई, प्रत्युत् वैशाली में भारी रक्तपात होते रोक दिया है।"

"अब हमें जंगल से आए लोगों को बुलाना चाहिए। वे आपके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नगर-पालक के भेजे सैनिक हैं।''

देवधर्मा ने समीप लटके घड़ियाल को बजाया। गणपति भवन का मुख्य संरक्षक आया। गणपति ने पूछा, ''ये बाहर कौन लोग हैं?''

''नगरपालक के सैनिक हैं। उनकी आज्ञा से नगर के बाहर विहार के सम्मुख जंगल में शिव-मंदिर में गए थे। वहाँ से दस सैनिक एक रथ और एक भिक्षुणी को पकड़कर लाए हैं।''

''नगरपालक के सैनिकों के नायक को भीतर भेज दो।''

नायक आया तो नमस्कार कर सम्मुख खड़ा हो गया। गणपति ने पूछा, ''आप लोग किसकी आज्ञा से शिव मंदिर में गए थे?''

''नगरपालक महाराज ने आज्ञा दी थी कि आपकी (भानुमित्र की ओर उँगली कर कहा) आज्ञा का पालन करूँ। आपने मुझे पचास सैनिक ले शिव मंदिर में, जो लोग भी हों, सबको पकड़कर गणपति के भवन में लाने की आज्ञा दी थी। आपकी आज्ञा से हम सब लोग तैयार बैठे थे। सो तुरंत घोड़ों पर सवार हो वहाँ जा पहुँचे। वहाँ दस सैनिक एक रथ लिए किसी की प्रतीक्षा कर रहे थे। बहुत लड़ाई नहीं हुई। जब उन्होंने देखा कि हमारी संख्या अधिक है तो उन्होंने हथियार डाल दिए। इनको बंदी बना लेने के पश्चात् मैंने शिव मंदिर की तलाशी ली। मंदिर के भीतर एक बौद्ध भिक्षुणी को, हाथ-पाँव रस्सी से जकड़कर बँधे, पड़े पाया। उसके मुख में कपड़ा ठूँसा हुआ था और मुख पर पट्टी बँधी थी। हम उसे भी पकड़ लाए हैं।''

गणपति ने विस्मय में भानुमित्र का मुख देखा। उसने कह दिया कि वह इसके विषय में कुछ नहीं जानता। इस पर गणपति ने नायक से कहा, ''पहले उस स्त्री को बुलाओ।''

नायक बाहर गया और अपने सैनिकों से पकड़ी हुई भिक्षुणी को भीतर ले आया। यह नीलमणि थी। उसके एक हाथ में सुदृढ़ रस्सी बँधी थी और वह रस्सी नायक पकड़े हुए था।

नीलमणि ने गणपति के सम्मुख आ केवल मुस्करा दिया। गणपति ने पूछा, ''क्या नाम है?''

''नीलमणि।''

''नीलमणि? तुम तो हमारे गुप्तचर विभाग की हो न?''

''हाँ महाराज!''

''तुम कैसे पकड़ी गई हो?''

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"पद्मनाभ आज दिन के तीसरे पहर शिव मंदिर की ओर चल पड़ा तो मैंने समझा कि वहाँ अवश्य कोई बात है। मुझे अपने नायक की सूचना आई थी कि मैं महाप्रभु और पद्मनाभ की देखभाल रखूँ। मैं उसके पीछे-पीछे छिपकर वहाँ पहुँच गई। पद्मनाभ ने महाप्रभु से कुछ बातचीत की और तब महाप्रभु लक्ष्मी देवी पंथागार की ओर चले गए। पद्मनाभ मंदिर के बाहर निकला तो मैं एक झाड़ी के पीछे छिपी हुई थी। उसकी दृष्टि मेरी ओर पड़ गई। इस पर उसने मुझे छिपी हुई को हाथ से पकड़ झाड़ी से निकाल लिया। वह बोला, 'नीलमणि! तुमने यहाँ आकर ठीक नहीं किया। अच्छा, अब रात-भर तुम यहाँ पर कैद रहोगी। प्रातःकाल आकर तुम्हें छुड़ाऊँगा।'

"इतना कह उसने मेरे हाथ-पाँव रस्सियों से, जो मंदिर के कोने में रखी थी, बाँधकर मुझे भीतर के आगार में डाल दिया। वहाँ मेरे उत्तरीय को फाड़ मेरे मुख में ठूँस दिया और ऊपर से उसी की एक पट्टी बाँध दी। इस प्रकार मुझे वहाँ छोड़ वह चला गया।"

"तुमने वहाँ पर होने वाली घटना की कोई सूचना नहीं भेजी?"

"जब से यह पद्मनाभ वहाँ आया है, तब से महाप्रभु मुझसे तटस्थ रहने लगे थे। इस कारण मुझे बहुत कम बातें पता चली हैं।"

"यह पद्मनाभ कोई बहुत चुतर आदमी प्रतीत होता है।" गणपति ने कहा।

इस समय गणपति भवन का मुख्य संरक्षक भीतर आया और बोला, "महाराज! नगरपालक स्वयं आया है। वह अपने साथ एक आदमी को बंदी बना लाया है।"

"उसे बुलाओ।"

नगरपालक पद्मनाभ को बंदी के रूप में साथ लाया। गणपति ने पूछा, "इस आदमी को कहाँ पकड़ा है तुमने?"

"चौमुखा के समीप सेठ महेश्वरी के पंथागार को आग लगाते पकड़ा गया है। जब यह मेरे कार्यालय में लाया गया तो इसने कहा कि इसे तुंरत आपके सम्मुख उपस्थित किया जाए। मैं इतनी रात गए आपको कष्ट नहीं देता। परंतु जब इसने आग्रह किया और बताया कि इससे वैशाली की रक्षा का संबंध है, तो मैं इसे ले आया हूँ।"

गणपति ने बंदी की ओर देख पूछा, "क्या नाम है तुम्हारा?"

"मेरा नाम और परिचय तो महामात्य ही देंगे।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भानुमित्र पद्मनाभ को इस प्रकार फँस गए देख मुस्करा रहा था। उसने गणपति जी को बताया, "यही हमारा गुप्तचर है, जो बौद्ध विहार में कार्य करता था। इसका नाम पद्मनाभ है। इसने मुझे पूर्ण षड्यंत्र की सूचना और ब्योरा भेजा था। इसी ने ही मुझसे नगर-द्वार पर मिलना था। अब अपने पकड़े जाने की बात तो यही बताएगा।"

नीलमणि, जो अभी वहीं खड़ी थी, विस्मय में अवाक् मुख रह गई। गणपति को भी बहुत विस्मय हुआ। पद्मनाभ का नाम तो वह कई बार सुन चुका था, परंतु उसका अवध-राज्य का गुप्तचर होना और उसका पूर्ण षड्यंत्र का पता करना, बहुत ही विचित्र था। इस परिचय के पश्चात् पद्मनाभ ने अपने पकड़े जाने की कहानी सुना दी।

"पहले मेरी नियुक्ति शिव-मंदिर में की गई थी। पश्चात्, न जाने क्यों महाप्रभु ने मुझे चौमुखा के पंथागार में भेज दिया। मुझे यह आज्ञा दी कि मैं पंथागार में छिपे सौ सैनिकों को ले, सेनापति को धोखे से बंदी बना लूँ। अतएव शिव-मंदिर से चल मैं पंथागार में पहुँचा। वहाँ पर महाप्रभु की यह आज्ञा पहुँच चुकी थी कि मैं बहुत-सी रहस्य की बातों को जान गया हूँ, इस कारण जब उपद्रव आरम्भ हो तो कार्य की सफलता के निमित्त सर्वप्रथम मेरी ही बलि दी जाए। यह मुझे वहाँ एकत्रित सैनिकों के परस्पर वार्त्तालाप से पता चल गया। मैं पंथागार के गोदाम में जा पहुँचा। वहाँ बहुत-सा तेल-घी पड़ा देख, मैंने पंथागार को ही जला देने का निर्णय कर लिया। इसमें मेरा प्रयोजन यह था कि वहाँ एकत्रित सैनिक तितर-बितर हो जाएँ, जिससे उपद्रव होने से रूक जाए।

"आग लग गई और पंथागार जलकर भस्म हो गया, परंतु गोदाम के संरक्षक ने मुझे गोदाम से भागते देख लिया और मेरे पीछे भाग मुझे पकड़ लिया। वहाँ एकत्रित सैनिक आग में फँस गए और कुछ तो उसमें जलकर भस्म हो गए तथा कुछ अधझुलसी अवस्था में निकले हैं। शेष इस गड़बड़ से इतने भयभीत हुए हैं कि दुम दबाकर अपने-अपने घरों को लौट गए हैं।"

: 4 :

यह ठीक था कि षड्यंत्र टूट गया। साथ ही यह भी ठीक था कि कोई मुख्य व्यक्ति न तो पकड़ा जा सका, न ही अपराधी सिद्ध हो सका। नीलमणि और पद्मनाभ षड्यंत्र की रात को ही छोड़ दिए गए थे। दोनों अब वैशाली में पुनः गुप्तचर का कार्य करने के अयोग्य हो गए थे। पद्मनाभ अयोध्या

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लौट गया। नीलमणि ने भिक्षुणी का बाना छोड़ गृहस्थ स्वीकार कर लिया। वह भी पद्मनाभ के साथ उसकी अविवाहित पत्नी बन अयोध्या चली गई।

महाप्रभु लक्ष्मी देवी के पंथागार में समाचार की प्रतीक्षा में रात-भर बैठा रहा। उसके आयोजन के अनुसार गणपति को पकड़ मार डालने का समाच. ार रात के दूसरे प्रहर आना चाहिए था। इसके तुरंत ही पीछे सेनापति के बंदी कर लिए जाने का समाचार आना था। पश्चात् लक्ष्मीकांत के गणपति बन पूर्ण राज्य के प्रबंध को अपने हाथ में कर लेने की बात थी।

कोई ऐसा समाचार नहीं मिला। प्रातःकाल महेश्वरी के पंथागार के जलकर भस्म हो जाने का समाचार मिला। सेठ सुचंद्र के बंदी हो जाने का समाचार भी मिला और पद्मनाभ तथा नीलमणि के चुपचाप अयोध्या चले जाने की सूचना मिली। महाप्रभु को जब विश्वास हो गया कि सबकुछ विफल हो गया है, तो वह अपना दंड उठा, पश्चिम की ओर बौद्ध-विहारों की देखभाल के लिए चल दिया।

भानुमित्र के वैशाली आने का समाचार पा उसे संसद् की ओर से सम्मानित किया गया। इस अवसर पर देवधर्मा ने सेठ सुचंद्र के गृह में अपने पकड़े जाने और फिर भानुमित्र से समय पर पहुँच छुड़ाए जाने का पूर्ण वृत्तांत बताया। साथ ही सेठ सुचंद्र का इस षड्यंत्र में उल्लेख करते हुए कहा, ''सेठ साहब इस समय बंदीगृह में हैं और उन पर विद्रोह का अभियोग चल रहा है।''

संसद् में कुछ लोग, जो इस षड्यंत्र में सम्मिलित थे, भयभीत हो चुपचाप बैठे रहे और जब गणपति के बच जाने और वैशाली में विप्लव होते-होते रह जाने पर लोगों ने जयघोष किया तो ये लोग भी डर के मारे सबके साथ हर्ष-प्रदर्शन में सम्मिलित हो गए।

भानुमित्र ने इस सम्मान का उत्तर देते हुए कहा, ''वैशाली के प्रतिष्ठित नागरिको! मैं जब अपने देश से चला था तो वैशाली की सेवा करने के विचार से ही चला था; परंतु यहाँ की घटनाओं के चक्र में पड़, मैं अवध का महामात्य बन गया हूँ। इस पर भी मेरा प्रेम वैशाली से है। कई ऐसे सूत्र हैं, जिनके कारण मैं वैशाली से बधाँ हुआ हूँ।''

''मेरा उद्देश्य भारत-खण्ड में एक सांस्कृतिक समाज को स्थिर रखना है। यदि किसी प्रकार यह सांस्कृतिक ऐक्यता टूट गई तो भारत ऐसे गर्त में गिरेगा, जिससे निकलना कठिन हो जाएगा। इस योजना में यदि कोई वस्तु

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बाधक है, तो छोटे-छोटे राज्यों का स्वार्थ और परस्पर का वैमनस्य।''

''इस समय भारत में एक नवीन संस्कृति की सृष्टि की जा रही है। यह बौद्ध संस्कृति है। हमारा प्रयत्न यह होना चाहिए कि बौद्ध विचारधारा भारतीय संस्कृति में संशोधन बन जाए, उसकी स्थानापन्न न बने।''

''वर्णाश्रम धर्म हमारे समाज के संगठन का आधार है। इसमें उचित संशोधन होने में ही समाज का भला है। इसके स्थान पर वर्णसंकर समाज की स्थापना एक महान् पतन की ओर अभिमुख होना होगा।

''इस एक संस्कृति के नाते हमें एक-दूसरे का सहायक होना आवश्यक है। मैं इन्हीं भावनाओं से प्रेरित हो यह सब कुछ करने में सबल हुआ हूँ।''

यह दिन वैशाली में भारी समारोह का रहा। ज्यूँ-ज्यूँ गणपति को बंदी बनाने के प्रयत्न का समाचार और अवध के महामात्य का समय पर पहुँच इस प्रयत्न को विफल बनाने का समाचार लोगों को विदित होता गया, लोगों में प्रसन्नता की मात्रा बढ़ती गई। सायंकाल होते-होते प्रसन्नता की मात्रा इतनी बढ़ गई कि लोगों ने घर-घर दीपावली कर दी, बाजे बजाए, शंख, घड़ियाल, भेरी, दुन्दुभी और नरसिंहों का कोलाहल नगर-भर में व्याप्त हो गया।

नगर में सबसे अधिक दीपावली विनोद-भवन में हुई। सायं समय गणपति महामात्य को रथ में लेकर नगर में घूमता हुआ विनोद-भवन में जा पहुँचा। लोगों को पहले ही आशा थी कि गणपति और महामात्य वहाँ पधारेंगे। इस कारण आधे से अधिक नगर के लोग गणपति को बधाई देने और महामात्य के प्रति कृतज्ञता प्रकट करने वहाँ एकत्रित हो गए थे। विनोद-भवन के बाहर लोगों की इतनी भीड़ हो गई थी कि उनमें से रथ चलना कठिन था। इससे विनोद-भवन से कुछ अंतर पर ही गणपति और महामात्य को रथ छोड़ना पड़ा।

बहुत कठिनाई से भीड़ में से लाँघते हुए दोनों विनोद-भवन के सम्मुख पहुँचे। उनको विनोद-भवन की बाहर वाली सीढ़ियाँ चढ़, उसके विशाल चौंतरे पर खड़े हो हाथ जोड़ नमस्कार करते देख, लोगों ने जय-जयकार बुलाई, 'गणति देवधर्मा की जय हो! अवध के महामात्य श्री भानुमित्र की जय हो!' इत्यादि।

इस प्रेम-प्रदर्शन को देख भानुमित्र के मन में यह विचार आया कि गणपति का पद लोगों को राजा के पद से अधिक प्रिय है। जनता के इस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रसन्नता-प्रदर्शन से उसका मन हर्ष से भर गया।

विनोद-भवन के भीतर एक और समारोह की तैयारी हो रही थी। मृदुला ने विनोद-भवन के सब सदस्यों को निःशुल्क भोज दिया था और इस अवसर पर अपना नवीन नृत्य 'स्वतंत्र वैशाली' के शीर्षक से देने का वचन दिया था।

जब गणपति और महामात्य भवन में प्रविष्ट हुए तो मृदुला अपनी इक्कीस सर्वाङ्गसुंदर दासियों सहित उनके स्वागत के लिए खड़ी थी। मृदुला ने पहले गणपति के गले में मुक्ताहार पहनाया, पश्चात् महामात्य के। दोनों हारों में किसी प्रकार का अंतर नहीं रखा था।

पश्चात् स्वयं दासियों सहित उनके आगे-पीछे पुष्प बिछाती हुई मार्ग-प्रदर्शन करती हुई चलती गई।

वह उन्हें विनोद-भवन के सबसे बड़े आगार में ले गई। वहाँ आज सभी वर्ग के सदस्य एकत्रित हो रहे थे और लगभग एक सहस्र लोगों के लिए भोजन का प्रबंध था। दोनों अतिथियों के वहाँ पहुँचते ही आगार के एक ओर ऊँचे मंच पर खड़ी एक सौ एक दासियों ने मंगलगीत गाना आरंभ कर दिया। भानुमित्र यद्यपि विनोद-भवन में कई बार आ चुका था, परंतु आज की इसकी सजावट और इस भवन में नगर के सर्वश्रेष्ठ धनी-मानियों, योद्धाओं और विद्वानों को एकत्रित देख चकित रह गया।

मंगल गीत के समाप्त होने पर वैशाली का राष्ट्रगीत आरंभ हुआ। इस समय सब लोग खड़े हो हाथ जोड़, आँखें मूँद श्रवण करने लगे। दासियों ने गाया—

हे शंकर हर ले पाप सकल,
हम सबल सफल हों काम सदा।
वैशाली शोभे नभ मंडल,
सविता सी ओजमयी वसुधा।।

तीखी त्रिशूल कर में भयंकर,
हित मानव मन में हो शंकर।
जन शासन पर सत्य सरलता,
ध्वज में सोहें चिह्न सर्वदा।।
वैशाली...

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वीर धीर सुभट्ट सब सोहें,
ज्ञानवान तब ही पग जोहें।
कर्मनिष्ठ सेठी बहुमानी,
तृप्त शूद्र हो राष्ट्र संपदा।।
ऐसा वर दे मेरे शंकर भोले,
हम सबल सफल हों काम सदा।।
वैशाली...

राष्ट्रीय गीत के पश्चात् भोज आरंभ हुआ। जब लोग खा-पी रहे थे, गणपति महामात्य को लेकर लोगों से भेंट करा रहा था।

मृदुला अपने नृत्य के लिए तैयारी करने नेपथ्य में चली गई थी। लोग पंक्तियों में चौकियाँ लगा बैठे फल, मेवे, मासांदि भुने पदार्थ और मृद्विकासव पी रहे थे। विनोद-भवन के दास-दासियाँ इन भोजन के पदार्थों से उन चौकियों पर रखी सोने-चाँदी की गंगा-जमुनी व थालियों को भर रहे थे और लोग अति आनंदपूर्वक इन उत्तम पदार्थों का रसास्वादन कर रहे थे। गणपति महामात्य को साथ-साथ लिए नगर के विशेष लोगों का परिचय करा रहे थे, "यह हैं हमारे सेनापति श्री शूरसेन।" महामात्य ने हाथ जोड़ नमस्ते कही तो शूरसेन ने भुने मृग-मांस के लड्डू को चबाते हुए हाथ जोड़ दिए। मुख भरा होने से बोल नहीं सका। गणपति हँस पड़ा। इस पर साथ की चौकी पर बैठे एक सज्जन बोल उठे, "ऐसे समय में तो, महाराज! सेनापति से बात करने में अन्याय हो जाएगा।"

समीप बैठे अन्य लोग भी हँसने लगे। गणपति ने इस बोलने वाले का परिचय दे दिया, "यह है पं. चंद्र। हमारे राज्य में अस्त्र-शस्त्र शास्त्री हैं। इन्होंने एक नए प्रकार का कमान बनाया है, जो तीरों के स्थान शत्रु पर अग्नि बरसाता है।"

महामात्य ने हाथ जोड़ उसे भी नमस्ते कर दी। इस समय शूरसेन ने ज्यूँ-त्यूँ कर आसव का एक घूँट पी, मुख के ग्रास को गले के नीचे उतार कहा, "महाराज! खाने में शास्त्रीजी भी कम नहीं; परंतु आज इनको मन्दाग्नि का कष्ट है। इसी से सामने रखे भोजन को देख-देख प्रसन्न हो रहे हैं। सब-कुछ सम्मुख रखवा लिया है। न खाते हैं, न किसी को खाने देते हैं।"

शास्त्रीजी की हेठी हो गई, परंतु वह पीछे रहने वाले नहीं थे। मांस में से हड्डी उठा और सेनापति की ओर कर बोले, "बाँट तो रहा हूँ। लीजिए,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आप भी लीजिए।''

इसी प्रकार हँसी-ठट्ठा करते हुए गणपति ने महामात्य से प्रायः सब मुख्य-मुख्य उपस्थित लोगों का परिचय करा दिया। पश्चात् वे दोनों उनके लिए विशेष बने स्थान पर जा बैठे।

महामात्य ने बहुत कम खाया। गणपति मृदुला के निवास-गृह पर कभी भोजन नहीं करते थे। इस प्रकार जब अन्य लोग खाने-पीने में लीन थे, वे देश की राजनीतिक अवस्था पर विचार कर रहे थे। गणपति का कहना था, ''भारत-खण्ड में एक सुदृढ़, विशाल चक्रवर्ती राज्य की आवश्यकता है। छोटे-छोटे गणराज्य देश की दुर्बलता में कारण हो रहे हैं।''

''पर आर्य! वह राज्य, जिसे जनता का विश्वास प्राप्त हो, स्वयं ही शक्तिशाली बन जाता है, तो मुख्य कार्य तो जनता का विश्वास प्राप्त करना है।''

''ठीक है, वत्स! परंतु जनता का विश्वास साधन-मात्र है। यह राज्य का ध्येय नहीं हो सकता। विश्वास इस कारण प्राप्त करना है कि जनता से एक महान् उद्देश्य के लिए कार्य लेना है। यदि राज्य की पूर्ण शक्ति समय-समय पर विश्वास प्राप्त करने में ही लगती रहे तो भला उद्देश्य की पूर्ति क्या होगी? गणराज्य पद्धति के दोषों में यह एक है। लोगों की विश्वास प्राप्ति में ही राज्य की पूर्ण शक्ति व्यय हो जाती है और जब समय आता है कि कुछ निर्माण कार्य किया जाए तो राज्य निर्बल और निस्तेज हो चुका होता है।

''देखो, अभी पिछला निर्वाचन हुए दो वर्ष ही हुए हैं और आगामी निर्वाचन में ढाई वर्ष रहते हैं। इस पर अभी से उसके लिए दाँव-पेच चलने आरंभ हो गए हैं। वास्तव में यहाँ सदैव प्रत्येक कार्य में एक आँख हमारी कार्य की ओर तथा दूसरी आँख आगामी निर्वाचन पर लगी रहती है। प्रायः यह भय लगा रहता है कि अमुक व्यक्ति आगामी निर्वाचन में मेरे विरुद्ध सम्मति न दे दे। ऐसी परिस्थिति में गणराज्यों में सत्य-असत्य, न्याय-अन्याय और उचित-अनुचित का निर्णय निर्वाचन में मतों के आधार पर होता है, न कि एक अधिकारी की सूझ-बूझ के अनुसार।

''इसके विरुद्ध राजा के राज्य में राजा तो केवल एक प्रबंधक के रूप में होता है। वह राज्य के धर्म का उल्लंघन नहीं कर सकता। राज्य के मंत्री ही राज्य कार्य में नीति-निर्माण करते हैं। अंतर केवल यह रह जाता है कि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राजा के मंत्री राजा ही नियुक्त करता है और गणराज्य में जनता। दोनों में कौन इस कार्य का अधिकारी है, किससे कम भूल होने की संभावना है, कौन कब अनुचित कार्य करने को मंत्रियों पर दबाव डाल सकता है और मंत्रियों से भूल हो जाने पर कौन उस भूल को सुधारने में अधिक सबल हो सकता है, ये विषय मनन के साथ संबंध रखते हैं।''

''एक बात मैं अपने अनुभव से बताता हूँ कि यदि लोग धर्महीन हो जाएँ तो गणराज्य एक राजा के राज्य से अधिक हानिकर और अपने को सुधार करने में कम योग्य होता है।''

इस समय मंच पर से यवनिका उठी और सबका ध्यान उस ओर चला गया। मृदुला देवी ने एक संगीत-नृत्यमय नाटक तैयार किया था, जो खेला जाने लगा। मंगलाचरण हुआ और पश्चात् एक सुंदरी वैशाली के नाम से प्रकट हुई। वह सुंदरी, कला-प्रवीणा, विदुषी और सबल थी। उससे प्रेम करने वाले कई लोग मंच पर आए और वह स्त्री सबका प्रेम ग्रहण करती हुई, सबको अपने प्रेमजाल में फँसाती हुई, सबसे विरक्त और तटस्थ रही। प्रत्येक प्रेमी वैशाली की उपस्थिति में प्रसन्न और अनुपस्थिति में असंतोष अनुभव करता था। धनी सेठ इस पर धन न्योछावर करते थे, क्षत्रिय इसे अपने शौर्य से प्रसन्न करना चाहते थे और ब्राह्मण इसे अपने कला-ज्ञान और अनुभव से अधिक श्रृंगारयुक्त और लावण्यमय बनाने का यत्न करते थे। एक-आध शूद्र इसकी सेवा करने में अपना गौरव मानता था।

इस कहानी के आधार पर नृत्य, वार्त्तालाप और संगीत की रचना की गई थी। वैशाली का अभिनय मृदुला देवी ने किया था, अन्य नायक-नायिकाएँ विनोद-भवन और नगर के अन्य नाटककार लोग थे।

नृत्य इतना लालित्यपूर्ण और संगीत इतना मधुर था कि श्रवण करने वालों को समय के व्यतीत होने का पता नहीं चला। मध्य रात्रिं हो चुकी थी और नियम के विरुद्ध तीसरे प्रहर तक यह नाटक चलता रहा।

मृदुला के ग्यारह नृत्य हुए, पाँच लोकगीत हुए। अन्य कलाकारों के भी नृत्य और गीत हुए। भाँति-भाँति के वाद्य संगीत दे रहे थे।

नाटक की समाप्ति सब लोगों के सुंदरी से रुष्ट हो जाने पर हुई। सब आशा में थे और सब निराश हुए। अंत में सुंदरी एक शूद्र सेवक के साथ मंच से लोप हो गई। नाटक का रसास्वादन सबने किया, परंतु इसके परिणाम की भयंकरता केवल भानुमित्र के हृदय को चुभी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सात

षड्यंत्र की भूमि

: 1 :

प्रचला के विवाह के समाचार से राका को पहले विस्मय हुआ। वह विस्मय प्रचला की रूपरेखा देखकर मिट गया। वह बहुत सुंदर थी। विस्मय मिट जाने पर उसे दुःख और निराशा हुई। इस निराशा में प्रचला का कहना कि वह सौकन रखने को बुरा न मान एक अच्छी बात समझती है, राका को बहुत बुरा लगा। उसे ऐसा समझ आया कि ऐसी स्त्री से भानुमित्र शीघ्र ही ऊब जाएगा और प्रचला को पृथक् कर देगा। तब तक उसे प्रतीक्षा करनी चाहिए। इतने समय तक वह अविवाहित रहे तो भानुमित्र से विवाह की आशा हो सकती है।

मल्लिका को राका से सहानुभूति थी। इससे वह, जब-जब भी अवसर मिलता था, भानुमित्र से प्रचला के विषय में पूछती रहती थी और राका की प्रशंसा करती रहती थी। भानुमित्र से सदा प्रचला की प्रशंसा सुन उसे भानुमित्र के कहने पर संदेह होने लगा। इस कारण प्रचला को बुला, उससे स्वयं बातचीत कर वह वास्तविकता जानने का यत्न करने लगी। उसने एक दिन भानुमित्र से कहा, ''आप प्रचला को कभी यहाँ नहीं भेजते।''

''आप जब भी आज्ञा दें वह उपस्थित हो जाएगी। वह स्वयं अभी महारानीजी की सेवा में उपस्थित होने के योग्य नहीं है।''

''क्या है उसे?''

''उसकी शिक्षा-दीक्षा अभी पूर्ण नहीं हुई।''

''क्या वह उसके जीवनकाल में पूर्ण हो जाएगी, मित्र?''

''महारानी स्वयं अनुमान लगा सकेंगी। वह कल सेवा में उपस्थित हो जाएगी।''

महारानी के सर्वसाधारण से मिलने के लिए नियत समय पर प्रचला आई तो महारानी को वह पहले से अधिक सुंदर प्रतीत हुई। उस दिन राका भी आई हुई थी। राका दिन-प्रतिदिन संगीत, नृत्य और चित्रकला में उन्नति करती जाती थी। उसने अभी भानुमित्र से विवाह की आशा नहीं छोड़ी थी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रचला हाथ जोड़, झुककर नमस्कार कर एक आसन पर बैठ गई। इस स्त्री-मंडल में कुछ काल तक इधर-उधर की बातें होती रहीं। पश्चात् महारानी उठ पड़ीं। यह सबको विदा हो जाने की सूचना थी। सब स्त्रियाँ नमस्कार कर जा रही थीं तो प्रचला भी जाने लगी। महारानी ने उसका हाथ पकड़कर ठहरने को कहा। राका जाने लगी तो महारानी ने कहा, "प्रचला बहन से भेंट नहीं करोगी?"

"क्या जाने, ये पसंद करेंगी या नहीं?"

"मैं तो आपको सदैव स्मरण करती रहती हूँ।"

"आपने कभी मिलने की इच्छा की हो, स्मरण नहीं होता।" राका ने कहा।

कुछ झिझकते हुए प्रचला ने कहा, "महामात्यजी कहते थे अभी मेरी शिक्षा अधूरी है।"

"तुम भी ठहरो राका! अभी महामात्यजी की श्रीमती अल्पाहार करेंगी।" मल्लिका ने कहा।

राका ठहर गई। जब मिलने आई हुई सब स्त्रियाँ चली गईं तो महारानी राका और प्रचला को दूसरे आगार में ले गईं। वहाँ एक भूमि पर बिछे कालीन और चादर पर बैठ गयी और इनके सामने सोने-चाँदी की थालियों में फल आहार के लिए रखे जाने लगे। तीनों खाने लगीं।

प्रचला को खाते महारानी देखती रहीं। उसके निश्चल बैठने और बिना बुलाए न बोलने, प्रत्येक अंग को निश्चेष्ट और सुव्यवस्थित ढंग से रखने से उसे प्रतीत हुआ कि प्रचला में अंतर आ गया है। बात महारानी ने ही आरंभ की–

"तो महामात्य जी कहते हैं कि तुम्हारी शिक्षा अभी अधूरी ही है।"

"हाँ, महारानीजी! आप तो जानती ही हैं कि विवाह के समय मैं सर्वथा अनपढ़ थी। अब विवाह को छः मास हो गए हैं। मैं व्याकरण पढ़ रही हूँ।"

"साहित्य में क्या पढ़ती हो?"

"श्री कविवर वाल्मीकि-रचित रामायण।"

"कैसी पुस्तक है?"

"मुझे तो पढ़ने में बहुत अच्छी लगती है।"

"कौन पढ़ाता है तुम्हें?"

"व्याकरण और साहित्य तो वे स्वयं पढ़ाते हैं। संगीत, नृत्य इत्यादि नगर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की प्रसिद्ध नर्तकी कमलिनी सिखाती है।''

''सुनाओ, प्रसन्न रहती हो तुम?''

''दिन-भर पढ़ने-लिखने में लगी रहती हूँ। सायं उनकी संगत में व्यतीत होती है। कभी-कभी हम भ्रमणार्थ नगर में अथवा सरयू-तट पर भी जाते हैं। फिर नौकर-चाकर हैं। उन पर नियंत्रण रखना होता है।''

''अभी महामात्यजी ने दूसरा विवाह नहीं किया?''

प्रचला अर्थ-भरी दृष्टि से राका की ओर देखकर बोली, ''मैंने एक दिन उनसे पूछा था तो कहने लगे, 'भारतवर्ष के उच्च परिवारों में स्त्रियाँ पुरुषों को वरती हैं, पुरुष नहीं।' वे उस कुमारी को उनको वरने की प्रतीक्षा में हैं।''

''शायद वह कुमारी अब उनको नहीं वरेगी।''

''वे भी कहते थे कि शायद उसे कहीं कोई और श्रेष्ठ वर मिल गया है।''

इससे राका का मुख लाल हो गया। प्रचला ने कहना जारी रखा, ''मुझे तो ऐसा प्रतीत होता है कि अवध में ही नहीं, प्रत्युत् संसार-भर में उनसे बढ़कर और पुरुष मिलना कठिन है।''

राका चुपचाप सुन रही थी। मल्लिका ने ही बातचीत चालू रखी। उसने कहा, ''जब वे इतने अच्छे हैं और यह तुम जान गई हो, तब तो तुम उनके दूसरे विवाह को पसंद नहीं करोगी?''

''इसमें तो कोई युक्ति नहीं। मेरा अनुभव भी है कि उनके दिन-भर दूसरे काम करने और दूसरे लोगों से संपर्क में आने से मुझे कोई हानि नहीं होती। जब दिन-भर के पश्चात् वे मेरे पास आते हैं तो मुझे और भी अधिक प्रिय प्रतीत होते हैं। मैं तो समझती हूँ कि कोई व्यक्ति जितने अधिक लोगों से संपर्क में आता है, उतना ही वह अधिक सुसंस्कृत होता जाता है और उसकी संगति उतनी ही अधिक मधुर और आकर्षक होती जाती है।''

''परंतु प्रचला, विवाह का मुख्य कार्य तो...''

''हाँ, मैं समझती हूँ, महारानीजी! वासना-तृप्ति तो जीवन के बहुत से कामों में एक बहुत ही छोटी और अल्पकाल की बात है। पूर्ण जीवन का एक-सहस्त्रवाँ भाग भी यह नहीं बनती। जीवन का शेष समय तो अन्य अनेक समस्याओं के सुलझाने में, अनेक सुख-दुःख के अनुभवों और परस्पर संगत से लाभ उठाने में व्यय होता है। इन सब बातों में यदि दो साथियों के स्थान

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तीन हो जाएँ तो हानि के स्थान लाभ ही होगा, जीवन अधिक मधुर हो जाएगा।

"परस्पर का भोग इतना अधिक नहीं जितना दोनों का मिलकर संसार का भोग होता है। संसार बहुत लंबा-चौड़ा है। इसका दो के स्थान पर तीन भोग करें तो किसी को घाटा नहीं रहेगा।"

मल्लिका यद्यपि इस युक्ति से संतुष्ट नहीं हुई थी, परंतु वह देखती थी कि एक से अधिक विवाह करने की प्रथा संसार में प्रचलित है। इसमें एक बात उसे और पता चली थी कि देश में लड़कियों की संख्या लड़कों से अधिक है। ऐसी स्थिति में समाज में दो प्रथाओं का चल जाना स्वाभाविक है—एक बहु-पत्नी रखने की प्रथा और दूसरे गणिकाओं का बाहुल्य होना। समाज में नियम बनाने वाले दोनों में से किस प्रथा को श्रेष्ठ मानें, एक विकट प्रश्न था। विवाह से बहु-पत्नी रखने पर परिवारों में, जिनके पास खाने-पहनने को पर्याप्त नहीं, वैमनस्य उत्पन्न होने की संभावना है और अधिक गणिकाओं के रहने की प्रथा से तो समाज में ही दुर्व्यवस्था उत्पन्न होने की संभावना है। इन दोनों में कौन-सी बात उचित और कम हानिकर है, बताना बड़े-बड़े विद्वानों के लिए भी सुगम नहीं।

इससे मल्लिका प्रचला को कुछ उत्तर नहीं दे सकी। इस वार्त्तालाप का राका पर भारी प्रभाव हुआ। वह सोचने लगी कि स्त्रियों में क्यों अपनी सौकनों से द्वेष उत्पन्न हो जाता है। क्या साधारण स्त्रियों में यह द्वेष की भावना सत्य है अथवा प्रचला में यह प्रेम की भावना? यदि यह मानें कि प्रेम अथवा द्वेष मन की अवस्था पर निर्भर है तो वह अवस्था तो सर्वत्र सब अवस्थाओं में हो सकती है। द्वेष तो भाई-भाई, भाई-बहन, दो नागरिकों और किन्हीं भी दो व्यक्तियों में हो सकता है। इस पर भी वे संबंध तो जोड़े ही जाते हैं। फिर एक पति की दो पत्नियों में द्वेष होने में कोई विशेष कारण नहीं होना चाहिए।

एक बात वह देख रही थी कि अयोध्या भर में भानुमित्र की तुलना में कोई पुरुष दिखाई नहीं देता था। वह सोचती थी कि क्या एक अच्छे पति का आंशिक भोग अच्छा है अथवा एक निकृष्ट पति का पूर्ण भोग।

उस रात वह इन्हीं विचारों में सो नहीं सकी। इसके पश्चात् सोते-जागते, खाते-पीते अथवा स्नान करते, पढ़ते अथवा संगीत का अभ्यास करते, भानुमित्र से विवाह की समस्या उसके सम्मुख उपस्थित रहती।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक बात बार-बार उसके मन में आती थी कि प्रचला दिन-प्रतिदिन संगीत, कला और ज्ञान-विज्ञान में उन्नति कर रही है। इससे उसकी आशा कि भानुमित्र अपनी गँवार स्त्री से ऊब जाएगा, विलुप्त होने लगी।

इसके कुछ दिन पश्चात् भानुमित्र वैशाली में बौद्ध षड्यंत्र तोड़कर और वहाँ अनुपम मान-प्रतिष्ठा पाकर लौटा। इससे राका ने मन में निश्चय कर लिया कि भानुमित्र जैसे पति को वह चार अन्य उपपत्नियों के साथ भी उपमा देगी और किसी साधारण व्यक्ति की अकेली पत्नी न बनेगी। अतः यह निर्णय उसका अंतिम हो गया।

इसी दिन एक घटना और घटी। सायंकाल वह अपने आगार में संगीत का अभ्यास कर रही थी कि पं. मैलंद वहाँ आ उपस्थित हुआ। राका पिताजी को देख चुप रह गई और उसने तानपूरा सम्मुख भूमि पर रख दिया। पंडितजी ने कहा, ''गाओ, गाओ बेटी!''

परंतु राका ने तानपूरा नहीं उठाया और कहा, ''आप कुछ चिंतित प्रतीत होते हैं।''

''हाँ, इसी कारण तुमसे बात करने आया हूँ। आज महाराज का एक विश्वस्त सेवक यह समाचार लाया है कि महारानी के बच्चा न होने से वे चिंतित हैं। उनकी इच्छा है कि एक और विवाह कर लें।''

राका इस बात को सुन आवाक् मुख रह गई। पंडित मैलंद अपने मन की बात कहता गया, ''महारानी मल्लिका इसमें आपत्ति नहीं उठा रहीं। महाराज ने अपने मंत्रिमंडल से भी राय की है और मंत्रिमंडल ने इसका विरोध नहीं किया, प्रत्युत् महामात्य ने महाराज की बात का समर्थन किया है।''

फिर कुछ विचारकर और गंभीरता से राका के मुख पर देखते हुए पंडित मैलंद ने कहना जारी रखा, ''महाराज के सेवक का यह कहना है कि महाराज को बहुत प्रसन्नता होगी यदि तुम उनको वरो।''

इतना कह मैलंद पंडित अपनी लड़की के विवर्ण हुए मुख को देखता रहा। राका कितनी ही देर तक चुपचाप बैठी इस परिस्थिति पर विचार करती रही। मैलंद पंडित उत्तर की प्रतीक्षा में बैठा रहा।

अंत में राका ने डबडबाई आँखों से पिता की ओर देखते हुए कहा, ''पिताजी! मैंने अपने वर का निश्चय कर लिया है। मैं महामात्य की पत्नी बनना स्वीकार कर चुकी हूँ।''

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"तुम किसी को वचन दे चुकी हो क्या?"

"नहीं। अपने मन में निर्णय कर चुकी हूँ।"

"कब से?"

"आपके आने से एक घंटा पूर्व।"

"तो अभी उस निर्णय पर पुनरावलोकन कर सकती हो या नहीं?"

"नहीं पिताजी! अब हो गया है।"

"तो फिर रो क्यों रही हो?"

"समय पर अपने निर्णय लेने की प्रसन्नता में।"

"ओह! तुम भानुमित्र को महाराज पर उपमा देती हो?"

"हाँ पिताजी!"

"परंतु जानती हो, एक समय महारानी मल्लिका ने महाराज को भानुमित्र पर उपमा दी थी?"

"जानती हूँ। साथ ही यह भी समझती हूँ कि अब उन्हें अपने अंतरात्मा में अपने किए पर पश्चात्ताप लग रहा होगा।"

"यह अनुमान ही तो है।"

"हाँ, परंतु अकाट्य युक्ति पर आधारित अनुमान प्रमाण माना जाता है।"

मैलंद चुप कर रहा।

: 2 :

अगले दिन राका महारानी मल्लिका को मिलने गई। पृथक् में उनसे भेंट कर बोली, "महारानीजी! मैंने निर्णय कर लिया है कि महामात्यजी की द्वितीय पत्नी बन उनको वरूँ।"

"सत्य?" मल्लिका विस्मय में और कुछ नहीं कह सकी। कुछ काल चुप रह अपने चित्त को स्थिर कर उसने पूछा, "राका बहन! तुम्हें महाराज का संदेश मिला है क्या?"

"हाँ महारानीजी! परंतु मेरा निर्णय यही है।"

"तो तुम महाराज से महामात्य को अधिक अच्छा समझती हो?"

"अच्छे और बुरे का प्रश्न नहीं है। मैं आरंभ से ही उन्हें प्रेम करती हूँ। बीच में उनके विवाह कर लेने से मेरे मन में संशय उत्पन्न हो गया था, परंतु धीरे-धीरे संशय दूर हो गया है। महीनों के गंभीर विचार से मैं प्रचला के विचार की ही हो गई हूँ।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जब मल्लिका ने राका का निर्णय महाराज को बताया तो वे विस्मय में डूब गए। उनके मन में ईर्ष्या होने लगी। मल्लिका ने कहा, ''यह सब कर्मों की गति है महाराज! एक समय था कि आपने भानुमित्र को पछाड़ा था, आज उसने आपको पछाड़ अपना बदला ले लिया है।''

मुरहारी विक्रम मन-ही-मन भानुमित्र को अपने से अधिक प्रेम का पात्र बन गया देख क्रुद्ध हुआ था, परंतु भानुमित्र की लोकप्रियता देख वह चुप था। भानुमित्र अयोध्या के लिए एक अत्यावश्यक व्यक्ति बन गया था।

मल्लिका ने कहा, ''महाराज! आपके लिए कोई अन्य पत्नी, आप के पुत्र की माता, ढूँढ़नी होगी।''

एक दिन मैलंद पंडित राका को लेकर महामात्य के भवन में आए और राका ने भानुमित्र के गले में जयमाला डाल दी। इस घटना का समाचार डरते-डरते दासियों ने प्रचला को दिया तो उसने पूछा, ''मैलंद जी की लड़की? कहाँ है इस समय?''

''रानीजी! नीचे बैठकघर में है। पंडितजी उनके विवाह के लिए तिथि का निश्चय कर रहे हैं।''

दासियों का अनुमान था कि घर में कलह प्रारंभ होगी, परंतु उनके विस्मय का ठिकाना नहीं रहा, जब प्रचला समाचार सुनते ही बैठकघर में जा पहुँची और राका के समीप बैठ उसके गले में बाँह डालकर बोली, ''भगवान् का सौ-सौ बार धन्यवाद है कि तुम मेरे आशय को समझ सकी हो।''

विवाह के अवसर पर भानुमित्र ने अपने वृद्ध माता-पिता को बुला भेजा। अयोध्या से सेवक भेजे गए, जो उन्हें रथ में बिठाकर काश्मीर से ले आए।

विवाह के पूर्व एक बृहत् यज्ञ किया गया, जिसमें सैकड़ों ब्राह्मण एक पखवाड़े तक वेदपाठ करते रहे। सहस्रों लोगों को अन्न-अनाज बाँटा गया और वस्त्र दिए गए।

पंडित मैलंद ने अपनी पूर्ण संपत्ति इस अवसर पर दे डाली। एक छोटा-सा अंश राका को दे दिया और शेष एक वेद विद्यालय की स्थापना के लिए दान कर दिया। पंडितजी का अपना विशाल भवन था। वहाँ इस विद्यालय का कार्य आरंभ हो गया। पंडितजी ने स्वयं वानप्रस्थ आश्रम में प्रवेश कर हरिद्वार के लिए प्रस्थान कर दिया।

विवाह के अवसर पर गणपति देवधर्मा अपनी स्त्री और लड़कियों के साथ अयोध्या में आया। नगर-वधू मृदुला ने एक बहुत बढ़िया पहिनावा और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भूषण भानुमित्र की स्त्री के लिए भेजे। मल्लराज्य का गणपति, मगध देश का राजदूत और अंग-बंग से सद्भावना-मंडल आए। पांचाल, हस्तिनापुर, इंद्रपस्थ, किन्नर राज्य, असुर राज्य और कोंकण देश से शुभ संवाद आए।

अयोध्या में पाँच दिन तक भारी समारोह रहा। मल्लिका, इस अवसर पर, अयोध्या तथा पूर्ण अवध में हर्षोत्सव होते देख, चकित थी। वह समझ गई थी कि राज्य-पदवी से भी अधिक योग्यता की पदवी है। उसे कभी-कभी भानुमित्र का त्याग खटकने लगा। वह समझती थी कि उसने वह जीवन की एक भारी भूल की थी।

प्रचला के गर्भ स्थित हो चुका था और वह पाँचवें मास में जा रही थी। प्रचला से एक वर्ष से भी अधिक पूर्व मल्लिका का विवाह हुआ था। विवाह के समय वह प्रचला से अधिक आयु की थी। इस पर भी उसके बच्चा होने के कोई लक्षण प्रतीत नहीं होते थे।

भानुमित्र के माता-पिता आए तो उन्हें अपने पुत्र को एक विशाल राज्य का महामात्य और दो स्त्रियों का स्वामी देख अति प्रसन्नता हुई। उसकी माँ अपनी पतोहुओं को प्यार कर अति हर्षित अनुभव करती थी।

: 3 :

गणपति की हत्या का षड्यंत्र विफल होने पर महाप्रभु की महिमा बौद्ध क्षेत्र में भी बहुत कम हो गई। सारनाथ में बौद्ध मंडली का अधिवेशन हुआ और भारत खंड के भिन्न-भिन्न भागों से आए हुए बौद्ध भिक्षुओं और विहारों के प्रबंधकों ने महाप्रभु के कार्य की तीव्र आलोचना की।

इस अधिवेशन में उपस्थित लोगों ने भारी संख्या में महाप्रभु के सांसा. रिक बातों में और फिर राजनीति की बातों में हस्तक्षेप को अनुचित समझा। भगवान् शाक्य मुनि गौतम ने विरक्ति के मार्ग का दिग्दर्शन किया था, इससे महाप्रभु के कार्य को बौद्ध मत के विपरीत माना गया।

प्रायः ऐसा होता है कि एक रोग अनेक अन्य रोग उत्पन्न कर स्वयं नष्ट हो जाता है। उसका अस्तित्व नहीं रहता, परंतु उसके परिणामस्वरूप उत्पन्न रोग अपने दुष्परिणाम प्रकट करते रहते हैं।

यही बात भगवान् बुद्ध से चलाए निवृत्ति-मार्ग से उत्पन्न हुई। प्रारंभ में तो भगवान् ने संसार का त्याग, संसार के दुःखों का अंत करने वाला बताया। उन्होंने स्वयं संसार का त्याग किया और जो कोई भी उनके संपर्क में आया, उससे संसार छुड़ा दिया। राजा-महाराजाओं को अथवा भिखारियों को, खेतों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में हल चलाने वाले किसानों को अथवा दुकानों में बैठे व्यापार करते सेट्ठियों को, बालक-बालिकाओं को अथवा वृद्ध स्त्री-पुरुषों को, विवाहित अथवा अविवाहित युवक-युवतियों को, सबको संन्यास का मार्ग लेने की प्रेरणा दी। शाक्य मुनि गौतम के व्यक्तित्व और तपस्या के प्रभाव से नगर के नगर उजड़कर विहार बन गए।

इसकी स्वाभाविक प्रतिक्रिया आरंभ हुई। गौतम बुद्ध का व्यक्तित्व नहीं रहा था। परिणाम यह हुआ कि युवक-युवतियाँ भिक्षु बनने के उपरांत, हर प्रकार के प्रतिबंधों के होने पर भी, वासनाओं से अधिक काल तक मुक्त नहीं रह सके। बौद्ध धर्म में सहनशीलता की विशेष महता होने के कारण, वासनाओं में लिप्त हो जाने वाले भिक्षुओं को यह समझ कर सहन कर लिया जाता था कि बेचारे पथ के भटके हुए निर्वाण-पथ के राही दया के पात्र हैं, न कि दंड के।

बौद्ध धर्म की एक और प्रतिक्रिया उत्पन्न हुई। ब्राह्मण धर्म का खंडन करते-करते ब्राह्मणों का खंडन आरंभ हो गया। क्षत्रिय राजा-महाराजा भी ब्राह्मण धर्म के पक्षपाती होने से, निंदनीय हो गए। मनुष्य-मात्र की समानता का अर्थ यह निकला कि संस्कृत, साहित्य, कला, ज्ञान, विज्ञान से हीन शूद्र और वैश्य अपने को ब्राह्मण तथा क्षत्रिय पद के अधिकारी मानने लगे। परिणाम यह हुआ कि बौद्ध धर्म ब्राह्मण और क्षत्रियों का विरोधी पक्ष बन गया। इस प्रकार एक श्रृंखला में बँधा समाज टूक-टूक हो गया।

शाक्य मुनि गौतम तो संसार में दुःखों की शांति के लिए मनुष्य मात्र की समानता और संसार से निवृत्ति का प्रचार करता रहा और इन दोनों बातों की प्रतिक्रिया यह हुई कि शूद्र और वैश्य अपने को ब्राह्मण-क्षत्रियों से ऊँचे मानने लगे और वासना में लिप्त होना विवशता मानी जाने से, क्षम्य हो गई।

जब सांसारिक लोगों ने देखा कि संन्यासी लोग भी वासना में फँसे हैं, तो उन्होंने भोग-विलास को अपना अधिकार माना। साथ ही क्षत्रिय और ब्राह्मणों का विरोध वैश्यों और शूद्रों में बढ़ गया।

वैशाली का उपगणपति लक्ष्मीकांत भी महाप्रभु से चलाए षड्यंत्र में सम्मिलित था, परंतु वह उसके विफल होने पर पकड़ा नहीं गया। वह बाल-बाल बच गया। इस पर भी उसे अपने इस षड्यंत्र में सम्मिलित होने पर पश्चात्ताप नहीं हुआ, प्रत्युत् भानुमित्र की प्रशंसा और प्रतिष्ठा होते देख

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मन में अति क्षुब्ध हुआ।

उसके मन से मैल नहीं गया। वह स्वयं वैशाली का गणपति बनना चाहता था। यदि महाप्रभु से चलाया षड्यंत्र सफल हो जाता तो वह गणपति बन जाता, परंतु ऐसा न हो सका। इस पर भी व्यापारिक बुद्धि रखने के कारण उसने असफल हुए षड्यंत्र की त्रुटियों को जाँचकर पुनः गणपति बनने के प्रयत्न करने का दृढ़ निश्चय कर लिया।

उसने दो बातों को स्पष्ट समझ लिया—एक भानुमित्र का वैशाली के पड़ोसी राज्य में महामात्य होना, दूसरे गणपति देवधर्मा की जन-साधरण में ख्याति। दोनों पर कुठाराघात करने का निश्चय कर वह वैशाली का राज्य पलटने का यत्न करने लगा।

अयोध्या के लिए उसकी योजना थी कि वहाँ उपद्रव खड़ा कर भानुमित्र को इतना बदनाम किया जाए कि महाराज उसको निकाल दें। इसके पश्चात् वैशाली में षड्यंत्र किया जा सकता है।

वैशाली की संसद् के चुनाव में अभी दो वर्ष शेष थे। उस समय के लिए तैयारी का निश्चय कर लक्ष्मीकांत ने कार्य आरंभ कर दिया। वह चाहता था कि निर्वाचन के पूर्व अयोध्या के महामात्य को अपमानित कर निकाल दिया जाए। इस अर्थ उसने वैशाली के कुछ स्वार्थी सेट्ठियों को एकत्रित कर अपना आशय सम्मुख रख दिया। उसने कहा—

'वैशाली के महाजनो! क्षत्रिय और ब्राह्मणों के राज्य का अंत कर हमें वैश्यों और शूद्रों का राज्य स्थापित करना है।'

एक ने पूछा "इससे क्या लाभ होगा?"

"इससे देश का धन, जो हम पैदा करते हैं, व्यर्थ में मूँछों पर ताव दे-देकर सुरापान में व्यय नहीं होगा।"

"पर हम लोग भी तो सुरापान करते हैं?"

"हम धनोपार्जन भी तो करते हैं। हमें व्यय करने का अधिकार है।"

"किंतु दादा!" उस व्यक्ति का कहना था, "वे लोग राज्य की रक्षा के लिए अपना रक्त पानी की भाँति बहा देते हैं।"

"वह हमारे युवक भी कर देंगे।"

बात सरल प्रतीत हुई और षड्यंत्र की नींव रख दी गई। लक्ष्मीकांत का कहना था, "वैशाली में तो निर्वाचन में अपने प्रतिनिधि अधिक भेजने चाहिए। वह उस समय ब्राह्मणों और क्षत्रियों को धन देकर उनका मत मोल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लेने से हो सकेगा। एक बार यदि हम संसद् में बहुमत में आ गए तो फिर हम विधान में परिवर्तन कर सेना में अ-क्षत्रियों को भरती कर अपना राज्य स्थिर कर लेंगे, परंतु यह तब तक नहीं हो सकेगा, जब तक भानुमित्र अयोध्या का महामात्य है। वह बहुत ही चतुर नीतिज्ञ है और देवधर्मा के मित्र का पुत्र होने से हमारी दाल नहीं गलने देगा। इससे वैशाली की संसद् के आगामी निर्वाचन से पूर्व हमें उसे अयोध्या से निकलवाना है।''

लक्ष्मीकांत की युक्ति पर सब उपस्थितगण वाह-वाह करने लगे। धन एकत्रित किया गया। लक्ष्मीकांत ने एक लक्ष स्वर्ण-मुद्रा इस कार्य के लिए स्वयं दीं। अन्य लोगों ने भी भारी-भारी धनराशियाँ गिना दीं। पश्चात् धन एकत्रित करने का कार्य गुप्त रूप से वैशाली और अयोध्या के अन्य सेट्ठियों के हाथ में जा पहुँचा।

एक मास के भीतर दस लक्ष स्वर्ण-मुद्रा एकत्रित हो गईं। लक्ष्मीकांत इस योजना का नेता चुना गया और कार्य आरंभ हो गया।

: 4 :

अवध के महाराज मुरहारी विक्रम भानुमित्र के राका से विवाह के पश्चात् भानुमित्र से खिंचे रहने लगे थे। चमुचूड़ महाराज को मंत्रणा देने वाला था। महाराज एकांत में चमुचूड़ से कहते, ''महामात्य के रहते हमें कोई सुंदर कन्या वरेगी क्या?''

''बात कुछ ऐसी ही प्रतीत होती है, महाराज! सुना है, वैशाली की नगर-वधू मृदुला भी हमारे महामात्य से प्रेम करती है। संसार की सब सुंदर लड़कियाँ महामात्य के चरणों में अपने को न्योछावर करने के लिए उद्यत हैं। मगधराज की छोटी लड़की सुकन्या के प्रेम-पत्र महामात्य के पास आते-जाते हैं।''

''मैं नहीं जानता कि अब क्या करूँ? भानुमित्र का प्रजा पर इतना प्रभाव है कि यदि उसे निकाल दूँ तो यहाँ विप्लव हो जाएगा।''

''इस प्रकार नहीं, महाराज! हमें महामात्य को पहले बदनाम करना चाहिए। उसे चोर और देशद्रोही सिद्ध करना चाहिए। तभी हम उसको निकाल सकेंगे।''

इस पर भी महाराज और उनके मंत्री चमुचूड़ कोई ऐसा उपाय और अवसर नहीं ढूँढ़ सके, जिससे भानुमित्र को निंदनीय ठहरा सकें। मंत्रिमंडल में भानुमित्र दिन-प्रतिदिन अधिक-और-अधिक लोकहित के कार्यों के निश्चय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कराता जाता था। एक दिन देश के पचास स्थानों पर रुग्णालय खुलवा दिए और उनमें तक्षशिला से योग्य वैद्यों को लाकर नियुक्त करवा दिया। एक अन्य दिन मैलंद पंडित के भवन में स्थापित वेद विद्यालय को एक विश्वविद्यालय का रूप देने के लिए काशी से विद्वान् ब्राह्मणों की नियुक्ति कर दी। अयोध्या में पशु-चिकित्सालय खुलवा दिए। देश-भर की सड़कें खुली और सुदृढ़ करवा दीं। व्यापार पर कर कम कर दिया। आय पर कर तो था, परंतु अन्य पड़ोस के देशों से बहुत कम।

महाराज जब इन योजनाओं का विरोध करते तो भानुमित्र पूछता, "महाराज! क्या ये काम ठीक नहीं हैं?"

"ठीक तो हैं, महामात्य! परंतु इनके लिए धन कहाँ है?"

"धन तो अर्थमंत्री बताएँगे।"

अर्थमंत्री कहता, "धन तो इतना है कि हम एक-दो राज्य खरीद सकते हैं।"

महाराज शांत हो जाते। इस प्रकार कार्य चल रहा था कि एक दिन हस्तिनापुर का एक सेट्ठी-परिवार तीर्थयात्रा करता हुआ अयोध्या पधारा। वह राज्य के पंथागार में ठहरा था। उस परिवार में एक करोड़पति सेठ सुमेर, उसकी स्त्री, एक युवा कन्या और दो छोटे-छोटे बालक थे। सुमेर एक दिन राज्य-सभा में अपनी युवा लड़की और धर्मपत्नी सहित उपस्थित हुआ। महाराज की आँख में लड़की चढ़ गई। उन्होंने मल्लिका से इस विषय में बातचीत की। मल्लिका को आपत्ति नहीं थी। अतएव कुछ वार्त्तालाप के पश्चात् विवाह की बात निश्चय हो गई। होने वाली महारानी का नाम पद्मावती था।

सेठ सुमेर ने अयोध्या में एक बहुत बड़ा भवन ले लिया और उसमें विवाह का प्रबंध करने लगा। महाराज के विवाह पर व्यय करने के लिए मंत्रिमंडल ने पाँच लाख स्वर्ण-मुद्रा स्वीकार की और विवाह बहुत धूमधाम से संपन्न हुआ। स्वाभाविक रूप में भानुमित्र ने अपने विवाह से अधिक सज-धज और दान-दक्षिणा का प्रबंध कर दिया। एक बार तो मुरहारी विक्रम को यह विश्वास हो गया कि उसकी प्रजा उससे प्रेम करती है।

विवाह के कुछ दिन पश्चात् एक समाचार भानुमित्र को पटरानी मल्लिका की दासियों ने दिया कि नई महारानी ने मल्लिका को डाँटा है। पटरानी ने इसका कुछ उत्तर नहीं दिया। चुपचाप अपने आगार में चली गई।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसके कुछ दिन उपरांत महाराज के साथ मंत्रिमंडल में मल्लिका के स्थान पद्मावती आई। उसी दिन मंत्रिमंडल में यह निश्चय हुआ कि महारानी पद्मावी के पिता को राजा की पदवी दी जाए और नाममात्र की एक जागीर उसके छोटे भाई को दी जाए।

इसके पश्चात् एक दिन मल्लिका और महाराज में मनमुटाव हो गया। इसका कारण विदित नहीं हुआ।

इन सब बातों से भानुमित्र आँखे मूँदे हुए नहीं था। उसने प्रचला को समझा-बुझाकर मल्लिका से मिलने भेजा। प्रचला मल्लिका से मिल पूर्ण परिस्थिति का पता कर लाई। उसने भानुमित्र को बताया, ''नई महारानी मल्लिका से महाराज की भेंट नहीं होने देती। मल्लिका के लिए महल में ऐसे आगार नियत कर दिए हैं, जहाँ आते-जाते हुए नवीन महारानी के सेवकों से देखा जाना अनिवार्य होता है। पटरानीजी के पास केवल दो सेविकाएँ हैं और मेरा विचार है कि उनमें भी एक पटरानी पर गुप्तचर का काम करती है।''

''महारानी मल्लिका ने कुछ विशेष बात कही है?'' भानुमित्र ने पूछा।

''वे मेरे और राका के परस्पर संबंध के विषय में पूछती थीं।''

''और तुमने क्या बताया है, प्रचला?''

''मैंने बताया कि हम इकट्ठे भोजन करती हैं। इकट्ठे पूजा-पाठ और स्वाध्याय करती हैं। इकट्ठे संगीत का अभ्यास करती हैं। इकट्ठी सोती और जागती हैं। आपके मन में कभी यह विचार नहीं आया कि मैं या राका बहन, छोटी-बड़ी हैं अथवा अच्छी-बुरी हैं।''

''तो इसका क्या प्रभाव हुआ मल्लिका देवी पर?''

''वे अभी तो इतनी दुखी हैं कि दूसरों के विषय में सोच-समझ भी नहीं सकतीं।''

: 5 :

उक्त समाचार पाने के पश्चात् भानुमित्र कई दिन तक गंभीर विचार में पड़ा रहा। इन दिनों वह इस परिवर्तन में कारण देख रहा था। अभी वह किसी निर्णयात्मक परिणाम पर नहीं पहुँच सका था कि एक दिन महाराज ने मंत्रिमंडल के सम्मुख एक प्रस्ताव उपस्थित कर दिया। प्रस्ताव था कि सरयू के तट पर, अयोध्या से दो कोस उत्तर की ओर जंगल में बौद्ध-विहार के स्थापन की स्वीकृति दी जाए। इस प्रस्ताव के उपस्थित किए जाने के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समय महारानी पद्मावती मंत्रिमंडल की बैठक में उपस्थित थीं।

इस प्रस्ताव का विरोध भानुमित्र ने किया। उसका कहना था कि स्वर्गीय महाराज ने यह स्वीकृति इस कारण प्रदान नहीं की थी कि अल्पआयु के बालक और बालिकाएँ भिक्षु बना लिए जाते हैं। इससे देश के लोगों का चरित्र गिरता जाता है।

महाराज का कहना था, "पूर्ण भारत-खंड में विहार खुल रहे हैं। हम काल की गति से पृथक् रहकर सुरक्षित नहीं रह सकते।"

"परंतु महाराज! सुरक्षा का प्रश्न नहीं है। यह मानवता की माँग है कि हम कोमल विचारों वाले कुमारों और कुमारियों की दूषित विचारधारा से रक्षा करें।"

इस पर महारानी बोल उठीं, "तो क्या महामात्य बौद्ध-विचारधारा को दूषित समझते हैं?"

"कम-से-कम बालक-बालिकाओं को अपने माता-पिता की इच्छा के विरुद्ध और स्त्रियों को अपने पति की इच्छा के विरुद्ध संसार छोड़ भिक्षु बनने को श्रेष्ठ नहीं माना जा सकता।"

"क्या एक स्त्री को अपने विचारानुकूल अपने भविष्य को सुधारने की स्वीकृति नहीं दी जा सकती?"

"देखिए देवीजी! जातीय हित यह है कि स्त्री रूपी धन सुरक्षित और स्वस्थ रहे। जातीय हित में ही व्यक्तिगत हित सुरक्षित रहता है। युवा स्त्रियों के अधिक संख्या में भिक्षुणी बन जाने से जाति का अहित है। हम इसकी स्वीकृति नहीं दे सकते।"

"यह तो अन्याय हो गया, महामात्य!"

"नहीं देवीजी, एक कोमल पौधे के चारों ओर लोहे की बाड़ लगाना उस पर अन्याय करना नहीं, प्रत्युत् न्यायोचित है।"

"स्त्रियाँ कोमल पेड़ नहीं हैं, महामात्य!"

"धर्मशास्त्र लिखने वाले इन्हें कोमल ही नहीं, प्रत्युत् मूल्यवान् भी मानते हैं। इसका सबसे अधिक मूल्य भावी समाज की माँ होना है। हम न तो इन्हें बाँझ होने देंगे, न ही कठोर, हृदयहीन, स्वार्थरत इत्यादि।"

महारानी पद्मावती निरुत्तर हो गईं। परंतु महाराज ने कहा, "देखिए मंत्री-वर्ग! हमारी प्रजा में बौद्ध भी हैं और हम न्याय इसी में समझते हैं कि उन लोगों के धर्मगुरुओं के रहने को विहार स्थापित होने की स्वीकृति दे दी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जाए।''

''यह ठीक है।'' भानुमित्र ने फिर कहा, ''परंतु आर्य प्रजा से न्याय की माँग यह है कि अल्प आयु के बालक-बालिकाओं और स्त्री-वर्ग को उनके संरक्षकों की स्वीकृति के बिना भिक्षु बनाना दंडनीय हो।''

महाराज ने बात को टालते हुए कहा, ''ऐसा नियम बनाना एक पृथक् बात है। इस समय तो हम केवल विहार स्थापित हो सकने की स्वीकृति दे रहे हैं।''

इसके पश्चात् कुछ और कहने को स्थान नहीं था। भानुमित्र को आद्योपान्त सबकुछ संशयात्मक प्रतीत होने लगा। उसने मंत्रिमंडल से बाहर आते ही अपने भवन को प्रस्थान किया। अपने गृह में पहुँच उसने अपने को एक आगार में बंद कर लिया और आज्ञा कर दी कि उस दिन वह किसी से नहीं मिल रहा।

उसी आगार में उसने भोजन किया और सोया। अगले दिन वह अपने बालों को सँवारता हुआ दर्पण में मुख देख रहा था कि प्रचला और राका उसके पीछे आ खड़ी हुईं। दोनों का प्रतिबिंब दर्पण में देख भानुमित्र हँस पड़ा और घूमकर उनसे पूछने लगा, ''बहुत लंबे मुख हो गए हैं मेरी दोनों धर्मपत्नियों के?''

''आपकी कल रात की आज्ञा मिली, तो हम विचार करने लगीं कि क्या कारण था उसका। जब कुछ समझ नहीं आया तो रात-भर अनुमान लगाती रही हैं। इससे सो नहीं सकीं। प्रातःकाल जब श्रीमानूजी का द्वार खुला तो दर्शन के लिए उपस्थित हुई हैं।''

''ओह! तो न सो सकने से मुख उतर गए हैं?''

''और चिंता से भी।'' राका का उत्तर था।

''चिंता कैसी थी?'' भानुमित्र ने बालों में कंघा फेरते हुए पूछा।

''यही कि आपका शरीर रुग्ण है अथवा मन।''

भानुमित्र हँस पड़ा और पूछने लगा, ''तो क्या रुग्ण प्रतीत हुआ है?''

''शरीर तो स्वस्थ प्रतीत होता है।'' राका ने मुख पर हाथ की पीठ रख देखते हुए कहा।

''तो अवश्य मन रुग्ण है। बालों का इतने उत्साह से सँवारना भी तो यही प्रकट करता है।'' प्रचला का कहना था।

''हाँ देवियो! पर अब मैं बिल्कुल ठीक हूँ। कल एक गणित के प्रश्न का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उत्तर हल नहीं कर सका था। रात-भर उसको समझने का यत्न करता रहा हूँ।"

"तो उत्तर पा गए हैं, आर्य?"

"हाँ देवी!"

भानुमित्र ने पूर्ण योजना बनाकर ही आगार का द्वार खोला था। उसने स्नानादि के उपरांत निश्चिंत हो योजना पर काम आरंभ कर दिया। कुछ ही दिनों में उसके गुप्तचरों ने सूचना दी कि महारानी पद्मावती के भाई को जो छोटी-सी जागीर मिली है, वह सैनिक अड्डा बन रहा है, जहाँ नगर के और आस-पास के गाँवों के छोटे वर्ण के लोगों को अस्त्र-शस्त्र-शिक्षा दी जाने लगी है।

फिर उस भवन में, जो महारानी पद्मावती के पिता ने उसके विवाह के लिए लिया था, अनेक प्रकार के लोग वैशाली से आते-जाते हैं और उन लोगों में और महारानी में अटूट संपर्क बना हुआ है।

सबसे अधिक विस्मयजनक बात यह विदित हुई कि पद्मावती के पिता सेठ सुमेर के नाम का कोई भी व्यक्ति हस्तिनापुर में नहीं रहता था।

भानुमित्र प्रतिदिन प्रातःकाल कुछ प्रश्न बनाता था। वे प्रश्न गुप्तचरों को उत्तर मालूम करने के लिए दे दिए जाते थे। जब उत्तर आता था तो वह एक पुस्तक में लिख लिया जाता था।

एक दिन उसने गुप्तचरों को कहा कि महारानी पद्मावती के पिता को ढूँढ़ा जाए। वह वैशाली में होगा। जिन लोगों ने सेठ सुमेर को देखा था, वे भारी संख्या में वैशाली भेजे गए और एक सप्ताह के भीतर सूचना मिली कि सेठ लक्ष्मीकांत के भवन में वह व्यक्ति प्रायः आता-जाता देखा गया है।

यह बात भी उसी पुस्तक में लिख ली गई, परंतु अगली आज्ञा यह हुई कि उसका वास्तविक नाम-धाम मालूम किया जाए। यह बात कुछ अधिक कठिन थी। इसके लिए अयोध्या का एक सेठ चन्द्रमोहन तैयार किया गया। वह वैशाली गया और उसने सेठ लक्ष्मीकांत से मित्रता उत्पन्न की। पश्चात् अपनी लड़की का विवाह लक्ष्मीकांत के लड़के से करने की बात चला दी। लड़की देखने की बातचीत होने लगी तो अयोध्या के सेठ ने कहा कि दो सप्ताह तक वह अयोध्या जाएगा, तो लड़की को लेकर वैशाली आएगा। इस प्रकार उसकी लक्ष्मीकांत से घनिष्टता बढ़ने लगी।

चंद्रमोहन के साथ सदा चार चोबदार रहते थे। वे गुप्तचर विभाग के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लोग थे, जिन्होंने सेठ सुमरे को लक्ष्मीकांत के भवन में देखा था।

सेठ सुमेर वैशाली से बाहर गया हुआ था। इस कारण कई दिन तक तो सफलता नहीं मिली। पहले ही दिन जब सुमेर लौटा, तो चंद्रमोहन के चोबदारों ने निश्चित संकेत कर दिया। चंद्रमोहन ने सुमेर के विषय में लक्ष्मीकांत से पूछा, 'आपका परिचय क्या है?'

''ये हमारे मित्र हैं। बहुत जीवट के आदमी हैं।''

चंद्रमोहन ने इतने ही उत्तर से संतोष प्रकट कर हाथ जोड़कर नमस्कार कर दी। पश्चात् दोनों में बातें होने लगीं। सेठ चंद्रमोहन ने कहा, ''आप तो कोई बहुत भले पुरुष प्रतीत होते हैं। मैं तो एक साधारण-सा व्यक्ति हूँ। परंतु सेठ लक्ष्मीकांतजी ने अपार कृपा कर मेरी लड़की का विवाह अपने लड़के से स्वीकार कर लिया है। मैंने लड़के को बहुत धन देना भी स्वीकार किया है। तभी तो, आप-जैसे सज्जनों से भेंट हो रही है। हम वैश्यों में धन का उपार्जन ही तो मुख्य बात है। हमारा संसार इसी के भरोसे चलता है। मैं लड़की के विवाह पर पाँच लक्ष स्वर्ण-मुद्रा देने का विचार रखता हूँ।''

पाँच लक्ष स्वर्ण-मुद्रा का उल्लेख ही बात थी, जिसके लिए चंद्रमोहन ने इतनी भूमिका बाँधी थी। सुमेर की आँखें खुल गईं। साथ ही उसने समझा कि यह कोई मूर्ख आदमी है। उसे ठगने के लिए उसने पूछा, ''आपका शुभ नाम क्या है?''

''चंद्रमोहन! श्रीमान्, गंगा में हमारे जहाज चलते हैं। एक करोड़ से कम संपत्ति नहीं है।''

''यहाँ आपका आना कैसे हुआ?''

''मगध-देश के महाराजा सिंहवर्मा ने गांधार की एक दासी को मोल लिया है और उसके रूप पर इतने मुग्ध हुए हैं कि उसको असली एक सहस्र मुक्ता की माला देने का वचन दिया है। महाराज की आज्ञा है कि एक ही रूप-रंग और तौल के एक सहस्र मोती एकत्रित किए जाएँ और वह मैं कर रहा हूँ। लगभग आठ सौ मुक्ता एकत्रित कर चुका हूँ। इसके लिए मुझे भारत-खंड के बीसियों बड़े-बड़े नगरों में जाना पड़ा है। वैशाली में भी इस कारण टिका हुआ हूँ।''

''उस मुक्ताहार का क्या दाम होगा?''

''मैं अभी तक पाँच लाख स्वर्ण-मुद्रा व्यय कर चुका हूँ। मेरा विचार है कि नौ लाख स्वर्ण-मुद्राएँ उस हार का मूल्य होना चाहिए।''

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुमेर ने तुरंत अपने मन की बात कह डाली, "पर सेठ साहब! आप यहाँ आए तो विनोद-भवन देखा है या नहीं?"

"नहीं, मेरा वहाँ परिचित कोई नहीं।"

"मैं जो हूँ। चलिए, आपको ले चलता हूँ।"

: 6 :

सेठ चंद्रमोहन और उसको भेजने वाला भानुमित्र समझता था कि वैशाली में विनोद-भवन एक ऐसी संस्था है, जिससे गुप्त कार्य करने वालों को सचेत रहना चाहिए। भानुमित्र ने समय-कुसमय के लिए मृदुला के नाम का एक पत्र चंद्रमोहन को दे रेखा था। वह पत्र उसकी जेब में था।

दोनों विनोद-भवन में सेट्ठियों के आगार में जा पहुँचे। वहाँ सुमेर ने मद्य मँगवाई और द्यूत-क्रीड़ा का सामान मँगवा भेजा। चंद्रमोहन ने कहा भी कि वह जुआ नहीं खेलता। इस पर भी सुमेर आग्रह करता गया।

विनोद-भवन की एक दासी वहाँ आ बैठी और जब वे जुआ खेलने लगे तो उनको मद्यपान कराने लगी। दाँव छोटे-छोटे लगाए जा रहे थे। इस पर भी जो जीतता, वह जीत का चौथा भाग दासी को देता जाता था। एक बार सुमेर ने कहा भी, "सेठ साहब! यह दो-दो रजत-मुद्रा से क्या खेलते हैं, सौ-सौ स्वर्ण-मुद्रा का दाँव लगाइए।"

सुमेर का विचार था कि चंद्रमोहन को नशा हो गया है, परंतु यह उसकी भूल निकली। चंद्रमोहन सुमेर से अधिक चैतन्य था। उसने प्रत्यक्ष में यही प्रकट करते हुए कि वह नशे में है, कहा, "बात तो ठीक है। करोड़पति के लिए दो रजत-मुद्रा का दाँव लज्जा की बात है। तो मैं सौ स्वर्ण-मुद्रा का दाँव लगाता हूँ। यह लो सौ स्वर्ण-मुद्रा मेरी। तुम भी निकालो सौ स्वर्ण-मुद्रा।"

सुमेर के पास फूटी कौड़ी भी नहीं थी। उसने अभी दस रजत-मुद्रा चंद्रमो.हन से जीती थीं। इससे उसने कहा, "आप चलिए। मैं हारूँगा तो दे दूँगा।"

"यह बात व्यापार में तो चल सकती है, पर जुए में नहीं। तो सुमेर जी! आपके पास स्वर्ण-मुद्रा नहीं हैं। इस पर भी आप मेरे से स्वर्ण-मुद्राओं से जुआ खेलना चाहते हैं। मुझे स्वीकार है, परंतु यहाँ किसी को बंधक बना दो।"

"बंधक?" सुमेर ने माथे पर त्योरी चढ़ाकर कहा, "आप मेरा अपमान करते हैं, सेठजी!"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चंद्रमोहन ने अपनी स्वर्ण-मुद्रा उठाकर जेब में डाल लीं और बोले, "रजत-मुद्रा से ही काम चलेगा।"

"नहीं, अब मैं आपसे नहीं खेलूँगा।"

चंद्रमोहन ने उस दासी को एक स्वर्ण-मुद्रा देते हुए कहा, "आपको व्यर्थ कष्ट दिया है। आप जा सकती हैं।"

दासी ने गोटें एकत्रित करनी आरंभ कर दीं।

सुमेर ने देखा कि सोने की चिड़िया उड़ी जाती है। इससे बोला, "द्यूतक्रीड़ा न सही, पर हम मित्र तो रह सकते हैं?"

"निस्संदेह। मैंने मित्रता छोड़ी नहीं।" इतना कह चंद्रमोहन ने दासी से पूछा, "क्या कुछ भोजनार्थ मिल सकता है यहाँ?"

"मिलेगा। क्या खाएँगे? मिठाई, मांस-मछली, दाल-भाजी! मद्य और मँगवाऊँ?"

"सबकुछ और संगीत। कोई बहुत अच्छा गाने वाली।"

दासी मुस्कराई और बोली, "कितना धन आप इस समय व्यय कर सकते हैं?"

"धन की कमी नहीं। केवल यह देखना है कि वैशाली में सर्वश्रेष्ठ सुंदरी के भवन में क्या-क्या प्राप्य है।"

सुमेर पुनः बोल उठा, "सेठ महानुभाव! यहाँ जेब खाली हो जाएगी।"

"जेब बहुत लंबी-चौड़ी है, सुमेरजी! जाओ देवी! यदि नगर-वधू के दर्शन हों तो केवल दर्शन-मात्र के एक सौ स्वर्ण-मुद्रा दे सकता हूँ।"

"आपकी प्रार्थना देवी से कहलवा देती हूँ।" इतना कह दासी द्यूत-क्रीड़ा का सामान उठाकर ले गई। उसके चले जाने पर सुमेर ने कहा, "आप मेरे साथ खेलने में तो कंजूस बन गए, पर अब केवल दर्शन-मात्र के लिए एक सौ स्वर्णमुद्रा दे रहे हैं।"

"भाई! मुझे द्यूत-क्रीड़ा रुचिकर नहीं, परंतु विनोद-भवन में आकर सुंदरी के दर्शन बिना चला जाऊँ तो शोक होगा।"

"परंतु इस छोटी-सी धनराशि के लिए मेरा तो उस दासी के सम्मुख अपमान कर दिया है न?"

"मैंने अपमान के भाव से नहीं कहा था। वह तो व्यवहार की बात थी। अब आप खाइए, पीजिए और आनंद करिए। आपको दाम नहीं देना पड़ेगा। मैं सब कुछ दे दूँगा।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस समय सेवक और सेविकाएँ भोजन का सामान लेकर आ गये। उसी आगार में भूमि पर गाने वाली के लिए पृथक् आसन लगने लगा। तानपूरा, मृदंग, वीणा स्वर होने लगे। चंद्रमोहन के सम्मुख सुगंधि-पात्र लगा दिया गया और सुरा सोने-चाँदी की सुराहियों में लाकर रख दी गई।

आगार में लगे दीपगुच्छ के सब दीप जला दिए गए। इससे दिन के सामान प्रकाश हो गया। सेवक, जब सब कुछ तैयार हो गया, तो आगार के बाहर हो गए। इस समय सुमति आई और वीणा का स्वर देखने लगी।

सबसे अंत में मृदुला आई। सुमेर ने उठकर स्वागत किया तो चंद्रमोहन भी उठ खड़ा हुआ। नमस्कार हुई और सब बैठ गए। मृदुला चंद्रमोहन के समीप आसन पर बैठ गई। चंद्रमोहन ने सुन रखा था कि नगर-वधू बहुत सुंदर है और संगीत कला में अति प्रवीण है। इससे उसने कहा, ''देवी! जैसा सुना था, वैसा ही आपको पाया है। मैं अपने को धन्य मानता हूँ कि आपके दर्शन हुए हैं। हाँ, एक बात है। मेरे पास अयोध्या के एक विख्यात सेठ की हुण्डी है। क्या आप उसके अभी तुड़वाने का प्रबंध कर सकती हैं।''

''देखूँ।'' मृदुला ने अयोध्या का नाम सुन सतर्क हो कहा।

चंद्रमोहन ने भानुमित्र का लपेटा हुआ पत्र मृदुला के हाथ में दे दिया। मृदुला ने उसे खोला और नीचे भानुमित्र के हस्ताक्षर पहचान, उसे पुनः लपेटकर अपनी अँगिया के भीतर डालते हुए कहा, ''इस सेठजी को तो मैं भी जानती हूँ। इसके तुड़वाने का प्रबंध हो जाएगा।''

सुमेर को अचंभे में अपनी ओर देखते हुए चंद्रमोहन ने कहा, ''सेठजी! यह तो सहस्र स्वर्ण-मुद्रा की हुण्डी है। मैंने सोचा कि कहीं आज के विनोद में धन का टोटा न पड़ जाए, इस कारण इसका धन मँगवाने के लिए दे दी है।''

सुमेर इतना धन लुटते देख चकित-सा रह गया।

मृदुला ने सुरा का पात्र भर-भरकर सेठों को देना आरंभ कर दिया और सुमति वीणा बजाने लगी।

सुमेर ने खूब पेट भरकर खाया और सुरापान किया। चंद्रमोहन अब सचेत हो गया था। उसने थोड़ा खाया और बहुत ही कम सुरा पी। परिणाम यह हुआ कि अभी सुमति कल्याण ही बजा रही थी कि सुमेर अचेत हो भूमि पर लेट गया।

मृदुला ने भेद-भरी दृष्टि से चंद्रमोहन की ओर देखते हुए कहा, ''मैं इस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हुण्डी के रुपए का प्रबंध अभी कर देती हूँ। आप यहीं बैठिए।"

सुमति गाती गई। चंद्रमोहन गायन सुनता रहा। शीघ्र ही मृदुला आई और चंद्रमोहन से बोली, "हुण्डी पर आपके हस्ताक्षर चाहिए। आप इधर आइए।" चंद्रमोहन उठ मृदुला के पीछे हो लिया। मृदुला उसे एक आगार में ले गई। वहाँ कोई दूसरा नहीं था। वहाँ पहुँच खड़े-खड़े ही उसने पूछा, "सेठ साहब! क्या मतलब है इस नाटक का?"

"देवी! यह मेरा साथी कोई भारी ठग प्रतीत होता है। कुछ महीनों की बात है कि एक सुंदर लड़की लेकर अयोध्या में पहुँचा और उसका बाप बन लड़की का विवाह अयोध्या के महाराज से कर आया है। ऐसा प्रतीत होता है कि लड़की अर्थात् नवीन महारानी कुछ षड्यंत्र करने लगी है।"

मृदुला ने कुछ सोचकर बताया, "यह सुमेर श्री लक्ष्मीकांत का, जो यहाँ के उपगणपति हैं, कोई निर्धन संबंधी है। उन्हीं के कारोबार में काम करता है।"

"आप यदि यह मालूम कर दें कि इसकी कितनी संतान हैं और महारानी अवध इसकी लड़की हैं या नहीं तो बहुत कृपा होगी।"

"अवध के महामात्यजी के लिए मैं सब कुछ करने को तैयार हूँ।"

: 7 :

भानुमित्र की सूचना-पुस्तक तैयार हो गई। इसको पूर्ण करने में तीन मास और एक सहस्र स्वर्ण-मुद्रा लग गईं, परंतु सेठ सुमेर का पूर्ण षड्यंत्र दर्पण की भाँति स्पष्ट हो गया।

महामात्य ने इस सब रहस्य को अवध के महाराज को बताना व्यर्थ समझा। स्त्री के काम-बाणों से पीड़ित मनुष्य विवेक खो बैठता है और उस समय महाराज अवध-नरेश की यही अवस्था हो रही थी।

महामात्य ने इस षड्यंत्र को तोड़-फोड़ देने की पूर्ण योजना बना डाली थी और उसने इस पर कार्यवाही आरंभ कर दी थी। इस बीच में मल्लिका की अवस्था और बिगड़ गई। महाराज नवीन महारानी के साथ रथ पर घूमने जाते थे, उसके साथ मृगया के लिए जाते थे और सार्वजनिक राज्यसभाओं में उसी को साथ लेकर उपस्थित होते थे। मल्लिका ने अपनी दुर्व्यवस्था का वृत्तांत लिखकर एक सेवक के हाथ राजमाता के पास भेजा तो नवीन महारानी ने उस पत्र को बीच में ही रोक लिया। जो दासी पत्र लेकर गई थी, उसने बताया, "मैं जब राजमाता के महल की ओर जा रही थी तो छोटी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महारानीजी की दासियाँ मुझे पकड़कर उनके सम्मुख ले गईं। वहाँ मेरी तलाशी ली गई और चिट्ठी लेकर महारानी ने पढ़ी। पश्चात् मुझे कहा कि जाओ, अपनी मालकिन से कह दो कि उन्हें महाराज की निंदा करने की स्वीकृति नहीं।''

मल्लिका इस सूचना से आगबबूला हो गई। इससे उसने महाराज के पास उपस्थित हो अपनी स्थिति को जानने का यत्न करने का निश्चय कर लिया। जब महाराज रानी पद्मावती के आगार में थे, वह वहाँ जा पहुँची। दासियाँ भागकर आगे निकल छोटी महारानी को सूचना देना चाहती थीं, परंतु मल्लिका ने उन्हें डाँटकर रोका और उन्हें एक तरफ हटा आगार में जा पहुँची। महारानी महाराज की गोद में बैठी और उनसे किलोल कर रही थी। मल्लिका को देखते ही पद्मावती क्रोध से लाल-पीली हो उठकर खड़ी हो गई और पूछने लगी, ''यहाँ किसलिए आई हो?''

''महाराज से निवेदन करने।''

''क्या है?'' महाराज ने भृकुटि तानकर पूछा।

''क्या मैं यहाँ महाराज की महारानी हूँ या एक कैदी?''

''महारानी।''

''तो मेरा पत्र राजमाता के नाम क्यों रोक लिया गया है?''

''किसने रोका है?''

''बहन पद्मावती ने।''

''अच्छा। पद्मा! कहाँ है वह? तनिक हमें दिखाओ तो।''

''उसमें महाराज की निन्दा लिखी है।''

''यह झूठ है, महाराज! उसमें ऐसी कोई बात नहीं।''

''पद्म प्रिये! हमें दिखाओ। हम निर्णय करेंगे।''

''वह मैंने फाड़कर फेंक दिया है। उसे देखते ही मुझे क्रोध चढ़ आया था।''

''मो मल्लिका रानी!'' महाराज ने कहा, ''तुम और लिख दो। हम पढ़ लेंगे।''

''अब मैं लिखने की आवश्यकता नहीं समझती। मैं स्वयं राजमाता के पास जा रही हूँ।''

''तो वहाँ जाकर इनकी निंदा करोगी?''

''राजमाता का स्नेह अपने पुत्र से असंदिग्ध है। वे मूर्ख नहीं, जो इन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की निंदा सुन चुप रहेंगी।''

इतना कह मल्लिका आगार के बाहर निकल आई। उसने सुना कि पद्मावती दासियों को कह रही है, ''पकड़ लो इस दुराचारिणी को।'' साथ ही उसने महाराज को कहते सुना, ''जाने दो, जाने दो।''

एक दासी ने, जो पद्मावती के मायके से साथ आई थी, मल्लिका को रोकने का यत्न किया, तो मल्लिका ने अपने पूरे बल से एक चपत उसके मुख पर लगाई। इसके पश्चात् किसी का भी साहस नहीं हुआ कि मार्ग रोक सके और वह राजमाता के आगार में पहुँच गई।

जब से बड़े महाराज का देहांत हुआ था, राजमाता अपना समय ईश्वर-भक्ति और वेद-पुराणादि शास्त्रों को पढ़ने में व्यय करती थीं। एक नौकरानी रसोई बनाने के लिए और एक नौकरानी अन्य कार्यों के लिए रखी हुई थी और वे महल के अपने भाग से बाहर कभी नहीं जाती थीं।

जब मल्लिका उनके सम्मुख उपस्थित हुई तो वे बोलीं, ''आ गई हो बेटी? आओ! अब तुम यहाँ मेरे पास ही रहोगी। तुम्हें वापस जाने की आवश्यकता नहीं।''

''तो माताजी! आप जानती हैं।''

राजमाता ने बात बीच में ही काटकर कहा, ''सब कुछ जानती हूँ। मैं नित्य भगवान् से प्रार्थना किया करती थी कि वे तुम्हें सुमति दें कि तुम स्वयं यहाँ मेरे पास आ जाओ। वहाँ तुम्हारा जीवन जाने का भय है।''

मल्लिका यह सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार पा द्रवित हो उठी। उसके आँसू बहने लगे। उसने घुटनों के बल हो अपना सिर राजामाता के चरणों पर रख दिया। राजमाता ने उसे उठा गले से लगा लिया। पश्चात् आशीर्वाद दे अपनी नौकरानी से मल्लिका के पहनने के वस्त्र इस आगार में मँगवा लिए।

एक दिन मल्लिका ने राजमाता से कहा, ''आपकी छोटी बहू महाराज से भूल करवा रही है। सुना है वे बौद्ध विहार के गृह- प्रवेश संस्कार में सम्मिलित होने जा रहे हैं।''

''पर बेटी! उन्हें रोकना मंत्रिमंडल का काम है, मेरा नहीं।''

''तो आप महामात्य से पूछें कि वे महाराज को एक ऐसे कार्य से, जिससे प्रजा के उन पर रुष्ट होने की संभावना है, क्यों मना नहीं करते?''

''बेटी! यह काम हमारा नहीं है।''

''आप महामात्य को आज्ञा नहीं दीजिएगा, माताजी! केवल एक ऐसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय पर, जिसका संबंध आपके परिवार से है, पूछने में क्या हानि है?''

राजमाता मान गईं। महामात्य को बुलाया गया और उससे बौद्ध विहार के विषय में पूछा गया। महामात्य ने कहा, ''माताजी! यह और अन्य बहुत-से कार्य मंत्रिमंडल से सम्मति लिए बिना हो रहे हैं।''

राजमाता इस बात को सुन अवाक् रह गईं। बहुत काल तक वह महामात्य का मुख देखती रहीं। पश्चात् कुछ सोचकर बोलीं, ''तो महामात्य! क्या यह तुम्हारा कार्य नहीं कि महाराज को इस मिथ्या मार्ग पर चलने से रोको?''

''यह महारानी पद्मावती के सहयोग के बिना नहीं हो सकता। इसी कारण तो मंत्रिमंडल की बैठकों में अयोध्या की महारानी को स्थान मिला हुआ है। आजकल मंत्रिमंडल बिना महाराज और महारानी के ही अपना कार्य कर रहा है।''

''भानुमित्र बेटा!'' राजमाता ने व्याकुल होकर कहा, ''तुम बुद्धिमान-और चतुर हो। एक बार पहले भी तुमने इस परिवार की रक्षा की थी। अब फिर मैं याचना करती हूँ कि कुछ उपाय करो।''

''राजमाता की जैसी आज्ञा हो। मैं अभी तक तो राज्य की रक्षा के उपाय सोच रहा था, परंतु यदि आपकी यही आज्ञा है तो राज्य के साथ राजपरिवार के विषय में भी उपाय करूँगा।''

''हाँ बेटा! राजपरिवार के लिए ही कह रही हूँ। राज्य और राज परिवार दोनों परस्पर सम्बद्ध बातें हैं।''

''परंतु माताजी! इस बात के लिए यदि छोटी महारानीजी को बंदी बनाना पड़ा तो?''

''बंदी! क्यों?''

''अपराधी लोग बंदी बनाए जाते हैं, माताजी!''

''तो उस पर कोई अभियोग चलाओगे?''

''चाहिए तो अभियोग चलाना। भारी अपराध किया है महारानीजी ने। परंतु यदि मेरा बस चला तो बिना जनता में बात प्रकट किए मैं उन्हें बंदी कर लूँगा। जो लोग अपने को धर्म से भी ऊपर समझते हैं, उनके साथ धर्म से अतिरिक्त उपायों से व्यवहार किया जाता है।''

''मुझे तुम पर विश्वास है, भानुमित्र! तुम जो करोगे उचित ही करोगे। कब तक मैं तुम्हारी योजना का परिणाम जानने की आशा करूँ?''

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"माताजी! मैं भगवान् नहीं हूँ। यत्न कर रहा हूँ। प्रत्येक बात में समय लगता है और जो सहज पकता है वह मीठा होता है।"

भानुमित्र समझ गया कि राजमाता उसकी सहायंता करेंगी।

इस समय एक और घटना घटी। एक शिष्ट परिवार की एक बालिका और एक बालक बौद्ध भिक्षु हो गए। परिवार के मुखिया ने न्यायालय में प्रार्थना कर दी कि उसके बच्चों को बौद्ध विहार से छुड़ाया जाए।

न्यायाधीश ने विहार के प्रभु को आज्ञा दी कि वह न्यायालय में उपस्थित हो उत्तर दे कि वे बच्चे कहाँ हैं?

बौद्ध प्रभु ने न्यायालय में उपस्थित होने से न कर दी। इस पर न्यायाधीश ने महामात्य से राय की कि वह क्या करे। महामात्य ने सम्मति दी कि महाराज से पूछा जाए। महाराज ने आज्ञा दे दी कि बौद्ध प्रभु को बलपूर्वक पकड़ लिया जाए और बच्चों को विहार से पकड़ मँगवाकर उनके माता-पिता को वापस कर दिया जाए।

न्यायाधीश और अन्य मंत्रिगण को महाराज से, जो बौद्ध मत के अनुकूल प्रतीत होते थे, इस आज्ञा की आशा नहीं थी। महामात्य ने न्यायाधीश से कहा कि अभी कुछ दिन तक महाराज की इस आज्ञा का पालन न किया जाए। मंत्रिमंडल इस विषय पर विचार कर उचित उपाय बताएगा।

महामात्य का विचार था कि महाराज ने इस आज्ञा के दिलवाने में कोई गूढ़ रहस्य और नीति की बात है। इस कारण वह इसमें कारण को जानने के लिए उग्रता से विचार करने लगा।

अगले दिन उसने अपने गुप्तचरों को बौद्ध प्रभु के न्यायाधीश की आज्ञा न मानने पर नागरिकों का मत जानने के लिए भेज दिया। समाचार विस्मयजनक मिले। बौद्ध उपासक तो राज्य और महामात्य की निंदा करते थे। वे कहते थे कि महामात्य की सम्मति से ही महाराज ने प्रभु को पकड़ने की आज्ञा दे दी है। वह ब्राह्मण है और बौद्धों का शत्रु है। उच्च वर्णों के लोग कहते थे कि महामात्य ने बौद्ध विहार के एक सेवक की लड़की से विवाह कर लिया है, इसी से वह न्याय-बुद्धि खो बैठा है। बहुत योग्य होता हुआ भी वह न्याय-पथ को छोड़ बैठा है। अब न्यायाधीश को बौद्ध प्रभु को पकड़ने से मना कर रहा है।

पूर्ण सूचना भानुमित्र ने मंत्रिमंडल के सम्मुख रख दी। इस मंत्रिमंडल की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बैठक में महाराज और महारानी पद्मावती भी उपस्थित थे। महाराज कहते थे कि एक क्षण के लिए भी उन बच्चों का विहार में रहना ठीक नहीं। महारानी महाराज के कहने का समर्थन ही नहीं, प्रत्युत् विहार के प्रभु पर अभियोग चलाने के लिए कहती थी। पूर्ण मंत्रिमंडल चुप था। केवल महामात्य कह रहा था, "हमारे राज्य में कोई ऐसा नियम नहीं जिसके अनुकूल हम किसी अल्प आयु के व्यक्ति को संन्यासी होने से रोक सकें।"

महाराज भानुमित्र के इस विरोध से छटपटा रहे थे। महारानी ने कहा, "मैं महामात्य से पूछना चाहती हूँ कि क्या महाराज व्यवस्था नहीं दे सकते?"

"नहीं", महामात्य का कहना था, "धर्म में व्यवस्था महाराज नहीं दे सकते। महाराज तो धर्म का पालन करते हुए प्रजा से धर्म-पालन करवा सकते हैं।"

"हम इस बात को नहीं मान सकते।" महारानी का कहना था।

"मैं आपके धर्म-विरुद्ध किसी भी काम में सहायक नहीं हो सकता।"

महाराज महामात्य के हठ से घबरा उठे। परंतु बात अभी महारानी ने ही की, "क्या आप ऐसे बालकों के संन्यासी हो जाने को ठीक समझते हैं।"

"महारानीजी! नहीं।"

"तो फिर आप महाराज की आज्ञा में बाधा क्यों खड़ी कर रहे हैं?"

"धर्म के नियमों में मैं परिवर्तन नहीं कर सकता। काशी से धर्मशास्त्री बुलाए जाएँ और उन्हें इस विषय में व्यवस्था देने को कहा जाए। यदि वे यह व्यवस्था दें कि किसी भी अल्पायु के बालक को संन्यास की प्रेरणा देना अपराध है, तभी हम विहार के प्रभु को दंड दे सकते हैं।"

"यह बहुत लंबी बात है। इसमें तो बहुत समय लगेगा और तब तक राज्य में विप्लव हो सकता है।"

"न्यून-से-न्यून इस कार्य में दो सप्ताह लगेंगे। यह धर्मशास्त्रियों की परिषद् यहाँ के स्थान काशीजी में बुलाई जा सकती है।"

"तो हमारी आज्ञा है," महाराज ने सभा से उठते हुए कहा, "यह परिषद् शीघ्रातिशीघ्र बुला ली जाए और इस विषय पर व्यवस्था ली जाए।"

"नहीं," महारानी ने महाराज का हाथ पकड़कर बिठाते हुए कहा, "उन बालकों को तुरंत छुड़ा लिया जाए और व्यवस्था का कार्य पीछे होता रहेगा।"

महामात्य ने महारानी के आदेश का कुछ उत्तर नहीं दिया।

❑❑❑

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आठ

युक्ति का बल

: 1 :

अयोध्या में श्री रघुनाथजी का मंदिर है। इसमें नागरिकों की सभाएँ लगा करती थीं। मंदिर सर्वथा पत्थर का बना है। चौंतरा चढ़कर एक खुला मैदान है, जिस पर घास लगी है। नगर की पंचायत यदि सायंकाल लगती तो इस मैदान में और यदि ग्रीष्म ऋतु में मध्याह्न को होती अथवा शीतकाल में रात को होती, तो मैदान लाँघकर एक विशाल भवन में बैठती थी। वर्ष में दो-तीन बार से अधिक यह मंदिर प्रयोग में नहीं आता था।

हाँ, कुछ दिनों से एक साधू बाबा मैदान के बीचोबीच पंचाग्नि तप कर रहा था और उसके पास दिन-रात लोगों का जमघट लगा रहता था। ज्येष्ठ मास में खुली धूप में पंचाग्नि तपने वाले साधू की महिमा नगर में फैलते देर नहीं लगी। प्रत्येक सायंकाल पाँच-दस हजार लोगों का जमघट होने लगा।

उपस्थित लोगों में प्रायः महात्माजी से उपदेश की याचना करते रहते थे। कभी, जिस दिन, महात्माजी की कृपा होती तो वे उपदेश भी देते और उपस्थित लोगों की शंकाओं का समाधान भी करते।

इसी बीच बौद्ध विहार में अल्प आयु के बालकों के भिक्षु हो जाने का झगड़ा आरंभ हो गया। नागरिकों का, पहले तो न्यायाधीश की ओर ध्यान गया, पश्चात् बौद्ध विहार के प्रभु की ओर, तदनंतर महाराज की ओर और अब महामात्य की ओर।

जब किसी के किए कुछ नहीं हुआ तो लोगों में असंतोष उबल पड़ा। इस समय तपस्वी बाबा की महिमा का प्रचार हो रहा था। एक सायंकाल लोग एकत्रित हुए तो एक आदमी ने साधू बाबा से पूछ ही लिया, ''आप बौद्ध हैं या आर्य?''

''मैं मनुष्य हूँ।''

''बाबा! इसका अर्थ नहीं समझे हम।''

''मनुष्य मननशील प्राणी है। अतएव मनुष्य होने के नाते मैं वही करता हूँ, जिसे मेरी बुद्धि मानती है। मेरा किसी भी मत-मतांतर से संबंध नहीं।''

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"तो महाराज! आपका इन बालकों के विषय में क्या मत है, जिन्हें बौद्ध भिक्षु बना लिया गया है?"

"मैं समझता हूँ यह ठीक नहीं हुआ।"

"तो अवध-नरेश का यह कहना ठीक है कि बालकों को छुड़ा दिया जाए?"

"हाँ, परंतु कौन छुड़ाए? प्रश्न यही है।"

"तो कौन छुड़ाए? क्या राज्य को यह छुड़ाने का कार्य नहीं करना चाहिए?"

"मत-मतांतरों के झगड़ों में राज्य को तब तक हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए, जब तक कि हस्तक्षेप अत्यावश्यक न हो जाए। इस अवस्था में बौद्ध विहार वालों को बालकों को छोड़ देना चाहिए।"

"यदि वे न छोड़ें तो?"

"उनको पर्याप्त अवसर देना चाहिए ताकि उनको सुबुद्धि मिल सके।"

"यदि उनको सुबुद्धि न आए तो?"

"तो उन्हें विवश किया जाए।"

"कैसे?"

"नगर के लोग बलपूर्वक विहार में घुए जाएँ और बालकों को लाकर उनके माता-पिता के पास पहुँचा दें।"

"राज्य को यह कार्य करने पर विवश क्यों न किया जाए?"

"जिसमें दोष है, उसे सुधारना चाहिए न कि तीसरे व्यक्ति को।"

"इससे तो दुर्व्यवस्था फैल जाएगी।"

"दुर्व्यवस्था को दूर करने के लिए यह आवश्यक है।"

"राज्य के सैनिक ऐसा करने से हमें रोकेंगे, तब तो सैनिक हमारा कचूमर ही निकाल देंगे।"

"तो क्या किया जाए?"

"नागरिकों की एक पंचायत बुलाई जाए। उसमें विचार किया जाए कि विहार वाले बालकों को वापस करें अथवा नहीं। यदि बालकों का वापस होना ठीक है तो विहार वालों को बालक वापस करने पर विवश किया जाए।"

तपस्वी बाबा का सुझाव नगर-भर में प्रचारित हो गया। स्थान-स्थान पर गोष्ठियाँ होने लगीं और उनमें गरमागरम वाद-विवाद छिड़ गया। धीरे-धीरे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बाबा का कहना नगर के पंचों के कान में भी पड़ा और बड़ी पंचायत बुलाने का विचार होने लगा।

: 2 :

नगर की प्राचीर के साथ-साथ शूद्रों और निर्धनों के आवास थे। उनमें प्रायः लोग बौद्ध मतावलंबी थे। दिन-भर काम करते और सायंकाल उपासनाओं में सम्मिलित होते थे। कभी-कभी कोई बौद्ध भिक्षु भी उनमें आता, उपासना में सम्मिलित होता तथा उन्हें उपदेश दिया करता था।

नगर की हलचल से वे भी प्रभावित हुए बिना नहीं रहे। अल्प आयु के बालक-बालिकाओं के भिक्षु होने का प्रश्न उनके सम्मुख भी उपस्थित हो रहा था।

भिक्षु लोग, जो उन्हें उपदेश देने आते थे, वे तो यही कहते थे कि सब को स्वतंत्रता होनी चाहिए कि जो मार्ग चाहें वे स्वीकार करें, परंतु उपासकों में इस विषय पर मतभेद हो रहा था।

एक बटुक चर्मकार कई मास से वैशाली से आकर बसा हुआ था। वह बालकों को बिना उनके माता-पिता की स्वीकृति के भिक्षु बनाने का विरोध करता था।

बटुक चमड़ा रंगने का कार्य करता था और अपने कार्य में इतना चतुर था कि दूर-दूर से लोग उसका माल खरीदने आते थे। उसके पास धन भी अच्छा-खासा था, परंतु उसकी स्त्री और बाल-बच्चे नहीं थे।

जब लोग उससे पूछते, "बटुक दादा! विवाह नहीं कराया?" तो वह लंबी साँस ले चुप रह जाता।

बटुक के पड़ोस में एक चंदू जूते सीने वाला रहता था। चंदू की स्त्री और छोटी बहन काम करती थीं और चंदू चौधरीपन करता था। जब बटुक चमड़ा रंग, बेचने के लिए खालें मकान के दरवाजे के बाहर लटकाता, तो चंदू की बहन ललचाई आँखों से उनकी ओर देखा करती थी। जितने भी चमड़ा रंगने वाले उस मुहल्ले में रहते थे, इतना नरम और बढ़िया माल नहीं बना सकते थे।

एक दिन बटुक मकान के द्वार पर गंभीर विचार में पड़ा हुआ बैठा था कि चंदू की बहन, फिरकी, एक खाल को देखने लगी। बटुक ने उसे पहले भी कई बार खालों को देखते हुए देखा था। आज उसका ध्यान भंग हुआ तो उसने पूछ ही लिया, "खरीदती भी हो या देखती ही हो?"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"खरीदनी तो है पर खाल पूरी जो बेचते हो।"

"तो पूरी खाल ही खरीद लो।"

"दाम कहाँ से लाऊँ?"

बटुक सोचने लगा कि क्या निर्धनों को बढ़िया काम नहीं करना चाहिए? इस पर उसने पूछा, "जितनी बढ़िया खाल है उतना बढ़िया काम करने वाले को मैं टुकड़े करके भी बेच सकता हूँ।"

"काम तो हम बहुत बढ़िया करते हैं दिखाऊँ लाकर?"

"हाँ।"

वह अपने घर गई और दो जोड़े जूते उठा लाई और बटुक को दिखाकर बोली, "यह छोटी महारानी के लिए बनाए हैं।"

बटुक ने जूतों को देखा। सिलाई इत्यादि बहुत बढ़िया की गई थी। वास्तव में महारानीजी के योग्य ही बने थे। जूतों को देखकर बटुक ने कहा, "जब तुम इतने बढ़िया जूते बना लेते हो तो तुम्हारे पास पूरी खाल खरीदने को दाम क्यों नहीं?"

"दाम नहीं हैं। भला कितने ही दोगे यह खाल?"

"बीस रजत-मुद्रा की।"

"वैसे तो सस्ती है, पर हमारे पास तो इतना भी नहीं है।"

"अच्छा, एक बात करो। पूरी खाल ले जाओ और दाम धीरे-धीरे दे देना।"

फिरकी विस्मय में मुख देखती रह गई। फिर बोली, "मैं अपनी भाभी से पूछ आऊँ।"

बटुक मुस्करा दिया और फिरकी जूते ले चली गई। कुछ ही काल पश्चात् वह आई और दो रजत-मुद्रा बटुक के सम्मुख रख बोली, "शेष फिर दूँगी।"

यह बात नगर में बच्चों के भिक्षु बनने पर आंदोलन होने से कई मास पहले की थी। तब से लेकर इस काल तक बटुक की ख्याति पूर्ण शूद्र श्रेणी में फैल चुकी थी। चंदू, जो चर्मकारों का चौधरी था, बटुक का घना मित्र बना चुका था। कभी-कभी फिरकी के विवाह के विषय में भी बटुक से चर्चा कर चुका था।

बटुक कह दिया करता था, "तुम मेरी कितनी आयु समझते हो? भाई! मेरी आयु पैंतीस वर्ष की है। मैं सत्रह वर्ष का था, जब मेरा विवाह हुआ था। मैं पच्चीस वर्ष का था, जब मेरे तीन बालक थे—तीनों लड़के। उस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समय मेरी स्त्री ने एक दिन कहा कि वह बौद्ध भिक्षुणी बनेगी। मैंने पूछा, 'क्यों?'

"तो बोली, 'बच्चे जनते-जनते मैं थक गई हूँ।'

" 'पर मैं तो नहीं थका।' मेरा कहना था।

" 'तो तुम और विवाह कर लो।' उसका उत्तर था।

"मैंने बहुत समझाया, परंतु वह नहीं मानी और एक दिन सिर मुँडा वैशाली के एक विहार में चली गई। मैंने बच्चों को पाल-पोसकर बड़ा किया। जब मैं पैंतीस वर्ष का हुआ तो सबसे बड़ा लड़का पंद्रह वर्ष का था। उससे छोटा तेरह का और सबसे छोटा ग्यारह वर्ष का था। मेरी स्त्री, जो भिक्षुणी हो चुकी थी, अपने लड़कों से मिला करती थी और एक दिन वे तीनों सिर मुँडा उसके साथ हो लिए।"

"मैं इतना उदास हुआ कि वैशाली छोड़ अयोध्या चला आया। अब विवाह को जी नहीं चाहता।"

"परंतु भाई बटुक! फिरकी कहती है कि वह तुमसे विवाह करेगी।"

"और अगर मैं न मानूँ तो?"

"तो कहती है कि भिक्षुणी हो जाएगी।"

"यह क्या बीमारी चली है? समझ में नहीं आता। एक भिक्षुणी बनी इसलिए कि उसको विवाह सुखाया नहीं। दूसरी बनने जा रही है इसलिए कि उसका विवाह होता नहीं।"

"तो बताओ भाई बटुक! क्या विचार है तुम्हारा?"

"कुछ सोचकर बताऊँगा। तुम्हारी बहन की आयु बहुत छोटी है।"

बटुक से एक दिन फिरकी ने भी बात की। वह उसके पास से खाल लेने आई थी। खाल खरीदते समय सदैव यह होता था कि बटुक दाम इतना कम बताता है कि फिरकी झगड़ा कर ही नहीं सकती थी।

आज फिरकी ने कह दिया, "कल मोटे जूतों के लिए खाल मोल लेने गई थी, तो वह नगौरा मुझसे विवाह की बात भी करता गया और दाम भी दोगुणा माँगता गया। उस मोटे भद्दे चमड़े के पच्चीस रजत माँगता था और तुम इस बढ़िया के बीस रजत माँगते हो।"

"वह ठीक ही तो करता है, फिरकी! तुम्हारा घर बनाने के लिए ही तो धन बटोर रहा है।"

"और मेरे भाई को लूटकर ही। फिर मैं उससे विवाह नहीं करूँगी।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"तो किससे करोगी?" बटुक ने मुस्कराकर पूछा।

"नहीं बताऊँगी।" फिरकी ने आँखों की कनखियों से देखते हुए कहा।

"नहीं बताओगी तो मैं भी दाम अधिक माँगूँगा।"

"मैं जानती हूँ कि तुम ऐसा नहीं करोगे। तुम 'भले मनै' हो।"

बटुक हँस पड़ा और वह खाल, जो उसने पसंद की थी, लपेटकर उसे देते हुए पूछने लगा, "दाम अभी दोगी या धीरे-धीरे?"

"बीस रजत ही तो माँगे हैं न? यह लो।"

"हाँ, बीस। अगर बता दो कि विवाह किससे करोगी, नहीं तो पच्चीस।"

"तो मैं पच्चीस दूँगी। देखूँ, तुम किस प्रकार लेते हो?"

फिरकी ने बीस की एक ढेरी रख दी और पाँच पृथक्। बटुक ने पूछा, "तो तुम नहीं बताओगी?"

फिरकी आँखें नीची किए खड़ी रही। बटुक ने बीस रजत उठा लिए और पाँच को वहीं छोड़ मकान के भीतर रखने चला गया। जब वह बाहर आया तो फिरकी पाँच रजत उठाकर ले गई थी और उस स्थान पर, जहाँ पाँच रजत रखे थे, कोयले से 'बटुक' लिख गई थी।

: 3 :

जब तपस्वी बाबा उच्च वर्ण के लोगों को कह रहा था कि राज्य से झगड़ा करने के स्थान बौद्धों से झगड़ा करना उचित है, वहाँ बटुक छोटे वर्ण के लोगों से कह रहा था कि बौद्ध विहार वाले अल्प आयु के लोगों को भिक्षुक बना ठीक नहीं करते। जिस दिन रघुनाथजी के मंदिर में नगर की पंचायत बैठी, उसी दिन विहार के प्रभु छोटे वर्ण वालों में यह प्रचार करने आए थे कि उनके अधिकार की, कि जो एक बार भिक्षु धर्म ग्रहण कर ले उसे यह धर्म छोड़ने के लिए कोई विवश न करे, रक्षा की जाए।

जब प्रभु महाप्रभू 'धम्म वत्त' अपने उपासकों को कह रहा था कि उसे भय है कि उच्च वर्ण वाले विहार पर धवा बोल, उन बालक-भिक्षुओं को बलपूर्वक ले जाएँगे और उपासकों को चाहिए कि विहार की रक्षा के लिए विहार में आ जाएँ, तो बटुक उठकर महाप्रभू से पूछने लगा, "भगवन्! भिक्षु कोई क्यों बनता है?"

"निर्वाण-मार्ग पर द्रुत गति से चलने के लिए।"

"एक दस वर्ष का बालक निर्वाण के अर्थ क्या समझेगा?"

"समझे अथवा न समझे, इससे हमारा संबंध नहीं।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"आपने उससे संबंध तो बनाया है। उसे रहने को स्थान दिया है, खाने को भोजन और पहनने को कपड़े दिए हैं। देखिए, भगवान्! बालक-बालिकाओं के संरक्षक उनके माता-पिता हैं। उनकी आज्ञा तथा रुचि के बिना आपको उन्हें ऐसे मार्ग पर नहीं ले जाना चाहिए। क्यों भैया, चंदू! यदि तुम्हारी फिरकी अथवा भैया मकु! तुम्हारा मोहन भिक्षु बनना चाहें तो तुम क्या कहोगे?"

"मैं पूछता हूँ कि कौन माता-पिता हैं, जो चाहेंगे कि उनका बालक उनकी वृद्धावस्था में उन्हें छोड़ भिक्षु हो जाए।"

बटुक और चंदू की बौद्ध उपासकों में भारी महिमा थी, इससे और फिर अपने ही बालकों पर समस्या को लागू कर, महाप्रभू धम्म वत्त को प्रायः सब उपासकों ने कह दिया, "महाराज! उन दोनों बच्चों को, जिनके विषय में झगड़ा है, अपने-आप उनके माता-पिता के घर पहुँचा दीजिए। यही धर्म है।"

रघुनाथजी के मंदिर में तपस्वी बाबा ने कहा, "नगर पंचो! मैं आपको कहता हूँ कि लोक-मत में बहुत बल है। आज आपने जो यह निर्णय किया है कि उन बालकों को उनके माता-पिता की इच्छा के विपरीत कोई ले जा नहीं सकता, अपना प्रभाव जमाए बिना नहीं रह सकता। जनता में जनार्दन विराजमान होता है।"

यह निश्चय हो गया कि अगले दिन प्रातःकाल नगर के लाखों नर-नारी, बालक-बालिकाएँ उन बच्चों को, जो भिक्षु हो गए हैं, वापस लेने के लिए जाएँ। रघुनाथजी के मंदिर से यह यात्रा आरंभ होनी थी।

निश्चित दिन से पूर्व की रात्रि में अयोध्या से दो कोस के अंतर पर विहार में बौद्ध भिक्षु मंडल इस नई परिस्थिति पर विचार करने बैठा। भदन्त धम्म वत्त उपासकों से बातचीत कर लौट आया था और भिक्षु मंडल को बता रहा था, "उपासकों में एक बटुक है। वह वैशाली से आया है और कहता है कि उसकी युवा पत्नी और तीन कुमार पुत्र भिक्षु बन गए हैं। वह उपासकों को कह रहा है कि वे इस विषय में हमारी सहायता न करें। उसने मुझसे कहा है कि मैं दोनों बच्चों को उनके माता-पिता के घर पहुँचा दूँ।"

इस सूचना के पश्चात् एक भिक्षु ने रघुनाथजी के मंदिर की कथा वर्णन कर दी और बताया कि प्रातःकाल लोग तपस्वी बाबा के नेतृत्व में विहार पर धावा बोल देंगे। पूर्ण नगर इस प्रयोजन से यहाँ आएगा।

इस पर विचार-विनियम आरंभ हुआ। भिक्षुओं में तीन मत थे। कुछ लोग

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह कह रहे थे कि सब भिक्षु-भिक्षुणियाँ उन बालकों को साथ ले विहार छोड़ किसी दूर स्थान पर जंगल में चले जाएँ। जब लोगों का क्रोध शांत हो जाए तो फिर लौट आएँ।

दूसरे मत के लोग वे थे, जो चाहते थे कि विहार में डटकर बैठे रहें, प्रातः जब लोग आएँ तो बालकों को बीच में कर उनके चारों ओर लेट जाएँ। लोगों की भीड़ उन्हें कुचलकर ही बालकों तक पहुँच सके। उन्हें अपने अधिकारों की रक्षा के लिए प्राण त्याग देने चाहिए।

इन दोनों पक्षों के बीच का एक तीसरा मत था। ये लोग चाहते थे कि अभी महामात्य के पास पहुँचकर रक्षा किए जाने की प्रार्थना की जाए। इस मत के लोगों का कहना था कि महाराज ने तो आज्ञा दे दी है कि बलपूर्वक बालकों को छुड़ाया जाए। इससे महाराज के पास जाने से लाभ नहीं। महामात्य बाल भिक्षुओं के छुड़ाने को धर्म के नियमानुकूल नहीं मानता। इसलिए उससे कहा जाए कि राज्य में व्यवस्था स्थिर रखने के लिए लोगों को राज्य का कार्य स्वयं करने से रोका जाए।

बहुमत इस पक्ष का निकला। अतएव महाप्रभू धम्म वत्त और दो अन्य भिक्षु महामात्य के भवन पर जा पहुँचे। महामात्य अभी जागता था। उसे जब सूचना मिली तो वह बटुक और तपस्वी बाबा से गुप्त गोष्ठी कर रहा था। भदन्त धम्म वत्त के आगमन की बात सुन वह उन दोनों को वहाँ छोड़, बाहर के आगार में आ भिक्षुओं से उनके इस समय आने का कारण पूछने लगा।

धम्म वत्त ने पूर्ण परिस्थिति का वर्णन कर कहा, "हम अपने नागरिक अधिकारों की रक्षा के लिए राज्य से सैनिक सहायता चाहते हैं।"

महामात्य ने कहा, "नागरिक अधिकारों की प्राप्ति के लिए नागरिकों के कर्तव्य पालन करने पड़ते हैं।"

"वह हम करते हैं।"

"मेरे विचार में तुमने किसी के लड़के और लड़की को भ्रम में डालकर पथ-भ्रष्ट कर दिया है।"

"वे अपनी इच्छा से गए हैं, भगवान्!"

"अल्पायु के बालकों की इच्छा उनके माता-पिता की इच्छा में ही होती है। यदि ऐसा न मानें तो कोई भी व्यसनी बालकों को खाने-पीने का लालच दे, उनको घर से भगाकर ले जा सकता है।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"पर हम तो उनको अच्छे मार्ग की ओर लें जाना चाहते हैं।"

"आज नगर-भर के लोग आपके इस कहने को नहीं मानते।"

"राज्य क्या कहता है?"

"राज्य लोक-मत को मानता है और उनका प्रतिनिधित्व करता है।"

"चाहे लोक-मत भूल ही हो।"

"लोक-मत भूल हो तो उसको सेना से नहीं दबाया जा सकता। उसे सुधारने के लिए शिक्षा से लोगों की मनोवृत्ति बदलने की आवश्यकता है।"

"पर भगवन्! अब मत बदलने के लिए तो समय नहीं है। प्रातः ही तो लोग हम पर बलात्कार करने जा रहे हैं।"

"मेरी सम्मति है कि बालकों को वापस कर दो। पश्चात् लोगों को अपने मत के अनुकूल करने के लिए प्रचार करो। शायद दस-बीस वर्ष में आप लोगों को अपने मत के अनुकूल बना सकेंगे। तभी आप बालक-बालिकाओं को भिक्षु बनाएँ तो ठीक है।"

"यह तो अन्याय है, भगवन्!"

"किसका? और किस पर?"

"राज्य का, हम पर।"

"राज्य प्रजा के दोनों पक्षों में निष्पक्ष रहेगा।"

"तो बहुसंख्यक अल्पसंख्यकों पर अत्याचार करेंगे।"

"दुर्भाग्य यह है कि राज्य अल्पसंख्यकों को अत्याचार करते पाता है। इस पर भी यह राज्य का सौजन्य है कि अपने विचारों का पालन कराने के लिए सेना का प्रयोग नहीं कर रहा।"

"हम उस भीड़ के सम्मुख अपने प्राण न्योछावर कर देंगे।"

"ऐसा करना दुराग्रह होगा। इसे कोई भी बुद्धिमान प्रशंसनीय नहीं मानेगा।"

भिक्षुक लोग लौट गए और पुनः विहार में विचार-विनिमय हुआ। भदन्त धम्म वत्त ने सूर्य निकलने से पूर्व दोनों अल्पायु के भिक्षुओं को तपस्वी बाबा के पास मंदिर में पहुँचा दिया।

भिक्षु लोगों से बात कर महामात्य पुनः तपस्वी बाबा और बटुक के पास जा पहुँचा। उसने उनको कहा, "मैं समझता हूँ कि आपका काम अयोध्या में समाप्त हो गया है। इस पर भी आपको एकदम यहाँ से नहीं जाना चाहिए। लोगों को किसी प्रकार से भी और किसी भी अंश में संदेह नहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होना चाहिए कि आप गुप्तचर विभाग के लोग हैं। इसलिए आप अब आराम से यहाँ से विदा हो जाएँ और फिर हवा में विलीन हो जाएँ।''

इस पर बटुक ने कहा, ''पर आर्य! एक झगड़ा और खड़ा हो गया है। चंदू चौधरी की बहन मुझसे प्रेम करने लगी है और वह मेरे जाने पर बहुत झगड़ा करेगी।''

''तो उससे विवाह कर लो।''

बटुक ने कुछ घबराकर कहा, ''वैसे तो लड़की जूते सीने में बहुत चतुर है, परंतु महाराज! मेरी पहली स्त्री और बच्चे भी तो हैं।''

महामात्य की हँसी निकल गई। पश्चात् कुछ विचारकर कहा, ''चंदू से कहो कि तुम विवाह नहीं कर सकते। तुम्हारी आयु और उसकी आयु में बहुत अंतर है।''

''मैंने कहा था। इस पर वह लड़की भिक्षुणी बन जाने को कहती है। बेचारी की जवानी बिगड़ जाएगी।''

''अच्छा, तो एक बात करो। हमारे एक सेवक का लड़का हरद्वारी है। उसको मैं तुम्हारे पास भेजूँगा। तुम उसके विवाह की बात कर दो। यदि वह मान जाएगी तो हम पाँच सौ रजत उसको देंगे। यह तुम अपने नाम से दे देना।''

''यत्न करूँगा, महाराज!''

''कुछ भी हो, एक बात तुम लोगों को समझ लेनी चाहिए कि राज्य कार्य नीतिपूर्वक चलाने के लिए दो-चार क्या, सहस्र-दो सहस्र की जवानी व्यर्थ जाने का सोच नहीं किया जा सकता। देखो, तुमने जो कार्य बौद्ध उपासकों में किया है, उससे कई हजार लोगों की हत्या होते-होते बच गई है। कल यदि वे लोग विहार की रक्षा के लिए चले जाते तो प्रायः सब मारे जाते। नगर की भीड़ में राज्य के सैनिक भी नागरिकों के रूप में जा रहे थे। कल एक भारी हत्याकांड होते-होते बच गया है, उसकी तुलना में एक लड़की का दिल टूटता है या नहीं, कोई महत्ता नहीं रखता।''

: 4 :

भानुमित्र को प्रचला, एक गँवार लड़की और राका, एक साधारण पुरोहित की लड़की से विवाह करते देख प्रभा को भारी निराशा हुई थी। वह अपनी अवस्था पर महीनों ही चिंतन करती रही। वह कुरूप थी और बुद्धि भी साधारण रखती थी। जब उसने अपना मार्ग निश्चय कर लिया तो उस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मार्ग का अवलम्बन करने के लिए महीनों ही साहस बाँधती रही। उसने संसार से विरक्त हो जाने का निश्चय कर लिया। उसकी बहन विदुषी थी, इससे गृहस्थ-सुख न पाने पर भी साहित्य में इतनी लीन रहती थी कि उसे संसार बोझिल प्रतीत नहीं होता था। वह स्वयं न तो संगीत सीख सकी थी, न ही कोई अन्य कला। पढ़ी-लिखी भी अधिक नहीं थी। व्याकरण अधूरा ही रह गया था। उसे विश्वास हो गया था कि उसके लिए संसार अंधकारमय है। इससे उसने इसे छोड़ देने का निश्चय कर लिया था।

एक दिन प्रातःकाल ही वह भवन से निकल बौद्ध विहार में जा पहुँची। यह संसार छोड़ने का सुलभ उपाय था। वहाँ विहार के प्रभु भदन्त 'धम्म वत्त' से मिलकर उनके चरणों पर अपना शीश रख, दीक्षा माँगने लगी, ''मैं भगवान् बुद्ध की शरण में आई हूँ।''

''आओ बेटा! धर्म की शरण में आओ। संघ की शरण में आओ।'' प्रभु ने कहा। पश्चात् उपदेश दिया। सिर मुँडवाकर उसे पीत उत्तरीय पहनने को दे दिया।

उसी दिन सायंकाल देवधर्मा को पता चला कि प्रभा भिक्षुणी हो गई है। वैशाली में बौद्ध-मतावलम्बियों की यह भारी जीत थी। इसके अतिरिक्त लक्ष्मीकांत गणपति से बहुत तना हुआ था। वह नगर और बाहर भारी तैयारी कर रहा था। लक्ष्मीकांत बौद्ध था। इस पर भी गणपति यह देख रहा था कि जनता उसके अपने पक्ष में अधिक है और यदि अगले निर्वाचन में जनमत लिया गया तो वही पुनः निर्वाचित होगा। परंतु जब उसे प्रभा के विहार में चले जाने की सूचना मिली तो उसे भारी निराशा हुई। प्रभा सज्ञान थी और बौद्धों पर किसी अल्प आयु के बालक को भ्रम में डालकर ले जाने का लांछन नहीं लग सकता था।

केवल देवधर्मा को ही नहीं, प्रत्युत् पूर्ण नगर और देश में यह विदित हो गया कि गणपति की लड़की बौद्ध भिक्षुणी हो गई है। इससे देश-भर के बौद्धों ने खुशियाँ मनाईं। लक्ष्मीकांत ने तो अपने भवन पर दीपमाला की।

देवधर्मा की स्त्री सुनीला तो यह समाचार सुन अधमरी-सी हो गई। वह शोक में पलंग पर लेटी तो उठ नहीं सकी। ऊषा अपने माता-पिता दोनों को ढाढ़स बँधाती रहती थी। इस पर भी देवधर्मा अपने कार्य में वैसे ही लीन रहता था, जेसे पहले और अपने मुख पर अपने अंतरात्मा के कष्ट की रेखा भी झलकने नहीं देता था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कई दिन व्यतीत हो चुके थे और बात पुरानी हो गई प्रतीत होती थी कि भिक्षुणी प्रभा नगर में भिक्षा हेतु आई। किसी की प्रेरणा से अथवा बिना कारण प्रभा गणपति भवन के पिछले द्वार पर, जो विष्णु वीथिका में खुलता था, जा खड़ी हुई और उसने पुकारा, "बुद्धं शरणं गच्छामि, धर्मं शरणं गच्छामि। संघं शरणं गच्छामि।"

द्वारपाल ने पहचान लिया और यह कह, "भिक्षुणी! ठहरो। अन्न लाता हूँ।" भीतर माताजी को समाचार देने भाग गया। एक क्षण-भर में घर में कोहराम मच गया। ऊषा, ऊषा की माँ, नौकर-नौकरानियाँ, घर में अन्य टिके संबंधी, सब द्वार पर भागे हुए आए। कोई हाथ में मुट्ठी भर अनाज, कोई अंजुली में मिठाई, कोई वस्त्र और कोई स्वर्णादि भूषण ही लिए हुए वहाँ पहुँच गया।

माँ ने जब लड़की को इस कुरूप वेश में देखा तो रोने लगी। उसका हाथ भिक्षा देने के लिए उठा हुआ रुक गया। प्रभा ने भिक्षा का झोला आगे बढ़ाते हुए कहा, "भिक्षां देहि, देवी!"

माँ को यह स्वर अति अप्रिय लगा। यह सुन वह अचेत हो वहीं लेट गई। कुछ लोगों ने भिक्षा उसके झोले में डाल दी। कुछ लोग अपनी स्वामिन् को सचेत करने में लग गए। प्रभा भिक्षा ले माँ की अवस्था की ओर ध्यान दिए बिना चली जाने वाली ही थी कि गणपति समाचार पा स्वयं वहाँ आ पहुँचा। उसने वहाँ पहुँच क्षण-भर में पूर्ण परिस्थिति को समझ लिया। उसने दासियों को प्रभा की माँ की ओर संकेत कर कहा, "इसे उठाकर भीतर ले चलो।"

प्रभा, जो अभी भी भूमि की ओर देख रही थी, पिता का स्वर पहचान, एक क्षण रुककर बोली, "भिक्षां देहि, भन्ते!"

प्रभा का रूखा स्वर सुन गणपति क्रोध से पागल हो गया। उसने क्रोध से थर-थर काँपते हुए कहा, "ओ छोकरी! यह क्या ढोंग बना लिया है तुमने?"

प्रभा ने शांति से कहा, "बुद्धं शरणं गच्छामि...।" इससे आगे गणपति सुन नहीं सका। उसने प्रभा के हाथ से झोला छीन भूमि पर पटक दिया और उसको बाँह से पकड़कर घसीटता हुआ घर के भीतर ले गया। वहाँ से अंतःपुर में, उसकी माँ के आगार में, ले जाकर उसको पटक दिया।

वहाँ उसकी माँ अभी भी अर्ध-चेतनावस्था में भूमि पर लेटी हुई थी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रभा जहाँ भूमि पर पटकी गई थी, वहीं बैठ भूमि की ओर देखती रही और मुख में 'बुद्धं शरणं गच्छामि' रटती रही। यह उसके फड़कते होंठों से स्पष्ट हो रहा था।

''उठो सुनीला!'' गणपति का कहना था। सुनीला ने लेटे-लेटे ही आँखें खोलीं और फिर मूँद लीं। इस पर गणपति ने प्रभा को कहा, ''प्रभा! उठो और कपड़े बदल लो। ये गणपति की लड़की को शोभा नहीं देते।''

प्रभा नहीं उठी। इस पर गणपति ने वहाँ सुनीला की सेवा-शुश्रूषा करती हुई दासियों का आदेश दिया, ''इसे अपने आगार में ले जाओ और इसे बहुत बढ़िया वस्त्र पहनाओ। ले जाओ और देखो, यह भाग न जाए।''

दासियों ने प्रभा को उठने के लिए कहा, परंतु वह वहीं बैठी 'बुद्धं शरणं गच्छामि' की रट लगाती रही। यह देख गणपति ने आज्ञा दी, ''इसे बलपूर्वक ले जाओ और ये वस्त्र उतार रेशमी वस्त्र पहना दो। जाओ।''

दासियों ने वैसा ही किया। गणपति ने ऊषा को उनके पीछे भेजते हुए कहा, ''देखो बेटी! यह परिवार की मान-प्रतिष्ठा का प्रश्न है। प्रभा के पास जाओ और उसे समझाओ। यदि वह न समझे तो उसे मेरे आने तक जाने मत देना।''

परिचारकों को सुनीला की देखभाल करने के लिए कह गणपति अपने काम पर चला गया।

: 5 :

गणपति समझता था कि किसी लड़की को उसके माता-पिता से पूछे बिना भिक्षुणी बनाना एक अनधिकार चेष्टा है, परंतु लक्ष्मीकांत के पक्ष के लोग कह रहे थे कि गणपति ने एक बौद्ध भिक्षुणी को बलपूर्वक अपने घर में बंदी कर घोर अपराध किया है। लक्ष्मीकांत के दल के लोग जन-साधारण के मनोद्गारों को भड़का रहे थे।

रात को गणपति जब विनोद-भवन में पहुँचा तो लोग उसकी ओर प्रश्न-भरी दृष्टि से अथवा माथे पर त्योरी चढ़ा देखने लगे। देवधर्मा समझ गया कि अवस्था बिगड़ रही है। विनोद-भवन वैशाली की शिष्ट जनता के मनोभावों का मापदंड था। इस पर भी वह सीधा सामने को देखते हुए चलता गया। वह भवन के सबसे बड़े आगार में पहुँचा तो उसे देखते ही वहाँ के लोग, जो उसी के विषय में वाद-विवाद कर रहे थे, चुप कर गए। इतने में एक नर्तकी 'तरणी' आई और नाच आरंभ हो गया। वहाँ कुछ देर ठहर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गणपति बाहर निकल आया। वह भवन से बाहर निकल अपने निवासस्थान को लौटने ही वाला था कि किसी ने पीछे से उसके कंधे पर कोमलता से हाथ रख दिया और कहा, ''आप जा रहे हैं?''

गणपति ने घूमकर देखा। मृदुला थी। उसने कहा, ''हाँ। क्यों?''

''आप मेरे आगार में नहीं आइएगा?''

''मेरा चित्त आज एक उलझन में फँसा हुआ है।''

''उसी के विषय में कुछ निवेदन है।''

''तो चलो।'

दोनों ऊपर की छत पर चले गए। मृदुला उन्हें अपने आगार में ले गई। उन्हें आसन पर बिठा, स्वयं सम्मुख भूमि पर बैठ गई। वह कहने लगी, ''बहन प्रभा के विषय में क्या सोचा है आपने?''

''अभी कुछ निश्चय नहीं कर सका।''

''मेरी सम्मति है, आज रात ही उसे बहन ऊषा और माताजी के साथ वैशाली से बाहर भेज देना चाहिए। कल का दिन बहुत भयंकर होगा।''

''कैसे जाना है मृदुला! तुमने?''

''आपके आने से पूर्व यहाँ बातचीत बहुत आवेश में चल रही थी। लोगों को इतने आवेश में मैंने पहले कभी नहीं देखा।''

''मैं अपनी पूर्ण संपत्ति विश्वस्त सैनिकों के हाथ अयोध्या भेज रही हूँ। लक्ष्मीकांत आज संसद् के सदस्यों को खूब खिला-पिला रहे हैं। सुना है, कल आप पर अविश्वास का प्रस्ताव चलने वाला है।''

इस समाचार से गणपति और भी गंभीर विचार में पड़ गया। कुछ देर तक दोनों चुपचाप विचार करते रहे। आखिर शांति मृदुला ने भंग की, ''मैं अपना चार वर्ष का वेतन और न्योछावर का धन दो रथों में पचास सैनिकों की सुरक्षा में प्रातः ब्रह्ममुहूर्त में भेज रही हूँ। आप प्रभा आदि को मध्यरात्रि से पूर्व ही भेज दें। मैं चाहती हूँ कि दोनों इकट्ठे न जाएँ।''

''धन्यवाद, मृदुला देवी!'' गणपति ने केवल इतना ही कहा और बिना कुछ कहे विनोद-भवन से बाहर निकल आया।

गणपति जब घर पहुँचा तो ऊषा और माँ के समझाने से प्रभा कुछ-कुछ मान गई थी। उसने भिक्षुओं के कपड़े उतार अपने रेशमी कपड़े पहन लिए थे। पिता को आए देख प्रभा ने भूमि की ओर देखना आरंभ कर दिया। देवधर्मा ने उसे चुप बैठे देख कर कहा, ''प्रभा! देखो, मैं भली-भाँति जानता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हूँ कि तुम्हारा बौद्ध धर्म पर विश्वास नहीं है। यह तो तुमने अपनी कठिनाई को आँखों से ओझल करने के लिए भिक्षुणी बनना स्वीकार किया था। मैं कहता हूँ, इस प्रकार तुम्हारी कठिनाई दूर नहीं होगी।"

"क्या कठिनाई है मेरी, पिताजी?" प्रभा ने वैसे ही आँखें नीची किए हुए पूछा।

"तुम्हारा विवाह नहीं हो रहा।"

"विवाह तो हो जाता यदि भगवान् ने रूप दिया होता।"

"या कुछ बुद्धि दी होती। रूप की कमी तो पूरी नहीं हो सकती, परंतु तुम्हारी बुद्धि की कमी की पूर्ति करने का यत्न करूँगा। यदि तुम मेरी राह पर चलो तो तुम्हारा विवाह बहुत अच्छे वर से हो जाएगा।"

"जैसे ऊषा बहन का हुआ है।" प्रभा ने माथे पर त्योरी चढ़ाकर कहा।

"ऊषा ने उस मागधी को स्वयं वरा था। हमसे पूछा नहीं था। तुमने भानुमित्र को हमसे राय किए बिना वरने का यत्न किया था। भानुमित्र उस मागधी की भाँति धूर्त और असत्यवादी नहीं था। इससे तुम्हारी दुर्दशा वैसी नहीं हुई, जैसी ऊषा की हुई है। अब तुम्हारे लिए मैं यत्न करूँगा। तुम मेरा कहना मान लो, इससे तुम्हें सुख मिलेगा।"

प्रभा चुप रही। देवधर्मा ने उसे अपने अनुकूल देख कहा, "अब तुम तीनों तेयार हो जाओ। तुम लोगों को अभी एक घड़ी-भर में अयोध्या के लिए प्रस्थान करना होगा।"

सुनीला ने पहले तो जाने का प्रयोजन पूछा तो देवधर्मा ने केवल इतना कहा कि प्रभा का सूर्योदय से पूर्व यहाँ से चले जाना उचित है। इस पर वह लड़कियों को भेज स्वयं वहाँ रहने का हठ करने लगी, परंतु देवधर्मा ने जब कुछ डाँटकर कहा तो तीनों तैयार हो गईं।

मध्यरात्रि से पूर्व एक रथ पाँच सैनिकों के साथ वैशाली के उत्तर द्वार से निकल गंगापुरी की ओर चला।

रात को गणपति ने गुप्तचर विभाग के लोगों को नगर के भिन्न-भिन्न स्थानों पर खड़ा कर दिया, जिससे यदि कहीं कुछ भी अनियमित बात देखें तो तुरंत समाचार दें।

: 6 :

अगले दिन संसद् में बहुत आवेश और क्रोध के लक्षण दिखाई दे रहे थे। गणपति के आने से पूर्व वे सब सदस्य, जो वैशाली में उपस्थित थे,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संसद् भवन में पहुँच चुके थे।

जब गणपति आया तो चारों ओर से सदस्य गर्जना करने लगे, "त्याग-पत्र दे दो! त्याग-पत्र दे दो!"

गणपति सिर ऊँचा किए हुए भवन में आ मंच पर चढ़ अपने आसन पर बैठ गया। लोग अभी भी अपने स्थान पर खड़े हो त्याग-पत्र माँग रहे थे। कुछ काल पर्यन्त गणपति उन लोगों को अपना क्रोध प्रकट करने का अवसर देता रहा। पश्चात् खड़ा हो, हाथ के संकेत से सबको चुप कराने लगा। लोग नियमानुकूल गणपति का वक्तव्य सुनने के लिए अपने-अपने स्थानों पर बैठ गए। गणपति ने कहा–

"वैशाली में धर्म का राज्य है। प्रत्येक विषय पर हमारी धर्म-पुस्तक में व्यवस्था दी गई है। यहाँ पर किसी को भी किसी के विरुद्ध न्यायालय में प्रार्थना-पत्र देने का अधिकार प्राप्त है। न्यायाधीश पूर्ण रूप से स्वतंत्र हैं। वे प्रत्येक विषय की जाँच करते हैं। अभियुक्त की सफाई भी लेते हैं और पश्चात् निर्णय देते हैं। कई सौ वर्ष से किसी न्यायाधीश को अन्याय करते नहीं देखा गया और कभी भी न्यायालय के निर्णय का उल्लंघन, चाहे वह किसी के विरुद्ध हो, नहीं किया गया।"

"ऐसी अवस्था में केवल-मात्र हल्ला करने से आप किसी को दोषी सिद्ध नहीं कर सकते, देखिए, यदि गणपति के विरुद्ध आपने कुछ कहना है तो उसके लिए नियम है। एक प्रस्ताव संसद् के मंत्री के पास आना चाहिए। मंत्री प्रस्ताव भेजने वाले को अपनी माँग सिद्ध करने के लिए अवसर देता है। संसद् में उसे अपनी बात समझानी पड़ती है। गणपति को भी अधिकार प्राप्त है कि उस पर लगाए लांछनों का उत्तर दे। यदि गणपति की बात संसद् को स्वीकार न हो तो गणपति त्याग-पत्र दे देता है। यदि गणपति पर अभियोग लगाने वाले की बात संसद् न माने तो उसे, और गणपति के विरुद्ध निर्णय देने पर गणपति को न्यायालय में जाकर अपना अभियोग उपस्थित करना पड़ता है। यदि न्यायालय अभियोग लगाने वलो सदस्य को झूठा कहे और संसद् ने उसको सत्य माना हो तो संसद् तोड़ दी जाती है और नई संसद् का चुनाव होता है और यदि न्यायालय गणपति को दोषी माने तो न्यायालय उसको दंड देता है।"

"यह हमारा विधान है। क्या आप इसके विरुद्ध, अर्थात् बिना मुझ पर कोई अभियोग लगाए और बिना मेरा उत्तर सुने मुझे पदच्युत करना चाहते

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं? आप इस विधान और नियम को भंग न करें, अन्यथा वैशाली नाश को प्राप्त होगी।''

इस समय एक सदस्य ने उठकर कहा, ''कल वैशाली के गणपति ने एक बौद्ध भिक्षुणी को बलपूर्वक अपने गृह में बंदी बना लिया था। यह हमारे विधान में दी गई स्वतंत्रता के विरुद्ध है। प्रत्येक नागरिक को अपना धर्म चुनने का अधिकार है। गणपति ने एक नागरिक के इस अधिकार का हनन कर भारी अपराध किया है। इसलिए हम चाहते हैं कि गणपति अपना पद त्याग दें, जिससे न्यायालय में उन पर अभियोग चलाया जा सके।''

इस प्रस्ताव का समर्थन अनेक सदस्यों ने उठकर और 'पद त्याग दो' कहकर किया।

इस लांछन का उत्तर गणपति ने दिया। उसने कहा, ''मेरी लड़की प्रभा मेरी इच्छा के विरुद्ध भिक्षुणी बन गई थी। जिस भिक्षु ने उसे बिना मुझसे जाने कि मेरी इच्छा से वह गई है अथवा नहीं, दीक्षा दी है, उसने अपराध किया है। मैंने तो उसके अपराध को सुधारने का यत्न किया है।

''आप लोगों को विदित होना चाहिए कि स्त्रियों, के विषय में हमारा वैशाली का विधान चुप है। साथ ही हमारे विधान में यह भी लिखा है कि इसका आधार मनु महाराज का धर्म-शास्त्र है। मनु ने स्त्रियों को पुरुषों के संरक्षण में रखा है। इससे किसी व्यक्ति को, संरक्षक की स्वीकृति के बिना, उससे संरक्षित वस्तु को ले जाना अपराध है, न कि उस वस्तु को संरक्षक के संरक्षण में ले लेना।''

''मैंने धर्मानुकूल आचरण किया है। एक बात यहाँ और समझ लेने की आवश्यकता है। प्रभा को मैं विहार से पकड़कर नहीं लाया। वह मेरे घर आई थी और मैंने उसे अपनी वस्तु समझ वहाँ रख लिया है। मैंने उसे बौद्ध मत छोड़ने को नहीं कहा। केवल-मात्र मैं उसे अपनी संरक्षा में रखना चाहता हूँ, जिसका मुझे धर्म ने अधिकार दिया है।''

गणपति के वक्तव्य से प्रस्तावक का पक्ष पहले से तो दुर्बल हो गया, परंतु बहुमत अभी भी उसके साथ ही था। इसके पश्चात् लक्ष्मीकांत ने मत लेने की माँग की। वह समझता था कि यदि कुछ और लोग गणपति के पक्ष में कहने लगे तो उसके रात को विनोद-भवन में भोज का प्रभाव लुप्त हो जाएगा। इससे उसने कहा, ''इस विषय पर अधिक वाद-विवाद न कर मत ले लिया जाए।'' गणपति इस फंदे में फँस गया और मतगणना की आज्ञा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दे दी। प्रस्ताव के पक्ष में एक सौ पाँच और प्रस्ताव के विरोध में सौ मत मिले। अभिप्राय यह हुआ कि पाँच मत से गणपति को अपना पद-त्याग करना पड़ा। इस समय गणपति को समझ आया कि उसने मत जल्दी लेने में भूल कर दी है। पश्चात् नए गणपति का चुनाव हुआ। लक्ष्मीकांत का नाम बहुत भारी मत से स्वीकार हो गया।

देवधर्मा ने अपने पद की मुहर लक्ष्मीकांत को देते समय यह कहा, ''मैं अपने साथ न्याय किए जाने की माँग न्यायालय में करने जा रहा हूँ।''

: 7 :

देवधर्मा संसद् भवन से बाहर निकला तो उसने देखा कि वैशाली के लोग भारी संख्या में वहाँ और उसके अपने आवास के मध्यवर्ती मैदान में खड़े हैं। देवधर्मा को संसद् से बाहर निकलते देख लोगों ने हल्ला मचाना आरंभ कर दिया–

''गणपति को दंड दो, गणपति को दंड दो।''

लोगों में विद्रोह की भावना देख नगर-पालक, नगर-रक्षकों का एक दल लिए हुए संसद् के बाहर उपस्थित था। देवधर्मा को संसद् भवन से बाहर निकले देख आगे आ उसने पूछा, ''क्या आज्ञा है?''

''श्रीमान्!'' देवधर्मा ने दुखी स्वर में कहा, ''मैं अब गणपति नहीं रहा। इससे आज्ञा नहीं दे सकता। अब तो एक नागरिक के रूप में सुरक्षा की भिक्षा माँग सकता हूँ।''

नगर-पालक यह सुनकर चकित रह गया। इस पर भी लोगों की आँखों में खून देख और अपने पर देवधर्मा की कृपाओं का स्मरण कर बोला, ''ठीक है। चलिए, आपको घर तक पहुँचा दूँ।''

उसने संरक्षकों को आज्ञा दे दी, ''श्रीमान् देवधर्मा को सुरक्षापूर्वक उनके घर तक पहुँचा दो और वहाँ उनके भवन की रक्षा करो। और भी रक्षक-दल के लोग आपकी सहायता के लिए वहाँ भेज देता हूँ।''

संरक्षकों ने देवधर्मा को चारों ओर से घेर लिया और भीड़ में से ले जाने लगे। भीड़ बहुत बड़ी थी और लोग संरक्षकों का घेरा तोड़ देने के लिए यत्न कर रहे थे, परंतु संरक्षकों ने खड्ग नंगे कर लिए और समीप फड़कने वालों को घायल किए बिना नहीं छोड़ते थे। लोगों ने जब देखा कि देवधर्मा को ऐसे दंड नहीं दिया जा सकता तो उन्होंने दूर से ईंटें और पत्थर फेंकने आरंभ कर दिए। इससे संरक्षक घायल होने लगे। देवधर्मा की कनपटी पर भी एक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पत्थर लगने से घाव हो गया। इस समय गणपति भवन पर खड़े संरक्षकों ने भीड़ की इस कार्यवाही को देख लिया। उनके नायक ने आज्ञा दी कि कमान ले ईंट-पत्थर फेंकने वालों पर तीरों की बौछार करो। तीरों की इस बौछार से लोग घायल होने लगे। पहले पचास संरक्षकों की एक टुकड़ी ने आकर ईंट-पत्थर फेंकने वालों पर तीर फेंके, तब दूसरे पचास की टुकड़ी ने उन लोगों पर तीरों की वर्षा करनी आरंभ कर दी, जो गणपति भवन के भीतर खड़े देवधर्मा पर आक्रमण कर देने की तैयारी कर रहे थे। इनके तीरों ने भीड़ में भगदड़ मचा दी और घायल सा हुआ गणपति भवन के चौंतरे पर आकर खड़ा हो गया। वहाँ से संरक्षकों ने उसे भवन के भीतर कर, भवन को चारों ओर से घेर लिया और तीरों की बौछार से भीड़ को तितर-बितर करने लगे। इस समय नगरपालक को, जो अभी भी संसद् भवन के बाहर खड़ा था, लक्ष्मीकांत की आज्ञा मिली कि सब संरक्षकों को तुरंत नगर के भीतर चौमुखे के मैदान में एकत्रित कर दिया जाए। नगरपालक लक्ष्मीकांत के पास पहुँच बोला, ''श्रीमान्! लगभग एक लाख नागरिक देवधर्माजी का मकान घेरे हुए खड़े है। वहाँ और संरक्षकों को सहायतार्थ भेज रहा हूँ। इस कारण ये एकत्रित नहीं हो सकते।''

इस पर लक्ष्मीकांत ने कहा, ''यह कोई काम नहीं। मैं गणपति के अधिकार से आज्ञा देता हूँ कि सब संरक्षक एकत्रित करो।''

नगरपालक ने वैसी ही आज्ञा कर दी। परिणाम यह हुआ कि भीड़ जिसमें भगदड़ मच रही थी, एकाएक संरक्षकों को अपने कमान कंधों पर रखते देख एक क्षण के लिए तो विस्मित हुई, परंतु शीघ्र ही समझ गई कि संरक्षक उनके पक्ष में हो गए हैं और लोगों पर तीर छोड़ने बंद कर यहाँ से टल रहे हैं। इससे वे भागते-भागते ठहर गए। जब सब संरक्षक एकत्रित हो चुपके से पिछली वीथिका में से नगर के चौमुखे की ओर चले गए तो भीड़ पुनः लौट पड़ी और गणपति भवन पर ईंट-पत्थरों से आक्रमण करने लगी। इस समय कोई व्यक्ति कहीं से तेल तथा आग लगाने का सामान ले आया। तुरंत भवन को आग लगा दी गई।

गणपति भवन प्रायः लकड़ी का बना था। देखते-देखते जलकर भस्म हो गया और यह बात नगर में फैल गई कि देवधर्मा परिवार सहित अपने भवन में जलकर भस्म हो गया है।

जिन लोगों ने देवधर्मा के मकान को आग लगाई थी, उनकी अवस्था

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऐसी थी, जैसे सिंह के मुख में नर-रक्त लग जाए। कुछ काल तक तो लोग गणपति भवन को जलते देखते रहे। पश्चात् किसी ने कह दिया कि ब्राह्मणों ने व्यर्थ का पाखंड बना रखा है। इन्हें मारकर नगर से भगा दो। परिणाम यह हुआ कि लाखों की भीड़ टुकड़े-टुकड़े हो नगर भर में फैल गई और जहाँ कहीं भी इक्का-दुक्का ब्राह्मण मिला, उसको अपमानित कर उसका सिर खड्ग द्वारा शरीर से पृथक कर दिया।

यह कांड दिन में तीसरे प्रहर तक चलता रहा। इस समय नगरपालक और नगर-संरक्षकों को एकत्रित कर लक्ष्मीकांत यह संदेश देता रहा कि वह गणपति बन गया है। देवधर्मा ने वैशाली की दुर्दशा कर रखी थी। अयोध्या वालों को, जो हमारे शत्रु हैं, यहाँ बुला हमसे सम्मानित कराया। इन्हीं सब कारणों से जनता ने उसे दंड दिया है। उसे अपने पूर्ण परिवार के साथ वैशाली को अपमानित करने का दंड मिला है।

दिन के तीसरे प्रहर जब नगरपालक चौमुखे के मैदान से अवकाश पा नगर में गया तो ब्राह्मणों और क्षत्रियों के मकानों को जलते देख उसकी आँखों में क्रोध से रक्त उतर आया। नगर-भवन में पहुँच उसने तुरंत एक दूत के हाथ लक्ष्मीकांत को नगर की पूर्ण परिस्थिति लिखकर भेजी और आज्ञा माँगी।

वह दूत गणपति के पास पहुँचा या नहीं, कहा नहीं जा सकता, परंतु वह लौटकर नहीं आया। इतने में नगर-भवन के सम्मुख कुछ सेट्ठियों के युवक कुछ ब्राह्मण स्त्रियों को घेर अपमानित करते दिखाई दिए। यह देख उससे नहीं रहा गया। उसने अपने संरक्षकों को बुलाकर समझाया, ''हम लोग जनता को यह हत्याकांड करते रोकेंगे तो संभव है, गणपति हमें ऐसा करने से मना करें। यह सब हत्याकांड सेट्ठी लोग और नीच वर्ण के लोग कर रहे हैं। इससे मैं कहता हूँ कि हम लोग क्षत्रिय और ब्राह्मणों की रक्षा, जिनकी संख्या नगर में कम है, करना चाहें तो यह राज्य का पहरावा उतार, नागरिकों के पहरावे में जाकर सुगमता से कर सकते हैं। जो ऐसा करना चाहते हैं, मैं उन्हें आज्ञा देता हूँ कि वे जा सकते हैं और अपने भाइयों की रक्षा कर सकते हैं।''

अन्य क्षत्रिय कुमारों ने भी जब यह अनर्थ होते देखा तो स्वयं ही अपने-अपने अस्त्र-शस्त्र ले छोटी-छोटी मंडलियों में निकल पड़े और सायं होते-होते नगर में घमासान मच गया। क्षत्रियों को लड़ने का स्वभाव और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ढंग आता था। इससे सायं तक युद्ध की दिशा बदल गयी।

कुछ शूद्रों ने विनोद-भवन पर भी आक्रमण कर दिया था, परंतु गणपति की ऐसी इच्छा नहीं थी। इस कारण उन्होंने एक सेनानायक को इस भवन की रक्षा करने का आदेश दे दिया। भवन के चारों ओर सेना खड़ी हो गई।

: 8 :

मृदुला यह तो आशा कर रही थी कि बौद्ध उपासक गणपति भवन पर आक्रमण कर प्रभा को बलपूर्वक ले जाएँगे, परंतु जो कुछ उसने दिन भर देखा, वह उसकी आशा से बहुत अधिक था।

उसकी दास दासियाँ उसे पल-पल के समाचार लाकर दे रही थीं। जब उसे पता चला कि गणपति भवन जलाकर भस्म कर दिया गया है और गणपति परिवार सहित उसमें था, तो उसके मुख से मुस्कराहट निकल गई। वह जानती थी कि देवधर्मा का परिवार तो रात में ही चला गया था और गणपति भवन से गुप्त मार्ग नगर की प्राचीर से बाहर तक जाता है। वह स्वयं भी अपने को निर्भय पाती थी क्योंकि विनोद-भवन से भी भूमि के नीचे-नीचे से एक गुप्त मार्ग नगर से बाहर जंगल तक जाता था।

अतएव उसने जब सुना कि नगर में युवा सेट्ठियों ने ऊधम मचाना आरंभ कर दिया है तो उसने विनोद-भवन का फाटक बंद करवा दिया और सब सैनिकों को, जो उस भवन की रक्षा के लिए वहाँ पर थे, अपने-अपने तीर-कमान ले भवन की छत पर चढ़, भवन की रक्षा का आदेश दे दिया।

जितनी दासियाँ वहाँ थीं, उन सबको उसने कहा, "डरो नहीं। यदि भवन को नष्ट करने में विद्रोही सफल हुए तो भी तुम सब बच सकती हो। यहाँ से एक गुप्त मार्ग बाहर निकलने का है।"

परंतु ऐसा अवसर नहीं आया। दो प्रहर तक तो छतों पर बैठे सैनिक अपने तीरों से भीड़ को दूर रखते रहे। तब तक और सैनिक सहायता आ गई और लोग भयभीत हो भाग खड़े हुए। फिर सायंकाल होते-होते क्षत्रिय युवकों ने सेट्ठियों को ढूँढ-ढूँढकर मारना आरंभ कर दिया।

लक्ष्मीकांत ने संसद् के सदस्यों को अपने गणपति बनने के उपलक्ष्य में विनोद-भवन में आमंत्रित किया हुआ था। जो लोग पिछले दिन लक्ष्मीकांत से खा-पीकर अपना मत उसके पक्ष में दे आए थे, सब उसके घर एकत्रित हो गए और फिर सब मिलकर विनोद-भवन की ओर चल पड़े।

वहाँ सैनिकों की रक्षा में विनोद-भवन को देख, उसने सेनानायक को

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उत्साहवर्धक वचन कहे और अपने साथियों सहित विनोद-भवन के दालान की सीढ़ीयों पर चढ़ बंद फाटक को खटखटाने लगा।

मृदुला की एक दासी ने, ऊपर की छत की उस खिड़की में खड़े हो, जो फाटक के ऊपर थी और जिसमें से प्रवेश द्वार पर खड़े लोग दिखाई देते थे, पूछा, "कौन है?"

"गणपति भीतर आना चाहते हैं।" किसी ने उत्तर दिया।

"क्या प्रयोजन है?"

"विनोद-भवन में क्या प्रयोजन हो सकता है?"

"आज नगर में पर्याप्त विनोद हो रहा है। उसके लिए यहाँ आने की आवश्यकता नहीं।"

"गणपति आज्ञा देते हैं कि विनोद-भवन खोल दिया जाए।"

"उनसे कह दो कि गणपति की आज्ञा मानना नगर-वधू के कर्तव्यों में नहीं है।"

"परंतु विनोद-भवन वैशाली-जनपद की संपत्ति है। वह कोई व्यक्ति-विशेष अपने पास रख नहीं सकता।"

"देवी ने इसकी रक्षा का भार अपने ऊपर लिया है और वे आज इस समय इसको खोलना सुरक्षित नहीं समझतीं। यदि आप चले नहीं जाएँगे, तो देवी इस भवन की रक्षा करने वाले संरक्षकों को आप लोगों पर तीर चलाने की आज्ञा दे देंगी।"

दासी को इस प्रकार युक्तियुक्त बातें करते देख लक्ष्मीकांत आगबबूला हो रहा था। इस कारण उसने ऊँचे स्वर में कहा, "मैं तुम्हें बंदी करने की आज्ञा देता हूँ।"

"आज्ञा लिखकर दीजिए, फिर देखूँगी कि उसका पालन करना आवश्यक भी है या नहीं।"

इस समय कुछ सैनिक, जो सेनापति की आज्ञा से वहाँ खड़े थे और सेट्ठी-पुत्रों की करतूतें सुन-सुनकर क्रोध से लाल-पीले हो रहे थे, यह तकरार सुन हँसने लगे। किसी ने कहा, "चुप रहो मूर्खो! यह गणपति स्वयं हैं।"

"पर हम तो उस स्त्री की बातों पर हँस रहे हैं।"

"उसके सिर पर मौत खेल रही है।" गणपति के एक साथी ने कहा।

"यही तो हँसने की बात है कि एक स्त्री भी सेट्ठियों को खरी-खरी सुना सकती है। मौत से भी नहीं डरती।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इससे आगबबूला हो गणपति ने अपने साथियों को कहा, "छोड़ो इसे। अब नई नगर-वधू आएगी तो आप लोगों को भोज दूँगा।"

यह कहकर लक्ष्मीकांत चल पड़ा और उसके साथी उसके साथ ही चले गए।

घर पर पहुँच गणपति ने देखा कि सेनापति वहाँ बैठा है। लक्ष्मीकांत कुछ लज्जित हो पूछने लगा, "क्या है शूरसेन? क्या बात है?"

"मध्याह्न-काल से मैं इस प्रतीक्षा में था कि नगर में हो रहे हत्याकांड को रोकने के लिए आप सेना बुलाएँगे। आपके आदेश की सायंकाल तक प्रतीक्षा कर आपसे मिलने आया था और यह सुन चकित रह गया कि गणपति विनोद-भवन में गए हैं।"

"अब तो नगर में शांति है।" गणपति ने कहा।

"ऐसी शांति, जैसी पूर्ण लकड़ी जल जाने पर कोयला बन जाने से उत्पन्न होती है।"

"तो क्या सब वैशाली जल गई है?"

"मेरा निवेदन है कि गणपति अपने भवन की सबसे ऊपर की छत पर चढ़कर देखें तो मेरे कहने का अर्थ समझ सकेंगे।"

"देखो शूरसेन!" गणपति ने बात बदलकर कहा, "इतनी भारी भीड़ के साथ झगड़ा करने से लाभ ही क्या है? यदि उन पर सैनिक छोड़ देता तो मैं समझता हूँ, अधिक लोग मारे जाते। मैं बदनाम हो जाता और कुछ लाभ भी न होता।"

"परंतु श्रीमन्! नगर में अन्याय होते रोकना क्या आपका काम नहीं? आपने देवधर्माजी की हत्या होने दी और उसको रोकने का यत्न भी नहीं किया। यदि आप दो सौ सैनिकों को बुला भेजते तो एक नेक और बुद्धिमान आदमी की जान बच जाती और वह किसी समय वैशाली के काम आ सकता था।"

"देवधर्मा के कुकर्म बहुत थे और जनता उसे अपने कुकर्मों का फल देना चाहती थी। जनता भगवान् का स्वरूप है। मैं उसकी इच्छा में बाधक कैसे हो सकता था?"

इस मीमांसा को सुन शूरसेन चकित रह गया। उसने अधिक बात करना उचित नहीं समझा। उसने समझ लिया कि यह पद के मद में मतिहीन हो रहा है। इससे चुपचाप उठा और हाथ जोड़ नमस्कार कर विदा हो गया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शूरसेन तो चला गया, परंतु रात-भर क्षत्रिय युवकों ने सेट्ठियों के धन से भरपूर आगारों को लूटा और फिर आग लगाई। मध्यरात्रि तक तो लक्ष्मीकांत आनंद में रहा। जो कुछ हानि उस समय तक वैश्य-समाज की हुई थी वह गणनातीत थी। परंतु इस समय के पश्चात् तो सेट्ठियों के मुहल्ले-के-मुहल्ले ही जलने लगे और लोग रोते तथा माथा पीटते हुए गणपति के द्वार के बाहर आ हल्ला करने लगे। इस प्रकार बेघर और बेसामान हुए लोगों की संख्या इतनी हो गई कि लक्ष्मीकांत का चुपचाप घर में सो रहना असंभव हो गया। वह घर से बाहर आया तो लोगों को रोते और माथा धुनते देख पूछने लगा, ''क्या हुआ है?''

इन लोगों में बहुत-से उसके परिचित थे। उन्होंने कहा, ''सेना किसलिए रखी है तुमने? क्षत्रियों के पुत्रों ने हमें लूट लिया है और हमारे मकानों को जला डाला है।''

''तुम लोग इतनी भारी संख्या में हो और फिर शूद्रों की संख्या भी तो कुछ कम नहीं है। क्षत्रिय तो आटे में नमक भी नहीं। तुम्हें उनसे मार खाते लज्जा आनी चाहिए। मैं तो यही समझा बैठा था कि तुम लोग क्षत्रियों और ब्राह्मणों को लूट रहे हो।''

एक ने क्रोध में कहा, ''ब्राह्मणों को लूटने में क्या मिलता है? पुस्तकें और पत्तल-दोने, रोटी खाने के लिए। पूर्ण नगर के ब्राह्मण लूटने पर एक महाजन के धन के बराबर भी तो नहीं होते।''

एक और ने कहा, ''श्रीमन्! क्षत्रिय लड़ना जानते हैं। अकेला भी खड्ग ले किसी सेट्ठी के घर में घुस जाता है तो बाप और सातों बेटे दुम दबाकर भाग जाते हैं। अपनी स्त्रियों को भी उसकी दया पर छोड़ जाते हैं।''

इस कथा को सुन लक्ष्मीकांत का हृदय काँप उठा। उसने तो इससे विप. रीत समझा था।

वैशाली की पाँच लाख की जनता में तीन लाख वैश्य थे, एक लाख शूद्र थे और केवल एक लाख ब्राह्मण और क्षत्रिय थे। उसका विचार था कि उसने चार लाख का संगठन कर दिया है और ये चार लाख एक लाख को नगर से भाग जाने पर विवश कर देंगे। उसे अब विदित हुआ कि चार लाख तो केवल भेड़-बकरियाँ हैं। उसने तुरंत एक प्रतिहार को सेनापति के पास भेजा कि उसे बुला लाए। कुछ ही देर में प्रतिहार लौट आया और उसने कहा, ''सेनापति घर पर नहीं हैं।''

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस पर गणपति ने सेनापति के नाम आज्ञा लिखकर भेजी, "नगर में विद्रोह को शांत करने के लिए सेना का प्रयोग किया जाए और विद्रोह करने वालों को मौत के घाट उतार दिया जाए।"

यह आदेश उपसेनापति को सेना के शिविर में सूर्योदय के समय मिला। उसने उत्तर में लिख भेजा कि सेनानायकों को नगर में शांति स्थापित करने की आज्ञा दे दी है। सेनापति रात-भर नगर में शांति स्थापित करने में लगे रहे हैं।

अगले दिन मध्याह्न तक नगर में शांति हो गई थी। एक-चौथाई नगर जलकर राख हो गया था और लगभग एक लाख वैश्य और शूद्र-समाज के लोग बेघर हो राजमार्गों पर आ पड़े थे। शूरसेन ने बिना गणपति से आज्ञा पाए रात्रि में ही शांति का कार्य आरंभ कर दिया था। विद्रोह और परस्पर की लूटमार तो रात तीसरे प्रहर ही बंद हो गई थी, परंतु आग बुझाने का कार्य अगले दिन सायंकाल तक चलता रहा।

गणपति बहुत चिंता से सेनापति की खोज करवा रहा था। दिन के तीसरे प्रहर तक आग बुझाने का कार्य करते-करते, थककर चूर हो, वह राजमार्ग पर ही एक पत्थर के चौंतरे पर आराम करने बैठा तो सो गया। वहाँ गणपति के प्रतिहारों ने उसे ढूँढ़ निकाला। वे उसे जगाकर गणपति के भवन में ले गए। वहाँ लक्ष्मीकांत नगर के प्रबंध में लगा हुआ था। उसने इस प्रबंध के संबंध में सर्वप्रथम आज्ञा यह दी थी कि मुख्य न्यायाधीश को पद से पृथक् कर उसके स्थान पर एक सेट्ठि-पुत्र निर्मलचंद्र को नियुक्त कर दिया जाए। उसे आज्ञा-पत्र दे मुख्य न्यायाधीश का कार्य करने को कह दिया। इसके पश्चात् नगर-पालक के स्थान पर एक अन्य सेट्ठी युवक को नियुक्त कर दिया। उसे चिंता सेनापति की थी। उसको भय था कि कहीं नगर में शांति स्थापित करने के पश्चात् वह अपना ही राज्य स्थापित न कर ले। अतएव जब सेनापति उसके सम्मुख उपस्थित हुआ तो गणपति ने पूछा, "सेनापति! रात-भर कहाँ रहे?"

"नगर में विद्रोह शांत करने में व्यस्त रहा हूँ।"

"इसके लिए तो आपको आज्ञा प्रातःकाल दी गई थी। आप उससे पहले ही अपने ही आप यह कार्य करने लगे!"

"एक वैशाली के नागरिक के नाते वैशाली की रक्षा अत्यावश्यक समझ अपना कर्तव्यपालन करने चला गया था।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"परंतु यहाँ आप पर इस बात का अभियोग लगाया जा रहा है कि आप अपने सैनिकों के साथ सेट्ठियों की धन-संपत्ति लूटते रहे हैं।"

"यह झूठ है।"

"इसका निर्णय न्यायाधीश करेंगे। अभी आप राज्य के बंदी हैं।"

शूरसेन को कैद कर बंदीगृह में भेज दिया गया और नगर में लक्ष्मीकांत का राज्य स्थापित हो गया। अब सेट्ठी लोगों को, क्षत्रियों पर क्रोध निकालने का पुनः अवसर मिला। जहाँ कहीं कोई क्षत्रिय अथवा ब्राह्मण का अच्छा-सा मकान दिखाई देता, वहाँ राज्य के संरक्षक चले जाते। उस घर के मालिक को पकड़ बंदी बना देते और घर पर सेट्ठी लोग अधिकार कर लेते।

बंदी लोगों को न्यायालय में उपस्थित किया जाता, परंतु न्यायाधीश भी प्रायः सेट्ठी लोग हो गए थे। अतः सब बंदियों को मृत्युदंड दे दिया जाता था।

: 9 :

जब अयोध्या में आर्य-बौद्ध झगड़ा लोगों ने राज्य के हस्तक्षेप के बिना ही समाप्त कर लिया तो अवध की नवीन महारानी को पसंद नहीं आया। अतएव महामात्य को राज्यप्रासाद में बुलाया गया।

भानुमित्र अपनी नीति की सफलता से प्रसन्न हो प्रचला, राका और अपने पुत्रों के साथ वन-विहार के लिए जाने की तैयारी कर रहा था। प्रचला के लड़के की आयु दो वर्ष की थी और राका के लड़के की एक वर्ष की। वन में अयोध्या से पाँच कोस के अंतर पर एक स्वच्छ जल की पुष्करिणी भी थी। वहाँ दो रथों पर तंबू लगाने के लिए पहले ही भेजे जा चुके थे और तीसरे रथ पर महामात्य अपने परिवार सहित जाने की तैयारी कर रहा था। इस समय उसे महाराज का बुलावा मिला। उसने अपनी दोनों स्त्रियों को यह कह कि वह अभी आता है, वे तैयार रहें, स्वयं राजप्रासाद की ओर चला गया।

महाराज और महारानी पद्मावती उसकी प्रतीक्षा में बैठे थे। महामात्य नमस्कार कर सम्मुख खड़ा हो गया। महाराज ने कहा, "महामात्य, बैठो।" और एक रिक्त आसन की ओर संकेत कर दिया।

महामात्य बैठा तो बात महारानी ने आरंभ कर दी, "सुना है, आर्य बौद्ध झगड़ा समाप्त हो गया है।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"हाँ महारानी जी! महाराज के प्रताप से बौद्ध-विहार वालों को सुमति आ गई।"

"परंतु महामात्य! आप पर यह दोषारोपण लगाया जा रहा है कि आपने बौद्ध प्रभु को कैद कर लेने की धमकी दी थी, जिससे डरकर यह बात हो गई।"

"मैंने तो किसी को धमकी नहीं दी। केवल आपके प्रताप से ही भयभीत हो बौद्ध लोगों ने आपकी इच्छा की पूर्ति कर दी।"

"परंतु हम इससे संतुष्ट नहीं है।"

"तो क्या आज्ञा है महाराज की?"

"बौद्ध प्रभु धम्म वत्त को पकड़कर न्यायाधीश के सम्मुख उपस्थित किया जाए। उसने भारी अपराध किया है।"

"वह तो महाराज, काशी के शास्त्रियों की व्यवस्था के पश्चात् ही किया जा सकेगा।"

"यह व्यवस्था कब तक मिल जाएगी?"

"दो-तीन मास लग जाना तो सुगम है। कभी-कभी ऐसी व्यवस्था लेने में वर्षों लग जाते हैं।"

"तब तो यह व्यवस्था लेने की बात ही व्यर्थ हो जाती है।"

"तब तक हम प्रथा से कार्य ले सकते हैं। वह प्रथा अब जनता ने बना डाली है। हमें इससे लाभ उठाना चाहिए।"

"हमें इससे संतोष नहीं हो रहा।"

"महाराज! इस विकट संसार में प्रत्येक बात प्रत्येक के संतोष की कैसे हो सकती है? मुझे आज्ञा दीजिए। सेवक की रानियाँ वन-भ्रमणार्थ जाने को तैयार खड़ी हैं।"

महारानी यह सुन क्रुद्ध हो गई और उसके माथे पर त्योरी चढ़ गई। महाराज ने इसे देख लिया और पूर्व इसके कि वह कुछ कहती, महाराज ने स्वयं पूछ लिया, "इस भ्रमण से कब लौटेंगी रानियाँ और राजाजी?"

"दो दिन तक वहाँ ठहरने का विचार है।"

इतना कह महामात्य बिना महारानी के कथन की प्रतीक्षा किए, उठ नमस्कार कर बाहर निकल आया।

परंतु वन-विहार के लिए जाना नहीं हुआ। महामात्य जब अपने निवास्थान पर पहुँचा तो धूरि से लथपथ तीन रथ और साठ के लगभग

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वैशाली के सैनिक द्वार पर खड़े दिखाई दिए। महामात्य ने प्रतिहारों से, जो निवास-गृह के द्वार पर खड़े थे, पूछा, ''कौन आया है?''

''गणपति की लड़कियाँ और उनकी माताजी।''

''तीन रथ में?''

''नहीं श्रीमान्! दो रथों में तो मृदुला देवी का सामान था।''

''मृदुला देवी का?'' महामात्य ने अचंभे में पूछा और फिर वह भीतर चला गया। प्रभा को सिर मुँडाए खड़े देख उसका हृदय धक्-धक् करने लगा। परंतु जब उसने पूर्ण कथा सुनी और मृदुला की दासी, जो उसके कोष के साथ आई थी, द्वारा दिए मृदुला के पत्र को पढ़ा, तो तुरंत अपने मन को दृढ़ कर अपने कर्तव्य पर मनन करने लगा। उसने वन-विहार के लिए जाना स्थगित कर दिया और प्रचला को मृदुला का सामान सुरक्षित रखने तथा अतिथियों की आवभगत करने के लिए कह, अपने कार्यालय में चला गया। वहाँ जा उसने गुप्तचरों के मुखिया को, जो वैशाली के समाचार लाया करते थे, बुलाया और उन्हें प्रभा के बौद्ध-भिक्षुणी बन जाने के समाचार को न बताने का कारण पूछा। गुप्तचरों के मुखिया ने कहा, ''श्रीमान्जी अयोध्या की बातों में बहुत व्यस्त थे और प्रभा के भिक्षुणी बन जाने का कुछ महत्त्व की बात नहीं समझा गया।''

''सबसे अंत में क्या समाचार आया है?''

''अभी-अभी एक गुप्तचर आया है और अपनी बात वहाँ कार्यालय में लिखवा रहा है।''

''उसे यहाँ बुला लाओ और देखो, जो भी समाचार वहाँ से आए, वह सर्वप्रथम मुझे मिलना चाहिए। कार्यालय में पीछे जाएगा।''

वैशाली से आया गुप्तचर महामात्य के सम्मुख उपस्थित हुआ तो उसने पूछा, ''वहाँ से कब चले थे?''

''कल मध्याह्न के कुछ पीछे।''

''नगर का क्या हाल है?''

''सेट्ठियों ने विद्रोह कर दिया है। गणपति और उनके परिवार के लोग गणपति-भवन में जला दिए गए हैं। संसद् ने गणपति पर अविश्वास का प्रस्ताव पास कर दिया और जब वे संसद् से घर की ओर लोट रहे थे तो नगर के विद्रोहियों ने उन्हें घेर लिया। नगर-संरक्षक उनकी रक्षा करते रहे और उन्हें अपने भवन तक ले गए, परंतु वे घायल हो चुके थे। इस समय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संरक्षक भी लोगों के साथ मिल गए और गणपतिजी को उनके भवन के भीतर भेज भवन को आग लगा दी।''

''इस समय मैं वहाँ से भेज दिया गया था और रात बिना सोए पड़ाव पर घोड़े बदलता हुआ यहाँ आ पहुँचा हूँ।''

उसको यह कह कि वैशाली से आने वाले दूतों को तुरंत यहाँ भेजो, महामात्य ने उसको भेज दिया। पश्चात् अवध के सेनापति वीरभद्र को बुलाया और पूछा, ''वीरभद्र! आठ प्रहर में हम कितनी सेना एकत्रित कर सकते हैं?''

''किस स्थान पर?'' सेनापति का प्रश्न था।

''अपनी वैशाली से लगती सीमा पर।''

''अर्थात् नदी के इस पार?''

''हाँ।''

सेनापति ने कुछ सोचकर उत्तर दिया, ''एक लाख के लगभग।''

''और यदि समय दो दिन का मिले तो?''

''तो डेढ़ लाख।''

''सेना के नदी पार करने के क्या साधन हैं?''

''दस नावों के पुल हमारे पास तैयार रहते हैं, जो यदि हम चाहें तो एक प्रहर में डाल सकते हैं।''

''इनके भोजन और स्थान का प्रबंध कैसे होगा?''

''श्रीमान् सेना का यह प्रबंध सब ठीक है। आज्ञा मिलनी चाहिए।''

''तो ठीक है। कुछ काल में आपको आज्ञा मिलेगी। उस आज्ञा पर आप कुछ थोड़े सैनिक नदी-तट पर भेज वैशाली मार्ग से एक कोस ऊपर दस नावों के सेतु डलवा दें। इसके पूर्व गंगाघाट के पार गंगापुरी में सैनिक नागरिकों के पहरावे में अभी से भेजने आरंभ कर दो। जिस समय पुल डालने की आज्ञा हो, उसी समय इस तट से संकेत किया जाए, जिससे गंगापुरी के सब लोग और वहाँ पर वैशाली के सैनिक घेरा डाल बंदी कर लिए जाएँ। वहाँ से किसी को भी वैशाली न जाने दिया जाए।''

''यह कार्य कल रात्रि को होगा। उसी रात सेतु बाँध देने चाहिए और ऐसा प्रबंध हो कि परसों प्रातःकाल सेना उस पार जाकर डेरे डाल दे। सायंकाल तक डेढ़ लाख से ऊपर सैनिक पार चले जाने चाहिए।''

''तैयारी आरंभ कर दो। मैं महाराज की अनुमति लेने जा रहा हूँ।''

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सेनापति इस सबका प्रयोजन नहीं समझ सका। एक बात वह समझता था कि जब से भानुमित्र महामात्य बना था, सेना को सुदृढ़ करने का यत्न कर रहा था। इसका अभिप्राय वह मगध-देश पर आक्रमण की तैयारी समझता था। आक्रमण हुआ वैशाली पर, जो अवध का मित्र-राज्य समझा जाता था। इस पर भी वीरभद्र ने तुरंत सब सैनिक टुकड़ियों को पूर्ण रूप से कूच के लिए तैयार रहने की आज्ञा भेज दी।

: 10 :

महामात्य, महारानी पद्मावती की जो कथा जानता था, उसके अनुसार महाराज को वैशाली पर आक्रमण करने की स्वीकृति देने की आशा नहीं करता था। महारानी पद्मावती आत्मघात कर लेगी, पर वैशाली पर आक्रमण नहीं होने देगी। इस प्रकार विचारकर भानुमित्र ने एक महान् कार्य करने का निश्चय कर लिया। वह सीधा राजमाता के पास पहुँच गया।

सूचना मिलने पर राजमाता ने उसे भीतर बुलाया। मल्लिका बहुत ही साधारण सूती वस्त्र पहने राजमाता के चरणों में बैठी थी। महामात्य को उचित आसन पर बिठा राजमाता ने पूछा, "बेटा भानुमित्र, कैसे आना हुआ?"

"एक बार माताजी ने राज-परिवार की रक्षा का प्रबंध करने का भार मुझ पर डाला था।"

"हाँ, स्मरण है। मुझे जो कुछ राज्यप्रासाद में हो रहा है, शुभ प्रतीत नहीं होता।"

"जो अशुभ है, उसको दूर करने का समय आ गया है, परंतु जब शरीर में गड़े काँटे को निकाला जाता है, तो कुछ समय के लिए पीड़ा भी बढ़ जाती है। इससे उस पीड़ा को सहन करने के लिए तैयार रहना चाहिए।"

पश्चात् कुछ काल तक अपने विचारों को व्यवस्थित कर बोला, "वैशाली में सेट्ठियों ने उपद्रव कर दिया है। ब्राह्मण और क्षत्रियों को चूहों की भाँति मार-मारकर बिलों में घुसेड़ा जा रहा है। लक्ष्मीकांत देवधर्मा को हटाकर स्वयं गणपति बन बैठा है। इसके लिए हमें वैशाली में पुनः सुव्यवस्था स्थापित करनी है, अन्यथा जो आज वैशाली में हुआ है, वह कल अवध में भी हो सकता है।"

इस समाचार से राजमाता को बहुत दुःख हुआ। वह स्वयं लिच्छवी राजपूतों की लड़की थीं और राजपूतों पर यह मुसीबत सुन वह घबरा उठीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और बोलीं, "तो महाराज से वैशाली पर आक्रमण कर देने को कहना चाहिए।"

"परंतु वे मानेंगे नहीं।"

"क्यों?"

"महारानी पद्मावती इसका विरोध करेंगी।"

"वे क्यों विरोध करेंगी?"

"वे स्वयं वैशाली की एक गणिका की लड़की हैं और लक्ष्मीकांत की ओर से अयोध्या में गुप्तचर का कार्य करने के लिए भेजी गई हैं।"

"यह क्या कहते हो, महामात्य? वे तो हस्तिनापुर के सेठ सुमेर की लड़की हैं।"

"माताजी! यह सब झूठ है। पद्मावती वैशाली की एक गणिका, जिसका नाम रेखा है, की लड़की है। उसे गुप्त रूप में वैशाली की नगर-वधू बनाने के लिए तैयार किया जा रहा था। लक्ष्मीकांत ने इसे इसकी माँ से पाँच सौ स्वर्ण-मुद्रा मासिक पर खरीदा है।"

राजमाता यह सब सुन अवाक् रह गईं। भानुमित्र ने कहना जारी रखा, "लक्ष्मीकांत ने उसे महाराज की अर्धांगिनी बना वैशाली को सुरक्षित कर लिया है। उसकी उपस्थिति में महाराज वैशाली पर आक्रमण की आज्ञा नहीं देंगे।

"वैशाली पर आक्रमण अत्यावश्यक हो गया है। केवल इसलिए नहीं कि वैशाली में क्षत्रिय-ब्राह्मणों पर अत्याचार हो रहा है, प्रत्युत् इस कारण भी कि वहाँ कि दुर्व्यवस्था अवध में भी प्रथा बन जाएगी।"

"तो क्या करना चाहिए, भानुमित्र! बताओ?"

"मेरी सम्मति है कि महाराज को यहाँ बुलाकर वैशाली पर आक्रमण करने की स्वीकृति लिखवा ली जाए। यदि वे कहें कि वे पद्मावती से राय करना चाहते हैं, तो उसे भी यहीं बुला लिया जाए। यदि वे स्वीकृति दे दें तो मैं वचन देता हूँ कि एक सप्ताह में वैशाली में पुनः व्यवस्था स्थापित कर लिच्छवियों का गणराज्य स्थापित कर दूँगा।

"यदि महाराज स्वीकृति न दें तो महाराज और महारानी पद्मावती को आपके आगार में एक सप्ताह के लिए बंदी कर दिया जाए। बाहर विश्वस्त सैनिक बिठा दिए जाएँ। आप तब तक के लिए राज्य-कार्य चलाएँ।"

"बहुत विकट बात बता रहे हो, महामात्य!"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

''अपने निरंकुश लड़के को सुधारने के लिए माता यदि कठोर व्यवहार करे तो वह ठीक होता है। आप अयोध्या पर और अपने पूर्वजों पर भारी अनुकंपा करेंगी। देश और मान-मर्यादा के लिए अपने लड़के की थोड़ी सी असुविधा सहन करनी ही पड़ेगी। एक सप्ताह में वैशाली में शांति स्थापित हो जाएगी। तब मैं आपसे निवेदन करूँगा कि रानी पद्मावती पर, सेठ सुमेर पर और अन्य लागों पर, जो इस धोखा देने में सहायक बने थे, अभियोग चलाया जाए। कोई भी राजा की महारानी धोखा देकर नहीं बन सकती।''

राजमाता महामात्य भानुमित्र की स्पष्टवादिता और दूरदर्शिता पर चकित थीं। भानुमित्र का यह कहना कि यदि वैशाली में शांति स्थापित न की गई और वहाँ पर योग्य और अधिकारी लोगों को पुनः अधिकार न दिलवाए गए तो अयोध्या में भी विग्रह और विद्रोह आ उपस्थित होगा, सत्य ही प्रतीत होता था। आर्य-बौद्ध झगड़ा अभी-अभी शांत हुआ था। यदि कहीं यह बढ़ जाता तो राज-परिवार को अपने में लपेट लेता।

इस कारण राजमाता ने दासी को भेज महाराज को बुला भेजा। इस काल में महामात्य ने पचास सैनिक बुलाकर राजमाता के प्रासाद में छिपा दिए।

महाराज आए तो साथ ही महारानी पद्मावती भी आई। वह जानती थी कि राजमाता महाराज को कभी भी अपने आगार में नहीं बुलातीं। इस कारण इस विलक्षणता ने उसके मन में संदेह उत्पन्न कर दिया था। उसने महाराज के साथ आने का हठ किया। दोनों महामात्य को देख हैरान भी हुए और क्रुद्ध भी। राजमाता ने उन्हें आदर पूर्वक बिठाकर बात आरंभ की, ''बेटा! वैशाली में सेट्ठियों ने विद्रोह कर राज्य पलट दिया है। देवधर्मा को अपने मकान में आग लगाकर भस्म कर दिया है। सहस्रों ब्राह्मणों और क्षत्रियों को मौत के घाट उतार दिया गया है।''

राजामाता इतना कह चुप कर गईं। वे इसका प्रभाव अपने पुत्र और पुत्रवधू पर देखना चाहती थीं। महाराज ने तो केवल यह कहा, ''बहुत शोकपूर्ण समाचार है।'' इसके विपरीत महारानी पद्मावती ने कहा, ''कालचक्र अपने निश्चित मार्ग पर चल रहा है। इसे कोई रोक नहीं सकता।''

राजमाता ने अपनी बात चालू रखी, ''यदि यहाँ पर आर्य-बौद्धों का झगड़ा समाप्त न होता तो वह भी इसी प्रकार का रूप धारण कर सकता था। अब भी यदि वैशाली में छोटे वर्ण वालों की जीत रही तो यहाँ पर भी विप्लव

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हो जाने की संभावना है।''

''इतिहास में विप्लव हुए पढ़े हैं। वैशाली में भी हो गया है। इसमें भला कोई क्या कर सकता है?'' पद्मावती ने कहा।

महामात्य ने बात को शीघ्र ही निश्तिच स्तर पर लाने के लिए बात का सूत्र स्वयं ही पकड़कर कहा, ''महाराज! समय की माँग यह है कि अपने पड़ोस में अव्यवस्था न होने दी जाए। इस कारण मेरा प्रस्ताव है कि वैशाली पर आक्रमण कर दिया जाए और वहाँ व्यवस्थित राज्य स्थापित कर दिया जाए।''

इस प्रस्ताव को सुन पद्मावती बोली उठी, ''यह नहीं होगा।''

महाराज ने कहा, ''महामात्य! यह प्रस्ताव मंत्रिमंडल में उपस्थित होना चाहिए। राजमाता का आगार इसके लिए उपयुक्त स्थान नहीं।''

''राजमाता की वैशाली के लिच्छवियों में विशेष रुचि है। रहा मंत्रिमंडल। मैं पूर्ण मंत्रिमंडल का प्रतिनिधित्व कर रहा हूँ। मंत्रिमंडल को भय था कि आप आक्रमण करने का विरोध करेंगे और राजमाता इसके पक्ष में होंगी। इसी कारण आपको यहाँ बुलाया है।''

पद्मावती उठ बैठी और महाराज से बोली, ''उठिए महाराज! अब और अधिक अपमान नहीं सहन किया जा सकता।''

राजमाता समझ गई कि पद्मावती बहुत चतुर स्त्री है, परंतु महामात्य उसके उद्देश्यों को बता चुका था, इस कारण डाँटकर बोलीं, ''बैठिए महारानीजी! इस प्रकार घबराकर भाग जाने से मुसीबत से छुटकारा नहीं हो सकता। राजा-महाराजाओं को मननशील होना चाहिए। देखो, वैशाली में मेरे माता-पिता, भाई-बंधु और फिर भतीजे-भानजे विद्यमान हैं। उन पर अन्याययुक्त व्यवहार हो रहा है। मैं अवध जैसे राज्य की राजमाता होते हुए यदि उनको इस मुसीबत से बचा नहीं सकती तो, धिक्कार है मेरे इस राज्य से संबंध रखने पर। क्या लाभ है इस राज्य की इतनी बड़ी सेना से?''

पद्मावती बैठी नहीं। इस समय महाराज भी उठ खड़े हुए और बोले, ''माताजी! युद्ध एक साधारण बात नहीं है। इसे मैं इस अनुभवहीन महामात्य के कहने पर आरंभ नहीं कर सकता। मुझे स्वयं इस विषय पर कुछ दिन पर्यंत गंभीरतापूर्वक विचार करने दें। आप नहीं जानतीं, युद्ध में सहस्रों युवक मारे जाएँगे। उनकी स्त्रियाँ विधवा हो जाएँगी। व्यभिचार बढ़ेगा और देश का सत्यानाश हो जाएगा।''

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"विक्रम!" राजमाता ने उसे जाते देख, भागकर द्वार में खड़े हो रोककर कहा, "देखो, मैंने तुमसे आज तक कुछ नहीं माँगा। मेरे भाई-बंधुओं की रक्षा के लिए वैशाली पर आक्रमण आवश्यक हो गया है। इसकी आज्ञा दे दो।"

उत्तर पद्मावती ने दिया, "नहीं, यह नहीं हो सकता।" इतना कह राजमाता को हाथ से धकेलकर एक ओर करने का यत्न किया।

इस समय राजमाता ने क्रोध में कहा, "सेनानायक उद्दग! देखना...।" इस समय आगार में भारी परदों के पीछे छिपे हुए दस सैनिक नंगे खड्ग लिए आकर महाराज और महारानी के चारों ओर खड़े हो गए। महाराज का हाथ अपने खड्ग के मुट्ठे पर चला गया, परंतु राजमाता ने डाँटकर कहा, "विक्रम! एक तरफ हट जाओ। इस स्त्री ने मेरे से बल-प्रयोग करने का यत्न किया है। तुम इसमें न पड़ो।"

"माताजी!" महाराज ने खड्ग के मुट्ठे से हाथ उठाते हुए कहा, "यह मेरी विवाहिता है। मैं इसका साथ छोड़ नहीं सकता। साथ ही यह मेरे बेटे की माँ होने वाली है।"

"तब ठीक है।" राजमाता ने बात को शीघ्र समाप्त करते हुए कहा, "उद्दग! इन दोनों को मेरे पिछले आगार में बंद कर दो। इनके स्थान पर, जब तक इस लड़के का उन्माद समाप्त नहीं होता, मैं राज्य करूँगी।"

उद्दग ने हाथ से ताली बजाई। बीस सैनिक और आगार में आ गए। विवश महाराज को अपना खड्ग राजमाता के चरणों में फेंक देना पड़ा। उसे तथा पद्मावती को राजमाता के पिछले आगार में बंद कर ताला लगा दिया गया। उस आगार में प्रकाश तथा वायु के लिए छत में एक गवाक्ष था। वहाँ आठों प्रहर के लिए दो प्रहरी बिठा दिए गए।

: 11 :

लक्ष्मीकांत को गणपति का पद सँभाले आठ दिन हो गए थे। इतने काल में जो उथल-पुथल वहाँ हुई, वह पिछले सौ वर्षों में भी नहीं हो सकी थी। जहाँ तक राज्य का संबंध था, एक भी ब्राह्मण अथवा क्षत्रिय किसी अधिकारपूर्ण पदवी पर नहीं रहा था। नगर आधा जल चुका था और आग लगने की इक्का-दुक्का घटनाएँ अभी भी होती रहती थीं। क्षत्रिय और ब्राह्मण, जिन्होंने सेट्ठियों का धन लूटा था, नगर छोड़ जंगल में चले गए थे और सैनिक दिन को नौकरी करते थे, अर्थात् अपने अधिकारी-वर्ग का कहना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मान ब्राह्मणों को पकड़ते थे, परंतु रात को सेट्ठियों के घरों में घुस उनको लूटते थे।

इस समय बौद्धों का प्रतिनिधिमंडल गणपति से मिलने आया और उसने यह माँग उपस्थित की कि नगर-वधू की प्रथा मिटा दी जाए तथा मृदुला देवी को नगर से अपमानित कर निकाल दिया जाए।

लक्ष्मीकांत बौद्धों की माँग को एकदम ना नहीं कर सकता था। साथ ही वह जानता था कि विनोद-भवन जैसी संस्था को सेट्ठियों के युवक भी स्थिर रखना चाहेंगे। इस कारण उसने कहा, ''इस प्रश्न का निर्णय संसद् ही कर सकती है। मैं वहाँ भी आपके पक्ष का समर्थन करूँगा।''

''संसद् की बैठक कब होगी, श्रीमान्?''

''अभी नगर की अवस्था अव्यवस्थित है। मैं शीघ्र ही सुधार कर संसद् बुलाऊँगा।''

उसी सायंकाल लक्ष्मीकांत एक विशेष लक्ष्य से विनोद-भवन पहुँचा। उपद्रव प्रारम्भ के पश्चात् आज पहला दिन था कि विनोद-भवन खुला था। बहुत से दास-दासियाँ भाग गए थे। इस पर भी भवन के भीतर सफाई तथा प्रबंध बहुत अच्छा कर दिया गया था। विनोद-भवन में आने वालों की संख्या कम थी, परंतु आए हुओं में अधिकतर क्षत्रिय लोग थे। वे अपने पदों से च्युत हो कोई स्थान चाहते थे, जहाँ एकत्रित हो पुनः अपनी परिस्थिति पर विचार कर सकें।

नगर-वधू ने भवन खोलने से पूर्व अपने सेवकों द्वारा यह सूचना नगर के प्रतिष्ठित क्षत्रियों और ब्राह्मणों को भेज दी थी कि विनोद-भवन राज्याज्ञा से खुल रहा है। भवन में आने वाले शिष्ट लोगों को आमंत्रित किया जाता है।

जब लोग एकत्रित हुए तो वैशाली की एक सप्ताह में हुई दुर्दशा पर विचार-विनिमय होना आरंभ हो गया। मृदुला और उसकी सुंदर दासियाँ उन दर्शकों की आवभगत कर रही थीं। मद्य और मांस से सत्कार हो रहा था। इस समय एक ने कह दिया, ''देवधर्मा के साथ भारी अन्याय हो गया है।''

किसी दूसरे ने कहा, ''ब्राह्मण की हत्या वैशाली का सर्वनाश किए बिना नहीं रहेगी।''

एकाएक मृदुला उस आगार में आई और ऊँचे स्थान पर खड़े हो घोषणा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करने लगी, "मैं नहीं जानती कि इसके क्या अर्थ हैं। आप लोग इसको अच्छा समझेंगे अथवा बुरा, यह भी मुझे पता नहीं। इस पर भी एक सूचना अभी मिली है। वह मैं आपको सुनाना चाहती हूँ। मेरा एक विश्वस्त सेवक यह समाचार लाया है कि श्री देवधर्मा, भूतपूर्व गणपति, अभी जीवित हैं। वह वैशाली के उत्तर द्वार के बाहर शिव-मंदिर में देखे गए हैं।"

मृदुला जानती थी कि इस समाचार को सुन उपस्थित लोगों को हर्ष होगा और वे लोग अपनी उदासीनता छोड़ एक उद्देश्य विशेष से विचार करने लगेंगे। ऐसा ही हुआ। लोग मृदुला के चारों ओर एकत्रित हो गए और उससे प्रश्न पूछने लगे। मृदुला ने एक सेवक को उनके सम्मुख लाकर खड़ा कर दिया।

मृदुला यह कर बाहर चली गई और ऊपर की छत पर अपने आगार में जा पहुँची। वहाँ देवधर्मा चिंताग्रस्त बैठा था। मृदुला ने बताया, "जब मैंने आपके जीवित होने की घोषणा की तो उपस्थित लोगों के मुख देदीप्यमान हो गए और वे कंजन से भाँति-भाँति के प्रश्न पूछ रहे हैं।"

देवधर्मा ने कहा, "ठीक है। अभी आज इतना ही पर्याप्त है। कल और घोषणा करूँगा। अभी नीचे चली जाओ और देखो कि लोग कहाँ तक जाने के लिए तैयार हैं।"

मृदुला पुनः जब सम्मिलित लोगों में आई तो वे सब एक स्थान पर एकत्रित हो शिव-मंदिर में जाने का विचार कर रहे थे। मृदुला ने उनकी बात समझ पूछा, "किस प्रयोजन से आप जाना चाहते हैं वहाँ।"

"श्री देवधर्मा को ढूँढ़ निकालने के लिए।"

"जिससे उन्हें मृत्युदंड मिल सके?"

"बहुत मृत्युदंड हो चुके। हम अभी तक चुप थे, केवल इस कारण कि हमें सूझ नहीं पड़ता था कि किसके नेतृत्व में एकत्रित हों। हम उन्हें चोरी-चोरी यहाँ लाएँगे और उनको पुनः गणपति बनाने के लिए सिर-धड़ की बाजी लगा देंगे।"

मृदुला का कहना था, "हाँ, आप लोगों को नगर की अवस्था सुधारने के लिए कुछ तो यत्न करना चाहिए।"

इस समय लक्ष्मीकांत वहाँ आ गया। उसे लोगों से देवधर्मा के जीवित होने के समाचार मिलने का पता चला गया। इससे उसने हँसी में बात उड़ाते हुए कहा, "मृदुला देवी को स्वप्न आया प्रतीत होता है।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक ने कहा, ''कंजन कहता है।''

''वह झूठा है।''

पश्चात् लक्ष्मीकांत ने मृदुला देवी से कहा, ''मैं देवी से बहुत आवश्यक बात करने आया हूँ।''

''हाँ, कर सकते हैं श्रीमान्!''

''यहाँ सबके सम्मुख नहीं।''

''तो आइए। मैं आपको एकांत में ले चलती हूँ।''

मृदुला लक्ष्मीकांत को उस आगार में ले गई, जिसमें एक समय महाप्रभु को ले गई थी। वहाँ सत्कार सहित बिठाकर पूछने लगी, ''आज्ञा करिए।''

''बौद्ध-मंडल के लोग यह माँग उपस्थित कर गए हैं कि विनोद-भवन बंद कर दिया जाए और मृदुला देवी को अपमानित कर नगर से निकाल दिया जाए।''

''फिर?''

''मैं भी बौद्ध उपासक हूँ।''

''परंतु आप गणपति हैं। न्याय के संरक्षक हैं। आपका बौद्ध होना इससे दूसरे स्थान की बात है।''

''जब देवधर्मा गणपति था तो बौद्धों के साथ बहुत बुरा व्यवहार होता था।''

''मुझे इस बात का ज्ञान नहीं।''

''पूर्ण वैशाली जानता है। इसी कारण सब उतावले हो देवधर्मा को मार डालने के लिए एकत्रित हो गए थे। मैं तो समझता हूँ कि वह मर गया है। यदि वह कहीं जीवित है और नगर के लोगों के हाथ चढ़ गया तो वैसा उपद्रव फिर खड़ा हो जाएगा, जैसा उसके पद-त्याग के दिन हुआ था।''

''हो जाए। मेरा इससे कोई संबंध नहीं।''

''परंतु तुम्हारा अपने साथ तो संबंध है?''

''निस्संदेह, और मैं समझती हूँ, मैंने आज तक कोई ऐसा काम नहीं किया, जिसका दंड एक स्त्री को अपमानित किया जाना हो।''

''तुमने महाप्रभु को मद्य पिलाकर अपमानित किया था।''

''इसका क्या प्रमाण है, श्रीमान्! महाप्रभु यहाँ आए तो मुझसे पृथक् में बातचीत करने को बोले। मैं उन्हें इसी आगार में ले आई। वे यहाँ का वातावरण देख वासना से भर गए। उन्होंने मद्यपान किया, नर्तकी से वीणा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुनी और फिर मेरी एक दासी से प्रेम-प्रलाप किया। जब मध्यरात्रि का घंटा बजा तो उन्हें यहाँ से भेज देना आवश्यक था। वे मद्य से सर्वथा अचेत पड़े थे। उन्हें उठवाकर विहार में भेज देने का विचार था, परंतु यह विचार कर कि उनकी अवस्था को देख उनके साथी क्या कहेंगे, उन्हें यहाँ विनोद-भवन के बाहर ही लिटा दिया गया। अब श्रीमान! समझ सकते हैं कि इसमें मेरा क्या दोष है?''

इस समय आगार के बाहर भारी भाग-दौड़ आरंभ हो गई। मृदुला ने विस्मय में आगार के द्वार की ओर देखा। एक दासी भीतर आने की स्वीकृति माँग रही थी। ''हाँ, क्या बात है?'' मृदुला ने पूछा।

दासी ने भीतर आ कहा, ''गणपति महाराज को उनके भवन से बुलावा आया है।''

''कौन आया है?''

''नाम नहीं बताया। कह रहे हैं कि नगर को चारों ओर से अवध की सेना ने घेर लिया है।''

मृदुला और लक्ष्मीकांत दोनों विस्मय में दासी का मुख देखते रह गए। मृदुला का हृदय हर्ष से बल्लियों उछल रहा था और लक्ष्मीकांत का दिल बैठता जाता था। लक्ष्मीकांत उठ दीवार का आश्रय ले खड़ा हो गया और कहने लगा, ''यह क्या मूर्खता है? अयोध्या को हमारे अपने कामों में हस्तक्षेप करने का अधिकार नहीं है।'' मृदुला भी उठ खड़ी हुई और बोली, ''श्रीमान्‌जी! अब आप जाना चाहेंगे। विनोद से अधिक आवश्यक कार्य आपके लिए बन गया है।''

इतना कह मृदुला जाने लगी तो लक्ष्मीकांत ने कहा, ''रात को सेट्ठी-पुत्र इस भवन को आग लगा भस्म कर देना चाहते हैं। मैं तुम्हें यह कहने आया था कि तुमको यदि जीवनप्रिय है तो मध्यरात्रि से पूर्व यह भवन छोड़ मेरे भवन में आ जाना चाहिए। मैं कहने तो कुछ और भी आया था, परंतु अब समय नहीं। फिर मिलूँगा।''

''धन्यवाद'', कह मृदुला आगार से निकल गई। बाहर बड़े आगार में यह समाचार पहुँच चुका था कि नगर पर अवध की सेना ने आक्रमण कर दिया है।

जब गणपति विनोद-भवन से चला तो लोगों का विचार हो गया कि यदि देवधर्मा यहाँ होता तो नगर को विनाश से बचाया जा सकता था। मृदुला

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ने कहा, "हम लोगों को, जो वैशाली का भला चाहने वाले हैं, अवध सेना का नगर में स्वागत करना चाहिए। अवध के महामात्य श्री देवधर्मा के मित्र हैं और अवध की राजमाता लिच्छवियों की संतान हैं। इससे उनसे हमें अपनी भलाई की आशा करनी चाहिए।"

सेना को देखते ही वैशाली के नगर-पालक ने नगर के द्वार बंद करा दिए। अवध के सीना ने भानुमित्र की योजना के अनुसार पिछली रात गंगा के इस पार डेरा डाला था और सायंकाल वैशाली नगर को घेर लिया था।

नगर के भीतर के लोगों में उत्साह हीनता बढ़ गई थी और लक्ष्मीकांत यह जानता था। एक बात उसकी समझ में नहीं आई। वह थी अवध के महाराज की आक्रमण के लिए स्वीकृति। उसका विचार था कि पद्मावती के होते वैशाली पर आक्रमण नहीं होगा।

सबसे पहला काम जो उसने किया, वह लोगों में एक घोषणा करवाना था। उसका विचार था कि इससे लोगों में उत्साह और एकता बढ़ जाएगी। घोषणा यह थी, "नागरिकों और सैनिको! अवध हमारा प्राचीन शत्रु है। वहाँ राजा प्रजा की इच्छा के विरुद्ध राज्य करता है। इस कारण वह समझ नहीं सकता कि प्रजा की शक्ति कितनी बड़ी है। हम अपने घर के स्वयं स्वामी हैं। हम परस्पर लड़ें अथवा हँसें, दूसरों के विचार तथा हस्तक्षेप का विषय नहीं। हमारे घर में झगड़ा देख हमारा शत्रु समझा है कि हम दुर्बल हो गए हैं और सुगमता से परास्त हो जाएँगे।

"आओ, हम इस बात को सिद्ध कर दें कि ये राजा लोग प्रजा के राज्य का बल नहीं जानते। हम घर में पाँच और सौ हो सकते हैं, परंतु शत्रु के लिए एक सौ पाँच ही रहेंगे।"

इस घोषणा का प्रभाव जनता पर कुछ नहीं हुआ। लोग घोषणा सुनते थे और मार्ग-तटों पर पेड़ों से लटकते शरीरों को, जो मृत्यु-दंड पाए हुए अभागों के थे, देख लौट जाते थे वे मन में यह सोच रहे थे कि अवध की सेना जब नगर में प्रवेश करेगी तो वे श्वेत पताका ले उसका स्वागत करेंगे। यह घोषणा सैनिकों को भी सुनाई गई। वे नियंत्रण में बँधे हुए नगर की रक्षा के लिए नगर की प्राचीर पर खड़े थे, परंतु परस्पर पूछते थे, "देवधर्मा को सेट्ठियों ने क्यों मार डाला? जब नगर के संरक्षक उसकी रक्षा कर रहे थे तो उन्हें वहाँ से हटा क्यों दिया गया? हमारे पूर्व सेनापति को बंदी क्यों बनाया उस पाप का दंड ही देने को तो अवध की सेना आई है।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रात-भर अवध की सेना नगर पर आक्रमण करने के लिए उचित मोर्चे बनाती रही। महामात्य स्वयं सेना में घूम-घूमकर सैनिकों का उत्साह बढ़ा रहा था। वह सैनिकों से कहता था, ''मैंने राजमाता को वचन दिया है कि एक सप्ताह में वैशाली को दुष्टों के पंजे से छुड़ा दूँगा।''

प्रातःकाल तक सेना आराम कर ऐसे स्थानों पर जमा हो गई थी, जहाँ से आक्रमण आरंभ किया जा सकता था।

भानुमित्र की आज्ञा थी कि पहले काठ की प्राचीर को आग लगा दी जाए। पश्चात् उस आग को बुझाने वालों पर तीरों की वर्षा की जाए। इस प्रकार जब प्राचीर जलकर राख हो जाए तो नगर के चारों ओर से आक्रमण कर दिया जाए। जो सेना की टुकड़ी सबसे प्रथम नगर के चौमुखे पर पहुँचेगी, वह भारी पारितोषिक पाएगी।

प्रातःकाल जब सूर्य लाल-लाल आँखों से वैशाली पर देखता हुआ उदय हुआ तो प्राचीर पर खड़े सैनिकों ने देखा कि विचित्र प्रकार के यंत्र नगर के चारों ओर गाड़े गए हैं। उन्होंने सुन रखा था कि यूनान देश में शत्रु की सेना पर आग बरसाने के यंत्र बनाए गए हैं। इनको भी वही यंत्र समझ सैनिक डर रहे थे।

इस समय सिर से पाँव तक लौह वस्त्र पहने एक सुभट्ट नगर के उत्तरी द्वार के सम्मुख आया। उसके हाथ में श्वेत पताका थी। द्वार पर पहुँच उसने अपने भाले की मूठ से फाटक पर प्रहार किया, तो ड्योढ़ी पर खड़े सैनिकों ने पूछा, ''क्या है?''

''अवध महामात्य का दूत हूँ। वैशाली के गणपति से मिलने आया हूँ।''

''ठहरो।'' इतना कह सैनिक पीछे हट गए। लगभग दो घड़ी के पश्चात् फाटक में से खिड़की खोली गई और दूत को भीतर कर लिया गया। पश्चात् उसे सैनिकों से घेरकर गणपति-भवन में ले जाया गया। वहाँ पूर्ण मंत्रिमंडल उपस्थित था।

उसने आदर सहित नमस्कार कर कहा, ''श्री 108 अवध-महिषी राजमाता के महामात्य श्रीमान् भानुमित्र की आज्ञा से यहाँ एक पत्र लेकर उपस्थित हुआ हूँ। साथ ही उनसे एक मौखिक संदेश लाया हूँ।''

''तुम्हारे दूत होने का प्रमाण-पत्र तो होगा?'' गणपति लक्ष्मीकांत का प्रश्न था।

''हाँ श्रीमान्!'' यह कह दूत ने अपने लौह उत्तरीय के नीचे से एक लपेटा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हुआ पत्र गणपति के हाथ पर रख दिया।

पत्र पर अवध-राज्य की मुहर थी। गणपति ने पत्र खोला और ऊँचे-ऊँचे पढ़कर मंत्रिमंडल को सुना दिया। लिखा था, ''पत्रवाहक उदयन हमारी सेना का एक वीर सुभट्ट है। हमने इसे वैशाली को अपनी सेना भेजने का कारण समझा दिया है। साथ ही हमने इसे समझा दिया है कि सेना वापस अवध कब और कैसे लौटेगी। इसे यह सबकुछ वैशाली के गणपति को बता देने का आदेश है।''

''हम आशा करते हैं कि उचित उत्तर इसी उदयन के हाथ भेज दिया जाएगा। यदि यह एक प्रहर के भीतर लौटकर नहीं आया तो जैसे हम राज्य के भीतर आए हैं, वैसे ही नगर में चले आएँगे और फिर अपनी इच्छा पूर्ण करेंगे।''

नीचे अवध की राजमाता के हस्ताक्षर थे।

इस धमकी की बात सुन लक्ष्मीकांत का मुख विवर्ण हो गया। यदि कोई दुर्बल आदमी धमकी दे तो सबल को क्रोध आता है और यदि बलवान धमकी दे तो दुर्बल भयभीत होता है। इस समय अवध बालों का हाथ ऊँचा था। समय प्राप्त करना लक्ष्मीकांत का मुख्य उद्देश्य था। इस कारण उसने पूछा, ''इस पर महाराज के हस्ताक्षर नहीं हैं। क्या हम जान सकते हैं कि वे कहाँ हैं?''

''वे रुग्ण हैं।''

''उनकी नई महारानी को राज्य-भार सँभालना चाहिए था?''

''वे महाराज की बन्दी हैं।''

''क्यों?''

''उन पर और उनके पिता सेठ सुमेर पर झूठ बोलने तथा धोखा देने का दोषारोपण है।''

''क्या झूठ बोला है उन्होंनें?'' गणपति ने उत्सुकता से पूछा।

''यह मेरे बताने की बात नहीं है।''

''हाँ, तो अवध-महिषी का संदेश भी दे दो।''

''महारानी जी का कहना है कि वैशाली में श्री लक्ष्मीकांत ने छल से गणपति का पद पाया है। उसने इस पद का दुरुपयोग किया है। क्षत्रियों पर अन्याय और अत्याचार किए हैं। लिच्छिवयों का, जिनकी महारानी जी संतान हैं, समूल नाश करने का प्रयत्न श्री लक्ष्मीकांत ने किया है। एक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पड़ोसी राज्य में जो अवध महाराज का ननिहाल है, इस प्रकार का अन्याययुक्त आचरण होते देख चुप नहीं रहा जा सकता। इस कारण महारानीजी ने यह सेना यहाँ शांति स्थापित करने के लिए भेजी है।''

''महारानीजी की आज्ञा है कि नगर के द्वार खोल दिए जाएँ। अवध के महामात्य को सेना-सहित नगर पर अधिकार जमाने का अवसर दिया जाए, जिससे वह यहाँ की संसद् का निष्पक्ष निर्वाचन कराकर, संसद् से निर्वाचित गणपति के हाथ में यहाँ की राज्य-सत्ता सौंप सकें। पश्चात् हमारी आज्ञा है कि महामात्य और अवध की सेना, बिना किसी प्रकार का खर्चा वैशाली से लिए, वहाँ की शांति और व्यवस्था यहाँ के नागरिकों को उनकी एक पुत्री की ओर से उपहार के रूप में देकर चली जाए।''

''यदि हम महारानीजी की यह बात न मानें तो?''

''तो उनका आदेश है कि नगर पर आक्रमण कर इसे जीत लिया जाए। श्री लक्ष्मीकांत तथा उनके साथियों को बंदी बना लिया जाए। उन सब लोगों को भी बंदी बना लिया जाए, जिन्होंने अन्याययुक्त आचरण किया है अथवा चलाया है। पश्चात् व्यवस्था स्थापित होने पर निष्पक्ष न्यायाधीशों के सम्मुख इन बंदियों पर अभियोग चलाया जाए और उचित दंड दिलाया जाए।''

महारानी का यह आदेश दूत ने इतने गंभीर, स्पष्ट और उच्च स्वर में कहा कि मंत्रिमंडल के लोग भयभीत हो एक'दूसरे का मुख देखने लगे। लक्ष्मीकांत ने दूत से कहा, ''तो हमारा उत्तर महारानीजी को दे दो। उन्हें कह देना कि उनका वैशाली में सेना भेजना एक-दूसरे राज्य में अनुचित हस्तक्षेप है। यह वैशाली के लोग सहन नहीं कर सकते।''

''महारानी यह हस्तक्षेप करना अपना अधिकार समझती हैं। अधिकारों का आधार उद्देश्यों की श्रेष्ठता पर निर्भर है और योग्यता होने पर अधिकार प्राप्त हो जाते हैं।''

''अवध-महिषी के उद्देश्य अच्छे हैं या बुरे, इसका हमसे कोई संबंध नहीं। वैशाली स्वतंत्र है। उसके कार्यों में कोई दूसरा राज्य हस्तक्षेप नहीं कर सकता।''

''स्वतंत्रता का अर्थ आत्मघात कर लेने का अधिकार नहीं हो सकता।''

''पर हम आत्मघात नहीं कर रहे।''

''आपने बिना न्यायालयों से अभियोग चलाए सहस्रों लोगों को मृत्यु के घाट उतार दिया है। देखिए श्रीमान्! यदि आप अवध-महिषी से लगाए दोषों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को ठीक समझते हैं तो अवध की सेना को भीतर आने दीजिए और उनसे अपने कुकर्मों के लिए क्षमा-याचना करिए और यदि आप अपने को निर्दोष समझते हैं तो मैं जाता हूँ और अवध-महिषी से आपका उत्तर निवेदन कर देता हूँ; परंतु इतनी चेतावनी मैं दे देना चाहता हूँ कि मेरे जाने से एक प्रहर के भीतर भी यदि आपने नगर-द्वार नहीं खोले तो आज रात तक आपके नगर की काठ की प्राचीर जलकर भस्म हो जाएगी और आपके नागरिकों को सिर छिपाने को स्थान नहीं मिलेगा।''

''दूत! तुम जा सकते हो। कह सकते हो कि महारानी का दावा कि उनको हमारे घर के मामलों में हस्तक्षेप करने का अधिकार है, हम नहीं मानते।''

दूत उठा और आदर से नमस्कार कर चल पड़ा। वह नगर-द्वार तक वैशाली के सैनिकों द्वारा घिरा हुआ पहुँचा दिया गया और पश्चात् नगर के बाहर कर दिया गया।

: 12 :

दूत के चले जाने के उपरांत गणपति और मंत्रिगण परस्पर विचार करने लगे। सब लोग भयभीत थे। सबने कहा कि अवध की राजमाता ने जब उन सबको क्षमा कर देने का वचन दिया है तो द्वार खोल दिए जाएँ और निर्वाचनों में पुनः शक्ति प्राप्त करने का यत्न किया जाए।

लक्ष्मीकांत अकेला युद्ध के पक्ष में था। जब सब मंत्री अवध से विग्रह के विरुद्ध हो गए तो लक्ष्मीकांत ने कहा कि इस पत्र का उत्तर दे देना चाहिए। उत्तर लिखकर लक्ष्मीकांत के हस्ताक्षरों से अवध-महिषी राजमाता को भेज दिया गया। पत्र में लिखा था—

''महारानीजी ने जो आश्वासन मौखिक रूप में अपने दूत के द्वारा भेजे हैं, वे ये हैं—

''(1) अवध के महामात्य और अवध-सेना यहाँ व्यवस्था स्थापित कर लौट जाएँगे। (2) महामात्य संसद् का नया निर्वाचन करेंगे। (3) किसी पर किसी प्रकार का अभियोग नहीं चलाया जाएगा।

''इन आश्वासनों पर महामात्य अथवा महारानीजी स्वयं हस्ताक्षर कर भेज दें तो नगर के द्वार खोल दिए जाएँगे और वैशाली की जनता अवध की सेना को मित्र-राष्ट्र की सेना मान स्वागत करेगी।''

दूत पत्र लेकर गया तो लक्ष्मीकांत ने सेना के नाम यह आज्ञा दे दी कि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सभी सैनिक अपने सरकारी वस्त्र उतार जनता में मिल जाएँ और अवध की सेना के नगर में आ जाने पर चुपचाप नगर के बाहर निकल गंगापुरी से बीस मील पश्चिम की ओर खेतावाड़ी ग्राम में एकत्रित हो जाएँ।

यह आज्ञा गुप्त रूप से सब सेनानायकों के पास भेज दी। साथ ही द्वारपालों को आज्ञा दे दी कि तीसरा प्रहर आरंभ होते ही नगर के सब द्वार खोल दिए जाएँ और अवध की सेना को बेरोकटोक भीतर आने दिया जाए।

ये सब आज्ञाएँ देकर उसने अपने परिवार के सब लोगों को भेष बदल साधारण रथों पर सवार हो, एक-एक, दो-दो करके नगर से बाहर निकल जाने की राय दी। वह स्वयं यह प्रबंध कर विनोद-भवन जा पहुँचा। वहाँ क्षत्रिय लोगों ने एक भारी मोर्चो बना लिया था।

लक्ष्मीकांत वहाँ गया तो पहले तो लोगों ने उसे पकड़बंदी बनाने का विचार किया, परंतु देवधर्मा ने आज्ञा दी कि इसे आने दो। लक्ष्मीकांत को एक घड़ी-भर द्वार पर प्रतीक्षा करनी पड़ी तो वह आगबबूला हो गया और द्वारपालों को डाँटने लगा कि उसे रोका क्यों जा रहा है। जब तक भीतर से संकेत नहीं हुआ, उसे भीतर नहीं जाने दिया गया।

भीतर पहुँच उसने उस दासी को डाँटा, जो वहाँ पर देखभाल कर रही थी, ''क्यों जी! तुम्हारी स्वामिन् का मस्तिष्क इतना बिगड़ गया है कि वैशाली के गणपति को भी यहाँ स्वीकृति लेनी आवश्यक हो गई है?''

''श्रीमान्! यहाँ अब स्वामिन् नहीं हैं। उनका स्थान इन क्षत्रियों ने ले लिया है।''

''मृदुला देवी यहाँ नहीं हैं?''

''नहीं, श्रीमान्!''

''कहाँ गई है?''

''मैं नहीं जानती।''

''तुम झूठ बोलती हो।'' इतना कह लक्ष्मीकांत आगे चला गया और उस आगार में जा पहुँचा, जहाँ वह मेहमानों का स्वागत करती थी। वहाँ एक और दासी विद्यमान थी। आगार खाली था, ''कहाँ है तुम्हारी स्वामिन्?''

''मैं नहीं जानती, श्रीमान्!''

''मैं यह जानना चाहता हूँ कि किससे पूछने में, कि मैं भीतर आऊँ अथवा नहीं, इतनी देरी लगी है?''

''यहाँ के अध्यक्ष श्री देवधर्माजी से।''

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"देवधर्मा? कहाँ है वह?"

"ऊपर की छत पर अपने सहायकों से राय कर रहे हैं।"

"उसे बुलाओ।"

"हमें वहाँ जाने की स्वीकृति नहीं है।"

"तो किसको आज्ञा है? मैं स्वयं जाता हूँ।"

इतना कह लक्ष्मीकांत ऊपर की छत पर जाने के लिए सीढ़ियों की ओर बढ़ा। परंतु वहाँ दो प्रहरी नंगे खड्ग लिए खड़े दिखाई दिए। लक्ष्मीकांत ने वहाँ पहुँच कहा, "एक ओर हट जाओ।"

"क्या काम है?"

"मैं मृदुला देवी से मिलना चाहता हूँ।"

"वे ऊपर नहीं हैं।"

"कहाँ हैं?"

"श्री देवधर्मा जानते हैं। उन्होंने अपने सहायकों से इस भवन पर अधिकार कर लिया है।"

"मैं देवधर्मा से मिलूँगा।"

"हम सूचना भेज देते हैं।"

"शीघ्रता करो। मेरे पास समय कम है।"

एक प्रहरी सीढ़ियों के ऊपर चढ़ चला गया और लक्ष्मीकांत वहीं खड़ा रह गया।

देवधर्मा स्वयं नीचे आया और लक्ष्मीकांत को सीढ़ियों के नीचे खड़े देख बोला, "ओह! गणपतिजी हैं? आज्ञा करिए सेवक को, क्यों स्मरण किया है?"

"मैं मृदुलादेवी से मिलना चाहता हूँ।"

"वे यहाँ नहीं हैं।"

"कहाँ गई है?"

"नगर की स्त्रियों को एकत्रित करने, जिससे वे लोगों में प्रचार कर सकें कि अवध से युद्ध व्यर्थ है।"

लक्ष्मीकांत मुस्कराया और बोला, "मैं उसे ही ढूँढ़ रहा था। तो अब मैं उसे नगर में ढूँढ़ लूँगा।"

"पर गणपति तो मेरे बंदी हो गए हैं।"

"तुम कौन हो?"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

''मैं वैशाली के नागरिकों का प्रतिनिधि हूँ और अवध के सेनापति के पास, यहाँ के क्षत्रियों की सहायता लेकर, जा रहा हूँ।''

लक्ष्मीकांत फिर मुस्कराया और पूछा, ''मुझे क्यों बंदी किया है?''

''तुमने मुझे मरवाने का षड्यंत्र किया था।''

''अवध के महामात्य ने मुझे क्षमा प्रदान कर दी है।''

''पर यहाँ तो राज्य मेरा है, अवध के माहमात्य का नहीं।''

इस समय मुख्य द्वार की ओर से मृदुला कुछ अन्य स्त्रियों को साथ लिए हुए आई और दूर से ही बोली, ''पिताजी!''

''पिताजी?'' लक्ष्मीकांत विस्मय में कभी मृदुला का, कभी देवधर्मा का मुख देखने लगा। मृदुला ने लक्ष्मीकांत को वहाँ खड़े देख कहा, ''ओह! वैशाली के गणपतिजी! शायद यहाँ विनोद के लिए आए हैं?''

इसके पश्चात् मृदुला ने समाचार सुना दिया, ''पिताजी! नगर के द्वार खुल गए हैं और अवध सेना चारों ओर से भीतर आ रही है। हम जा रही हैं।''

''कहाँ?'' देवधर्मा ने पूछा।

''अवध के महामात्य की, नगर की स्त्रियों की ओर से, आरती उतारने।''

''और हम भी चल रहे हैं, महामात्य के लिए इस लक्ष्मीकांत का उपहार लेकर।''

देवधर्मा ने अपने समीप खड़े प्रहरियों को कहा, ''इस द्रोही के हाथ-पाँव बाँध लो और ले चलो इसे रथ में डालकर भानुमित्र को भेंट के लिए।''

मृदुला आज बहुत प्रसन्न थी। उसके मन का इष्टदेव आज पुनः विजयी हो इस नगर में आ रहा था और वह नगर की स्त्रियों की नेत्री बन उसकी आरती उतारने जा रही थी।

नगर के चौमुखे पर देखते-देखते एक मंच बना दिया गया था। ऐसा प्रबंध किया गया था कि महामात्य का रथ इस मंच के सम्मुख से गुजरे और नगर की प्रमुख-प्रमुख स्त्रियाँ गाकर महामात्य की आरती उतारें सोने के थाल और चाँदी क दीपकों में घी जलाकर पुष्प, पत्र और पुष्प मालाओं से वैशाली के विजेता का वैशाली के नागरिकों ने स्वागत किया।

अवध के महामात्य ने वैशाली पर अधिकार जमा लिया और उसी दिन यह आज्ञा दे दी कि नगर से बाहर कोई न जा सके। यदि कोई जाने का यत्न करे तो पकड़ लिया जाए। बहुत-से सेट्ठी लोग नगर से भाग जाना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चाहते थे, परंतु इस आज्ञा के कारण ऐसा कर नहीं सके।

सैकड़ों की संख्या में लोग बाहर जाते पकड़ लिए गए, जिनसे वार्त्तालाप करने पर पता मिला कि लक्ष्मीकांत नगर के बाहर सेना एकत्रित कर अवध के लोगों को हानि पहुँचाना चाहता था।

: 13 :

लक्ष्मीकांत पर राज्य का बहुत-सा कोष ले भाग जाने का भी अभियोग था। इससे उसे बंदीगृह में रख दिया गया।

पाँच दिन तक देवधर्मा और भानुमित्र नगर में व्यवस्था स्थापित करने में लगे रहे। पश्चात् संसद् का चुनाव हुआ और नई संसद् ने पुनः देवधर्मा को गणपति निर्वाचित किया।

इस समय भानुमित्र को अवकाश मिला। उसने अवध की सेना के बहुत से अंश को अवध लौट जाने को कह और एक सुदृढ़ परंतु छोटी-सी सेना की टुकड़ी को वहीं छोड़ जाने का आयोजन कर दिया।

जाने से पूर्व वह मृदुला देवी से मिलना चाहता था। जब देवधर्मा ने पूछा, "महामात्य कहाँ जा रहे हैं?"

महामात्य का उत्तर था, "वैशाली के तीर्थ-स्थान विनोद-भवन के दर्शन करने तथा वहाँ की देवी से आशीर्वाद लेने।"

देवधर्मा ने कहा, "संसद् में मेरे गणपति निर्वाचित होने के पश्चात् पहला प्रार्थना-पत्र मृदुला देवी का आया। उसमें नगर-वधू ने शेष तीन मास के काल के लिए अपने पद से मुक्ति माँगी थी। मैंने स्वीकार कर लिया है और नई नगर-वधू के चुनाव की घोषणा कर दी है।"

"तब तो मेरा उसके पास जाना और भी आवश्यक हो गया है।"

भानुमित्र रथ ले विनोद-भवन जा पहुँचा। उसने वहाँ ताला लगा पाया। उसके रक्षकों से पूछने पर पता मिला कि देवी का पता नहीं कि कहाँ गई हैं। कल से वे दिखाई नहीं दीं। जाने से पूर्व उन्होंने अपना सब सामान यहाँ नाचने-गाने वाली लड़कियों को बाँट दिया था। स्वयं सर्वथा साधारण सूती वस्त्र पहन भूषण-रहित हो यहाँ से चली गई हैं।

भानुमित्र ने समझा कि शायद देवी भिक्षुणी हो गई है। इससे चिंतित हो वहाँ से लौट देवधर्मा को सब वृत्तांत से परिचित कर, मृदुला को ढूँढ़ निकालने की प्रार्थना की।

इसके पश्चात् भानुमित्र एक वेगगामी रथ पर सवार हो अयोध्या को चला

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गया। अयोध्या में राजमाता को वैशाली की पूर्ण परिस्थिति से परिचित रखा गया था। इस विजय के पश्चात् भानुमित्र का विचार था कि अयोध्या के महाराज और रानी पद्‌मावती की समस्या को सुलझाने का यत्न करे। इस कारण अयोध्या में पहुँच वह सीधा राजमहल में पहुँचा। वह अपने घर नहीं गया।

राजमहल में पहुँच राजमाता को जब वैशाली की व्यवस्था का वर्णन सुना चुका तो भानुमित्र ने महाराज तथा महारानी पद्‌मावती के विषय में बात. चीत आरंभ कर दी। भानुमित्र ने पूछा, "महारानीजी! महाराज के कहने में कितना तत्त्व है कि पद्‌मावती माता बनने वाली हैं।"

"यह सत्य है।"

"तब तो समस्या अति विकट हो जाएगी। आप महाराज को यहाँ बुलाएँ।"

दासी गई और महाराज को बुला लाई। पहले की भाँति पद्‌मावती उसके साथ आई। महामात्य ने हाथ जोड़ प्रणाम किया और कहा, "महाराज के प्रताप से अवध की वैशाली पर विजय हुई है। यह विजय बिना एक भी तीर चलाए मिली है। साथ ही वैशाली की विजय के समय हमें विश्वस्त सूत्र से पता मिला है कि रानीजी सेठ सुमेर की लड़की नहीं हैं। पूर्ण अयोध्या को सेठ सुमेर ने धोखा दिया और वैशाली की गणिका रेखा की लड़की ने अवध की महारानी बन, सबकी आँखों में धूल झोंकी है। महारानीजी तथा इनके नकली पिता सेठ सुमेर पर अवध के न्यायालय में अभियोग चलना चाहिए।"

"हम इस बात की आवश्यकता नहीं समझते। हमने विवाह के समय एक-दूसरे का साथ न छोड़ने का वचन दिया है। ये मेरी धर्मपत्नी हैं। मेरे राज्य में इन पर अभियोग नहीं चल सकता।"

"मैं इस विषय में हठ नहीं कर सकता। अब आप अवध के स्वामी हैं। जो मन में उचित जान पड़े, वही कीजिए।"

इतना कह महामात्य गंभीर विचार में ग्रस्त राजप्रासाद से निकल अपने भवन में जा पहुँचा। वहाँ एक घटना घटी। भवन के द्वार पर ड्योढ़ी के बीच एक स्त्री केश फैलाए और साधारण श्वेत कपड़े पहने, धूनी रमाए बैठी थी। भानुमित्र ने समीप जा देखा कि वह मृदुला है। इससे प्रसन्न और विस्मित हो उसने पूछा, "मृदुला! क्या हो रहा है यहाँ?"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"मैं अपने इष्टदेव के मंदिर में धूनी रमाए बैठी हूँ।"

"पर क्या प्रचला तथा राका ने तुम्हें गृह के भीतर नहीं जाने दिया?"

"वे बेचारी तो जानती नहीं कि मैं कौन हूँ और क्यों आई हूँ। इस पर भी उन्होंने मेरी बहुत मिन्नत की कि मैं भीतर बैठ आपकी प्रतीक्षा करूँ। मैं स्वयं ही यहाँ बैठी हूँ। मंदिर में देवता न हों, तो कौन मंदिर में जाएगा!"

"उठो मृदुला देवी! यह व्यर्थ में मेरे आतिथ्य का अपमान कर रही हो। चलो भीतर।"

भानुमित्र ने मृदुला को बाँह से पकड़कर उठाया और उसे भीतर ले गया। भीतर जा भानुमित्र ने प्रचला और राका को बुलाकर कहा, "मृदुला देवी मेरी तीसरी पत्नी होंगी।"

प्रचला और राका हँस पड़ीं। साथ ही भानुमित्र ने एक बात और सुनाई, "मैं महामात्य-पद से त्याग-पत्र दे रहा हूँ और कल प्रातः यहाँ से सब कुछ ले विदेश चला जाऊँगा।"

प्रचला और मृदुला प्रसन्नवदन ही रहीं। राका को किंचित् दुःख अनुभव हुआ, परंतु यह उदासीनता अधिक काल तक नहीं रह सकी। वह भी अपनी सहेलियों के साथ जाने की तैयारी करने लगी।

रात-भर बहुत वेग से महामात्य के जाने की तैयारी होती रही। अपनी स्त्रियों, अपने माता-पिता और अपने भवन का सब सामान रथों पर लाद काशीजी के लिए रवाना कर दिया। पश्चात् अपने पद से त्याग-पत्र लिख महाराज की सेवा में उसे देने राजप्रासाद में जा पहुँचा। त्याग-पत्र भीतर भेजा तो महाराज स्वयं इससे उसका कारण पूछने चले आए। भानुमित्र को भीतर ले जाकर आदर से बिठाया और पूछा, "महामात्य! क्या कारण है कि अयोध्या से जाना हो रहा है?"

"मैं तो महाराज! पहले भी अवध की चाकरी के लिए उद्यत नहीं था। श्री देवधर्माजी के कहने पर ही तो कुछ वर्षों के लिए आपकी सेवा की है। मैं समझता हूँ कि किसी स्थान पर बैठकर अध्यापन-कार्य करूँगा।"

पद्मावती, जो महाराज के साथ उनकी छाया की भाँति लगी थी, कहने लगी, "मैं समझती हूँ कि महामात्य मेरे कारण जा रहे हैं। मैं एक गणिका की बेटी हूँ और महामात्य को उसे महारानी बनाना स्वीकार नहीं।"

भानुमित्र ने इसके उत्तर में केवल मुस्करा दिया। इस पर महाराज ने कहा, "मल्लिका से मेरा विवाह भूल थी। वह मुझसे प्रसन्न नहीं थी और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुझे उसका प्रेम पूर्ण रूप से प्राप्त नहीं हुआ। अवध की महारानी होते हुए भी उसके हृदय में एक काश्मीर के विद्यार्थी के लिए स्थान बना ही रहा।''

भानुमित्र ने महाराज की बात का भी कुछ उत्तर नहीं दिया और कहा, ''मैं अब जाने की आज्ञा चाहता हूँ।''

उत्तर महारानी पद्मावती ने दिया, ''हमें आपके जाने का भारी शोक है, परंतु अवध में अभी क्रीतदासों की प्रथा चली नहीं।''

: 14 :

महारानी पद्मावती के लड़का उत्पन्न हुआ और महाराज ने अवध भर में उत्सव मनाने कीं घोषणा कर दी।

राज्य की ओर से लाखों स्वर्ण-मुद्राओं का व्यय किया गया, परंतु जनता में वह उत्साह तथा उल्लास उत्पन्न नहीं हो सका, जो महाराज के विवाह के समय हुआ था। राजप्रासाद में दीपावली की गई, परंतु इसके उस भाग में, जिसमें राजमाता रहती थीं, दीपावली नहीं हुई, प्रत्युत् नित्य से अधिक अंधेरा रहा। इसको अयोध्या की जनता ने और महाराज तथा महारानी पद्मावती ने भी देखा।

पद्मावती ने महाराज से कहा, ''देखा है, महाराज! आपकी माता को भी अपने पौत्र के उत्पन्न होने पर हर्ष नहीं हुआ।''

''देख रहा हूँ, देवी!''

''तो इसका कारण पूछना चाहिए। यदि आप अपने प्रासाद में भी अपनी आज्ञा नहीं चला सकते तो देश में आपकी कौन सुनेगा?''

''वे मेरी माँ हैं। मैं उन पर आज्ञा नहीं कर सकता।''

''वे आपकी प्रजा भी हैं। राजकीय कार्यों में आप महाराज हैं और देश में सब रहने वाले आपकी प्रजा हैं।''

''देवी! कहती तो ठीक हो, परंतु मैं नहीं जानता कि क्या करूँ?''

''देखिए, मैं आपको बताती हूँ। राजमाता की विकृत मनोवृत्ति मल्लिका के प्रभाव से हुई है। मल्लिका भानुमित्र से प्रेम करती है। इससे उसे तो, जब तक भानुमित्र वापस नहीं आ जाता, संतोष नहीं होगा। इससे मैं समझती हूँ कि मल्लिका को राजमाता से पृथक् कर बंदी कर देना चाहिए।''

''इससे बहुत झगड़ा होगा, देवी!''

''यह वही स्त्री है, जिसने महाराज को आठ दिन तक बंदी रखा था।''

''तो देवी यह समझती हैं कि राजमाता ने मल्लिका के कहने से हमें बंदी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किया था?''

''निस्संदेह। यदि वह राजमाता के कान भरने वाली न होती, तो भानुमित्र का कहना क्यों माना जाता?''

महाराज को मल्लिका पर क्रोध चढ़ आया ओर दासी के हाथ मल्लिका को बुला भेजा।

राजमाता मल्लिका के साथ आना चाहती थीं, परंतु मल्लिका ने मना कर दिया और कहा, ''माताजी! आप निश्चिंत रहें। मैं आपके सुपुत्र का अनादर नहीं कर सकती।''

राजमाता ने कहा, ''बेटी! मुझे तो इससे विपरीत बात की आशंका है। कहीं तुम्हारा अनादर न हो जाए।''

''पति पत्नी का अनादर करे तो वह किसी दूसरे के हस्तक्षेप से बच नहीं सकती। माताजी! आप चिंता न करें। कुछ नहीं होगा।''

इस प्रकार राजमाता को सांत्वना दे वह महाराज और महारानी पद्मावती के सम्मुख जा उपस्थित हुई। वह खड़ी रही और उससे बैठने के लिए नहीं कहा गया। बात महाराज ने की, ''मल्लिका!''

''हाँ महाराज!''

''यह हमारे लड़का हुआ है।''

''देख रही हूँ, महाराज!''

''तो तुम्हें इसके जन्म से हर्ष नहीं हुआ?''

''संसार में इतने बालक नित्य उत्पन्न होते हैं, किस-किसके जन्म पर हर्ष मनाया जाए।''

''परंतु यह तो अवध का भावी महाराज है।''

''मुझे इस पर संदेह है, महाराज!''

''क्या अभिप्राय है तुम्हारे कहने का?'' पद्मावती ने कुछ डाँटकर कहा।

''क्रुद्ध होने की आवश्यकता नहीं, महारानीजी! यह लड़का अवध के लिए अशुभ है।''

''ओ डायन!'' पद्मावती ने क्रोध से उबलते हुए कहा।

महाराज ने पदमावती को हाथ के संकेत से शांत करते हुए कहा, ''मल्लिका! यह ईर्ष्यावश कह रही हो। देखो, तुमने प्रासाद के उस भाग में, जहाँ तुम रहती हो, दीपावली भी नहीं की। हम इसको पसंद नहीं करते।''

''आपका ऐसा समझना स्वाभाविक ही है, महाराज! परंतु जो कुछ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैं... ।''

पद्मावती ने इससे आगे उसे नहीं कहने दिया। उसकी बात को बीच में ही काटकर बोली, ''ओ दुराचारिणी! चुप रहो। तुम चाहे कुछ भी करो, भानुमित्र अवध में आ नहीं सकता और तुम्हारी कामना-पूर्ति नहीं कर सकता। ठहरो... ।''

मल्लिका आगार से बाहर को जा रही थी। उसका मार्ग, पूर्व आज्ञानुसार, दासियाँ रोककर खड़ी हो गईं। मल्लिका ने दासियों को धकेल वहाँ से निकल जाना चाहा, परंतु दासियों ने उसे पकड़ लिया और फिर पद्मावती की आज्ञा से उसके हाथ-पाँव बाँध दिए गए।

महाराज सब कुछ देखते हुए चुप बैठे रहे। उन्हें इस भविष्यवाणी से कि राजकुमार अवध-राज्य के लिए अशुभ है, असीम क्रोध चढ़ आया था और उन्हें, जो कुछ पद्मावती कर रही थी, उचित ही प्रतीत होता था।

: 15 :

राजमाता को राजप्रासाद में जो कुछ भी हो रहा था, अशुभ लक्षण वाला प्रतीत हुआ था। अब मल्लिका को बंदी बना किसी दुर्ग में भेज दिए जाने के समाचार से तो उनका दिल बैठने लगा। उनको यह भी सूचना मिली थी कि नगर में गणिकाएँ और संदिग्ध व्यक्तियों की संख्या में बढ़ोत्तरी से नगरवासी परेशान होने लगे हैं। उन्हें ऐसा प्रतीत होने लगा कि पद्मावती महाराज और पूर्ण अवध-राज्य को रसातल में लिए जा रही है।

भानुमित्र के अभाव में वह अन्य मंत्री-वर्ग पर आशा लगाने लगी थीं। उन्होंने भद्रसेन और वीरभद्र को बुलाया और उनसे राय की। भद्रसेन का कहना था कि वह और वीरभद्र दोनों भानुमित्र के साथ ही त्याग-पत्र देने वाले थे, परंतु भानुमित्र के कहने पर अभी तक मंत्री-पद पर नियुक्त हैं। भानुमित्र का कहना था कि उचित समय पर उनके हाथ में सेना और कोष होने से बहुत लाभ की बात होगी।

''तो मंत्रिगण, वह उचित समय आ गया है। तुमने सुना होगा कि मल्लिका का कितना अपमान किया गया है और उसे अब लक्ष्मणपुर के दुर्ग में बंदी बनाकर रखा गया है व उसको स्वतंत्र करने की मेरी माँग को ठुकरा दिया गया है।''

''यह अन्याय है, परंतु मैं राजमाताजी से पूछता हूँ कि राज्य में एक अधिकारी होना चाहिए, जिसके नाम पर कार्यवाही की जाए। महाराज को

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यदि अधिकारी माना जाए तो वे न तो महारानी पद्मावती का विरोध कर सकेंगे और न ही बड़ी महारानी को मुक्त कर सकेंगे। यदि आपको राज्य का अधिकारी माना जाए, तो आपको अपने पुत्र का विरोध करना पड़ेगा और फिर आपका कोई उत्तराधिकारी होना चाहिए, अन्यथा राज्य स्थायी नहीं हो सकेगा। एक तीसरी बात भी है, वह यह कि यहाँ पर गणराज्य स्थापित कर दिया जाए। इसके लिए जनता अभी संगठित नहीं है।''

इस समस्या को सुलझाने के लिए राजमाता ने कहा, ''मैं समझती हूँ कि एक गुप्त दूत यहाँ की पूर्ण परिस्थिति समझाकर, काशी में भानुमित्र के पास भेज दिया जाए और इस विषय में उसकी सम्मति माँगी जाए।''

वीरभद्र ने भानुमित्र को एक पत्र लिख दूत के हाथ भेज दिया। इसमें मल्लिका के साथ पद्मावती का व्यवहार, महाराज का पद्मावती के अधीन रहकर राज्य-कार्य करना, जनता की राज्य के कार्यों से उदासीनता और फिर राजमाता का आदेश और भद्रसेन की आपत्ति लिखकर भेज दी। साथ ही लिखा, ''प्रिय भानुमित्रजी! जब आप यहाँ महामात्य का कार्य करते थे तो कहा करते थे कि भारत-खंड की रक्षा और उसमें रहने वाले समाज की उन्नति के लिए यह राज्य, राजा, गणपति तथा मंत्री इत्यादि लोग हैं। इनको अपने प्रत्येक कार्य को उक्त दो उद्देश्यों की पूर्ति का ध्यान रखकर निश्चय करना चाहिए। अतएव अब समय है कि आप भी अपना कार्य उक्त उद्देश्यों का ध्यान करके निश्चय करें। आप हमें बताएँ कि हम क्या करें?''

इस पत्र के उत्तर की प्रतीक्षा होने लगी। वीरभद्र का अनुमान था कि उत्तर एक सप्ताह तक आएगा; परंतु पत्र भेजने के पाँचवें दिन सायंकाल के समय एक अश्वारोही ने अयोध्या के दक्षिण द्वार से घोड़े को सरपट दौड़ाते हुए प्रवेश किया। सांयकाल के धुँधले प्रकाश में द्वार पर खड़े प्रतिहारों ने उसे नहीं पहचाना। केवल उसकी अति द्रुत गति से घोड़े को नगर में ले जाने पर आपत्ति की और ऊँचे स्वर में पुकारकर कहा, ''धीरे हो! घोड़ा दौड़ाने वाले!''

अश्वारोही भानुमित्र स्वयं था। वह सीधा वीरभद्र के मकान के सम्मुख पहुँच, घोड़े को एक प्रतिहार के हवाले कर, दूसरे प्रतिहार से बोला, ''सूचना दो। काशी से कोई आया है।''

प्रतिहार ने भूतपूर्व महामात्य को पहचान लिया और झुककर नमस्कार की। भानुमित्र ने उत्तर में कहा, ''शीघ्रता करो।'' और फिर बिना प्रतीक्षा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किए वीरभद्र के पंथागार में जा पहुँचा। वहाँ वीरभद्र और भद्रसेन अपनी योजनाएँ बना रहे थे। वे सोच रहे थे कि भानुमित्र यदि यह कहेगा तो वे वह उत्तर देंगे और यदि गणराज्य स्थापित करना हुआ तो लोगों को इस परिवर्तन के लिए इस प्रकार तैयार करना होगा।

जब उन्होंने भानुमित्र को पंथागार में आते देखा तो अवाक् मुख खड़े रह गए। भद्रसेन ने विस्मय में पूछा, "आप? हम तो उत्तर की आशा कर रहे थे।"

भानुमित्र ने दोनों के बीच में बैठते हुए कहा, "तनिक अपने प्रतिहारों को आज्ञा दे दो कि मेरे आने की बात किसी से न करें।"

वीरभद्र पंथागार से बाहर गया और प्रतिहारों को उचित आज्ञा दे भीतर चला आया। भानुमित्र ने कहा, "आपका पत्र मिला और साथ ही वैशाली के गणपति का पत्र भी मिला। दोनों पत्रों को पढ़ मैंने आज रात ही अपनी योजना का प्रथम चरण उठाने का निश्चय कर लिया है।"

"आपका दूत तो अभी काशी में मुझसे उत्तर पाने की प्रतीक्षा में ठहरा हुआ है, परंतु मैंने स्वयं ही यहाँ आना उचित समझा है।"

"अब सुनो, मैं क्या करना चाहता हूँ। राजकुमार राजमाता के संरक्षण में अवध का राजा होगा। महाराज मदात्य रोग के रोगी मान, राज्य-कार्य के अयोग्य माने जाएँगे और मंत्रिमंडल में वर्तमान महामात्य 'शरभ' को बंदी बना, उस पर अयोध्या में राज्य पलटने का अभियोग चलाया जाना चाहिए। महारानी पद्मावती का भी यही परिणाम होगा।"

"बताओ, तुम लोग ऐसा चाहते हो?"

"हमें तो इसमें आपत्ति नहीं, यदि राजमाता राजकुमार की संरक्षिका बनना स्वीकार करें तो।"

"वह करेंगी, वीरभद्र! पूर्व इसके कि मेरा यहाँ आना विख्यात हो, मैं दो बातें चाहता हूँ। एक तो पाँच सौ सैनिकों को, जो परम विश्वसनीय हों, मेरे साथ कर, मेरे साथ तुम दोनों राजप्रासाद में चलो। पचास सैनिकों को अपने घर में यह आज्ञा दे खड़ा करो कि महामात्य शरभ को आते ही बंदी बना लें।"

सेनापति के घर के पिछवाड़े में सेना की एक चौकी थी। वहाँ से दो सेनानायकों को बुलाकर उचित आज्ञा दे दी गई।

इस काल में भानुमित्र ने हाथ-मुख धो उष्ण दुग्धपान किया। दो दिन से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसने कुछ खाया-पिया नहीं था। इस सब प्रबंध में दो घड़ी से अधिक नहीं लगा। वीरभद्र ने राजप्रासाद को जाने से पूर्व महामात्य शरभ को अपने निवासगृह में एक अत्यावश्यक कार्य के लिए बुलाया। वह आया तो उसे बंदी बना लिया गया। उसे वीरभद्र ने अपने गृह के आगार में बंद कर बाहर सैनिक बिठा दिए। तत्पश्चात सैनिकों और भानुमित्र को लेकर राजमहल को प्रस्थान कर दिया।

: 16 :

पद्मावती का शिशु चालीस दिन का हो चुका था और वह महाराज को कह रही थी कि एक सार्वजनिक राज्य-सभा करनी चाहिए, जिसमें राजकुमार को ले जाकर प्रजा को दर्शन कराने चाहिए। प्रजा को राजकुमार के चरणों में भेंट चढ़ानी चाहिए।

महाराज का उत्तर था कि राजकुमार तीन मास का होगा तो इसका नामकरण संस्कार किया जाएगा। उसी दिन लोगों को इसके दर्शन होंगे।

"तो महाराज! पुरोहितजी को बुलाकर इस शुभ कार्य का मुहूर्त निकलवाना चाहिए।"

महाराज ने महारानी का मुख चूमा और फिर बालक का मुख चूमकर कहा, "कल प्रातःकाल मैं यह निश्चय कर मंत्रिमंडल से इस उत्सव की घोषणा करवा दूँगा।"

इस समय एक दासी आई और बोली, "सेनापति वीरभद्र मिलने आ रहे हैं।"

उत्तर पद्मावती ने दिया, "उन्हें कहो, प्रातःकाल मिलेंगे।"

परंतु दासी के कहने के साथ ही वीरभद्र, भद्रसेन और भानुमित्र दस सैनिकों के साथ आगार में घुस आए। महाराज ने इतने लोगों को भीतर आते देख, क्रोख में खड़े हो कहा, "यह क्या पागलपन है?"

भानुमित्र ने सैनिकों को, जिन्होंने खड्ग नंगे कर लिए थे, आज्ञा दी, "इन दोनों को घेर लो।" महाराज पद्मावती के समीप खड़े हो गए और बोले, "मुझे मेरी तलवार ले लेने दो। मैं कायर नहीं हूँ। आपमें से किसी से भी द्वन्द्व-युद्ध करने को तैयार हूँ।"

भानुमित्र ने एक दासी को आज्ञा दी, "राजमाता को बुला लाओ।"

महाराज ने पुनः साहस कर कहा, "भानुमित्र! तुम कौन हो, जो यहाँ हमारे भवन में घुस आए हो?"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"महाराज! मेरा अधिकार अभी आपको विदित हो जाएगा। तनिक ठहरें।"

पद्मावती महाराज से अधिक समझदार थी। वह चुपचाप अपने बच्चे को गोद में ले, पहरेदारों को डाँटकर बोली, "हट जाओ।"

परंतु भानुमित्र ने कहा, "महारानीजी! ऐसे नहीं जा सकतीं। इस समय इस प्रासाद पर मेरा अधिकार है।"

"तुम्हारा अधिकार? तुम्हारी मौत तुम्हारे सिर पर खेल रही प्रतीत होती है।"

इतना कह वह दो सैनिकों के बीच में से निकल जाने का यत्न करने लगी। जैसा कि महारानी का अनुमान था, सैनिक महारानी को पकड़ने में संकोच कर रहे थे। इस पर वीरभद्र ने सेनानायक को कहा, "इस स्त्री को पकड़ क्यों नहीं लेते?"

इस प्रकार आज्ञा पाकर दो सैनिकों ने महारानी को भुजाओं से पकड़ लिया। सेनानायक ने शिशु को पकड़ वीरभद्र की गोद में दे दिया। महाराज लपककर पद्मावती को छुड़ाने दौड़े, परंतु कुछ सैनिकों ने उनको पकड़कर उनके हाथों को बाँध दिया।

इस समय राजमाता वहाँ आ पहुँचीं। वह भानुमित्र को वहाँ देख चकित रह गईं। भानुमित्र ने कहा, "माताजी! मंत्रिमंडल का यह निश्चय है कि महाराज किसी कारण उन्माद-रोग में ग्रसित हो गए हैं और राज्य करने के अयोग्य हो गए हैं। इनकी चिकित्सा के लिए प्रबंध किया जाएगा। जब तक ये स्वस्थ नहीं हो जाते, तब तक इस शिशु को राजा घोषित किया जाता है और आपको इस शिशु तथा राज्य का संरक्षक बनाया जाता है।"

इतना कहने पर वीरभद्र ने शिशु को राजमाता की गोद में दे दिया। महाराज ने माँ की ओर विनय के भाव में देखते हुए कहा, "माँ! यह सब व्यर्थ है। इस भानुमित्र के जाल में मत फँस जाना। यह बहुत दुष्ट है।"

राजामाता के, अपने पुत्र की दयनीय अवस्था देख आँसू टपक पड़े, परंतु तुरंत ही अपने हृदय को दृढ़ कर बोलीं, "बेटा! यही बात तो तुम्हारे मस्तिष्क की विकृत अवस्था प्रकट करती है। राजा प्रजा के हित के लिए अपना जीवन दे डालता है और प्रजा उसे धन, सम्पद तथा अन्य सुख-सामग्री प्रदान करती है। प्रजा का हित एक स्त्री की कामना पर न्योछावर नहीं किया जा सकता।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"परंतु माँ! ये कौन हैं जो मेरे कामों पर आलोचना करते हैं?"

"बेटा! देश के विद्वान् और शूरवीर लोग ही तो राजा के कामों की आलोचना करने का अधिकार रखते हैं। देखो, तुम्हें रुग्णालय में रखा जाएगा। जब तुमको चिकित्सक नीरोग घोषित कर देंगे, तुम्हारा राज्य और राजकुमार तुम्हें लौटा दिए जाएँगे।"

इतना कह राजमाता ने सैनिकों को आज्ञा दे दी, "इन दोनों को ले जाओ और महाराज को राजप्रासाद के एक आगार में और राजकुमार की माँ को बन्दीगृह में रखा जाए।"

जब सैनिक महाराज तथा पद्मावती को ले गए, तो महारानी ने वहीं बैठ यह घोषणा लिखकर दे दी–

"महाराज मुरहारी विक्रम, मेरा सुपुत्र, वैशाली की गणिका रेखा की लड़की पद्मावती के प्रेम में फँस उन्मत्त हो गया है। अतएव उसे चिकित्सकों के अधीन कर दिया है और उसके स्वस्थ होने तक राज्य का भार मैंने अपने ऊपर ले लिया है।"

"महाराज मुरहारी विक्रम का सुपुत्र, जो अभी चालीस दिन का है, भावी अवध-नरेश घोषित किया जाता है और उसकी संरक्षिका होना मैं स्वीकार करती हूँ।"

"राज्य-कार्य-भार को सिर पर लेते समय मैं पं. भानुमित्र को पुनः अवध का महामात्य नियुक्त करती हूँ। भद्रसेन तथा वीरभद्र पूर्ववत् अर्थमंत्री और सेनापति रहेंगे।

"पूर्ण प्रजा से मैं अनुरोध करती हूँ कि वह राज्य को अपना सहयोग दे, जिससे राज्य प्रजा की अधिक-से-अधिक सेवा कर सके।"

यह घोषणा और पद्मावती के विरुद्ध अभियोग की आज्ञा एक साथ की गई। इसका परिणाम यह हुआ कि प्रजा में भानुमित्र के चले जाने से जो निराशा और उदासीनता उत्पन्न हो गई थी, वह मिट गई।

: 17 :

लक्ष्मीकांत द्वारा खड़े किए उपद्रव का परिणाम यह हुआ कि आधा वैशाली जलकर भस्म हो गया और सब धनी-मानी सेठ लूट लिए जाने के कारण निर्धन हो गए।

देवधर्मा को वैशाली की पूर्व समृद्धता लाने में बहुत कठिनाई अनुभव होने लगी। धनी-मानी सेठों के लुट-पिट जाने के कारण वैशाली का व्यापार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नष्ट हो गया। लूट-पाट करने वाले क्षत्रियों में चरित्रहीनता उत्पन्न होने लगी। ब्राह्मण भी गणराज्य-पद्धति पर संदेह करने लगे।

इस उपद्रव को शांत हुए छः मास से ऊपर हो चुके थे। इस पर भी राज्य-कोष में इतना भी धन नहीं था कि जले मकानों के मलबे को उठवाया जा सके। सहस्रों परिवार थे, जो मकानों के अभाव में झोपड़ियाँ डालकर रहने लगे।

व्यापार के नष्ट हो जाने के कारण निर्धन, जो दस्तकारी से जीविकोपार्जन करते थे, बेकार हो गए। उनकी बनाई वस्तुएँ विदेशों में जानी बंद हो गईं और वे भूखों मरने लगे। सबसे बड़ी बात यह हुई कि संसद् के दो दलों में वैमनस्य दिन-प्रतिदिन विषम होता गया।

इन सब बातों का परिणाम यह होने लगा कि वैशाली में इक्के-दुक्के भूख से मरने लगे। जहाँ पंथागारों में भोजन की व्यवस्था राज्य की ओर से होती थी, वहाँ अब दाम देकर भी अन्न मिलना कठिन हो गया।

इस विकट समस्या को सुलझाने के लिए, जो भी योजना देवधर्मा रखता, उसका सेट्ठी लोग विरोध करते। कारण यह कि घूम-घुमाव कर योजना के लिए धन सेट्ठियों को ही देना पड़ता था। अभिप्राय यह कि सेट्ठियों ने राज्य के पुनर्गठन में सहयोग देना छोड़ दिया।

इस परिस्थिति की पराकाष्ठा तब हुई जब संसद् के सदस्य मंत्रिवर्ग पर अविश्वास का प्रस्ताव उपस्थित करने का यत्न करने लगे। इस समय देवधर्मा ने भानुमित्र को पत्र लिखा कि यदि वह अवध का महामात्य होता तो वैशाली की वैसी ही सहायता कर सकता जैसी एक समय वैशाली ने अवध की की थी। इस पत्र में भानुमित्र को वैशाली का गणपति-पद स्वीकार करने का आग्रह किया गया था।

सौभाग्य से उसी समय वीरभद्र और भद्रसेन का पत्र भी मिला और भानुमित्र ने अपना पथ-निर्माण करने में देर नहीं की। वह राजनीति में शीघ्र कार्य करने में विश्वास रखता था।

काशी से चलने से पूर्व उसने दोनों राज्यों में कार्य की पूर्ण योजना बना ली थी। अयोध्या में विप्लव करने में दो दिन लगे और पश्चात् उसने वैशाली की ओर ध्यान दिया।

अयोध्या में सार्वजनिक राज्य-सभा में राजमाता तथा राजकुमार की सत्ता का प्रजा से अनुमोदन करा, वह चुपचाप वैशाली जा पहुँचा। अयोध्या से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जाने के पूर्व उसने वीरभद्र को यह आज्ञा दे दी थी कि पचास सहस्र सेना गंगा-तंट पर, गंगा पार करने के सेतुओं सहित, तैयार रहनी चाहिए। आज्ञा मिलते ही सेना वैशाली के द्वार पर पहुँच जानी चाहिए।

इस बार गंगापुरी पर अधिकार नहीं किया गया और सामने के तट पर अवध की सेना के एकत्रित होने की सूचना वैशाली की जनता और संसद् के सदस्यों को मिलने दी गई। भानुमित्र बिना किसी द्वारा पहचाने गए, गणपति-भवन, जो नया निर्माण किया गया था, में जा पहुँचा। उसे सबसे प्रथम पहचानने वाली प्रभा ही थी।

प्रभा मुख से उसका परिचय बोलने ही वाली थी कि भानुमित्र ने मुख पर उँगली रख उसे चुप करा दिया। उस समय भानुमित्र पंथागार में बैठा गणपति की प्रतीक्षा कर रहा था।

गणपति भी जब आया तो विस्मय में खड़ा रह गया। भानुमित्र ने उठकर चरण-स्पर्श किए तो देवधर्मा ने उसे छाती से लगा लिया।

दोनों बैठे तो भानुमित्र ने कहा, ''मैं अपना वैशाली में होना तभी प्रकट कर सकता हूँ, जब हम अपनी योजना पूर्ण रूप में बना लें।''

''मुझे आपका पत्र मिला तो मैंने समझा कि मुझे अयोध्या में अधिकार प्राप्त कर लेना चाहिए। सो मैंने वहाँ विप्लव कर दिया है। महाराज तथा महारानी पद्मावती बंदी बना लिए गए हैं। राजकुमार राजा घोषित हो गया है और उसकी संरक्षिका तथा राज्य की संरक्षिका राजमाता बन गई हैं। इस परिवर्तन से प्रजा अति प्रसन्न है। महारानी पद्मावती पर राज्य को धोखा देने तथा राज्य पलटने का षड्यंत्र करने का अभियोग चलाया जाएगा। मैं पुनः अवध का महामात्य बना दिया गया हूँ।''

''मैंने आपका पत्र पढ़ यह समझा कि वैशाली में गणतंत्र अपनी आयु समाप्त कर चुका है। ऐसी परिस्थिति में कोई भी शक्तिशाली व्यक्ति यहाँ का राजा बन जाएगा। इसलिए हमें इस दृष्टिकोण से विचार करना चाहिए। राजमाता लिच्छिवी वंश की हैं। यदि उनको यहाँ की रानी घोषित कर दिया जाए और वैशाली को अवध में सम्मिलित कर दिया जाए, तो इसमें सफलता की कितनी आशा है?''

इस सुझाव को सुन देवधर्मा स्तब्ध रह गया। बहुत देर तक वह इस सुझाव के पक्ष-विपक्ष में सोचता रहा। भानुमित्र इस सुझाव के विरोध में देवधर्मा की युक्ति और कारण सुनना चाहता था। इस कारण चुपचाप

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देवधर्मा के मुख पर उतार-चढ़ाव देखता रहा। अंत में देवधर्मा अपने आसन से उठ खड़ा हुआ और वेग से आगार में इधर-उधर घूमने लगा। फिर अंतिम निर्णय कर बोला—

"देखो वत्स! यह योजना श्रेष्ठ है। यह सफल भी हो सकती है, परंतु इसे चलाने के लिए तुम्हें एकदम वैशाली के बाहर पचास सहस्र सैनिक एकत्रित कर देने होंगे।"

"वे हो जाएँगे। एक दिन में गंगापुरी के सम्मुख गंगा के इस तट पर पचास सहस्र अवध के प्रथम श्रेणी के लड़ाके एकत्रित हो जाएँगे।"

"तो तुम समझते थे कि मैं तुम्हारी योजना को स्वीकार करूँगा?"

"केवल इतना ही नहीं, मेरी योजना है कि शिशु राजकुमार के संज्ञान होने तक मैं हस्तिनापुर से पाटलिपुत्र तक एक राज्य संगठित कर दूँ।"

"तो लो, मैं तुम्हारी योजना में अपना भाग पूरा कर देता हूँ। भगवान् जानता है कि मैं यह एकीकरण किसी स्वार्थवश नहीं कर रहा। देश और जाति को महान् बनाने की योजना में ही संकुचित राष्ट्रीयता का बलिदान करने लगा हूँ।"

इतना कह देवधर्मा ने दीवार के साथ लगे घड़ियाल को बजाया तो एक प्रतिहार आज्ञा पाने भीतर चला आया। देवधर्मा ने आज्ञा दे दी, "भवन-संरक्षक को बुलाओ।"

वह आया तो उसे आज्ञा दी गई, "सब मंत्रियों को तुरंत गणपति-भवन में एकत्रित होने की सूचना भेज दो। दो घड़ी में एक आवश्यक विषय पर विचार होना है।"

भानुमित्र जैसे चुपचाप आया था, वैसे ही वैशाली से बाहर निकल गया।

मंत्रिमंडल एकत्रित हुआ तो गणपति ने भानुमित्र द्वारा लिखा हुआ एक पत्र सुना दिया।

मुझे अभी एक दूत द्वारा यह पत्र मिला है। लिखा है—

"पूज्य गणपतिजी,

"अवध में महाराज मुरहारी विक्रम महारानी पद्मावती से अतिशय प्रेम करने के कारण मन से दुर्बल हो गए हैं। अतएव प्रजा ने उनको राज्य से पृथक् कर उन्हें चिकित्सा के लिए रुग्णालय में भेज दिया है।

"महारानी पद्मावती को अवध राज्य पलटने का षड्यंत्र करने का अपराधी मान, उन पर अभियोग चलाया जा रहा है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"वर्तमान काल में राजमाता चंदन अवध का राज्य चला रही हैं। अवध की प्रजा इस परिवर्तन से अत्यंत संतुष्ट और प्रसन्न है। मुझे पुनः अवध का महामात्य नियुक्त कर दिया गया है।

"वैशाली में क्षत्रियों की दिन-प्रतिदिन बढ़ रही दुर्दशा को देख राजमाता अत्यंत दुःख अनुभव कर रही हैं। एक वर्ष हुआ अवध-राज्य ने करोड़ों स्वर्ण-मुद्रा व्यय कर अपनी सेना यहाँ भेज शांति स्थापित की थी। उस समय अवध-महिषी यह आशा करती थीं कि वैशाली के सेट्ठी लोग अपने दुष्कर्मों को छोड़, वैशाली-निर्माण में संलग्न हो जाएँगे। एक वर्ष के इतिहास से महिषी इस परिणाम पर पहुँची हैं कि वैशाली में लोग इतने चरित्रहीन हो गए हैं कि यहाँ गणराज्य असंभव हो गया है।"

"अतएव अवध-महिषी ने यह निर्णय किया है कि वैशाली की भलाई के लिए इस राज्य को अवध-राज्य में सम्मिलित कर लिया जाए।

"इस अर्थ-महारानीजी ने मुझे आज्ञा दी है कि अवध की सेना लेकर, वैशाली पर अधिकार कर यहाँ की प्रजा के हित में राज्य की व्यवस्था करूँ।"

"मैं इस समय गंगा-पार से पत्र लिख रहा हूँ। प्रातःकाल हमारी सेना गंगा पार करेगी। आपको यह पत्र इस कारण लिख रहा हूँ कि आप हमारा विरोध अथवा सहायता, जो भी करना चाहें, कर सकें।"

"पिछले वर्ष हमारी सेना का उद्‌देश्य वैशाली पर अधिकार करने का नहीं था। इस कारण बिना किसी को सूचना दिए हम यहाँ चले आए थे और वैशाली को विनाश के पथ पर जाने से रोक, उसे बचा, यहाँ से चले गए थे। अब हमारा विचार वैशाली को अवध में सम्मिलित कर लेने का है। इस कारण आपको यथा समय सूचित कर देना उचित समझता हूँ।"

इतना निवेदन और कह देना चाहता हूँ कि महारानीजी जो कुछ कर रही हैं, वह लिच्छिवियों के हित का ध्यान रख कर रही हैं वे भलीभाँति जानती हैं कि वैशाली का अवध से युद्ध कर सकना तो दूर रहा, अपने-आप अपनी अवस्था को सुधार सकना भी असंभव है। अतएव व्यर्थ नर-रक्त बहाना बुद्धिमत्ता नहीं होगा। शेष वैशाली के द्वार पर पहुँचकर निवेदन करूँगा।

आपका वत्स

भानुमित्र"

इस पत्र को सुन सब भयभीत हो एक-दूसरे का मुख देखने लगे। पत्र के विषय में देवधर्मा से भाँति-भाँति के प्रश्न पूछे गए। देवधर्मा के उत्तर देने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के पश्चात् सेनापति ने वक्तव्य दिया—

"वैशाली की सेना की दुर्दशा अपार है। सैनिकों के वस्त्र फट चुके हैं, जूतों के तलों में छिद्र हो चुके हैं और भोजन पर्याप्त न मिलने से प्रायः सैनिक क्षीण हो चुके हैं। सेना के आधे से अधिक लोग छुट्टी लेकर गए हुए हैं।"

"वास्तव में हमारी सेना अवध की सेना का विरोध करने में अशक्त है। यदि हम रात को पूरी सेना लेकर गंगा-तट पर पहुँच जाएँ तो अवध की सेना को एक दिन के लिए अवश्य रोक सकते हैं, परंतु अधिक काल तक विरोध करना असंभव है।"

इसके पश्चात् अर्थ-मंत्री ने बताया, "चैशाली का कोष सेट्ठियों और क्षत्रियों ने लूट लिया था। इस समय तो युद्ध के खर्चे के लिए हमारे पास धन नहीं है।"

इसी प्रकार एक-एक कर सब मंत्रियों ने वैशाली की रक्षा में असमर्थता बताई।

देवधर्मा ने कहा, "मैं वैशाली को कभी भी अवध के साथ सम्मिलित करने के पक्ष में नहीं था; परंतु वर्तमान परिस्थिति में शायद इसके अतिरिक्त और कोई उपाय भी नहीं है। इस पर भी मैं इस प्रश्न को कल संसद् के सम्मुख रख देना चाहता हूँ और बिना संसद् की सम्मति के इस विषय में कुछ नहीं करूँगा।"

अगले दिन संसद् की बैठक दिन के दूसरे प्रहर बुलाई गई। उसमें भी भानुमित्र का पत्र पढ़कर सुनाया गया। सेट्ठी लोग, जिनकी संख्या संसद् में अधिक थी, युद्ध की संभावना से भयभीत हो गए और अयोध्या से संधि करने के पक्ष में कहते रहे। क्षत्रियों में कुछ लोग थे, जो युद्ध की घोषणा करने को कहने लगे। दूसरे लोग युद्ध का विरोध करने लगे।

देवधर्मा ने भी तीन घड़ी-भर युद्ध के पक्ष में व्याख्यान दिया, परंतु सेना. पति ने सेना की बुरी अवस्था का वर्णन कर देवधर्मा की उत्तेजनामय वक्तृता का प्रभाव नष्ट कर दिया।

संसद् सायंकाल तक किसी निर्णय पर नहीं पहुँच सकी और इस समय तक अवध की सेना की हरियावल वैशाली नगर की प्राचीन के बाहर पहुँच गई थी। नगर के द्वार बंद कर लिए गए थे, परंतु सेना ने लड़ने से इनकार कर दिया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अगले दिन प्रातःकाल तक अवध की पचास सहस्र सेना अस्त्र-शस्त्रों से सुसज्जित वैशाली के बाहर आ टिकी थी।

दिन के एक प्रहर गए पर किसी ने नगर के द्वार खोल दिए और लोगों के भयभीत हो और विस्मय में देखते-देखते अवध की सेनाओं ने नगर पर अधिकार कर लिया।

इस प्रकार वैशाली का गणराज्य डेढ़ सौ वर्ष की आयु भोग समाप्त हो गया।

: 18 :

वैशाली की जनता अपने पर अवध का साम्राज्य स्थापित होते देख विस्मय में खो गई। पचास सहस्र अवध के सैनिक नगर की देख-रेख में लग गए और किसी प्रकार से भी झगड़ा खड़ा करने वालों के मन में आतंक उत्पन्न करने लगे।

उस रात लोगों को लूटमार मचने की आशंका थी, परंतु ऐसा कुछ नहीं हुआ। देवधर्मा, भानुमित्र और वीरभद्र नगर में घूम-घूमकर, जहाँ अव्यवस्था का होना रोकते रहे, वहाँ नागरिकों के मन में विश्वास दिलवाते रहे। अगले दिन नगर का कारोबार, ज्यों-ज्यों जनता में सुरक्षा का विश्वास बैठता गया, आरंभ होता गया। तीसरे प्रहर तक बाजार खुल गए।

इस समय तक विद्युत् की भाँति द्रुत गति से कार्य करने वाले भानुमित्र ने वैशाली के शासन का ढाँचा बना लिया था। उसने शासन में एक वैशाली का उपसेनापति अवध की सेना में से नियुक्त कर दिया और सेना अवध और वैशाली के क्षत्रियों की मिश्रित कर दी। वैशाली के क्षत्रियों में से एक युवक को वैशाली का अध्यक्ष नियुक्त कर दिया, परंतु वैशाली का मुख्य न्यायाधीश अवध का एक धर्मशास्त्री बना दिया।

इस प्रकार वैशाली के योग्य व्यक्तियों को शासन में सम्मिलित कर भानुमित्र स्वयं पूर्ण राज्य का महामंत्री होने से वास्तविक शासक बना रहा।

एक सप्ताह के भीतर अवध के नगर-सेठों को बुलाकर एक करोड़ स्वर्ण-मुद्रा का पाँच-पाँच वर्ष के लिए ऋण ले दिया। नगर के गिरे मकानों का अवध के धन से निर्माण करवाना आरंभ कर दिया।

छह मास में वैशाली पुनः व्यापार का केंद्र बन गई और इस कार्य को चालू करने में लगा हुआ अवध का धन पुनः अवध के कोष में वापस आने लगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जब धन का बाहुल्य होने लगा, लोगों को करने के लिए काम-धंधा मिलने लगा और जीविकोपार्जन सुगम हो गया तो लोग भूल गए कि वैशाली में गणराज्य-जैसी कोई वस्तु थी।

वैशाली में राज्य-पद्धति बदलने से भानुमित्र को विनोद-भवन जैसी संस्था की आवश्यकता नहीं रही। उसने इस भवन का नाम कला-भवन रख दिया और यहाँ पर एक चित्रकला का शिक्षण केंद्र बना दिया।

देवधर्मा काशी में जाकर रहने लगा था। प्रभा के विवाह का प्रबंध भानुमित्र ने कर दिया। अयोध्या में मैलंद पंडित की संपत्ति से खुले विद्यालय में एक यासक नाम का न्यायशास्त्री अध्यापन कार्य करता था। उसे बहुत धन मिलने की आशा दे प्रभा से विवाह के लिए राजी कर लिया।

यासक बंग प्रदेश के एक अति निर्धन ब्राह्मण का लड़का था। काशी में न्याय-दर्शन को पढ़ अयोध्या के मैलंद विद्यालय में कार्य करने लगा था।

भानुमित्र का परिवार पुनः अयोध्या में आ गया था। उसकी तीनों पत्नियाँ बहुत आनंद में रहती थीं। परस्पर झगड़े का कोई कारण नहीं था। भोजन, वस्त्र और अन्य सुविधाएँ सबको प्राप्त थीं।

प्रचला के विषय में देवधर्मा ने एक रहस्योद्घाटन किया। प्रभा का विवाहोत्सव मनाया जा रहा था और देवधर्मा अपने पूर्ण परिवार सहित अयोध्या आया हुआ था। विवाह के अगले दिन, जब परिवार के सब लोग बैठे भोजन कर रहे थे, तो प्रचला की बात चल पड़ी। भानुमित्र ने गंभीर भाव बना कहा—

"जब मैं प्रचला देवी से विवाह कर चुका तो महाराज अवध और अवध-महिषी मल्लिका देवी ने मेरे चुनाव की श्रेष्ठता पर आशंका प्रकट की थी। मेरे अन्य मित्र, जिनमें उस समय के प्रायः मंत्री-वर्ग थे, यह समझते थे कि प्रचला एक गँवार लड़की होने से मेरा जीवन कष्टमय कर देगी। मल्लिका देवी ने तो यहाँ तक कहा था कि इससे विवाह कर मैंने अपने भविष्य पर तुषारपात कर दिया है।"

"मुझे इसकी बुद्धि की प्रखरता पर और इसके माता-पिता के कुलीन होने का विश्वास था। इससे मैं समझता था कि इसमें श्रेष्ठता का बीज उपस्थित है और ठीक भाँति से इसके मन को कला-ज्ञान से सींचने पर, यह बीज प्रस्फुटित हो पड़ेगा और इसको पत्नी के रूप में रखना एक सौभाग्य की बात बन जाएगी। मुझे अपने विचारों में निराशा नहीं हुई। यद्यपि मैं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपनी तीनों रानियों में प्रतियोगिता नहीं करना चाहता, तो भी प्रचला के बचपन का ध्यान करने से, मैं उसे सर्वश्रेष्ठ कह दूँ तो अनुचित नहीं होगा।''

प्रचला के समीप मृदुला बैठी थी। उसने भानुमित्र को उसकी प्रशंसा करते सुन, उसके गले में बाँह डाल, सस्नेह उसका मुख चूम लिया। राका ने भी यह सुना तो अर्थभरी दृष्टि से उसकी ओर देखने लगी।

देवधर्मा भानुमित्र का प्रचला के विषय में प्रशंसात्मक वक्तव्य सुन गंभीर हो बोला, ''वत्स! भावी बहुत प्रबल है। मृदुला के विषय में तुम जानते ही हो कि वह मेरी लड़की है। आज मैं प्रचला के विषय में भी एक रहस्य की बात बता देना चाहता हूँ।''

''लगभग बीस वर्ष की बात है कि वैशाली में एक गांधार कन्या नगरवधू बनी थी। उसका नाम मैं बताना नहीं चाहता। वह इस समय भारत के एक शक्तिशाली राज्य की महिषी है और एक भावी सम्राट् की माँ है।

''वह अभी सोलह-सत्रह वर्ष की थी, जब नगर-वधू बना दी गई। नगर-भर के धनी-मानी उससे प्रेम करने लगे थे और उसे प्रसन्न करने के लिए लाखों स्वर्ण-मुद्राएँ न्योछावर करते रहते थे। उसका अपना प्रेम मुझ पर था। यद्यपि मैं उसे उसकी पदवी के उत्तरदायित्वों का ध्यान दिलाता रहता था, परंतु वह लड़की नहीं मानी और हमारा संबंध दिन-प्रतिदिन घनिष्ट होता गया।''

''उसके गर्भ ठहर गया। मैं उसे वैशाली से बाहर ले जाकर कहीं सुरक्षित स्थान पर रखना चाहता था। इसके लिए एक षड्यंत्र करना पड़ा। वैशाली के नगर-सेठ का एक लड़का, श्रीपति उससे अति प्रेम करता था। उसके साथ भाग जाने की नगर-वधू ने योजना बना ली। श्रीपति एक मध्य रात्रि को विनोद-भवन के सम्मुख रथ लेकर पहुँच गया। उस दिन उसने विनोद-भवन के सेवकों तथा दासियों को सहस्रों स्वर्ण-मुद्रा देकर अपना साथी बना लिया था। जब नगर-वधू विनोद-भवन से निकल रथ पर चढ़ने लगी तो राज्य के सैनिक वहाँ पहुँच गए। नगर-वधू उनको देख रथ छोड़ मार्ग के दूसरी ओर पेड़ों के अंधेरे में भागकर जा छिपी। वहाँ एक अश्वारोही एक खाली परंतु जीन से कसा हुआ घोड़ा लिए खड़ा था। नगर-वधू उस पर सवार हो अश्वारोही के साथ नगर के बाहर भाग गई और सेठ का लड़का श्रीपति पकड़ लिया गया।''

''श्रीपति पर अभियोग चलाया गया और विनोद-भवन के दास-दासियों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ने उसके विरुद्ध साक्षी दी। नगर-वधू पर उस समय तक पंद्रह सहस्र स्वर्ण मुद्राएँ व्यय हो चुकी थीं। इस कारण श्रीपति को इतना दंडित कर दिया गया।

"नगर-वधू के गंगापुरी के एक साधरण से गृह में एक लड़की उत्पन्न हुई, जिसके पालन-पोषण का भार बौद्ध-विहार के पाचक कालमेघ को दे दिया गया। उसे इस कार्य के लिए पचास स्वर्ण-मुद्रा प्रति वर्ष दी जाती थीं। यह लड़की प्रचला है।

"नगर-वधू गंगापुरी से काशी चली गई। वहाँ उस पर एक महाराजाधिराज की दृष्टि पड़ गई और उसने उससे विवाह कर लिया।"

यह रहस्योद्घाटन सुन सब चकित रह गए। प्रचला अपने माता-पिता का परिचय पा प्रसन्नता से देदीप्यमान हो उठी। वह बचपन से ही यह अनुमान लगा रही थी कि उसके माता-पिता कोई बड़े लोग हैं। आज उसकी यह धारणा सत्य सिद्ध हुई।

वह उठकर अपने आगार में गई और अपनी कंठी, जो उसके बचपन के कपड़ों के साथ कालमेघ ने रखी हुई थी, उठा लाई। उस कंठी के नीचे स्वर्ण की डिबिया खोल, उसमें बनी स्त्री का चित्र दिखा पूछा, "यह मेरी माँ है क्या?"

देवधर्मा ने चित्र देखा और प्रसन्नता से चमकते हुए कहा, "हाँ। चित्रकार ने तुम्हारी माँ की रूपरेखा के साथ न्याय ही किया है।"

भानुमित्र का पिता महीदेव भी वहीं बैठा था। इस कथा को सुन उसने हँसी-हँसी में पूछा, "मित्र! बहुत ही रसिक रहे हो युवावस्था में? भाभी सुनीला तो उन दिनों रुष्ट रहती होंगी?"

देवधर्मा हँस पड़ा। उसने कहा, "सुनीला देवी को मेरे जीवन की सब बातें विदित थीं। मन में वे क्या समझती होंगी, मैं नहीं जानता। हाँ, प्रत्यक्ष में तो उन्होंने कभी असंतोष प्रकट नहीं किया। मैं तो समझता हूँ कि उनको मुझसे रुष्ट होने में कभी कारण उत्पन्न ही नहीं हुआ।"

: 19 :

अयोध्या में राज्य पलटने से महारानी मल्लिका को लक्ष्मणपुर के दुर्ग से छुड़ाकर अयोध्या में ले आया गया। जब उसे पूर्ण परिस्थिति का पता लगा तो वह अपने कर्तव्य पर विचार करने के लिए विवश हो गई।

उसे कारागार में रहने और उससे पूर्व राजमाता के साथ एकांतवास करने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से अपने मन की अवस्था को जानने का बहुत अवसर मिला था। गंभीर मनन तथा राजमाता की सौम्य सम्मति से वह कुछ परिणामों पर पहुँची थी। उनमें से एक तो यह था कि उसको अवध-नरेश से विवाह भूल प्रतीत होने लगा था। सुख और शांति धन-वैभव और पद से भिन्न वस्तु हैं, ऐसा वह मानने लगी थी। साथ ही वह इस परिणाम पर पहुँची थी कि कर्तव्यपालन करना एक व्यक्ति के अधीन है, परंतु उसका फल प्राप्त करना उसके अधीन नहीं। फिर फल-प्राप्ति की गति भी तो अकथनीय है। प्रायः इस जन्म के कार्यों के फलों की प्राप्ति की आशा अगले जन्म में ही करना ठीक है।

जब वह अयोध्या पहुँची, तो भानुमित्र वैशाली को अयोध्या में सम्मिलित कर चुका था। भानुमित्र की, इस प्रकार एक के पश्चात् दूसरी सफलता को देख, उसे भानुमित्र की श्रेष्ठता का भान होने लगा था। इससे उसे भानुमित्र को छोटा मान उससे विवाह न करने पर शोक अनुभव होने लगा था। उसने पीतल को सोना मान ग्रहण किया था। उसने सीपी में पानी की बूँद को मोती माना था। इस भूल के कारण उसे आत्मग्लानि हो उठी थी। वह अपने भविष्य के विषय में गंभीरता पूर्वक सोचने लगी।

अयोध्या में पहुँचकर वह राजमाता के पास पहुँची तो राजमाता ने उसकी पीठ पर हाथ फेर आशीर्वाद दिया और कहा, ''बेटी! मुझे अपने पुत्र के तुम्हारे प्रति व्यवहार पर बहुत लज्जा अनुभव हो रही है, परंतु इसे टालने की शक्ति किसी में नहीं थी। हम-तुम तो क्या गिनती रखती हैं, भानुमित्र जैसा चतुर सचिव भी सदा विपदा को टाल नहीं सका। अब जो कुछ है, हमें उस पर ही संतोष करना चाहिए। यह बालक है और यह राज्य है। ये दो सूत्र हैं, जिन्हें तुम पकड़कर, अपने कर्तव्य में संलग्न रह सकती हो।''

''पर माताजी!'' मल्लिका ने आँखों में आँसू भरते हुए कहा, ''इस सबका क्या प्रयोजन है? मेरा महाराज से विवाह भूल थी, इससे अवध-महारानी बनना भूल हुई। इस भूल को अब क्यों निरंतर करती जाऊँ, इस बहती बालू को क्यों बटोरने का यत्न करूँ? यह जन्म तो गया, अब आगे की सुध क्यों न लूँ?''

''देखो बेटी! यह कहना कठिन है कि इस संसार में हमारा जन्म क्यों हुआ है। इतना तो तुम समझ ही सकती हो कि संसार में हमारा आना और यहाँ से हमारा जाना हमारे अपने बस की बात नहीं है। हमें यहाँ एक अवधि तक रहना है और इसकी ऊँची-नीची तरंगों पर तैरना है। यदि यह है तो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फिर घबराकर इससे भाग जाने में, अथवा इसकी दुष्करता को देख आँखें मूँद लेने से तो काम नहीं बन सकता। हमें अपने पथ का निर्माण करना है। भूल हुई है तो उसे यथाविधि सुधारने का यत्न करना है।

''पद्‌मावती का प्रभाव महाराज पर इतना रहा था कि वह उसके अधीन कठपुतली की भाँति कार्य करने लगा था। दुर्भाग्य यह था कि पद्‌मा दुष्टा और मूर्खा थी। इससे अपने प्रभाव से वह कोई शुभ कार्य कराने की न तो इच्छा करती थी, न ही यत्न। वह अपने मन से स्वार्थसिद्धि के पीछे लगी थी, परंतु मूर्ख होने से वह अपने स्वार्थ को भी समझ नहीं सकी।''

''अब महाराज अमितपुर के दुर्ग में हैं। वहाँ पर उनके मनोरंजन और मानसिक विकास के लिए कई संगीत, नृत्य, चित्रादि कलाओं के विज्ञ कलाकारों तथा ज्ञान-ध्यान के ज्ञात विद्वानों का समारोह कर दिया है। भानुमित्र का विचार है कि एक वर्ष में वह स्वस्थचित्त हो जाएँगे। तब तक हमें यहाँ का कार्य चलाना चाहिए।''

मल्लिका से भानुमित्र की भेंट हुई तो वह उसे देख भीतर-ही-भीतर क्षुब्ध हो उठी। उसकी आँखों से टप-टप आँसू बहने लगे। भानुमित्र उसके दुःख को अनुभव करता था। उससे उसे सांत्वना देने के लिए बोला, ''देवी, संसार तो शतरंज का खेल है। कोई हारता है और कोई जीतता है। फिर कई बार हारने वाले जीतने लगते हैं और जीते हुए हार जाते हैं। इससे मेरा आग्रह है कि खिलाड़ी की भाँति निर्विकार और निर्लेप होकर ही यहाँ रहना चाहिए।''

''परंतु मित्र! मैं तो यह समझने लगी हूँ कि यह जीवन विफल हो गया है। इससे चिपटे रहना एक कुत्ते का हड्डी चूसने की भाँति ही हो गया है।''

मल्लिका के इस निराशा-भरे वाक्य को सुन भानुमित्र का मन पसीज उठा। वह वास्तव में उससे प्रेम करता था और उसे दुखी देख स्वयं दुःख अनुभव करने लगा था। उसे एक बात सूझी और उसने मन में एक योजना बना डाली। दो क्षण तक सोचकर उसने कहा, ''महारानीजी को सुखी और प्रसन्न रखने के लए ही मैंने यह सब कुछ किया है। यदि वे मुझे आज्ञा दें तो मैं अपनी योजना की अंतिम कड़ी भी पूर्ण कर दूँ। महारानीजी को अमितपुर में जाकर रहना चाहिए और महाराज से पुनः संबंध उत्पन्न करने का यत्न करना चाहिए। छोटी महारानी की अनुपस्थिति में महाराज को पुनः ठीक मार्ग पर लाना कठिन नहीं होगा।''

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पहले तो मल्लिका इस बात के लिए अपने को तैयार नहीं कर सकी। कई दिन के विचार-विमर्श के पश्चात् वह अपने मन को महाराज से मिलने पर मना सकी।

अमितपुर के दुर्ग में महाराज मुरहारी विक्रम बहुत उदास-चित्त रहता था। उसने अपनी माँ से महारानी पद्मावती तथा अपने लड़के को माँगा था। राजमाता ने महामात्य की सम्मति से ऐसा करने से इंकार कर दिया। पद्मावती और वैशाली के सेठ सुमेर पर अभियोग चलाया गया। दोनों को अवध-राज्य के नष्ट-भ्रष्ट करने का अपराधी पाया गया और दोनों को आजन्म कारावास की आज्ञा हुई।

इस सूचना पर महाराज मुरहारी विक्रम के मन को भारी आघात पहुँचा। जो कलाकार उसके मनोरंजन के लिए वहाँ जाते थे, उनसे महाराज का झगड़ा हो जाता था। उपनिषदों और रामायण-कथा से भी महाराज के मन को शांति नहीं मिल रही थी।

इस समय मल्लिका वहाँ पहुँची, परंतु महाराज ने उसके आने की सूचना पा, मिलने से इंकार कर दिया। इस पर भी मल्लिका मिलने गई।

मल्लिका को देख महाराज को क्रोध चढ़ आया। उसने कहा, ''देखो मल्लिका! यह मत समझो कि मैं मूर्ख हूँ। भानुमित्र से मिलकर तुमने जो षड्यंत्र किया है, मैं उसको भली-भाँति समझता हूँ।''

मल्लिका ने महाराज के विकृत मुख को देख कहा, ''देखिए महाराज! आपको मूर्ख किसी ने नहीं कहा। आपके मस्तिष्क में भ्रांति हो रही है। आप मित्र को शत्रु और शत्रु को मित्र मान भूल कर रहे हैं।''

''तुम यहाँ क्यों आई हो?''

''श्रीमान् की इस रुग्णावस्था में सेवा करने के लिए।''

''तो तुम भी मुझे बीमार समझती हो?''

''अपना मुख दर्पण में देखिए। मुझे उत्तर देने की आवश्यकता नहीं है।''

''यह तो उस पाजी भानुमित्र के कारण हुआ है।''

''श्रीमान्! उस पाजी ने तीन बार आपके राज्य की रक्षा की है। अब आपके सुपुत्र का लालन-पालन कर रहा है। अन्यथा वह आज मगध राज्य का महामात्य हो सकता था।''

''तो तुम समझती हो कि यह सब कुछ उसने मेरे लिए किया है? मैं जानता हूँ, उसका तुम्हारे साथ क्या संबंध है। यह सब उसने तुम्हारे लिए

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किया है।''

''यदि मेरे लिए किया भी मान लिया जाए तो क्या हानि है? मैं भी तो आपका और अवध राज्य का अंग ही हूँ।''

''नहीं, मेरी तुम कुछ नहीं हो। अब चली जाओ। मेरा क्रोध और अधिक न बढ़ाओ। कहीं ऐसा न हो कि मैं तुम्हारी हत्या कर बैठूँ।''

मल्लिका इस विकृत मानसिक अवस्था को देख चुपचाप बैठी रह गई। उसे वहाँ देख महाराज का क्रोध बढ़ता ही गया।

: 20 :

मल्लिका मुरहारी विक्रम के चित्त को शांति न दे सकी। उसे अपने बंदी होने का बहुत दुःख था। पद्मावती के वियोग ने तो उसे पागल बना रखा था। इससे उसका स्वास्थ्य दिन-प्रतिदिन बिगड़ता जाता था।

मल्लिका ने बहुत यत्न किया कि वह पुनः उसके चित्त को प्रसन्न कर उसे राज्य सम्हालने योग्य बना सके, परंतु मुरहारी विक्रम के मन में यह बात बैठ चुकी थी कि मल्लिका भानुमित्र से अनुचित संबंध रखती है और भानुमित्र ने उसे दुखी करने के लिए उसे वहाँ भेज रखा है।

मल्लिका दिन-प्रतिदिन महाराज से घृणा करने लगी थी। यद्यपि वह भारतीय नारियों की परंपरा को जानती थी कि एक स्त्री को किसी भी परिस्थिति में पति की सेवा करनी चाहिए, इस पर भी वह गांधार-निवासिनी होने के कारण कभी-कभी इस मूर्ख अथवा धूर्त पति को त्यागने पर उद्यत हो जाती थी।

एक दिन घटना ऐसी हुई कि तिनका टूटे बिना नहीं रहा। भानुमित्र ने मुरहारी विक्रम को एक पत्र लिखा था, जिसमें महाराज-कुमार के एक वर्ष के होने पर बधाई भेजी थी। महाराज ने मल्लिका को पत्र दिखाया। मल्लिका ने पत्र पढ़ बिना किसी प्रकार का भाव प्रकट किए लौटा दिया।

''क्यों, हृदय में धड़कन नहीं होती यह देखकर?''

''होती है, श्रीमान्!''

''भला बताओ तो, क्यों होती है?''

''अवध के महाराज-कुमार के शुभ समाचार से हृदय प्रफुल्लित होना ही चाहिए।''

''महाराज-कुमार के शुभ समाचार से अथवा अपने उपपत्ति के पत्र को देखकर?''

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"कितनी विकृत मनोवृत्ति है आपकी!"

"सत्य कहता हूँ, इस कारण नहीं!"

"यह झूठ है।"

"मैं झूठा हूँ, ओ दुष्टा! मुझे ठग नहीं सकती। बताओ, तुम भानुमित्र से प्रेम करती हो या नहीं?"

"प्रेम?" मल्लिका ने माथे पर त्योरी चढ़ाकर कहा, "हाँ, मैं उससे प्रेम करती हूँ और तुमसे घृणा करती हूँ, परंतु..."

इससे आगे मल्लिका कुछ कह नहीं सकी। मुरहारी विक्रम ने समीप पड़े चाँदी के पानदान को उठा उसके सिर पर दे मारा। साथ ही कहा, "तो यह लो, जाओ। उससे प्रेम करने के लिए स्वतंत्र हो जाओ।"

मल्लिका चीख मार अचेत हो गई। मुरहारी विक्रम ने समझा कि वह मर गई है, अथवा मरने ही वाली है। इससे उसकी टाँग पकड़ उसे घसीटकर अपने आगार के बाहर फेंक दिया। मल्लिका के रक्त से आगार की भूमि लाल हो गई थी।

सेवकों ने मल्लिका को अचेत देखा तो उसे उठाकर ले गए। मुरहारी विक्रम पर नियुक्त वैद्य को बुलाया गया तो उसने सिर में से बहते रक्त को रोका और दिन-भर के प्रयत्न के पश्चात् उसे सचेत कर दिया।

जब मल्लिका स्वस्थ हो गई तो उसके मन में मुरहारी विक्रम के प्रति ग्लानि इतनी प्रबल हो गई कि वह एक दिन दुर्ग से निकल असीम संसार में विलीन हो गई।

भानुमित्र को इस घटना का पता चला तो बहुत दुखी हुआ। उसने मल्लिका को ढूँढ़ने के लिए गुप्तचर चारों ओर दौड़ाए, परंतु सफलता नहीं मिली।

❑❑❑

Central Library
167991
Gurukula Kangri (Deemed to be University) Haridwar
081
167991

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुस्तकालय

गुरुकुल काँगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार

R 089.9143

वर्ग संख्या GUR—V

आगत संख्या 167991

पुस्तक विवरण की तिथि नीचे अंकित है। इस तिथि सहित 30 वें दिन यह पुस्तक पुस्तकालय में वापस आ जानी चाहिए। अन्यथा 50 पैसे प्रतिदिन के हिसाब से विलम्ब दण्ड लगेगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्री गुरुदत्त के चुने हुए उपन्यास

कुमार सम्भव

उमड़ती घटाएं

अमृत मंथन

परम्परा

अग्नि परीक्षा

वैशाली विलय (बहती रेता)

परित्राणाय साधूनाम्

विक्रमादित्य साहसांक

पुष्यमित्र

लुढ़कते पत्थर

पत्रलता

गंगा की धारा

खण्डहर बोल रहे हैं

स्वाधीनता के पथ पर

पथिक

स्वराज्यदान

विश्वासघात

देश की हत्या

दो लहरों की टक्कर

मानव

धरती और धन

आवरण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्री गुरुदत्त

8 दिसम्बर, 1894
से
8 अप्रैल, 1989
शिक्षा : एम. एस सी.

प्रथम उपन्यास "स्वाधीनता के पथ पर" से ही ख्याति की सीढ़ियों पर जो चढ़ने लगे कि फिर रुके नहीं। विज्ञान की पृष्ठभूमि पर वेद, उपनिषद् दर्शन इत्यादि शास्त्रों का अध्ययन आरम्भ किया तो उनमें ज्ञान का अथाह सागर देख उसी में रम गये।

उपन्यासों में भी शास्त्रों का निचोड़ तो मिलता ही है, रोचकता के विषय में इतना कहना ही पर्याप्त है कि उनका कोई भी उपन्यास पढ़ना आरम्भ करने पर समाप्त किये बिना छोड़ा नहीं जा सकता।

श्रीमद्‌भगवद् गीता, वेद, उपनिषद् तथा दर्शन शास्त्रों की विवेचना एवं अध्ययन अत्यन्त सरल भाषा में प्रस्तुत करना गुरुदत्त की ही विशेषता है।

ISBN No. 81-88388-70-X

हिन्दी साहित्य सदन
2 बी.डी. चैम्बर, 10/54, देशबन्धु गुप्ता रोड,
करोल बाग, नई दिल्ली-110005
फोन : 23553624, 23551344
E-maill : indiabooks@rediffmail.com

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar